# तेतिरीय ब्राह्मणम्

#### Colophon

This document was typeset using XaMeX, and uses the Siddhanta font extensively. It also uses several MeX macros designed by H. L. Prasād. Practically all the encoding was done with the help of Ajit Krishnan's mudgala IME (http://www.aupasana.com/).

#### Acknowledgements

The initial ITRANS encodings of some of these texts were obtained from http://sanskritdocuments.org/andhttps://sa.wikisource.org/. Thanks are also due to Ulrich Stiehl (http://sanskritweb.de/) for hosting a wonderful resource for Yajur Veda, and also generously sharing the original Kathaka texts edited by Subramania Sarma. See also http://stotrasamhita.github.io/about/

FOR PERSONAL USE ONLY
NOT FOR COMMERCIAL PRINTING/DISTRIBUTION

अनुक्रमणिका i

## अनुऋमणिका

| अष्टकः   | म् १         |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 1   |
|----------|--------------|----|---|----|----------|---|------------|---|---|---|---|---|---|---|---|--|---|---|---|---|---|---|---|-----|
| प्रथ     | मः प्रश्नः   |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 1   |
| द्विर्त  | ोयः प्रश्नः  |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 22  |
| तृती     | यः प्रश्नः   |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 36  |
| चतु      | र्थः प्रश्नः |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 53  |
| पञ्च     | मः प्रश्नः   |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 71  |
| षष्ठा    | नः प्रश्नः   |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 88  |
| सप्त     | मः प्रश्नः   |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 108 |
| अष्ट     | मः प्रश्नः   |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   | • |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 126 |
| अष्टक    | म् २         |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 137 |
| प्रथ     | मः प्रश्नः   |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 137 |
| द्विर्त  | ोयः प्रश्नः  |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 153 |
|          | यः प्रश्नः   |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 173 |
| चतु      | र्थः प्रश्नः |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 187 |
| पञ्च     | मः प्रश्नः   |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 208 |
| षष्ठा    | नः प्रश्नः   |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 222 |
| सप्त     | मः प्रश्नः   |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 250 |
| अष्ट     | मः प्रश्नः   |    | • | •  |          | • |            |   |   |   | • |   |   |   | • |  | • |   | • |   |   |   |   | 269 |
| अष्टक    | म् ३         |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 293 |
| प्रथा    | मः प्रश्नः   |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 293 |
| द्विर्त  | ोयः प्रश्नः  |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 312 |
| ਰ੍ਹਨੀ    | यः प्रश्नः   |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 335 |
| चतु      | र्थः प्रश्नः |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 356 |
| पञ्च     | मः प्रश्नः   |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 361 |
| वष्ठा    | नः प्रश्नः   |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 370 |
| सप्त     | मः प्रश्नः   |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 384 |
| अष्ट     | मः प्रश्नः   |    |   |    |          |   |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 419 |
| नवर      | नः प्रश्नः   |    | • | •  | •        | • |            | • | • | • | • | • | • | • | • |  | • | • | • | • | • | • | • | 446 |
| तैत्तिरी | य आ          | Įυ | य | वि | <u>۲</u> | Ŧ |            |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |   |   |   |   |   | 473 |
|          | मः प्रश्नः - |    |   |    |          |   | <b>1</b> : |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   | • |   |   |   |   | 473 |

| हि    | तीयः प्रश्नः   | : . |          |      |      |     |     |    |    |    |  |  |  |  |  |  |  |  | 508 |
|-------|----------------|-----|----------|------|------|-----|-----|----|----|----|--|--|--|--|--|--|--|--|-----|
| ਰ੍ਹ   | तीयः प्रश्नः   |     |          |      |      |     |     |    |    |    |  |  |  |  |  |  |  |  | 523 |
| च     | तुर्थः प्रश्नः |     |          |      |      |     |     |    |    |    |  |  |  |  |  |  |  |  | 537 |
|       | ञ्चमः प्रश्नः  |     |          |      |      |     |     |    |    |    |  |  |  |  |  |  |  |  | 562 |
|       | ष्टः प्रश्नः . |     |          |      |      |     |     |    |    |    |  |  |  |  |  |  |  |  | 592 |
| स     | प्तमः प्रश्नः  | —   | शीध      | भाव  | छ्री |     |     |    |    |    |  |  |  |  |  |  |  |  | 606 |
|       | ष्टमः प्रश्नः  |     |          |      |      |     |     |    |    |    |  |  |  |  |  |  |  |  |     |
| न     | वमः प्रश्नः    | —   | भृगु     | वर्छ | t.   |     |     |    |    |    |  |  |  |  |  |  |  |  | 617 |
| दः    | रामः प्रश्नः   | _   | मह       | नार  | ाय   | णोप | गनि | षत | Ţ  |    |  |  |  |  |  |  |  |  | 622 |
|       | ~ ~            | , , | <b>√</b> |      |      |     |     |    |    |    |  |  |  |  |  |  |  |  |     |
| कृष्ण | यजुवैद         | य   | तांच     | तर   | य    | -व  | जा  | ठ  | ħ٠ | म् |  |  |  |  |  |  |  |  | 659 |
| प्र   | थमः प्रश्नः    |     |          |      |      |     |     |    |    |    |  |  |  |  |  |  |  |  | 659 |
| हि    | तीयः प्रश्नः   | : . |          |      |      |     |     |    |    |    |  |  |  |  |  |  |  |  | 672 |
| त्    | तीयः प्रश्नः   |     |          |      |      |     |     |    |    |    |  |  |  |  |  |  |  |  | 687 |

#### ॥ अष्टकम् १॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

ब्रह्म सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। क्ष्रत्रः सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। इष्ः सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। ऊर्जः सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टिः सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टिः सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृजाः सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृश्रून्थ्यन्धंत्तं तान्में जिन्वतम्। स्तुतोऽिस् जनधाः। देवास्त्वां शुक्रपाः प्रणंयन्तु॥१॥

सुवीरौः प्रजाः प्रंजनयन्परीहि। शुक्रः शुक्रशोविषा। स्तुतोऽसि जनधाः। देवास्त्वां मन्थिपाः प्रणयन्तु। सुप्रजाः प्रजाः प्रंजनयन्परीहि। मन्थी मन्थिशोविषा। सञ्जग्मानौ दिव आपृंथिव्यायुः। सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। प्राण सन्धंत्तं तं मे जिन्वतम्। अपान सन्धंत्तं तं मे जिन्वतम्॥२॥

व्यान सम्यंत्तं तं में जिन्वतम्। चक्षुः सन्यंत्तं तन्में जिन्वतम्। श्रोत्र सन्यंत्तं तन्में जिन्वतम्। मनः सन्यंत्तं तन्में जिन्वतम्। वाच् सन्यंत्तं तां में जिन्वतम्। आयुंः स्थ आयुंर्मे धत्तम्। आयुंर्यज्ञायं धत्तम्। आयुंर्यज्ञपंतये धत्तम्। प्राणः स्थः प्राणं में धत्तम्। प्राणं यज्ञायं धत्तम्॥३॥

प्राणं यज्ञपंतये धत्तम्। चक्षुंः स्थश्चक्षुंर्मे धत्तम्। चक्षुंर्यज्ञायं धत्तम्। चक्षुंर्य्ज्ञपंतये धत्तम्। श्रोत्रर्धं स्थः श्रोत्रंं मे धत्तम्। श्रोत्रंं युज्ञायं धत्तम्। श्रोत्रं युज्ञपंतये धत्तम्। तौ देवौ शुक्रामन्थिनौ। कुल्पयंतुं दैवीर्विशंः। कुल्पयंतुं मानुषीः॥४॥

इष्मूर्जम्स्मास् धत्तम्। प्राणान्पशुषुं। प्रजां मियं च् यजंमाने च। निरंस्तः शण्डंः। निरंस्तो मर्कः। अपंनुतौ शण्डामर्कौ सहामुनाँ। शुक्रस्यं समिदंसि। मृन्थिनंः समिदंसि। स प्रथमः सङ्कृतिर्विश्वकंमा। स प्रथमो मित्रो वरुणो अग्निः। स प्रथमो बृह्स्पतिश्विकृत्वान्। तस्मा इन्द्रांय सुतमा जुंहोमि॥५॥

कृत्तिकास्वग्निमार्दधीत। एतद्वा अग्नेर्नक्षेत्रम्। यत्कृत्तिकाः। स्वायामेवैनं देवतायामाधाय। ब्रह्मवर्चसी भवति। मुखं वा एतन्नक्षेत्राणाम्। यत्कृत्तिकाः। यः कृत्तिकास्वग्निमाधत्ते। मुख्यं एव भवति। अथो खलुं॥६॥

अग्निन्क्ष्त्रमित्यपंचायन्ति। गृहान् ह् दाहुंको भवति। प्रजापंती रोहिण्याम्ग्निमंसृजत। तं देवा रोहिण्यामादंधत। ततो वै ते सर्वान्नोहांनरोहन्। तद्रोहिण्यै रोहिणित्वम्। यो रोहिण्याम्ग्निमांधृत्ते। ऋध्नोत्येव। सर्वान्नोहांन्नोहित। देवा वै भुद्राः सन्तोऽग्निमाधिंथ्सन्त॥७॥

तेषामनाहितोऽग्निरासीत्। अथैभ्यो वामं वस्वपाकामत्। ते पुनर्वस्वोरादंधत। ततो वै तान् वामं वसूपावर्तत। यः पुराऽभुद्रः सन्पापीयान्थस्यात्। स पुनेर्वस्वोर्ग्निमादेधीत। पुनेरेवैनं वामं वसूपावंतित। भुद्रो भंवति। यः कामयेत् दानकांमा मे प्रजाः स्युरितिं। स पूर्वयोः फल्गुंन्योरग्निमादेधीत॥८॥

अर्यम्णो वा एतन्नक्षंत्रम्। यत्पूर्वे फल्गुंनी। अर्यमेति तमांहुर्यो ददांति। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। यः कामयेत भगी स्यामितिं। स उत्तंरयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत। भगस्य वा एतन्नक्षंत्रम्। यदुत्तरे फल्गुंनी। भृग्येव भंवति। कालकुआ वै नामासुंरा आसन्॥९॥

ते सुंवर्गायं लोकायाग्निमंचिन्वत। पुरुष इष्टंकामुपांदधात्-पुरुष इष्टंकाम्। स इन्द्रौं ब्राह्मणो ब्रुवांण इष्टंकामुपांधत्त। एषा में चित्रा नामेतिं। ते सुंवर्गं लोकमा प्रारोहन्। स इन्द्र इष्टंकामावृंहत्। तेऽवांकीर्यन्त। येऽवाकींर्यन्त। त ऊर्णावभंयोऽभवन्। द्वावुदंपतताम्॥१०॥

तौ दिव्यौ श्वानांवभवताम्। यो भ्रातृंव्यवान्थ्स्यात्। स चित्रायांमग्निमादंधीत। अवकीर्यैव भ्रातृंव्यान्। ओजो बलंमिन्द्रियं वीर्यमात्मन्धंत्ते। वसन्तौ ब्राह्मणौंऽग्निमादंधीत। वसन्तो व ब्रौह्मणस्युर्तुः। स्व एवैनंमृतावाधायं। ब्रह्मवर्चसी भंवति। मुखं वा एतदंतूनाम्॥११॥

यद्वंसुन्तः। यो वसन्ताऽग्निमांधृत्ते। मुख्यं एव भंवति। अथो योनिमन्तमेवैनं प्रजातमार्थत्ते। ग्रीष्मे राजन्यं आदंधीत। ग्रीष्मो वै राजन्यंस्युर्तुः। स्व एवैनंमृतावाधार्यं। इन्द्रियावी भंवति। शुरदि वैश्य आदंधीत। शुरद्वे वैश्यंस्युर्तुः॥१२॥

स्व पुवैनंमृतावाधायं। पृशुमान्भंवति। न पूर्वयोः फल्गुंन्योर्गिमादंधीत। पृषा वै जंघन्यां रात्रिः संवथ्सरस्यं। यत्पूर्वे फल्गुंनी। पृष्टित एव संवथ्सरस्याग्निमाधायं। पापीयान्भवति। उत्तरयोरा दंधीत। एषा वै प्रंथमा रात्रिः संवथ्सरस्यं। यद्त्तरे फल्गुंनी। मुख्त एव संवथ्सरस्याग्निमाधायं। यद्त्तरे फल्गुंनी। मुख्त एव संवथ्सरस्याग्निमाधायं। वसीयान्भवति। अथो खलुं। यदैवैनं यज्ञ उपनमैत्। अथादंधीत। सैवास्यर्द्धिः॥१३॥
खल्वाधियम् फल्गुंनोग्निमादंधातास्त्रपतागृत्ना वश्यंस्यर्त्वरे फल्गुंन पदं॥ [२]

उद्धंन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। अपोऽवौंक्षिति शान्त्यैं। सिकंता निवंपति। एतद्वा अग्नेर्वेश्वान्रस्यं रूपम्। रूपेणैव वैश्वान्रमवं रुन्धे। ऊषां निवंपति। पृष्टिवां एषा प्रजननम्। यदूषाः॥१४॥

पुष्ट्यांमेव प्रजनेनेऽग्निमाधंते। अथों संज्ञानं एव। संज्ञान् इ ह्येतत्पंशूनाम्। यदूषाः। द्यावांपृथिवी सहास्तांम्। ते विंयती अंब्रूताम्। अस्त्वेव नौं सह यज्ञियमितिं। यद्मुष्यां यज्ञियमासींत्। तदस्यामंदधात्। त ऊषां अभवन्॥१५॥

यदस्या यज्ञियमासीत्। तदमुष्यांमदधात्। तददश्चन्द्रमंसि कृष्णम्। ऊषांन्निवपंन्नदो ध्यांयेत्। द्यावांपृथिव्योरेव यज्ञिये-ऽग्निमाधंत्ते। अग्निर्देवेभ्यो निलांयत। आखू रूपं कृत्वा। स पृंथिवीं प्राविंशत्। स ऊतीः कुंर्वाणः पृंथिवीमन् समंचरत्। तदांखुकरीषमंभवत्॥१६॥

यदांखुकरीष संम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावं रुन्थे। ऊर्जं वा एत रसं पृथिव्या उपदीका उदिहिन्ति। यद्वल्मीकम्। यद्वल्मीकव्पा संम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवं रुन्थे। अथो श्रोत्रमेव। श्रोत्र ह्यंतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकः॥१७॥

अबंधिरो भवति। य एवं वेदं। प्रजापंतिः प्रजा अं-सृजत। तासामन्नमुपाँक्षीयत। ताभ्यः सूदमुपप्राभिनत्। ततो वै तासामन्नं नाक्षीयत। यस्य सूदंः सम्भारो भवंति। नास्य गृहेऽन्नं क्षीयते। आपो वा इदमग्रे सिक्लमांसीत्। तेनं प्रजा-पंतिरश्राम्यत्॥१८॥

कथिमदि स्यादिति। सोऽपश्यत्पुष्करपूर्णं तिष्ठंत्। सोऽमन्यत। अस्ति वै तत्। यस्मिन्निदमिष् तिष्ठतीति। स वंग्हो रूपं कृत्वोप न्यंमञ्जत्। स पृथिवीम्ध आँर्च्छत्। तस्यां उपहत्योदंमञ्जत्। तत्पुष्करपर्णेऽप्रथयत्। यदप्रथयत्॥१९॥

तत्पृंथिव्यै पृंथिवित्वम्। अभूद्वा इदिमितिं। तद्भूम्यैं भूमित्वम्। तां दिशोऽनु वातः समंवहत्। ताः शर्कराभिरदृश्हत्। शं वै नोंऽभूदितिं। तच्छर्कराणाःश शर्कर्त्वम्। यद्वंराहविंहतः सम्भारो भवंति। अस्यामेवा- छंम्बद्वारमुग्निमाधंत्ते। शर्करा भवन्ति धृत्यै॥२०॥

अथों शन्त्वायं। सरेता अग्निर्धय इत्यांहुः। आपो वरुंणस्य पत्नंय आसन्। ता अग्निर्भ्यंध्यायत्। ताः समंभवत्। तस्य रेतः परांऽपतत्। तिद्धरंण्यमभवत्। यद्धिरंण्यमुपास्यंति। सरेतसमेवाग्निमाधंत्ते। पुरुष इन्नै स्वाद्रेतंसो बीभथ्सत् इत्यांहुः॥२१॥

उत्तर्त उपाँस्यत्यबींभथ्सायै। अति प्रयंच्छति। आर्तिमेवाति प्रयंच्छति। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। अश्वीं रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवथ्सरमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थः सम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावं रुन्थे॥२२॥

देवा वा ऊर्जं व्यंभजन्त। ततं उदुम्बर् उदंतिष्ठत्। ऊर्ग्वा उदुम्बरंः। यदौदुंम्बरः सम्भारो भवंति। ऊर्जमेवावं रुन्थे। तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयत्र्याऽहंरत्। तस्यं पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पुर्णोऽभवत्। तत्पुर्णस्यं पूर्णत्वम्॥२३॥

यस्यं पर्णमयंः सम्भारो भवंति। सोमपीथमेवावं रुन्थे। देवा वै ब्रह्मंत्रवदन्त। तत्पूर्ण उपांशृणोत्। सुश्रवा वै नामं। यत्पंर्णमयंः सम्भारो भवंति। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। प्रजापंतिरग्निमंसृजत। सोऽबिभेत्प्र मा धक्ष्यतीतिं। त॰ शम्यां-ऽशमयत्॥२४॥

तच्छुम्यै शमित्वम्। यच्छंमीमयः सम्भारो भवंति। शान्त्या

अप्रदाहाय। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आँच्छित्। यद्वैकंङ्कतः सम्भारो भवंति। भा एवावं रुन्धे। सहंदयो-ऽग्निराधेय इत्यांहुः। मुरुतोऽद्भिर्ग्निमंतमयन्। तस्यं तान्तस्य हृदंयमाच्छिन्दन्। साऽशनिरभवत्। यद्शनिहतस्य वृक्षस्यं सम्भारो भवंति। सहंदयमेवाग्निमा धंत्ते॥२५॥

ऊपां अभवत्रभवद्वल्मीकौंऽश्राम्युदप्रथयुद्धृत्यै वीभथ्मत् इत्यांहू रुन्धे पर्णुत्वमंशमयदच्छिन्दुश्चेभीणि च॥———[3]

द्वादशस्ं विकामेष्वग्निमा दंधीत। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरादेवैनंमव्रुद्धा धंत्ते। यद्वांदशस्ं विकामेष्वा दधीत। परिमित्मवं रुन्धीत। चक्षुंर्निमित् आदंधीत। इयद्वादंश विकामा(३) इति। परिमितं चैवापंरिमितं चावं रुन्धे। अनृतं व वाचा वंदति। अनृतं मनसा ध्यायति॥२६॥

चक्षुर्वे सृत्यम्। अद्रा(३)गित्यांह। अदंर्श्वमितिं। तथ्सत्यम्। यश्वक्षुंर्निमितेऽग्निमांधत्ते। सृत्य एवैन्मा धंते। तस्मादाहिताग्निर्नानृतं वदेत्। नास्यं ब्राह्मणोऽनांश्वान्गृहे वसत्। सत्ये ह्यंस्याग्निराहितः। आग्नेयी वै रात्रिः॥२७॥

आग्नेयाः प्रावंः। ऐन्द्रमहंः। नक्तं गार्हंपत्यमा दंधाति। प्रावेवावं रुन्धे। दिवांऽऽहव्नीयम्। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। अधींदिते सूर्यं आहव्नीयमा दंधाति। एतस्मिन्वे लोके प्रजा-पंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। अथों भूतं चैव भंविष्यचावं रुन्धे॥२८॥

इडा वै मांन्वी यंज्ञानूकाशिन्यांसीत्। साऽशृंणोत्। असुंरा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। त आंहवनीयमग्र आदंधत। अथ गार्हंपत्यम्। अथाँन्वाहार्यपचंनम्। साऽब्रंवीत्। प्रतीच्येषा् श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा परां भविष्युन्तीतिं॥२९॥

यस्यैवम्ग्निरांधीयतें। प्रतीच्यंस्य श्रीरंति। भ्रद्रो भूत्वा परांभवति। साऽश्वेणोत्। देवा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। तेंंऽन्वाहार्यपचंनमग्र आदंधत। अथ् गार्हंपत्यम्। अथांऽऽहवनीयम्। साऽब्रंवीत्॥३०॥

प्राच्येषाड्ड श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा सुंवर्गं लोकमेंष्यन्ति। प्रजां तु न वेंष्ट्यन्तु इति। यस्यैवमुग्निराधीयतें। प्राच्यंस्य श्रीरंति। भुद्रो भूत्वा सुंवर्गं लोकमेंति। प्रजां तु न विंन्दते। साऽब्रंवीदिडा मनुम्। तथा वा अहं तवाग्निमाधांस्यामि। यथा प्र प्रजयां पृश्भिर्मिथुनैर्जनिष्यसें॥३१॥

प्रत्यस्मिँ होके स्थास्यसिं। अभि सुंवर्गं होकं जेष्यसीतिं। गार्हंपत्यमग्र आदंधात्। गार्हंपत्यं वा अनुं प्रजाः पृशवः प्रजायन्ते। गार्हंपत्येनैवास्मैं प्रजां पृश्नन्प्राजनयत्। अथौन्वाहार्यपर्चनम्। तिर्यिष्टिंव वा अयं होकः। अस्मिन्नेव तेनं होके प्रत्यंतिष्ठत्। अथांऽऽहवनीयम्। तेनैव सुंवर्गं होकमभ्यंजयत्॥३२॥

यस्यैवम् ग्निरांधीयतें। प्र प्रजयां पृश्भिंमिंथुनैर्जायते। प्रत्यस्मिं ह्योके तिष्ठति। अभि सुंवर्गं लोकं जयति। यस्य वा अयंथादेवतम् ग्निरांधीयतें। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यस्यं यथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते।

#### वसीयान्भवति॥३३॥

भृगूंणां त्वाऽङ्गिरसां व्रतपते व्रतेनादंधामीति भृग्वङ्गिरसामादंध्यात्। आदित्यानां त्वा देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीत्यन्यासां ब्राह्मणीनां प्रजानांम्। वर्रुणस्य त्वा राज्ञां व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञंः। इन्द्रंस्य त्वेन्द्रियेणं व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञन्यंस्य। मनोस्त्वा ग्रामण्यों व्रतपते व्रतेनादंधामीति वेश्यंस्य। मनोस्त्वा ग्रामण्यों व्रतपते व्रतेनादंधामीति वेश्यंस्य। ऋभूणां त्वां देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीति रथकारस्यं। यथादेवतमग्निराधीयते। न देवतांभ्य आवृंश्यते। वसीयान्भवति॥३४॥

प्राणुष्ठि वे राष्ट्रिश्यते रूथे भविष्यनीत्यंवविज्ञिन्य्यमंऽज्ञयुद्धनीयान्भवि वर्ष वा व्याप्ति । [४]

प्रजापंतिर्वाचः सत्यमंपश्यत्। तेनाग्निमाधंत्त। तेन वै

स आधित्। भूर्भुवः सुविरित्याह्। एतद्वै वाचः सत्यम्। य एतेनाग्निमाधत्ते। ऋधीत्येव। अथी सत्यप्रांशूरेव भवति।

अथो य एवं विद्वानंभिचरति। स्तृणुत एवैनम्॥३५॥

भूरित्यांह। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। भुव इत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। सुव्विरत्यांह। सुव्र्ग एव लोके प्रतिं तिष्ठति। त्रिभिरक्षरैर्गार्हंपत्यमा दंधाति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठित्माधंत्ते। सर्वैः पश्चिमिरहवनीयम्॥३६॥

सुवर्गाय वा एष लोकायाधीयते। यदांहवनीयः। सुवर्ग एवास्मैं लोके वाचः सत्यः सर्वमाप्नोति। त्रिभिर्गार्हंपत्यमा दंधाति। पश्चिभंराहवनीयम्। अष्टौ सम्पंद्यन्ते। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रौंऽग्निः। यावांनेवाग्निः। तमाधंत्ते॥३७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्। ताभ्यो ज्योतिरुदंगृह्णात्। तं ज्योतिः पश्यन्तीः प्रजा अभि समावर्तन्त। उपरीवाग्निमुद्गृह्णीयादुद्धरन्। ज्योतिरेव पश्यन्तीः प्रजा यजंमानम्भि समावर्तन्ते। प्रजापंतेरक्ष्यंश्वयत्। तत्परां-ऽपतत्। तदश्वोऽभवत्। तदश्वंस्याश्वत्वम्॥३८॥

पुष वै प्रजापंतिः। यद्ग्निः। प्राजापत्योऽश्वः। यदर्श्वं पुरस्तान्नयंति। स्वमेव चक्षुः पश्यंन्य्रजापंतिरनूदेति। वृज्री वा एषः। यदर्श्वः। यदर्श्वं पुरस्तान्नयंति। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। पुनरा वर्तयति॥३९॥

ज्निष्यमाणानेव प्रतिनुदते। न्यांहवनीयो गार्हंपत्य-मकामयत। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। तौ विभाजं नाशंक्रोत्। सोऽश्वंः पूर्ववाङ्गृत्वा। प्राञ्चं पूर्वमुदंवहत्। तत्पूर्ववाहंः पूर्ववाद्मम्। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। विभक्ति-रेवैनयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवैनौ कुरुते॥४०॥

यदुपर्युपरि शिरो हरैंत्। प्राणान् विच्छिन्द्यात्। अधोऽधः शिरो हरति। प्राणानां गोपीथायं। इयत्यग्रे हरति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेवैनं लोकेषु प्रतिष्ठितुमाधंत्ते। प्रजापंतिरुग्निमंसृजत। सोऽबिभेत्प्र मा

## **धक्ष्यतीतिं॥४**१॥

तस्यं त्रेधा मंहिमानं व्यौहत्। शान्त्या अप्रदाहाय। यत्रेधाऽग्निराधीयतें। महिमानंमेवास्य तद्यूहित। शान्त्या अप्रदाहाय। पुन्रा वंर्तयति। महिमानंमेवास्य सन्दंधाति। पृशुर्वा पृषः। यदर्श्वः। पृष रुद्रः॥४२॥

यद्गिः। यदश्वंस्य पृदेंऽग्निमांद्ध्यात्। रुद्रायं पृश्निपंदध्यात्। अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यन्नाकृमयेत्। अनंवरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। पृर्श्वत आक्रमयेत्। यथाऽऽहितस्याग्नेरङ्गांरा अभ्यव्वर्तेरन्। अवंरुद्धा अस्य पृशवो भवंन्ति। न रुद्रायापिंदधाति॥४३॥

त्रीणि ह्वी १ ष् निर्वपति। विराजं एव विक्रान्तं यजंमानोऽनु विक्रमते। अग्नये पर्वमानाय। अग्नये पावकायं। अग्नये शुचंये। यद्ग्रये पर्वमानाय निर्वपति। पुनात्येवैनम्। यद्ग्रये पावकायं। पूत एवास्मिन्नन्नाद्यं दधाति। यद्ग्रये शुचंये। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्नुपरिष्टाद्दधाति॥४४॥ पुनाहुवनीयं धनेऽश्वतं वर्तवति कृष्ण् इति एवे वेश्वति यद्ग्रये श्वं पर्व पर्व पर्व प्रवं पर्व प्रवं प्रवं प्रवं प्रवं वा——[५]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुंप्यन्तः। अग्नौ वामं वसु सं न्यंदधत। इदमुं नो भविष्यति। यदिं नो जेष्यन्तीतिं। तद्ग्निर्नोध्सहंमशक्नोत्। तत् त्रेधा विन्यंदधात्। पृशुषु तृतीयम्। अपसु तृतीयम्। आदित्ये तृतीयम्॥४५॥

तद्देवा विजित्यं। पुन्रवांरुरुथ्सन्त। तैंऽग्नये पर्वमानाय

पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपन्। पृशवो वा अग्निः पर्वमानः। यदेव पृशुष्वासीत्। तत्तेनावांरुन्धतः। तेऽग्नयं पावकायं। आपो वा अग्निः पावकः। यदेवापस्वासीत्। तत्तेनावांरुन्धतः॥४६॥

तेंऽग्नये शुचंये। असौ वा आंदित्योंऽग्निः शुचिः। यदेवाऽऽदित्य आसींत्। तत्तेनावांरुन्धत। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। तुनुवो वावैता अंग्र्याधेयंस्य। आग्नेयो वा अष्टा-कंपालोऽग्र्याधेयमितिं। यत्तं निर्वपेंत्। नैतानिं। यथाऽऽत्मा स्यात्॥४७॥

नाङ्गांनि। ताहगेव तत्। यदेतानिं निर्वपेंत्। न तम्। यथाऽङ्गांनि स्युः। नाऽऽत्मा। ताहगेव तत्। उभयांनि सह निरुप्यांणि। यज्ञस्यं सात्मत्वायं। उभयं वा एतस्येंन्द्रियं वीर्यमाप्यते॥४८॥

यौंऽग्निमांधृत्ते। ऐन्द्राग्नमेकांदशकपालमनु निर्वपेत्। आदित्यं चरुम्। इन्द्राग्नी वै देवानामयांतयामानौ। ये एव देवते अयांतयाम्नी। ताभ्यांमेवास्मां इन्द्रियं वीर्यमवं रुन्थे। आदित्यो भंवति। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। धेन्वै वा एतद्रेतः॥४९॥

यदाज्यम्"। अनुडुहंस्तण्डुलाः। मिथुनमेवावं रुन्धे। घृते भंवति। यज्ञस्यालूँक्षान्तत्वाय। चत्वारं आर्षेयाः प्राश्ञंन्ति। दिशामेव ज्योतिंषि जुहोति। पृशवो वा एतानिं हुवी॰षिं। एष रुद्रः। यद्ग्निः॥५०॥ यथ्सद्य एतानि ह्वी १ वि निर्वपेत्। रुद्रायं पृश्निपिं दध्यात्। अपृश्चर्यज्ञंमानः स्यात्। यन्नानुंनिर्वपेत्। अनेवरुद्धा अस्य पृश्चवंः स्युः। द्वादृशसु रात्रीष्वनु निर्वपेत्। स्वथ्सरप्रतिमा व द्वादंश रात्रयः। स्वथ्सरणैवास्मै रुद्रश्शमियत्वा। पृश्नवं रुन्थे। यदेकंमेकमेतानि ह्वी १ वि निर्वपेत्॥ ५१॥

यथा त्रीण्यावपंनानि पूरयेंत्। तादक्तत्। न प्रजनंनमुच्छि १ षेत्। एकं निरुप्यं। उत्तरे समंस्येत्। तृतीयंमेवास्में
लोकमुच्छि १ षति प्रजनंनाय। तं प्रजयां पृशुभिरनु
प्रजायते। अथो यज्ञस्यैवैषाऽभिक्रांन्तिः। रथचकं प्रवर्तयति।
मनुष्यरथेनैव देवर्थं प्रत्यवंरोहति॥५२॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्राँ(३) न होत्व्या(३) मिति। यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यन्न जुंहुयात्। अग्निः परां भवेत्। तूष्णीमेव होत्व्यम्ं। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। अग्नीधं ददाति॥५३॥

अग्निम्ंखानेवर्तून्प्रीणाति। उपबर्हणं ददाति। रूपाणामवं-रुद्धे। अश्वं ब्रह्मणें। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। धेनु १ होत्रें। आशिषं प्वावं रुन्धे। अनुङ्गाहंमध्वर्यवें। वह्निर्वा अनुङ्गान्। वह्निरध्वर्युः॥५४॥ विह्नेनेव विह्नं यज्ञस्यावं रुन्धे। मिथुनौ गावौं ददाति। मिथुनस्यावंरुद्धौ। वासों ददाति। सुर्वदेवत्यं वै वासंः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। आ द्वांदशभ्यों ददाति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सर एव प्रतिं तिष्ठति। कामंमूर्ध्वं देयम्। अपंरिमितस्यावंरुद्धौ॥५५॥

घर्मः शिर्स्तद्यम्गिः। सिम्प्रंयः पृशुभिर्भुवत्। छुर्दिस्तोकाय तनंयाय यच्छ। वातः प्राणस्तद्यम्गिः। सिम्प्रंयः पृशुभिर्भुवत्। स्वदितं तोकाय तनंयाय पितुं पंच। प्राचीमन् प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो विभाहि। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे॥५६॥

अर्कश्चक्षुस्तद्सौ सूर्यस्तद्यम्गिः। सिम्प्रियः पृशुभिर्भुवत्। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तृनः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिहि तेन् त्वाऽऽदंधे। अग्निनाऽग्ने ब्रह्मणा। आन्शे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे। ये ते अग्ने शिवे तृनुवौं। विराद्वं स्वराद्वं। ते माविशतां ते मां जिन्वताम्॥५७॥

ये तें अग्ने शिवे तुनुवौं। सुम्राद्वांभिभूश्चं। ते माविंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिवे तुनुवौं। विभूश्चं परिभूश्चं। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिवे तुनुवौं। प्रुभ्वी च प्रभूतिश्च। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। यास्ते अग्ने शिवास्तुनुवंः। ताभिस्त्वाऽऽदंधे। यास्ते अग्ने घोरास्तुनुवंः। ताभिरमुं गंच्छ॥५८॥

ड्मे वा एते लोका अग्नयंः। ते यदव्यांवृत्ता आधीयेरन्। शोचयेयुर्यजमानम्। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमा दंधाति। वातः प्राण इत्यंन्वाहार्यपचनम्। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। तेनैवैनान्व्यावंत्यति। तथा न शोचयन्ति यजमानम्। रथन्तरम्भिगांयते गार्हंपत्य आधीयमांने। राथंन्तरो वा अयं लोकः॥५९॥

अस्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमा धंत्ते। वामदेव्यम्भिगांयत उद्धियमांणे। अन्तरिक्षं वै वामदेव्यम्। अन्तरिक्ष एवैन् प्रतिष्ठितमाधंत्ते। अथो शान्तिर्वे वामदेव्यम्। शान्तमेवैनं पश्व्यंमुद्धंरते। बृहद्भिगांयत आहवनीयं आधीयमांने। बार्हतो वा असौ लोकः। अमुष्मिन्नेवैनं लोके प्रति-ष्ठितमाधंत्ते। प्रजापंतिरिग्नमंसृजत॥६०॥

सोऽश्वोऽवारों भूत्वा परांङेत्। तं वांरवन्तीयंनावारयत। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयृत्वम्। श्यैतेनं श्येती अंकुरुत। तच्छौतस्यं श्यैतृत्वम्। यद्वांरवन्तीयंमिभ् गायंते। वार्यित्वैवैनं प्रतिष्ठितमा धंत्ते। श्यैतेनं श्येती कुंरुते। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमादंधाति। सशींर्षाणमेवैनमा धत्ते॥६१॥ उपैनमुत्तरो यज्ञो नंमित। रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। स आधीयमान ईश्वरो यजंमानस्य पृशून् हि॰सितोः। सिम्प्रियः पृशुभिर्भुवदित्यांह। पृशुभिरेवैन् सिम्प्रियं करोति। पृशूनामहि॰सायै। छुर्दिस्तोकाय् तनयाय युच्छेत्यांह। आमेवैतामा शांस्ते। वातंः प्राण इत्यंन्वाहार्युपचंनम्॥६२॥

सप्राणमेवेनमा धंत्ते। स्वदितं तोकाय तनयाय पितुं प्रचेत्यांह। अन्नमेवास्मैं स्वदयति। प्राचीमन् प्रदिशं प्रेहिं विद्वानित्यांह। विभंक्तिरेवैनयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवैनौं कुरुते। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पद इत्यांह। आ-मेवैतामा शांस्ते। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। अर्को वै देवानामन्नम्॥६३॥

अन्नमेवावं रुन्धे। तेनं मे दीदिहीत्यांह। सिमंन्ध एवैनम्ं। आनुशे व्यानश इति त्रिरुदिङ्गयित। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेवेनं लोकेषु प्रतिष्ठितमा धंत्ते। तत्तथा न कार्यम्ं। वीङ्गितमप्रतिष्ठितमा दंधीत। उद्धृत्येवाधायांभिमन्नियः। अवीङ्गितमेवेनं प्रतिष्ठितमाधंत्ते। विराद्वं स्वराद्व यास्ते अग्ने शिवास्तनुवस्ताभिस्त्वाऽऽदंध इत्यांह। एता वा अग्नेः शिवास्तनुवंः। ताभिरेवैन् समंध्यति। यास्ते अग्ने घोरास्तनुवस्ताभिरमुं गुच्छेति ब्रूयाद्यं द्विष्यात्। ताभिरेवैनं पर्गमावयति॥६४॥

लोकोऽस्वर्तन्त्रमार्थनेऽन्वाहार्य्पवं देवान्त्रमर्थनं प्रतिष्ठित्मार्थन् पर्व वा [८]

श्मीगुर्भाद्गिं मंन्थति। एषा वा अग्नेर्यज्ञियां तुनूः।

तामेवास्मै जनयति। अदितिः पुत्रकामा। साध्येभ्यो देवेभ्यौ ब्रह्मौदनमंपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञौत्। सा रेतोऽधत्त। तस्यैं धाता चौर्यमा चौजायेताम्। सा द्वितीयंमपचत्॥६५॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्यें मित्रश्च वरुंणश्चाजायेताम्। सा तृतीयंमपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या अश्शंश्च भगंश्चाजायेताम्। सा चंतुर्थमंपचत्॥६६॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या इन्द्रंश्च विवंस्वाङ्श्चाजायेताम्। ब्रह्मौद्नं पंचति। रेतं एव तद्दंधाति। प्राश्नंन्ति ब्राह्मणा ओंद्नम्। यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तेनं समिधोऽभ्यज्या दंधाति। उच्छेषंणाद्वा अदिती रेतों-ऽधत्त॥६७॥

उच्छेषंणादेव तद्रेतों धत्ते। अस्थि वा एतत्। यथ्समिधंः। एतद्रेतंः। यदाज्यम्। यदाज्यंन समिधोऽभ्यज्यादधांति। अस्थ्येव तद्रेतंसि दधाति। तिस्र आदंधाति मिथुन्त्वायं। इयंतीर्भवन्ति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन् सम्मिताः॥६८॥

इयंतीर्भवन्ति। युज्ञपुरुषा सम्मिताः। इयंतीर्भवन्ति। एतावृद्वे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मिताः। आर्द्रा भवन्ति। आर्द्रमिव हि रेतः सिच्यते। चित्रियस्याश्वत्थस्यादंधाति। चित्रमेव भवति। घृतवंतीभिरा दंधाति॥६९॥ पुतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यद्घृतम्। प्रियेणैवैनं धाम्रा समर्धयति। अथो तेजंसा। गायत्रीभिन्नाह्मणस्यादंध्यात्। गायत्रछंन्दा वै ब्राह्मणः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। त्रिष्टुग्भी राजन्यंस्य। त्रिष्टुप्छंन्दा वै राजन्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययनस्त्वायं॥७०॥

जगंतीभिर्वेश्यंस्य। जगंतीछन्दा वै वैश्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। त॰ संवथ्सरं गोपायेत्। संवथ्सर॰ हि रेतों हितं वर्धते। यद्यंन॰ संवथ्सरे नोपनमैंत्। समिधः पुन्रादंध्यात्। रेतं एव तिद्धतं वर्धमानमेति। न मा॰्समंश्जीयात्। न स्त्रियमुपंयात्॥७१॥

यन्मा १ समंश्जीयात्। यिश्वयं मुप्यात्। निर्वीर्यः स्यात्। नैनं मृग्निरुपं नमेत्। श्व आंधास्यमानो ब्रह्मौद्नं पंचति। आदित्या वा इत उत्तमाः सुवर्गं लोकमायन्। ते वा इतो यन्तं प्रतिनुदन्ते। एते खलु वावाऽऽदित्याः। यद्ग्रौह्मणाः। तैरेव सन्त्वं गंच्छति॥७२॥

नैनं प्रतिनुदन्ते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। क्वां सः। अग्निः कार्यः। यौऽस्मै प्रजां पृशून्प्रंजनयतीति। शल्कैस्ता १रात्रिंमग्निमिन्धीत। तस्मिन्नुपव्युषम्रणी निष्टंपेत्। यथर्ष्मायं वाशिता न्यांविच्छायति। तादगेव तत्। अपोदृह्य भस्माग्निं मन्थति॥७३॥

सैव साऽग्नेः सन्तंतिः। तं मंथित्वा प्राश्चमुद्धंरित।

संवथ्सरमेव तद्रेतों हितं प्रजंनयित। अनांहित्स्तस्याग्नि-रित्यांहुः। यः समिधोऽनांधायाग्निमांधृत्त इतिं। ताः संवथ्सरे पुरस्तादादंध्यात्। संवथ्सरादेवैनंमव्रुध्याधंत्ते। यदिं संवथ्सरेऽनाद्ध्यात्। द्वाद्वश्यां पुरस्तादादंध्यात्। संवथ्सरप्रतिमा व द्वादंश् रात्रयः। संवथ्सरमेवास्याऽऽहिंता भवन्ति। यदिं द्वादृश्यां नाद्ध्यात्। त्र्यहे पुरस्तादादंध्यात्। आहिंता एवास्यं भवन्ति॥७४॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। स रिरिचानोंऽमन्यत। स तपोंऽतप्यत। स आत्मन्वीर्यमपश्यत्। तदंवर्धत। तदंस्माथ्सहंसोर्ध्वमंसृज्यत। सा विराडंभवत्। तां देवासुरा व्यंगृह्णत। सोंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। ममु वा पुषा॥७५॥

दोहां एव युष्माक्मितिं। सा ततः प्राच्युदेक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अर्थवं पितुं में गोपायेतिं। सा द्वितीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। नर्य प्रजां में गोपायेतिं। सा तृतीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। शक्स्यं पशून्में गोपायेतिं॥७६॥

सा चंतुर्थमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। सप्रंथ सुभां में गोपायेतिं। सा पंश्चममुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अहं बुध्निय मन्नं मे गोपायेतिं। अग्नीन् वाव सा तान्व्यंक्रमत। तान्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अथो पङ्किमेव। पङ्किर्वा एषा ब्राँह्मणे प्रविष्टा॥७७॥

तामात्मनोऽधि निर्मिमीते। यद्ग्रिरांधीयतें। तस्मांदेतावंन्तो-ऽग्नय आधीयन्ते। पाङ्कं वा इद सर्वम्। पाङ्केनैव पाङ्कः स्पृणोति। अर्थवं पितुं में गोपायेत्यांह। अन्नमेवैतेनं स्पृणोति। नर्यं प्रजां में गोपायेत्यांह। प्रजामेवैतेनं स्पृणोति। शक्सं पश्नमें गोपायेत्यांह॥ ७८॥

पुशूनेवैतेनं स्पृणोति। सप्रंथ स्मां में गोपायेत्यांह। स्मामेवैतेनंन्द्रिय स्पृणोति। अहें बुध्निय मर्त्रं मे गोपायेत्यांह। मत्रंमेवैतेन श्रिय स्पृणोति। यदंन्वाहार्यपचंने-ऽन्वाहार्यं पचंन्ति। तेन सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यद्गार्हंपत्य आज्यंमधिश्रयंन्ति सम्पत्नींयांज्ञयंन्ति। तेन सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यदांहवनीये जुह्वंति॥७९॥

तेन सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यथ्मभायां विजयंन्ते।
तेन सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यदांवस्थेऽन्न् हरंन्ति। तेन्
सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। तथांऽस्य सर्वे प्रीता अभीष्टा आधीयन्ते। प्रवस्थमेष्यन्नेवमुपंतिष्ठेतैकंमेकम्। यथां
ब्राह्मणायं गृहेवासिने परिदायं गृहानेतिं। तादगेव तत्। पुनंरागत्योपंतिष्ठते। सा भांगेयमेवेषां तत्। सा ततं ऊर्ध्वारोहत्। सा रोहिण्यंभवत्। तद्रोहिण्ये रोहिणित्वम्। रोहिण्यामुग्निमादंधीत। स्व पुवैनं योनौ प्रतिष्ठितमाधंत्ते। प्रथमः प्रश्नः 21

## ऋध्रोत्येनेन॥८०॥

एषा पुश्र्म्में गोपायेति प्रविष्टा पुश्र्में गोपायेत्यांहु जुह्वंति तिष्ठते सप्त चं॥\_\_\_\_\_\_[१०]

ब्रह्म सन्धंत्तुं कृत्तिंकामुद्धन्ति द्वाद्रशसुं प्रजापंतिर्वाचो देवासुरास्तद्विभ्रनींद्धर्मः शिरं हुमे वै शंमीगुर्भात्प्रजापंतिः स रिरिचानः स तपः स आत्मन्वीर्यं दशं॥१०॥ ब्रह्म सन्धंत्तुं तौ दिव्यावर्थो शन्त्वाय् प्राच्येषां यदुपर्युपरि यथ्सद्यः सोऽश्वोऽवारों भृत्वा जर्गतीभिरशींतिः॥८०॥ ब्रह्म सन्धंत्तमृग्नोत्येनेन॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

उद्धन्यमानम्स्या अमेध्यम्। अपं पाप्मानं यर्जमानस्य हन्तु। शिवा नः सन्तु प्रदिश्श्वतंस्रः। शं नों माता पृथिवी तोकंसाता। शं नों देवीर्भिष्टये। आपों भवन्तु पीतयैं। शं योर्भि स्नंवन्तु नः। वैश्वान्रस्यं रूपम्। पृथिव्यां परिस्नसां। स्योनमा विंशन्तु नः॥१॥

यदिदं दिवो यददः पृथिव्याः। सञ्जज्ञाने रोदंसी सम्बभूवतुः। ऊषाँन्कृष्णमंवतु कृष्णमूषाः। इहोभयोंर्यज्ञिय-मागंमिष्ठाः। ऊतीः कुंर्वाणो यत्पृथिवीमचंरः। गुहाकारंमाखुरूपं प्रतीत्यं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः सवीराः। ऊर्जं पृथिव्या रसंमाभरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः पुरूचीः॥२॥

वृम्रीभिरनुंवित्तं गुहांसु। श्रोत्रं त उर्व्यवंधिरा भवामः। प्रजापंतिसृष्टानां प्रजानांम्। क्षुधोऽपंहत्ये सुवितं नों अस्तु। उप प्रभिन्नमिष्मूर्जं प्रजाभ्यः। सूदं गृहेभ्यो रस्माभंरामि। यस्यं रूपं विभ्रंदिमामविंन्दत्। गुह्य प्रविष्टा सिर्रस्य मध्यें। तस्येदं विहंतमाभरंन्तः। अछंम्बद्धारमस्यां विधेम॥३॥

यत्पर्यपंश्यथ्मरि्रस्य मध्यैं। उर्वीमपंश्यञ्जगंतः प्रतिष्ठाम्। तत्पुष्करस्याऽऽयतेनाद्धि जातम्। पूर्णं पृथिव्याः प्रथंन १ हरामि। याभि्रदर्शहुज्जगंतः प्रतिष्ठाम्। उर्वीमिमां विश्वजनस्यं भूत्रीम्। ता नंः शिवाः शर्कराः सन्तु सर्वाः। अग्ने रेतंश्चन्द्र र हिरंण्यम्। अद्धः सम्भूतमृमृतं प्रजासुं। तथ्सम्भरंन्नुत्तर्तो निधायं॥४॥

अतिप्रयच्छं दुरितिं तरेयम्। अश्वों रूपं कृत्वा यदेश्वत्थे-ऽतिष्ठः। संवथ्सरं देवेभ्यों निलायं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः सवीराः। ऊर्जः पृथिव्या अध्युत्थितोऽसि। वनस्पते शृतवंल्शो विरोह। त्वयां व्यमिष्मूर्जं मदेन्तः। रायस्पोषेण समिषा मंदेम। गायत्रिया ह्रियमाणस्य यत्तै॥५॥

पूर्णमपंतत्तृतीयंस्यै दिवोऽिधं। सोंऽयं पूर्णः सोंमपूर्णाद्धि जातः। ततों हरामि सोमपीथस्यावंरुद्धौ। देवानां ब्रह्मवादं वदंतां यत्। उपार्श्वणोः सुश्रवा वै श्रुतोंऽिस। ततो मामाविंशतु ब्रह्मवर्च्सम्। तथ्सम्भर्ङ्स्तदवंरुन्धीय साक्षात्। ययां ते सृष्टस्याग्नेः। हेतिमशंमयत्प्रजापंतिः। तामिमामप्रदाहाय॥६॥

श्मी शान्त्ये हराम्यहम्। यत्ते सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कत्ं भा आँच्छं ज्ञातवेदः। तयां भासा सम्मितः। उरुं नो लोकमनु प्रभाहि। यत्ते तान्तस्य हृदयमाच्छिन्दञ्जातवेदः। मुरुतोऽद्भिस्तंमयित्वा। पृतत्ते तदंशनेः सम्भेरामि। सात्मां अग्ने सहृदयो भवेह। चित्रियादश्वत्थाथ्सम्भृता बृह्त्यः॥७॥

शरीरम्भि सङ्स्कृताः स्थ। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन् सम्मिताः। तिस्रस्त्रिवृद्धिर्मिथुनाः प्रजात्यै। अश्वत्थाद्धेव्य- वाहाद्धि जाताम्। अग्नेस्तुनूं युज्ञिया् सम्भेरामि। शान्तयोनि शमीगुर्भम्। अग्नये प्रजनियतवै। यो अश्वत्थः शमीगुर्भः। आरुरोह त्वे सचौ। तं ते हरामि ब्रह्मणा॥८॥

यज्ञियैं केतुभिं सह। यं त्वां समभंरञ्जातवेदः। यथाशरीरं भूतेषु न्यंक्तम्। स सम्भृंतः सीद शिवः प्रजाभ्यः। उरुं नों लोकमनुंनेषि विद्वान्। प्रवेधसें क्वये मेध्यांय। वचीं वन्दारुं वृषभाय वृष्णें। यतों भ्यमभंयं तन्नों अस्तु। अवं देवान् यंजे हेड्यान्। समिधाऽग्निं दुंवस्यत॥९॥

#### ॥ घृत-सूक्तम्॥

घृतैर्बोधयतातिंथिम्। आऽस्मिन् ह्व्या जुंहोतन। उपं त्वाऽग्ने ह्विष्मितीः। घृताचींर्यन्तु हर्यत। जुषस्वं स्मिधो ममं। तं त्वां स्मिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामसि। बृहच्छोंचा यविष्ठ्य। स्मिध्यमानः प्रथमो नु धर्मः। सम्कुभिरज्यते विश्ववारः॥१०॥

शोचिष्केंशो घृतिनिर्णिक्पावकः। सुयज्ञो अग्निर्यज्ञथांय देवान्। घृतप्रंतीको घृतयोनिर्ग्निः। घृतैः सिर्मेद्धो घृतम्स्यान्नम्। घृतप्रुषंस्त्वा स्रितों वहन्ति। घृतं पिबंन्थ्स्यज्ञां यक्षि देवान्। आयुर्दा अंग्ने ह्विषों जुषाणः। घृतप्रंतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गव्यम्। पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्॥११॥ त्वामंग्ने समिधानं यंविष्ठ। देवा दूतं चंक्रिरे हव्यवाहम्ं। उरुज्रयंसं घृतयोनिमाहुंतम्। त्वेषं चक्षुंदिधिरे चोदयन्वंति। त्वामंग्ने प्रदिव आहुंतं घृतेनं। सुम्नायवंः सुष्मिधा समीधिरे। स वांवृधान ओषंधीभिरुक्षितः। उरु ज्रयार्थसे पार्थिवा वितिष्ठसे। घृतप्रंतीकं व ऋतस्यं धूर्षदम्ं। अग्निं मित्रं न संमिधान ऋंअते॥१२॥

इन्धांनो अक्रो विदर्थेषु दीद्यंत्। शुक्रवंर्णामुद्धं नो यश्सते धियम्। प्रजा अंग्रे संवांसय। आशांश्च पृश्भिः सह। गृष्ट्राण्यंस्मा आधेहि। यान्यासंन्थ्सिवतुः स्वे। मृही विश्पत्नी सदेने ऋतस्यं। अर्वाची एतं धरुणे रयीणाम्। अन्तर्वत्नी जन्यं जातवेदसम्। अध्वराणां जनयथः पुरोगाम्॥१३॥

आरोहतं दुशत् शक्वंरीर्ममं। ऋतेनाँग्न आयुषा वर्चसा सह। ज्योग्जीवंन्त उत्तरामुत्तरा समाँम्। दर्शमहं पूर्णमांसं यज्ञं यथा यजैं। ऋत्वियवती स्थो अग्निरंतसौ। गर्भं दधाथां ते वामहं देदे। तथ्सत्यं यद्वीरं विभृथः। वीरं जनियुष्यर्थः। ते मत्प्रातः प्रजनिष्येथे। ते मा प्रजाते प्रजनियुष्यर्थः॥१४॥

प्रजयां पृशुभिंब्रह्मवर्चसेनं सुवर्गे लोके। अनृंताथ्सत्य-मुपैमि। मानुषाद्दैव्यमुपैमि। दैवीं वार्चं यच्छामि। शल्कैर्ग्निमिंन्थानः। उभौ लोकौ संनेमहम्। उभयौंर्लोकयोर् ऋध्वा। अति मृत्युं तराम्यहम्। जातंवेदो भुवनस्य रेतः। इह सिंश्व तपंसो यज्जनिष्यते॥१५॥

अग्निमंश्वत्थादिधं हव्यवाहम्। श्मीग्रभाञ्चनयन् यो मंयोभूः। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथा नो वर्धया रियम्। अपेत वीत् वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अदांदिदं यमोऽवसानं पृथिव्याः। अर्नन्निमं पितरो लोकमंस्मै॥१६॥

अग्नेर्भस्मांस्युग्नेः पुरीषमसि। संज्ञानंमसि काम्धरंणम्। मियं ते काम्धरंणं भूयात्। संवंः सृजािम् हृदंयािन। स॰सृष्टं मनों अस्तु वः। स॰सृष्टः प्राणो अस्तु वः। सं या वंः प्रियास्तुन्वंः। सं प्रिया हृदंयािन वः। आत्मा वो अस्तु सिम्प्रियः। सिम्प्रियास्तुनुवो ममं॥१७॥

कल्पेतां द्यावांपृथिवी। कल्पेन्तामाप् ओषंधीः। कल्पेन्तामग्रयः पृथंक्। मम् ज्यैष्ठ्यांय सन्नताः। येंऽग्रयः समेनसः। अन्तरा द्यावांपृथिवी। वासंन्तिकावृत् अभि कल्पेमानाः। इन्द्रंमिव देवा अभि सं विंशन्तु। दिवस्त्वां वीर्येण। पृथिव्ये मंहिम्ना॥१८॥

अन्तरिक्षस्य पोषेण। सर्वपंशुमादंधे। अजीजनत्रमृतं मर्त्यासः। अस्रेमाणं तरणिं वीडुजंम्भम्। दश् स्वसारो अग्रुवंः समीचीः। पुमार्थसं जातम्भि सर्श्यम्ताम्। प्रजापंतेस्त्वा प्राणेनाभि प्राणिंमि। पूष्णः पोषेण् मह्यम्। दीर्घायुत्वायं श्तशांरदाय। श्तर श्रुग्य आयुंषे वर्चसे॥१९॥

जीवात्वे पुण्यांय। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोककुञ्जांतवेदः। प्राणे त्वाऽमृतमादंधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गुप्त्यैं। सुगार्हपत्यो विदहन्नरांतीः। उषसः श्रेयंसीः श्रेयसीर्दधंत्॥२०॥

अग्नें स्पत्ना र् अप बार्धमानः। रायस्पोष्मिष्मूर्जम्स्मासुं धेहि। इमा उ मामुपंतिष्ठन्तु रायः। आभिः प्रजाभिरिह संवंसेय। इहो इडां तिष्ठतु विश्वरूपी। मध्ये वसौदीदिहि जातवेदः। ओजंसे बलाय त्वोद्यंच्छे। वृषंणे शुष्मायाऽऽयुंषे वर्चसे। स्पत्नतूरंसि वृत्रतूः। यस्ते देवेषुं महिमा सुंवर्गः॥२१॥

यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। पृष्टिर्या ते मनुष्येषु पप्रथे। तयां नो अग्ने जुषमाण एहिं। दिवः पृथिव्याः पर्यन्तिरक्षात्। वातांत्पशुभ्यो अध्योषंधीभ्यः। यत्रं यत्र जातवेदः सम्बभूथं। ततों नो अग्ने जुषमाण एहिं। प्राचीमनुं प्रदिश्ं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो विभाहि॥२२॥

ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अन्वग्निरुषसामग्रंमख्यत्। अन्वहांनि प्रथमो जातवेदाः। अनु सूर्यस्य पुरुत्रा चे रश्मीन्। अनु द्यावांपृथिवी आतंतान। विक्रंमस्व महाश् असि। वेदिषन्मानुंषेभ्यः। त्रिषु लोकेषुं जागृहि। यदिदं दिवो यददः पृंथिव्याः। संविदाने रोदंसी सं बभूवर्तुः॥२३॥

तयौः पृष्ठे सींदतु जातवेदाः। शुम्भूः प्रजाभ्यंस्तुनुवै स्योनः। प्राणं त्वाऽमृत् आ दंधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गृत्यौ। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तुनूः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिहि तेन त्वाऽऽदंधे। अग्निनौऽग्ने ब्रह्मणा। आनुशे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे॥२४॥

नर्य प्रजां में गोपाय। अमृतत्वायं जीवसें। जातां जीन्ष्यमाणां च। अमृते सत्ये प्रतिष्ठिताम्। अर्थवं पितुं में गोपाय। रसमन्नंमिहायुंषे। अदंब्यायोऽशीततनो। अविषन्नः पितुं कृणा शङ्स्यं पृशून्में गोपाय। द्विपादो ये चतुंष्पदः॥२५॥

अष्टाशंफाश्च य इहाग्नें। ये चैकंशफा आशुगाः। सप्रंथ स्भां में गोपाय। ये च सभ्याः सभासदः। तानिंन्द्रियावंतः कुरु। सर्वमायुरुपांसताम्। अहे बुध्निय मन्नें मे गोपाय। यमृषंयस्त्रैविदा विदुः। ऋचः सामांनि यजूर्षेष। सा हि श्रीरमृतां सताम्॥२६॥

चतुंः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्ये। मुर्मृज्यमाना महृते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजंमानाय कामान्। इहैव सन्तत्रं सृतो वो अग्नयः। प्राणेनं वाचा मनसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्। ज्योतिषा वो वैश्वान्रेणोपतिष्ठे। पश्चधाऽग्नीन्व्यंक्रामत्। विराद्थ्सृष्टा प्रजा-पंतेः। ऊर्ध्वाऽऽरोहद्रोहिणी। योनिर्ग्नेः प्रतिष्ठितिः॥२७॥ विश्वन्तु नः पुरूचीविधम नि्धाय यत्तेऽप्रंदाहाय बृहुत्यौं ब्रह्मणा दुवस्यत विश्ववार ड्रममृंश्वते पुग्गां प्रजनिय्पयौ जिन्व्यतेंऽसम् ममं मिहुम्ना वर्षम् दर्धस्युव्गों भांहि सम्बभूवतुरायुर्व्यांनशे चतुंप्यदः सतां प्रजापंतुद्धं चं॥—[१]

नवैतान्यहांनि भवन्ति। नव वै सुंवर्गा लोकाः। यदेतान्यहाँन्युपयन्ति। नवस्वेव तथ्सुंवर्गेषुं लोकेषुं सित्रणिः प्रतितिष्ठंन्तो यन्ति। अग्निष्टोमाः परंः सामानः कार्या इत्यांहुः। अग्निष्टोमसंम्मितः सुवर्गो लोक इति। द्वादंशाग्निष्टोमस्यं स्तोत्राणि। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। तत्तन्न सूर्क्यम्। उक्थ्यां एव संप्तद्शाः परंः सामानः कार्याः॥२८॥

प्शवो वा उक्थानिं। पृश्नामवंरुद्धौ। विश्वजिद्भिजितां-विग्निष्टोमौ। उक्थ्याः सप्तद्शाः परंः सामानः। ते सङ्स्तुंता विराजम्भि सम्पंद्यन्ते। द्वे चर्चावतिंरिच्येते। एकंया गौरतिंरिक्तः। एक्याऽऽयुंरूनः। सुवर्गो वै लोको ज्योतिंः। ऊर्ग्विराट्॥२९॥

सुवर्गमेव तेनं लोकम्भि जंयन्ति। यत्पर् राथंन्तरम्। तत्प्रंथमेऽहंन्कार्यम्। बृहद्दितीयें। वैरूपं तृतीयें। वैराजं चंतुर्थे। शाक्करं पंश्रमे। रैवत १ षष्ठे। तद्ं पृष्ठेभ्यो नयंन्ति। सन्तनंय पृते ग्रहां गृह्यन्ते॥३०॥

अतिग्राह्याः परंः सामसु। इमानेवैतैर्लोकान्थ्सन्तंन्वन्ति। मिथुना एते ग्रहां गृह्यन्ते। अतिग्राह्याः परंः सामसु। मिथुनमेव तैर्यजमाना अवंरुन्थते। बृहत्पृष्ठं भवति। बृहद्वे सुंवर्गो लोकः। बृह्तैव सुंवर्गं लोकं यंन्ति। त्रयस्त्रिष्शि नाम् सामं। माध्यं दिने पर्वमाने भवति॥३१॥

त्रयंस्त्रिश्शृद्धे देवताः। देवतां पृवावंरुन्धते। ये वा इतः परांश्वश् संवथ्सरमृप्यन्ति। न हैनं ते स्वस्ति समंश्जुवते। अथ येंऽमृतोऽविश्विमृप्यन्ति। ते हैनः स्वस्ति समंश्जुवते। पृतद्धा अमृतोऽविश्वमृपंयन्ति। यदेवम्। यो ह खलु वाव प्रजापंतिः। स उवेवेनन्द्रः। तदुं देवेभ्यो नयंन्ति॥३२॥ क्यं विषक्षित् पर्वमाने भवतीन्त्र एकं वा——[२]

सन्तितिर्वा एते ग्रहाः। यत्परंः सामानः। विष्वान्दिवा-कीर्त्यम्। यथा शालाये पक्षंसी। एवः संवथ्सरस्य पक्षंसी। यदेतेन गृह्येरन्। विष्ची संवथ्सरस्य पक्षंसी व्यवंस्रः सेयाताम्। आर्तिमार्च्छंयुः। यदेते गृह्यन्ते। यथा शालांये पक्षंसी मध्यमं वःशमि संमायच्छंति॥३३॥

पुवः संवथ्सरस्य पक्षंसी दिवाकीत्यंमिभ सं तंन्वन्ति। नार्तिमार्च्छंन्ति। एकविद्शमहंभविति। शुक्राग्रा ग्रहां गृह्यन्ते। प्रत्युत्तंब्य्ये सयत्वायं। सौर्यं एतदहंः पृशुरालंभ्यते। सौर्यो-ऽतिग्राह्यों गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं एवेष बलिरहिंयते। स्रैतदहंरतिग्राह्यां गृह्यन्ते॥३४॥

स्प्त वै शीर्षणयाः प्राणाः। असावादित्यः शिरः प्रजानाम्। शीर्षन्नेव प्रजानां प्राणान्दंधाति। तस्माध्सप्त शीर्षन्प्राणाः। इन्द्रों वृत्र हत्वा। असुरान्पराभाव्यं। स इमाँ श्लोकान्भ्यंजयत्। तस्यासौ लोकोऽनंभिजित आसीत्। तं विश्वकंमां भूत्वाऽभ्यंजयत्। यद्वैश्वकर्मणो गृह्यते॥३५॥

सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। प्रवा एतैंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये वैश्वकर्मणं गृह्णतें। आदित्यः श्वो गृह्यते। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रति तिष्ठन्ति। अन्यौन्यो गृह्यते। विश्वौन्येवान्येन कर्माणि कुर्वाणा यन्ति। अस्यामन्येन प्रति तिष्ठन्ति। तावाऽपंराधांथ्यंवथ्सरस्यान्यौन्यो गृह्यते। तावुभौ सह महाव्रते गृह्यते। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। उभयौलींकयोः प्रति तिष्ठन्ति। अर्क्यमुक्थं भवति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धौ॥३६॥ मृत्यव्यत्विगृह्यं गृह्यते गृह्यते मव्यस्याव्यांत्र्यं गृह्यते प्रवि । ३ ।

पुक्विष्श पृष भेवति। एतेन् वै देवा एंकविष्शेने। आदित्यमित उत्तमर सुंवर्गं लोकमारोहयन्। स वा पृष इत एंकविष्शः। तस्य दशावस्तादहांनि। दशं पुरस्तांत्। स वा पृष विराज्युंभ्यतः प्रतिष्ठितः। विराजि हि वा पृष उभयतः प्रतिष्ठितः। तस्मादन्त्रेमौ लोकौ यन्। सर्वेषु सुवर्गेषुं लोकेष्वंभितपंत्रेति॥३७॥

देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। परांचो-ऽतिपादादंबिभयुः। तं छन्दोभिरदृश्हं धृत्यैं। देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। अवाचोऽवपादादंबिभयुः। तं पश्चभीं रिश्मिभिरुदंवयन्। तस्मादेकविश्शेऽहृन्पश्चं दिवाकीत्यांनि क्रियन्ते। रुश्मयो वै दिवाकीत्यांनि। ये गांयत्रे। ते गांयत्रीषूत्तंरयोः पवंमानयोः॥३८॥

महादिवाकीर्त्यक् होतुंः पृष्ठम्। विकुणं ब्रह्मसामम्। भासौंऽग्निष्टोमः। अथैतानि पर्राणि। परैर्वे देवा आंदित्यक् सुंवर्गं लोकमंपारयन्। यदपारयन्। तत्पराणां पर्व्वम्। पारयन्त्येनं पर्राणि। य पृवं वेदं। अथैतानि स्पराणि। स्परैर्वे देवा आंदित्यक् सुंवर्गं लोकमंस्पारयन्। यदस्पारयन्। तथ्स्पराणाः स्पर्ववम्। स्पारयन्त्येन्कु स्पराणि। य पृवं वेदं॥३९॥

अप्रतिष्ठां वा एते गंच्छन्ति। येषा रे संवथ्सरेऽनाप्तेऽर्थ। एकाद्शिन्याप्यतें। वैष्णवं वांमनमालंभन्ते। युज्ञो वे विष्णुंः। यज्ञमेवालंभन्ते प्रतिष्ठित्ये। ऐन्द्राग्नमालंभन्ते। इन्द्राग्नी वे देवानामयातयामानौ। ये एव देवते अयांतयाम्नी। ते एवाऽऽलंभन्ते॥४०॥

वैश्वदेवमालंभन्ते। देवतां एवावंरुन्थते। द्यावापृथिव्यां धेनुमालंभन्ते। द्यावापृथिव्योरेव प्रतिं तिष्ठन्ति। वायव्यं वथ्समालंभन्ते। वायुरेवैभ्यो यथाऽऽयत्नाद्देवता अवं रुन्धे। आदित्यामविं वशामालंभन्ते। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति। मैत्रावरुणीमालंभन्ते॥४१॥

मित्रेणैव यज्ञस्य स्विष्टः शमयन्ति। वर्रुणेन दुरिष्टम्। प्राजापत्यं तूपरं महाव्रुत आर्लभन्ते। प्राजापत्योऽतिग्राह्यो गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं एवैष बुलिर्ह्रियते। आग्नेयमा लंभन्ते प्रति प्रज्ञांत्यै। अजुपेत्वान् वा एते पूर्वेर्मासैरवं रुन्धते। यदेते गुव्याः पृशवं आलुभ्यन्ते॥ उभयेषां पशूनामवंरुद्धै॥४२॥

यदितिरिक्तामेकादिशिनीमालभेरन्। अप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यति-रिच्येत। यद्दौ द्वौ पुशू समस्येयुः। कनीय आयुः कुर्वीरन्। यदेते ब्राह्मणवन्तः पुशवं आलुभ्यन्तै। नाप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यति-रिच्यंते। न कनीय आयुः कुर्वते॥४३॥

ते पुवालंभन्ते मैत्रावरुणीमालंभुन्तेऽवंरुख्ये सप्त चं॥—————[५]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा वृत्तोऽशयत्। तं देवा भूतानाः रस्ं तेजः सम्भृत्यं। तेनैनमभिषज्यन्। महानंववृतीतिं। तन्मंहावृतस्यं महाव्रतत्वम्। महद्भृतमितिं। तन्मंहावृतस्यं महाव्रत्वम्। मह्वृतो वृत्तमितिं। तन्मंहावृतस्यं महाव्रत्वम्। पृश्चविर्शः स्तोमों भवति॥४४॥

चतुर्वि शत्यर्धमासः संवथ्सरः। यद्वा एतस्मिन्थ्संवथ्सरेऽधि प्राजायत। तदन्नं पश्चिव श्रमंभवत्। मध्यतः क्रियते। मध्यतो ह्यन्नंमशितं धिनोति। अथो मध्यत एव प्रजानामूर्ग्यीयते। अथ यद्वा इदमंन्ततः क्रियते। तस्मादुदन्ते प्रजाः समेधन्ते। अन्ततः क्रियते प्रजनंनायैव। त्रिवृच्छिरो भवति॥४५॥

त्रेधाविहित १ हि शिरं। लोमं छ्वीरस्थि। परांचा स्तुवन्ति। तस्मात्तथ्मदृगेव। न मेद्यतोऽनुं मेद्यति। न कृश्यतोऽनुं कृश्यति। पुश्चदुशौंऽन्यः पुक्षो भंवति। सुप्तदुशौं- ऽन्यः। तस्माद्वया ईस्यन्यत्रमधम्मि पूर्यावर्तन्ते। अन्यत्रतो हि तद्गरीयः क्रियते॥४६॥

पृश्चविष्ण आत्मा भेवति। तस्माँनमध्यतः पृशवो वरिष्ठाः। पृक्वविष्णं पुच्छम्। द्विपदांसु स्तुवन्ति प्रतिष्ठित्यै। सर्वेण स्तु स्तुवन्ति। सर्वेण ह्याँत्मनाँऽऽत्मन्वी। सहोत्पतंन्ति। एकैकामुच्छिष्णन्ति। आत्मन्न ह्यङ्गांनि बद्धानि। न वा पृतेन सर्वः पुरुषः॥४७॥

यदित इंतो लोमांनि दतो नुखान्। पृरिमादंः क्रियन्ते। तान्येव तेन प्रत्युंप्यन्ते। औदुंम्बर्स्तल्पों भवति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धौ। यस्यं तल्प्सद्यमनंभिजित् स्यात्। स देवाना सम्यक्षे। तल्प्सद्यम्भिजयानीति तल्पंमा्रुह्योद्गायेत्। तल्प्सद्यम्भिजयानीति तल्पंमा्रुह्योद्गायेत्। तल्प्सद्यम्भिजयानीति तल्पंमा्रुह्योद्गायेत्। तल्प्सद्यम्भेवाभि जयति॥४८॥

यस्यं तल्प्सद्यंम्भिजित्र स्यात्। स देवाना स् साम्यक्षे। तल्प्सद्यं मा पराजेषीति तल्पंमारुह्योद्गायेत्। न तल्प्सद्यं पराजयते। प्रेङ्के शर्सति। महो वे प्रेङ्कः। महंस प्वान्नाद्यस्यावंरुद्धे। देवासुराः संयंत्ता आसन्। त आंदित्ये व्यायंच्छन्त। तं देवाः समजयन्॥४९॥

ब्राह्मणश्चं शूद्रश्चं चर्मकुर्ते व्यायंच्छेते। दैव्यो वै वर्णों ब्राह्मणः। असुर्यः शूद्रः। इमें ऽराथ्सुरिमे सुंभूतमंऋत्रित्यंन्यत्रो ब्र्यात्। इम उद्वासीकारिणं इमे दुर्भूतमंऋत्रित्यंन्यत्रः। यदेवैषा प्रकृतं या राद्धिः। तदंन्यत्रोंऽभि श्रींणाति। यदेवैषां दुष्कृतं याऽराद्धिः। तदंन्यत्रोऽपं हन्ति। ब्राह्मणः सं जंयति। अमुमेवाऽऽदित्यं भ्रातृंव्यस्य संविन्दन्ते॥५०॥ भवति भवति क्रियते पुरुषे जयत्यजयश्रयुत्येव चा———[६]

उद्धन्यमानं नवैतानि सन्तंतिरेकविष्या पृषोऽप्रंतिष्ठां प्रजापंतिर्वृत्तः षद्॥॥ उद्धन्यमानः शोचिष्केशोऽप्रं सुपन्नानितग्राह्मां वैश्वदेवमालंभन्ते पञ्चाशत्॥५०॥ उद्धन्यमानुर् संविन्दन्ते॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

देवासुराः संयंता आसन्। ते देवा विजयम्प्यन्तः। अग्नीषोमयोस्तेजस्विनींस्तुनः सन्त्रंदधत। इदम्ं नो भविष्यति। यदि नो जेष्यन्तीतिं। तेनाग्नीषोमावपांक्रामताम्। ते देवा विजित्यं। अग्नीषोमावन्वैंच्छन्। तैंऽग्निमन्वं-विन्दत्रृतुषूथ्मंत्रम्। तस्य विभंक्तीभिस्तेजस्विनींस्तुन्-रवांरुन्थत॥१॥

ते सोम्मन्वंविन्दन्। तमंघ्नन्। तस्यं यथाऽभिज्ञायं त्नूर्व्यगृह्णत्त। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृहीताः। नानांऽऽग्नेयं पुनर्भिये कुर्यात्। यदनांग्नेयं पुनर्भिये कुर्यात्। व्यृद्धमेव तत्॥२॥

अनाँग्नेयं वा एतिक्रियते। यथ्मिमधस्तनूनपांतिमिडो बर्हिर्यंजित। उभावाँग्नेयावाज्यंभागौ स्याताम्। अनाँज्यभागौ भवत् इत्यांहुः। यदुभावाँग्नेयावन्वश्चावितिं। अग्नये पवंमानायोत्तंरः स्यात्। यत्पवंमानाय। तेनाऽऽज्यंभागः। तेनं सौम्यः। बुधंन्वत्याग्नेयस्याऽऽज्यंभागस्य पुरोऽनुवाक्यां भवति॥३॥

यथां सुप्तं बोधयंति। ताहगेव तत्। अग्निन्यंक्ताः पत्नीसंयाजानामृचंः स्युः। तेनाँऽऽग्नेय सर्वं भवति। एक्धा तेजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। प्रजनंनं वा अग्निः। प्रजनंनमेवोपैतीतिं। कृतयंजुः सम्भृतसम्भार् इत्यांहुः॥४॥

न सम्भृत्याः सम्भाराः। न यजुः कार्यमिति। अथो खर्णु। सम्भृत्यां एव संम्भाराः। कार्यं यजुः। पुन्राधेयंस्य समृद्धै। तेनोपा १ श्रु प्रचरित। एष्यं इव वा एषः। यत्पुनराधेयः। यथोपा १ श्रु नृष्टमिच्छति॥ ५॥

ताहगेव तत्। उचैः स्विष्टकृतमुथ्मृंजिति। यथां नृष्टं वित्त्वा प्राह्यमितिं। ताहगेव तत्। एक्धा तेंजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। तत्तथा नोपैति। प्रयाजानूयाजेष्वेव विभेक्तीः कुर्यात्। यथापूर्वमाज्यंभागौ स्यातांम्। एवं पंत्रीसंयाजाः॥६॥

तद्वैश्वान्रवंत्प्रजनंनवत्तर्मुपैतीतिं। तदांहुः। व्यृंद्धं वा एतत्। अनांग्नेयं वा एतिक्रियत् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। अग्निं प्रथमं विभेक्तीनां यजति। अग्निम्तमं पंत्रीसंयाजानांम्। तेनांऽऽग्नेयम्। तेन् समृंद्धं क्रियत् इतिं॥७॥

अ्रु-्यृतैव तद्भवित् सम्भृतसम्भार् इत्याहुरिच्छतिं पत्नीसंयाजा नवं च॥————[१]

देवा वै यथादर्शं यज्ञानाहंरन्त। योंऽग्निष्टोमम्। य उक्थ्यम्। योऽतिरात्रम्। ते सहैव सर्वे वाज्येयंमपश्यन्। ते। अन्योंऽन्यस्मै नातिष्ठन्त। अहमनेनं यजा इति। तेंऽब्रुवन्। आजिमस्य धांवामेति॥८॥ तस्मिन्नाजिमेधावन्। तं बृह्स्पित्रिरुदंजयत्। तेनायजत। स स्वाराज्यमगच्छत्। तिमन्द्रौऽब्रवीत्। माम्नेनं याज्येतिं। तेनेन्द्रमयाजयत्। सोऽग्रं देवतानां पर्येत्। अगंच्छथ्स्वाराज्यम्। अतिष्ठन्तास्मे ज्यैष्ठ्याय॥९॥

य एवं विद्वान् वांजिपेयेन् यजिते। गच्छेति स्वारांज्यम्। अग्रर्थं समानानां पर्येति। तिष्ठंन्तेऽस्मै ज्यैष्ठ्यांय। स वा एष ब्राह्मणस्यं चैव राजन्यंस्य च यज्ञः। तं वा एतं वांजिपेय इत्यांहुः। वाजाप्यो वा एषः। वाज्र्ड् ह्येतेनं देवा ऐफ्सन्। सोमो वै वांजिपेयः। यो वै सोमं वाज्रपेयं वेदं॥१०॥

वाज्येवैनं पीत्वा भवति। आऽस्यं वाजी जांयते। अत्रं वै वाजपर्यः। य एवं वेदं। अत्यन्नम्। आऽस्यानादो जांयते। ब्रह्म वै वाजपर्यः। य एवं वेदं। अत्ति ब्रह्मणाऽन्नम्। आऽस्यं ब्रह्मा जांयते॥११॥

वाग्वै वार्जस्य प्रस्वः। य एवं वेदे। क्रोतिं वाचा वीर्यम्। ऐनं वाचा गंच्छति। अपिवतीं वाचं वदति। प्रजापितिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिशत्। स आत्मन्वीज्येयमधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यद्वांज्येयंः॥१२॥

अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं पृता उन्नितीः प्रायंच्छत्। ता वा पृता उन्नितयो व्याख्यांयन्ते। यृज्ञस्यं सर्वत्वायं। देवतानामनिर्भागाय। देवा वै ब्रह्मण्श्वान्नस्य च् शमंलुमपाँघ्रन्। यद्वह्मणः शमंलुमासीत्। सा गाथां

## नाराशङ्स्यंभवत्। यदन्नंस्य। सा सुरां॥१३॥

तस्माद्गायंतश्च मृत्तस्यं च न प्रंतिगृह्यम्ं। यत्प्रंतिगृह्णीयात्। शमंलं प्रतिगृह्णीयात्। सर्वा वा एतस्य वाचोऽवंरुद्धाः। यो वांजपेययाजी। या पृथिव्यां याऽग्रौ या रंथन्तरे। याऽन्तरिक्षे या वायौ या वांमदेव्ये। या दिवि याऽऽदित्ये या बृंह्ति। याऽपस् यौषंधीषु या वनस्पतिषु। तस्माद्वाजपेययाज्यार्त्विजीनः। सर्वा ह्यंस्य वाचो-ऽवंरुद्धाः॥१४॥

धावामेति ज्यैष्ठ्याय वेदं ब्रह्मा जायते वाज्ञपेयः सुराऽऽर्त्विजीन् एकं च॥————[२]

देवा वै यद्न्यैग्रहें य्ज्ञस्य नावारंन्थत। तदंतिग्राह्यंरित-गृह्यावांरुन्थत। तदंतिग्राह्यांणामितग्राह्यत्वम्। यदंतिग्राह्यां गृह्यन्तें। यदेवान्यैग्रहें य्ज्ञस्य नावं रुन्थे। तदेव तैरंतिगृह्यावं रुन्थे। पश्चं गृह्यन्ते। पाङ्कां य्ज्ञः। यावांनेव य्ज्ञः। तमास्वाऽवं रुन्थे॥१५॥

सर्व ऐन्द्रा भेवन्ति। एक्धेव यजंमान इन्द्रियं दंधित। सप्तदंश प्राजापत्या ग्रहां गृह्यन्ते। सप्तद्शः प्रजापितः। प्रजा-पंतेरास्यै। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। सोम्ग्रहा ॥ स्राप्ति। एतद्वे देवानां पर्ममन्नम्। यथ्सोमः॥ १६॥

एतन्मंनुष्यांणाम्। यथ्सुरां। प्रमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंर-मन्नाद्यमवं रुन्धे। सोम्ग्रहान्गृंह्णाति। ब्रह्मंणो वा एतत्तेजंः। यथ्सोमंः। ब्रह्मंण एव तेजंसा तेजो यजंमाने दधाति। सुराग्रहान्गृह्णाति। अत्रंस्य वा एतच्छमंलम्। यथ्सुरां॥१७॥

अन्नस्यैव शमंत्रेन् शमंतुं यजंमानादपंहिन्त। सोम्ग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं गृह्णाति। पुमान् वे सोमंः। स्त्री सुरा। तिन्मंथुनम्। िम्थुनमेवास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। आत्मानंमेव सोमग्रहैः स्पृंणोति। जाया इ सुराग्रहेः। तस्माद्वाजपेयया ज्यंमुष्मिं ह्योके स्त्रिय इसम्भंवित। वाजपेयांभिजित इह्यंस्य॥१८॥

पूर्वे सोमग्रहा गृंह्यन्ते। अपंरे सुराग्रहाः। पुरोऽक्षश् सोमग्रहान्थ्सांदयति। पृश्चाद्क्षश् सुंराग्रहान्। पाप्वस्यसस्य विधृंत्यै। एष वै यजंमानः। यथ्सोमः। अन्नश् सुरा। सोमग्रहाश्श्चं सुराग्रहाश्श्च व्यतिषजिति। अन्नाद्येनैवैनं व्यतिषजिति॥१९॥

सम्पृचंः स्थ सं मां भृद्रेणं पृङ्केत्यांह। अत्रुं वै भृद्रम्। अन्ना-द्यंनेवन् सर्मुजिति। अन्नस्य वा एतच्छमंलम्। यथ्सुराँ। पाप्मेव खलु वे शमंलम्। पाप्मना वा एनमेतच्छमंलेन् व्यतिषजिति। यथ्सोमग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं व्यतिषजिति। विपृचंः स्थ वि मां पाप्मनां पृङ्केत्यांह। पाप्मनेवन् शमंलेन् व्यावंतियति॥२०॥

तस्मौद्वाजपेययाजी पूतो मेध्यों दक्षिण्यः। प्राङुद्वंवित सोमग्रहैः। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयति। प्रत्यङ्ख्सुंराग्रहैः। इममेव तैर्लोकम्भिजंयति। प्रतिष्ठन्ति सोमग्रहैः। यावदेव स्त्यम्। तेनं सूयते। वाज्रसृद्धः सुराग्रहान् हंरन्ति। अनृंतेनैव विशु स स्मृंजिति। हिर्ण्यपात्रं मधौः पूर्णं दंदाति। मध्व्यों-ऽसानीतिं। एक्धा ब्रह्मण् उपं हरति। एक्धैव यजनान् आयुस्तेजों दधाति॥२१॥

आ्राबाऽवं रुन्थे सोमः शर्मलं यथ्सुरा ह्यंस्यैनं व्यतिषजित व्यावर्तयित सजित चुत्वारि च॥————[3]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। नाग्निष्टोमो नोक्थ्यः। न षोंड्शी नातिरात्रः। अथ कस्माद्वाज्ञपेये सर्वे यज्ञक्रतवोऽवंरुध्यन्त् इति। पशुभिरितिं ब्रूयात्। आग्नेयं पशुमालंभते। अग्निष्टोममेव तेनावं रुन्थे। ऐन्द्राग्नेनोक्थ्यम्। ऐन्द्रेणं षोड्शिनः स्तोत्रम्। सारस्वत्याऽतिरात्रम्॥२२॥

मारुत्या बृंहतः स्तोत्रम्। एतावंन्तो वै यंज्ञऋतवंः। तान्पशुभिरेवावं रुन्थे। आत्मानंमेव स्पृंणोत्यग्निष्टोमेनं। प्राणापानावुक्थ्येन। वीर्यर् षोड्शिनंः स्तोत्रेणं। वार्चमितरात्रेणं। प्रजां बृंहतः स्तोत्रेणं। इममेव लोकम्भिजंयत्यग्निष्टोमेनं। अन्तरिक्षमुक्थ्येन॥२३॥

सुवर्गं लोकर षोंड्शिनंः स्तोत्रेणं। देवयानांनेव पृथ आरोहत्यतिरात्रेणं। नाकरं रोहति बृह्तः स्तोत्रेणं। तेजं एवाऽऽत्मन्धंत्त आग्नेयेनं पृशुनां। ओजो बलंमेन्द्राग्नेनं। इन्द्रियमैन्द्रेणं। वाचरं सारस्वत्या। उभावेव देवलोकं चे मनुष्यलोकं चाभिजंयित मारुत्या वृशयां। सप्तदेश प्राजापत्यान्पृशूनालंभते। सुप्तदुशः प्रजापंतिः॥२४॥ प्रजापंतेरास्यै। श्यामा एकंरूपा भवन्ति। एविमेव हि प्रजापंतिः समृंद्धौ। तान्पर्यग्निकृतानुथ्मृंजिति। मुरुतों यज्ञ-मंजिघा स्मन्प्रजापंतेः। तेभ्यं एतां मारुतीं वृशामालंभत। तयैवैनानशमयत्। मारुत्या प्रचर्य। एतान्थ्यं ज्ञंपयेत्। मुरुतं एव शंमियत्वा॥२५॥

पुतेः प्रचंरति। यज्ञस्याघांताय। पुक्धा व्या जुंहोति।
पुक्देवत्यां हि। पुते। अथां पुक्धेव यजांमाने वीर्यं दधाति।
नैवारेणं सप्तदंशशरावेणैतर्हि प्रचंरति। पुतत्पुरोडाशा ह्यंते।
अथां पशूनामेव छिद्रमपिंदधाति। सारुस्वत्योत्तमया प्रचंरति।
वाग्वे सरंस्वती। तस्मांत्प्राणानां वागुत्तमा। अथां प्रजापंतावेव
यज्ञं प्रतिष्ठापयति। प्रजापंतिर्हि वाक्। अपंत्रदती भवति।
तस्मांन्मनुष्याः सर्वां वाचं वदन्ति॥२६॥
अत्वत्त्रमुन्तिरक्षमुक्यंन प्रजापंतिः शमिवृत्वोत्तमया प्रचंरति पद चं॥
[४]

सावित्रं जुंहोति कर्मणः कर्मणः पुरस्तांत्। कस्तद्वेदेत्यांहुः। यद्वांज्येयस्य पूर्वं यदपंरमिति। स्वितृप्रंसूत एव यथापूर्वं कर्माणि करोति। सर्वनेसवने जुहोति। आक्रमणमेव तथ्सेतुं यजमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्या। वाचस्पतिर्वाचम् स्वंदाति न इत्यांह। वाग्वे देवानां पुराऽन्नंमासीत्। वाचमेवास्मा अन्नई स्वदयति॥२७॥

इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरति विजित्यै।

वार्जस्य नु प्रंस्वे मातरं मृहीमित्यांह। यचैवेयम्। यचास्यामिथे। तदेवावं रुन्थे। अथो तस्मिन्नेवोभयेऽभि-विच्यते। अपस्वंन्तर्मृतंमपस् भेषजमित्यश्वांन्यल्पूलयित। अपस् वा अश्वंस्य तृतीयं प्रविष्टम्। तदंनुवेन्नववंप्लवते। यद्पस् पंल्पूलयंति॥२८॥

यदेवास्यापस् प्रविष्टम्। तदेवावं रुन्थे। बहु वा अश्वोऽमेध्यमुपंगच्छति। यद्पस् पंल्पूलयंति। मेध्यांनेवैनान्करोति। वायुर्वां त्वा मनुर्वा त्वेत्यांह। एता वा एतं देवता
अग्रे अश्वंमयुञ्जन्। ताभिरेवैनान् युनक्ति। स्वस्योज्जित्यै।
यजुषा युनक्ति व्यावृत्त्ये॥२९॥

अपाँत्रपादाशुहेम्त्रिति सम्माँष्टिं। मेध्यांनेवैनाँन्करोति। अथो स्तौत्येवैनांनाजि स् संरिष्यतः। विष्णुक्रमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ श्लोकान्भिजंयति। वैश्वदेवो वै रथंः। अङ्कौ न्यङ्काव्भितो रथं यावित्यांह। या एव देवता रथे प्रविष्टाः। ताभ्यं एव नमंस्करोति। आत्मनोऽनाँत्ये। अशंमरथं भावुकोऽस्य रथों भवति। य एवं वेदं॥३०॥

देवस्याह १ संवितः प्रंस्वे बृह्स्पतिना वाज्जिता वाजं जेषिमत्याह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वाज्मु अयित। देवस्याह १ संवितः प्रंस्वे बृह्स्पतिना वाज्जिता वर्षिष्ठं नाक १ रुहेयमित्यांह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वर्षिष्ठं नाक रे रोहति। चात्वांले रथच्क्रं निर्मित र रोहति। अतो वा अङ्गिरस उत्तमाः सुंवर्गं लोकमायन्। साक्षादेव यजमानः सुवर्गं लोकमेति। आवैष्टयति। वज्रो वै रथः। वज्रेणैव दिशोऽभिजंयति॥३१॥

वाजिना समा गायते। अत्रं वै वार्जः। अत्रं मेवावं रुन्धे। वाचो वर्ष्म देवेभ्योऽपाँकामत्। तद्वन्स्पतीन्प्राविंशत्। सैषा वाग्वन्स्पतिषु वदति। या दुन्दुभौ। तस्माँ हुन्दुभिः सर्वा वाचो-ऽतिंवदति। दुन्दुभीन्थ्समाघ्नंन्ति। पुरमा वा एषा वाक्॥३२॥

या दुन्दुभौ। प्रमयैव वाचाऽवरां वाचमंव रुन्धे। अथों वाच एव वर्ष्म यजमानोऽवं रुन्धे। इन्द्रांय वाचं वदतेन्द्रं वाजं जापयतेन्द्रो वाजंमजियदित्यांह। एष वा एतर्हीन्द्रं। यो यजते। यजमान एव वाजमुन्नंयति। सप्तदंश प्रव्याधानाजिं धांवन्ति। सप्तद्श स्तोत्रं भंवति। सप्तदंशसप्तदश दीयन्ते॥३३॥

स्प्तद्रशः प्रजापंतिः। प्रजापतेरास्यै। अर्वाऽसि सप्तिरसि वाज्यंसीत्यांह। अग्निर्वा अर्वा। वायुः सप्तिः। आदित्यो वाजी। एताभिरेवास्मै देवतांभिर्देवर्थं युनक्ति। प्रष्टिवाहिनं युनक्ति। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्मै युनक्ति॥३४॥

वार्जिनो वार्जं धावत् काष्ठां गच्छतेत्यांह। सुवर्गो वै लोकः काष्ठां। सुवर्गमेव लोकं यंन्ति। सुवर्गं वा एते लोकं यंन्ति। य आजिं धावंन्ति। प्राश्चों धावन्ति। प्राङिव् हि सुंवर्गो लोकः। चृत्सृभिरनुं मन्नयते। चृत्वारि छन्दार्शसे। छन्दोभिरेवैनान्थ्सुवर्गं लोकं गंमयति॥३५॥

प्र वा एतें उस्माल्लोकाच्यंवन्ते। य आजिं धावंन्ति। उदं च आवर्तन्ते। अस्मादेव तेनं लोकान्नयंन्ति। रथविमोचनीयं जुहोति प्रतिष्ठित्ये। आ मा वार्जस्य प्रस्वो जंगम्यादित्यांह। अन्नं वै वार्जः। अन्नमेवावं रुन्थे। यथालोकं वा एत उन्नयन्ति। य आजिं धावंन्ति॥३६॥

कृष्णलं कृष्णलं वाज्यसृद्धः प्रयंच्छति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तं पंरिक्रीयावं रुन्धे। एक्धा ब्रह्मण उपंहरति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता बृह्स्पतिरुदंजयत्। स नीवारान्निरंवृणीत। तन्नीवारांणां नीवार्त्वम्। नैवारश्चरुमंवति॥३७॥

पुतद्वै देवानां पर्ममन्नम्। यन्नीवाराः। प्रमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंरमृन्नाद्यमवं रुन्थे। सप्तदंशशरावो भवति। स्प्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्ये। क्षीरे भंवति। रुचमेवास्मिन्दधाति। स्पिष्वान्भवति मध्यत्वायं। बार्हस्पत्यो वा एष देवतंया॥३८॥

यो वांज्पेयेंन् यजंते। बार्हस्पत्य एष च्रः।

अश्वान्थ्मिरिष्यृतः सम्भुषश्चावं घ्रापयति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तमेवावं रुन्धे। अजीजिपत वनस्पतय इन्द्रं वाजं विमुच्यध्वमितिं दुन्दुभीन् विमुश्चिति। यमेव ते वाजं लोकिमिन्द्रियं दुन्दुभयं उज्जयंन्ति। तमेवावं रुन्धे॥३९॥ अभिजयित् व पृषा वार्वीयनेऽस्मे युनिक गमयित् य आजि धार्वित भवति देवतंयाऽहो चं॥—[६]

तार्प्यं यजंमानं परिधापयति। यज्ञो वै तार्प्यम्। यज्ञेनैवैन् समर्धयति। दुर्भमयं परिधापयति। पवित्रं वै दुर्भाः। पुनात्येवैनम्। वाजं वा एषोऽवंरुरुध्सते। यो वांज्येयेन् यजंते। ओषंधयः खलु वै वाजंः। यद्दंर्भमयं परिधापयंति॥४०॥

वाज्रस्यावंरुद्धौ। जाय एहि सुवो रोहावेत्यांह। पित्रंया एवेष यज्ञस्यांन्वारम्भोऽनंवच्छित्त्यै। सप्तदंशारितव्यूपों भवति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। तूप्रश्चतुंरिश्नर्भवति। गौधूमं चुषालम्। न वा एते ब्रीहयो न यवाः। यद्गोधूमाः॥४१॥

पुविमेव हि प्रजापितः समृद्धौ। अथो अमुमेवास्मै लोकमन्नवन्तं करोति। वासोभिर्वेष्टयति। एष वै यर्जमानः। यद्यूपंः। सर्वदेवत्यं वासंः। सर्वाभिरेवैनं देवतांभिः समर्धयति। अथो आक्रमणमेव तथ्सेतुं यर्जमानः कुरुते। सुव्रगस्यं लोकस्य समष्ट्यै। द्वादंश वाजप्रस्वीयांनि जुहोति॥४२॥

द्वार्दश् मासाः संवथ्यरः। संवथ्यरमेव प्रीणाति। अथो संवथ्यरमेवास्मा उपदर्धाति। सुवर्गस्यं लोकस्य समेछ्ये। द्शिभः कल्पै रोहित। नव वै पुरुषे प्राणाः। नार्भिर्दश्मी। प्राणानेव यथास्थानं कल्पियत्वा। सुवर्गं लोकमेति। एतावृद्वै पुरुषस्य स्वम्॥४३॥

यावंत्र्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तेनं सह सुंवर्गं लोकमेति। सुवंदेवा अग्नित्यांह। सुवर्गमेव लोकमेति। अमृतां अभूमेत्यांह। अमृतिमिव हि सुंवर्गो लोकः। प्रजापंतेः प्रजा अभूमेत्यांह। प्राजापत्यो वा अयं लोकः। अस्मादेव तेनं लोकान्नेतिं॥४४॥

सम्हं प्रजया सं मया प्रजेत्यांह। आमेवैतामा शास्ते। आसपुटैर्प्रन्ति। अत्रं वा इयम्। अन्नाद्येनैवैन् समर्धयन्ति। ऊषैर्प्रन्ति। एते हि साक्षादन्नम्। यदूषाः। साक्षादेवैनंमन्नाद्येन् समर्धयन्ति। पुरस्तात्प्रत्यश्चें प्रन्ति॥४५॥

अमृतं एव सुंवर्गे लोके प्रतिं तिष्ठति। शतमानं भवति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। पुष्ट्ये वा एतद्रूपम्। यद्जा। त्रिः संवथ्सरस्यान्यान्पशून्परि प्रजायते। बुस्ताजिनमध्यवं रोहति। पुष्ट्यांमेव प्रजनेने प्रति

#### तिष्ठति॥४७॥

पुरिधापर्यंति गोधूमां जुहोति स्वं नैतिं प्रत्यश्चं घ्रन्ति लोको नवं च॥—————[  $oldsymbol{9}$ 

स्प्तान्नंहोमाञ्जंहोति। स्प्त वा अन्नांनि। यावंन्त्येवान्नांनि। तान्येवावं रुन्धे। स्प्त ग्राम्या ओषंधयः। स्प्तार्ण्याः। उभयींषामवंरुद्धै। अन्नंस्यान्नस्य जुहोति। अन्नंस्यान्नस्या-वंरुद्धै। यद्वांजपेययाज्यनंवरुद्धस्याश्जीयात्॥४८॥

अवंरुद्धेन् व्यृंद्धोत। सर्वस्य समवदायं जुहोति। अनंवरुद्धस्यावंरुद्धौ। औदुंम्बरेण स्रुवेणं जुहोति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धौ। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंस्व इत्यांह। स्वितृप्रंसूत एवेनं ब्रह्मणा देवतांभिर्भिषिश्चति। अन्नस्यान्नस्याभिषिश्चति। अन्नस्यान्नस्यावंरुद्धौ॥४९॥

पुरस्ताँत्प्रत्यश्चंम्भिषिश्चित। पुरस्ताद्धि प्रंतीचीन्मन्नंमृद्यतें। शीर्षतोऽभिषिश्चित। शीर्षतो ह्यनंमृद्यतें। आ मुखांद्न्ववं-स्नावयित। मुख्त एवास्मां अन्नाद्यं दधाति। अग्नेस्त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। एष वा अग्नेः स्वः। तेनैवैनंम्भिषिश्चिति। इन्द्रंस्य त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामी-त्यांह॥५०॥

ड्रन्ड्रियमेवास्मिन्नेतेनं दधाति। बृह्स्पतेंस्त्वा साम्रांज्येनाभि-षिश्चामीत्याह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवैनंमभि-षिश्चति। सोमग्रहाइश्चांवदानीयानि चर्त्विग्भ्य उपहरन्ति। अमुमेव तैर्लोकमन्नंवन्तं करोति। सुराग्रहाइश्चांनवदानीयानि च वाज्रसृद्धः। इममेव तैर्लोकमन्नवन्तं करोति। अथो उभर्यौष्वेवाभिषिंच्यते। विमाथं कुर्वते वाज्रसृतः॥५१॥

ड्रन्द्रियस्यावंरुद्धै। अनिंरुक्ताभिः प्रातः सवने स्तुंवते। अनिंरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्यैं। वाजंवतीभिर्माध्यं दिने। अन्नं वै वाजंः। अन्नमेवावं रुन्धे। शिपिविष्ट-वंतीभिस्तृतीयसवने। युज्ञो वै विष्णुंः। पृशवः शिपिः। युज्ञ एव पृशुषु प्रतिं तिष्ठति। बृहदन्त्यं भवति। अन्तंमेवैन ई श्रियै गंमयति॥५२॥

अ्रजीयादत्रंस्यात्रस्यावंरुद्धाः इन्द्रंस्य त्वा साम्राज्येनाभिषिश्चामीत्याह वाजसृतः शिपिस्रीणि च॥————[८]

नृषदं त्वेत्यांह। प्रजा वै नॄन्। प्रजानांमेवेतेनं सूयते। द्रुषद्मित्यांह। वनस्पतंयो वै द्रु। वनस्पतींनामेवेतेनं सूयते। भुवनसद्मित्यांह। यदा वै वसींयान्भवंति। भुवनमगृन्निति वै तमांहः। भुवनमेवेतेनं गच्छति॥५३॥

अपसुषदं त्वा घृत्सद्मित्यांह। अपामेवैतेनं घृतस्यं सूयते। व्योमसद्मित्यांह। यदा वै वसींयान्भवंति। व्योमागृन्निति वै तमांहुः। व्योमैवैतेनं गच्छति। पृथिविषदं त्वाऽन्तिरक्षसद्मित्यांह। एषामेवैतेनं लोकानारं सूयते। तस्मांद्वाजपेययाजी न कश्चन प्रत्यवंरोहति। अपींव हि देवतांनार सूयतें॥५४॥

नाकुसद्मित्याह। यदा वै वसीयान्भवंति। नाकंमगन्निति वै तमाहुः। नाकंमेवेतेनं गच्छति। ये ग्रहाः पश्चज्नीना इत्यांह। पुश्चजनानांमेवैतेनं सूयते। अपार रस्मुद्धंयस्मि-त्यांह। अपामेवैतेन् रसंस्य सूयते। सूर्यरिश्मर स्मार्भृतमित्यांह सशुऋत्वायं॥५५॥

गुच्छुति सूयते नवं च॥\_\_\_\_\_\_

इन्द्रो वृत्र हत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। सोऽमावास्यां प्रत्यागंच्छत्। ते पितरंः पूर्वेद्युरागंच्छन्। पितृन् यज्ञो-ऽगच्छत्। तं देवाः पुनरयाचन्त। तमेंभ्यो न पुनरददुः। तेंऽब्रुवन्वरं वृणामहै। अथं वः पुनर्दास्यामः। अस्मभ्यंमेव पूर्वेद्यः क्रियाता इति॥५६॥

तमेंभ्यः पुनंरददुः। तस्मौत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः क्रियते। यत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः करोति। पितृभ्यं एव तद्यज्ञं निष्क्रीय यजमानः प्रतन्ते। सोमाय पितृपीताय स्वधा नम् इत्याह। पितुरेवाधि सोमपीथमर्व रुन्धे। न हि पिता प्रमीयमाण आहैष सोमपीथ इति। इन्द्रियं वै सोमपीथः। इन्द्रियमेव सोमपीथमर्व रुन्धे। तेनैन्द्रियेणं द्वितीयां जायामभ्यंश्जुते॥५७॥

पृतद्वे ब्राह्मणं पुरा वाजवश्रवसा विदामंत्रन्। तस्मात्ते द्वेद्वे जाये अभ्याक्षत। य एवं वेदे। अभि द्वितीयाँ जायामंश्ज्ते। अग्नये कव्यवाहंनाय स्वधा नम् इत्यांह। य एव पितृणाम्गिः। तं प्रीणाति। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। तूष्णीं मेक्षंणमादंधाति। अस्ति वा हि षष्ठ ऋतुर्न वाँ। देवान् वै पितृन्त्रीतान्। मनुष्याँः पितरोऽनु प्रपिपते। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षट्थ्सम्पद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥५९॥

ऋतवः खलु वै देवाः पितरंः। ऋतूनेव देवान्पितॄन्प्रीणाति। तान्प्रीतान्। मनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। सकृदाच्छिन्नं बर्हिर्भवति। सकृदिव हि पितरंः। त्रिर्निदंधाति। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। पराङावंति॥६०॥

ह्रीका हि पितरंः। ओष्मणौं व्यावृत् उपाँस्ते। ऊष्मभांगा हि पितरंः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्राश्या (३) न्न प्राश्या (३) मितिं। यत्प्रांश्ञीयात्। जन्यमन्नमद्यात्। प्रमायुंकः स्यात्। यन्न प्रांश्ञीयात्। अहंविः स्यात्॥६१॥

पितृभ्य आवृश्चेत। अवघ्रेयमेव। तन्नेव प्राशितं नेवाप्रांशितम्। वीरं वा वै पितर्रः प्रयन्तो हरन्ति। वीरं वां ददति। दशां छिनत्ति। हर्रणभागा हि पितरः। पितृनेव निरवंदयते। उत्तर् आयुंषि लोमं छिन्दीत। पितृणाङ् ह्यंतर्हि नेदीयः॥६२॥

नमंस्करोति। नुमुस्कारो हि पिंतृणाम्। नमों वः पितरो रसाय। नमों वः पितरः शुष्मांय। नमों वः पितरो जीवायं। नमों वः पितरः स्वधायै। नमों वः पितरो मृन्यवे। नमों वः पितरो घोरायं। पितरो नमों वः। य पुतस्मिँ होके स्थ॥६३॥ युष्मा इस्तेऽन्। यैंऽस्मिँ ह्योके। मां तेऽन्। य एतस्मिँ ह्योके स्थ। यूयं तेषां विसेष्ठा भूयास्त। येंऽस्मिँ ह्योके। अहं तेषां विसेष्ठो भूयास्ति। विसेष्ठः समानानां भवति। य एवं विद्वान्यित्भ्यः कुरोतिं। एष वै मनुष्याणां युज्ञः॥६४॥

देवानां वा इतंरे युज्ञाः। तेन वा एतित्पंतृलोके चंरति। यित्पृत्भ्यंः क्रोति। स ईंश्वरः प्रमेतोः। प्राजापत्यय्वां पुन्रेति। यज्ञो वे प्रजापंतिः। यज्ञेनेव सह पुन्रेति। न प्रमायंको भवति। पितृलोके वा एतद्यजंमानश्चरति। यित्पृत्भ्यंः क्रोति। स ईंश्वर आर्तिमार्तौः। प्रजापंतिस्त्वावेनं तत् उन्नेतुमरहृतीत्यांहुः। यत्प्राजापत्यय्वां पुन्रेति। प्रजापंतिरेवेनं तत् उन्नयित। नार्तिमार्च्छति यजमानः॥६५॥ इत्यंश्वते पद्यने पद्यने पद्यने पद्यने पद्यने पद्यने पद्यने प्रजाप्ति पद्यने पद्

देवासुरा अग्नीपोमेयोर्देवा वै यथादर्शं देवा वै यद्न्येग्नेहैंब्रह्मवादिनो नाग्निष्टोमो न सांवित्रं देवस्याहं तार्प्यः सप्तान्नेहोमान्नृषदं त्वेन्द्रौ वृत्रः हुत्वा दर्शाशः॥ देवासुरा वाज्येवेनं तस्माद्वाजपेययाजी देवस्याहं वाजस्यावंरुद्धा इन्द्रियमेवास्मिन् ह्लीका हि पितरः पश्चेषष्टिः॥६५॥ देवासुरा यर्जमानः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥चतुर्थः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

उभये वा एते प्रजापंतेरध्यंसृज्यन्त। देवाश्चासुंराश्च। तान्न व्यंजानात्। इमें ऽन्य इमें ऽन्य इतिं। स देवान् १ शूनंकरोत्। तान्भ्यंषुणोत्। तान्पवित्रंणापुनात्। तान्परस्तांत्पवित्रंस्य व्यंगृह्णात्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रहत्वम्॥१॥

देवता वा एता यर्जमानस्य गृहे गृंह्यन्ते। यद्ग्रहाः। विदुरेनं देवाः। यस्यैवं विदुषं एते ग्रहां गृह्यन्तें। एषा वै सोम्स्याऽऽहुंतिः। यदुंपार्शः। सोमेन देवाङ्स्तंपयाणीति खलु वै सोमेन यजते। यदुंपार्शं जुहोतिं। सोमेनैव तद्देवाङ्स्तंपयति। यद्गहां जुहोतिं॥२॥

देवा एव तद्देवान्गंच्छन्ति। यचंम्सां जुहोतिं। तेनैवानुंरूपेण यजंमानः सुवृगं लोकमेंति। किं न्वेतदग्रं आसीदित्यांहुः। यत्पात्राणीतिं। इयं वा एतदग्रं आसीत्। मृन्मयांनि वा एतान्यांसन्। तैर्देवा न व्यावृतंमगच्छन्। त एतानिं दारुमयांणि पात्रांण्यपश्यन्। तान्यंकुर्वत॥३॥

तैर्वे ते व्यावृतंमगच्छन्। यद्दांरुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। व्यावृतंमेव तैर्यजंमानो गच्छति। यानि दारुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयति। यानि मृन्मयांनि। इममेव तैर्लोकम्भिजंयति। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। काश्चतंस्रः स्थालीर्वायव्याः सोमुग्रहंणीरिति। देवा वै पृश्ञिंमदुह्नन्॥४॥ तस्यां एते स्तनां आसन्। इयं वै पृश्विनः। तामांदित्या आंदित्यस्थाल्या चतुंष्पदः पृशूनंदुह्नन्। यदांदित्यस्थाली भवंति। चतुंष्पद एव तयां पृशून् यजंमान इमां दुहे। तामिन्द्रं उक्थ्यस्थाल्येन्द्रियमंदुहत्। यदुंक्थ्यस्थाली भवंति। इन्द्रियमेव तया यजंमान इमां दुहे। तां विश्वे देवा आंग्रयणस्थाल्योर्जमदुह्नन्। यदांग्रयणस्थाली भवंति॥५॥

ऊर्जमेव तया यजमान इमां दुंहे। तां मंनुष्यौ ध्रुवस्थाल्याऽऽयुंरदुह्नन्। यद्धुंवस्थाली भवंति। आयुंरेव तया यजमान इमां दुंहे। स्थाल्या गृह्णातिं। वायव्येन जुहोति। तस्मांदन्येन पात्रेण पृशून्दुहन्तिं। अन्येन प्रतिंगृह्णन्ति। अथौं व्यावृतमेव तद्यजमानो गच्छति॥६॥

युव स्रामंमिश्वना। नम्चावासुरे सर्चा। विपिपाना श्रुंभस्पती। इन्द्रं कर्मं स्वावतम्। पुत्रिमंव पितरांविश्वनोभा। इन्द्रावंतं कर्मणा द स्मनांभिः। यथ्सुरामं व्यपिंबः शचींभिः। सर्रस्वती त्वा मघवन्नभीष्णात्। अहाँव्यग्ने ह्विरास्येते। सुचीवं घृतं चमू इंव सोमंः॥७॥

वाज्ञसिनिर्रं रियमस्मे सुवीरम्। प्रशस्तं धेहि यशसं बृहन्तम्। यस्मिन्नश्वांस ऋषभासं उक्षणः। वृशा मेषा अवसृष्टास् आहुंताः। कीलालुपे सोम्पृष्टाय वेधसें। हृदा मृतिं जनय चारुम्म्रयें। नाना हि वां देवहिंत्र सदों मितम्। मा स॰सृंक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हि॰सीः स्वां योनिमाविशन्॥८॥

यदत्रं शिष्टः रसिनंः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिंबच्छचींभिः। अहं तदंस्य मनंसा शिवेनं। सोम् राजांनिमृह भंक्षयामि। द्वे स्नुती अंश्णवं पितृणाम्। अहं देवानांमुत मर्त्यांनाम्। ताभ्यांमिदं विश्वं भुवंन् समेति। अन्तरा पूर्वमपंरं च केतुम्। यस्ते देव वरुण गायुत्रछंन्दाः पाशः। तं तं पुतेनावं यजे॥९॥

यस्ते देव वरुण त्रिष्टुप्छंन्दाः पाशः। तं तं पृतेनावं यजे। यस्ते देव वरुण जगतीछन्दाः पाशः। तं तं पृतेनावं यजे। सोमो वा पृतस्यं राज्यमादत्ते। यो राजा सन्नाज्यो वा सोमेन यजेते। देवसुवामेतानि ह्वी १ पि भवन्ति। पृतावंन्तो व देवाना १ स्वाः। त पृवास्मे स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एनं पृनः सुवन्ते राज्यायं। देवसू राजां भवति॥१०॥

उदंस्थाद्देव्यदितिर्विश्वरूपी। आयुर्यज्ञपंतावधात्। इन्द्रांय कृण्वती भागम्। मित्राय वरुणाय च। इयं वा अग्निहोत्री। इयं वा एतस्य निषीदति। यस्यांग्निहोत्री निषीदंति। तामुत्थांपयेत्। उदंस्थाद्देव्यदितिरिति। इयं वै देव्यदितिः॥११॥

इमामेवास्मा उत्थापयति। आयुर्येज्ञपंतावधादित्यांह। आयुरेवास्मिन्दधाति। इन्द्रांय कृण्वती भागं मित्राय वर्रुणाय चेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अवंर्तिं वा एषैतस्य पाप्मानं प्रतिख्याय निषीदति। यस्याँग्निहोत्र्युपंसृष्टा निषीदंति। तां दुग्ध्वा ब्राँह्यणायं दद्यात्। यस्यात्रं नाद्यात्। अवंर्तिमेवास्मिन्याप्मानं प्रतिमुश्चति॥१२॥

दुग्धा दंदाति। न ह्यदृष्टा दक्षिणा दीयतें। पृथिवीं वा एतस्य पयः प्रविंशति। यस्यांग्निहोत्रं दुह्यमांनु स्कन्दंति। यद्द्य दुग्धं पृथिवीमसंक्त। यदोषंधीरप्यसंर्द्यदापंः। पयो गृहेषु पयो अघ्नियासुं। पयो वृथ्सेषु पयो अस्तु तन्मयीत्यांह। पयं एवाऽऽत्मन्गृहेषुं पृशुषुं धत्ते। अप उपंसृजति॥१३॥

अद्भिरेवैनंदाप्नोति। यो वै युज्ञस्यार्ते नानांति स् सर्मुजति। उमे वै ते तर्ह्यार्च्छ्रंतः। आर्च्छ्रंति खलु वा एतदंग्निहोत्रम्। यद्दुह्यमान् स्कन्दंति। यदंभिदुह्यात्। आर्ते नानांतं युज्ञस्य सर्मुजेत्। तदेव यादकीदक्रं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्ध्वा पुनंरहोत्व्यम्। अनांतिनेवार्तं युज्ञस्य निष्कंरोति॥१४॥

यद्युद्गुंतस्य स्कन्दैंत्। यत्ततोऽहुंत्वा पुनेरेयात्। युज्ञं विच्छिंन्द्यात्। यत्र स्कन्दैंत्। तन्निषद्य पुनेर्गृह्णीयात्। यत्रैव स्कन्दंति। ततं पुवैनृत्पुनेर्गृह्णाति। तदेव यादकीदक्रं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्ध्वा पुनेर्होत्व्यम्। अनौर्तेनैवार्तं युज्ञस्य निष्कंरोति॥१५॥

वि वा पुतस्यं युज्ञश्छिंद्यते। यस्यांग्निहोत्रेंऽधिश्रिंते श्वा-ऽन्तुरा धावंति। रुद्रः खलु वा एषः। यद्ग्निः। यद्गामन्वत्या वर्तयेत्। रुद्रायं पृश्नपि दध्यात्। अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यद्पोंऽन्वतिषिञ्चेत्। अनाद्यमुग्नेरापः। अनाद्यमाभ्यामिषं दध्यात्। गर्हंपत्याद्भरमादायं। इदं विष्णुर्विचंक्रम् इतिं वैष्णुव्यर्चाऽऽहंवनीयाद्ध्वर्सयुत्रुद्रंवेत्। युज्ञो वै विष्णुः। युज्ञेनैव युज्ञर सं तनोति। भरमना पुदमपि वपति शान्त्या। १६॥

वै देव्यदिंतिर्मुश्रति सुजित करोति करोत्याभ्यामपि दथ्यात् पश्चं च॥lacksquare

नि वा एतस्यांऽऽहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभि निम्नोचंति। दुर्भेण हिरंण्यं प्रबद्धं पुरस्तांद्धरेत्। अथाग्निम्। अथांग्निहोत्रम्। यद्धिरंण्यं पुरस्ताद्धरंति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवेनं पश्यन्नुद्धंरति। यद्ग्निं पूर्व्ध् हरत्यथांग्निहोत्रम्॥१७॥

भागधेयेनैवेनं प्रणंयति। ब्राह्मण आंर्षेय उद्धेरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः। सर्वाभिरेवेनं देवतांभिरुद्धंरति। अग्निहोत्रमुंपसाद्यातिमंतोरासीत। ब्रतमेव हृतमनुं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनो गच्छति। यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र सूर्योऽभि निम्रोचंति॥१८॥

पुनंः समन्यं जुहोति। अन्तेनैवान्तं यज्ञस्य निष्कंरोति। वरुणो वा एतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभि निम्रोचंति। वारुणं चरुं निर्वपेत्। तेनैव यज्ञं निष्क्रीणीते। नि वा एतस्यांऽऽहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। नि गार्हंपत्य आहवनीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्युंदेतिं। चतुर्गृहीतमाज्यं पुरस्तांद्धरेत्॥१९॥

अथाग्निम्। अथाँग्निहोत्रम्। यदाज्यं पुरस्ताद्धरंति। पृतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यदाज्यम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समंध्यति। यद्ग्निं पूर्वे हर्त्यथाँग्निहोत्रम्। भागधेयेनैवैनं प्रणयति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः॥२०॥

सर्वाभिरेवैनं देवतांभिरुद्धंरित। परांची वा एतस्मैं व्युच्छन्ती व्युंच्छिति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्यंदेतिं। उषाः केतुनां जुषताम्। यज्ञं देवेभिंरिन्वितम्। देवेभ्यो मधुंमत्तम् स्वाहेतिं प्रत्यिङ्किषद्याज्येन जुहुयात्। प्रतीचीमेवास्मै विवासयित। अग्निहोत्रमुंप्साद्यातिमंतोरासीत। व्रतमेव हतमनुं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनों गच्छिति॥२१॥

यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभ्यंदेतिं। पुनंः समन्यं जुहोति। अन्तेनैवान्तं यज्ञस्य निष्कंरोति। मित्रो वा एतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभ्यंदेतिं। मैत्रं च्रुं निर्वपेत्। तेनैव यज्ञं निष्क्रीणीते। यस्यांऽऽहवनीयेऽनुंद्वाते गार्हंपत्य उद्वार्यंत्॥२२॥

यदांहवनीयमनुंद्वाप्य गार्हंपत्यं मन्थैत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। यद्वै युज्ञस्यं वास्तुव्यं ऋियतैं। तदनुं रुद्रोऽवंचरति। यत्पूर्वमन्ववस्येत्। वास्तव्यंमग्निमुपांसीत। रुद्रौऽस्य पृशून्यातुंकः स्यात्। आहुवनीयंमुद्वाप्यं। गार्हंपत्यं मन्थेत्॥२३॥

इतः प्रथमं जंज्ञे अग्निः। स्वाद्योनेरिधं जातवेदाः। स गांयत्रिया त्रिष्टुभा जगंत्या। देवेभ्यों हृव्यं वंहतु प्रजानन्नितिं। छन्दोंभिरेवैन्ड् स्वाद्योनेः प्रजनयति। गार्हंपत्यं मन्थति। गार्हंपत्यं वा अन्वाहिताग्नेः पृशव उपं तिष्ठन्ते। स यदुद्वायंति। तदनुं पृशवोऽपं कामन्ति। इषे रुय्यै रंमस्व॥२४॥

सहंसे द्युम्नायं। ऊर्जेऽपत्यायेत्यांह। पृशवो वै र्यिः। पृश्नेवास्में रमयति। सार्स्वतौ त्वोथ्सौ सिमंन्धातामित्यांह। ऋख्सामे वै सारस्वतावुथ्सौं। ऋख्सामाभ्यांमेवैन् स् सिन्धे। सम्राडंसि विराडसीत्यांह। रथन्त्रं वै सम्राट्। बृहद्विराट्॥२५॥

ताभ्यांमेवेन् सिमंन्धे। वज्रो वै चुक्रम्। वज्रो वा एतस्यं यज्ञं विच्छिनत्ति। यस्यानों वा रथों वाऽन्त्राऽग्नी याति। आहुवनीयंमुद्धाप्यं। गार्हंपत्यादुद्धेरेत्। यदंग्ने पूर्वं प्रभृतं पदश् हि तैं। सूर्यस्य र्ष्मीनन्वांतृतानं। तत्रं रियष्ठामनु सं भेरैतम्। सं नंः सृज सुमृत्या वाजंवृत्येतिं॥२६॥

पूर्वेणैवास्यं युज्ञेनं युज्ञमनु सं तेनोति। त्वमंग्ने सप्रथां असीत्याह। अग्निः सर्वा देवताः। देवतांभिरेव युज्ञ सं तंनोति। अग्नयें पथिकृतें पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निर्वपेत्। अग्निमेव पंथिकृत्ड् स्वेनं भाग्धेयेनोपंधावति। स एवैनंं यज्ञियं पन्थामपि नयति। अनुङ्वान्दक्षिणा। वही ह्येष समृद्धे॥२७॥

यस्यं प्रातः सवने सोमोंऽतिरिच्यंते। माध्यं दिन् सवंनं कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौधंयति मुरुतामिति धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। हिनस्ति वै सन्ध्यधीतम्। सन्धीव खलु वा एतत्। यथ्सवंनस्यातिरिच्यंते। यद्धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। सन्धेः शान्त्यै। गायुत्र सामं भवति पश्चद्शः स्तोमंः। तेनैव प्रांतः सवनान्नयंन्ति॥२८॥

मुरुत्वंतीषु कुर्वन्ति। तेनैव माध्यं दिनाथ्सवंनान्नयंन्ति। होतुंश्चमसमनूत्रयन्ते। होताऽनुं शश्सिति। मध्यत एव यज्ञश् समादंधाति। यस्य माध्यं दिने सवंने सोमोंऽति-रिच्यंते। आदित्यं तृतीयसवनं कामयमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौरिवीतश् सामं भवति। अतिरिक्तं व गौरिवीतम्। अतिरिक्तं यथ्सवंनस्यातिरिच्यंते॥२९॥

अतिंरिक्तस्य शान्त्यैं। बण्महाः असि सूर्येतिं कुर्वन्ति। यस्यैवाऽऽदित्यस्य सर्वनस्य कामेनातिरिच्येते। तेनैवैनं कामेन समर्धयन्ति। गौरिवीतः साम भवति। तेनैव मार्ध्यं दिनाथ्सवंनान्नयंन्ति। सप्तद्शः स्तोमंः। तेनैव तृतीयसवनान्नयंन्ति। होतुंश्चमसमनून्नयन्ते। होताऽनुं श॰सति॥३०॥

मध्यत एव यज्ञ समार्दधाति। यस्यं तृतीयसव्ने सोमोऽित्रिच्यंत। उक्थ्यं कुर्वीत। यस्योक्थ्यंऽित्रिच्यंत। अतिरात्रं कुर्वीत। यस्यांतिरात्रंऽित्रिच्यंत। तत्त्वे दुंष्प्रज्ञानम्। यजमानं वा एतत्प्रश्वं आसाह्ययन्ति। बृहथ्सामं भवित। बृहद्वा इमाँ ह्योकान्दांधार। बार्ह्ताः प्रश्वंः। बृह्तैवास्में प्रशून्दांधार। शिपिविष्टवंतीषु कुर्वन्ति। शिपिविष्टो वे देवानां पुष्टम्। पुष्ट्येवेन् समर्धयन्ति। होतुंश्चमसमनूत्रंयन्ते। होताऽनुंश स्सित। मध्यत एव यज्ञ समादंधाति॥३१॥ वित्रे सम्मित्रे श्वारोष्टि स्वारोष्टि स्वारोष्ट स्वारोष्टि स्व

एकैंको वै जनतांयामिन्द्रंः। एकं वा पुताविन्द्रंम्भि सश्सुंनुतः। यौ द्वौ सश्सुनुतः। प्रजापंतिर्वा एष वितांयते। यद्यज्ञः। तस्य ग्रावांणो दन्ताः। अन्यत्रं वा एते सश्सुन्वतोर्निर्वप्सति। पूर्वेणोप्सृत्यां देवता इत्यांहुः। पूर्वोप्सृतस्य वै श्रेयांन्भवति। एतिंवन्त्याज्यांनि भवन्त्यभिजित्यै॥३२॥

म्रुत्वंतीः प्रतिपदंः। म्रुतो वै देवानामपंराजितमायतंनम्। देवानांमेवापंराजित आयतंने यतते। उभे बृंहद्रथन्तरे भंवतः। इयं वाव रथन्तरम्। असौ बृहत्। आभ्यामेवेनम्नतरंति। वाचश्च मनसश्च। प्राणाचापानाच। दिवश्चं पृथिव्याश्चं॥३३॥

सर्वस्माद्वित्ताद्वेद्यात्। अभिवर्तो ब्रह्मसामं भेवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिवृत्त्ये। अभिजिद्भेवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्ये। विश्वजिद्भेवति। विश्वंस्य जित्यै। यस्य भूयार्श्सो यज्ञऋतव इत्यांहुः। स देवतां वृङ्कः इति। यद्यंग्निष्टोमः सोमः पुरस्ताथ्स्यात्॥३४॥

उक्थ्यं कुर्वीत। यद्युक्थंः स्यात्। अतिरात्रं कुर्वीत। यज्ञुक्रतुभिरेवास्यं देवतां वृङ्के। यो वै छन्दोभिरभिभवंति। स सर्सुन्वतोर्भिभवति। संवेशायं त्वोपवेशाय त्वेत्यांह। छन्दार्स्सि वै संवेश उपवेशः। छन्दोभिरेवास्य छन्दार्स्स्यभिभवति। इष्टर्गो वा ऋत्विजांमध्वर्युः॥३५॥

ड्रष्टर्गः खलु वै पूर्वोऽर्ष्टुः क्षीयते। प्राणांपानौ मृत्योमां पात्मित्यांह। प्राणापानयोरेव श्रंयते। प्राणांपानौ मा मां हासिष्टमित्यांह। नैनं पुराऽऽयुंषः प्राणापानौ जंहितः। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषां दीक्षितानां प्रमीयंते। तं यदंववर्जेयुः। ऋूरकृतांमिवेषां लोकः स्यांत्। आहेर दहेतिं ब्रूयात्॥३६॥

तं देक्षिणतो वेद्यै निधायं। सूर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंयुः। इयं वै सर्पतो राज्ञीं। अस्या एवेनं परिंददित। व्यृंद्धं तदित्यांहुः। यथ्स्तुतमनंनुशस्तमितिं। होतां प्रथमः प्रांचीनावीती मार्जालीयं परींयात्। यामीरंनुब्रुवन्। सूर्पराज्ञीनां कीर्तयेत्। उभयोर्वेनं लोकयोः परिंददित॥३७॥

अथों धुवन्त्येवैनम्ं। अथो न्येवास्में हुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एवैनं लोकभ्यों धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अग्र आयूर्षेष पवस् इति प्रतिपदं कुर्वीरन्। रथन्त्रसामेषा्र सोमः स्यात्। आयुरेवाऽऽत्मन्दंधते। अथों पाप्मानंमेव विज्ञहंतो यन्ति॥३८॥

अभिजित्यै पृथिव्याश्च स्यादेष्वयुर्बूयाङ्कोकयोः परिददित कुर्वीर्ङ्क्षीणि च॥————[६]

असुर्यं वा एतस्माद्वर्णं कृत्वा। पृशवों वीर्यमपं क्रामन्ति। यस्य यूपों विरोहंति। त्वाष्ट्रं बंहुरूपमालंभेत। त्वष्टा वै रूपाणांमीशे। य एव रूपाणामीशें। सोंऽस्मिन्पशून् वीर्यं यच्छति। नास्मात्पशवों वीर्यमपं क्रामन्ति। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषां दीक्षितानांमग्निरुद्वायंति॥३९॥

यदांहवनीयं उद्घायेंत्। यत्तं मन्थेंत्। विच्छिंन्द्यात्। भातृंव्यमस्मै जनयेत्। यदांहवनीयं उद्घायेंत्। आग्नींद्धादुद्धं-रेत्। यदाग्नींद्ध उद्घायेंत्। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यद्गार्हंपत्य उद्घायेंत्। अतं एव पुनंर्मन्थेत्॥४०॥

अत्र वाव स निर्लयते। यत्र खलु वै निर्लीनमुत्तमं पश्यन्ति। तदेनिमच्छन्ति। यस्माद्दारोरुद्वायेत्। तस्यारणीं कुर्यात्। कुमुकमिपं कुर्यात्। एषा वा अग्नेः प्रिया तन्ः। यत्क्रुंमुकः। प्रिययैवैनं तनुवा समर्धयति। गार्ह्पत्यं

### मन्थति॥४१॥

गार्हंपत्यो वा अग्नेर्योनिः। स्वादेवैनं योनैंर्जनयति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। यस्य सोमं उपदस्यैत्। सुवर्ण् हिरंण्यं द्वेधा विच्छिद्यं। ऋजी्षेंऽन्यदांधूनुयात्। जुहुयादन्यत्। सोमंमेवाभिषुणोतिं। सोमं जुहोति। सोमंस्य वा अभिष्यमाणस्य प्रिया तुनूरुदंक्रामत्॥४२॥

तथ्सुवर्ण् हरेण्यमभवत्। यथ्सुवर्ण् हरेण्यं कुर्वन्ति। प्रिययैवैनं तनुवा समर्धयन्ति। यस्याक्रीत् सोमंमपृहरेयुः। कीर्णीयादेव। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यस्यं कीतमंपृहरेयुः। आदाराङ्श्चं फाल्गुनानिं चाभिषुंणुयात्। गायत्री यश्सोममाहंरत्। तस्य योऽरंशः प्राऽपंतत्॥४३॥

त आंदारा अंभवन्। इन्द्रों वृत्रमंहन्। तस्यं वृत्कः परां-ऽपतत्। तानिं फाल्गुनान्यंभवन्। पृशवो व फाल्गुनानिं। पृशवः सोमो राजां। यदांदाराङ्श्चं फाल्गुनानिं चाभिषुणोतिं। सोममेव राजांनम्भिषुंणोति। शृतेनं प्रातः सव्ने श्रींणीयात्। दभ्ना मध्यं दिने॥४४॥

नीतिमिश्रेणं तृतीयसवने। अग्निष्टोमः सोमः स्याद्रथन्तर-सामा। य एवर्त्विजों वृताः स्यः। त एनं याजयेयः। एकां गां दक्षिणां दद्यात्तेभ्यं एव। पुनः सोमं क्रीणीयात्। युज्ञेनैव तद्यज्ञमिंच्छति। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। सर्वाभ्यो वा एष देवताँभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठेभ्यं आत्मान्मागुरते। यः स्त्रायांगुरतें। पृतावान्खलु वै पुरुषः। यावंदस्य वित्तम्। सर्ववेदसेनं यजेत। सर्वपृष्ठोऽस्य सोमः स्यात्। सर्वाभ्य एव देवताँभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठेभ्यं आत्मानं निष्क्रीणीते॥४५॥

पर्वमानः सुवर्जनंः। प्वित्रेण विचंर्षणिः। यः पोता स प्नातु मा। पुनन्तुं मा देवज्नाः। पुनन्तु मनंवो धिया। पुनन्तु विश्वं आयवंः। जातंवेदः प्वित्रंवत्। प्वित्रंण पुनाहि मा। शुक्रेणं देव दीद्यंत्। अग्ने कत्वा कतूर् रनुं॥४६॥

यत्ते प्वित्रम्चिषि। अग्ने वितंतमन्त्रा। ब्रह्म तेनं प्नीमहे। उभाभ्यां देव सवितः। प्वित्रेण स्वेनं च। इदं ब्रह्मं प्नीमहे। वैश्वदेवी पुंन्ती देव्यागांत्। यस्यैं बह्बीस्तनुवों वीतपृष्ठाः। तया मदंन्तः सधमाद्येषु। वयः स्याम् पतंयो रयीणाम्॥४७॥

वैश्वान्तरो रिष्मिर्मिर्मा पुनातु। वार्तः प्राणेनेषिरो मंयोभूः। द्यावापृथिवी पर्यसा पर्योभिः। ऋतावंरी यज्ञियं मा पुनीताम्। बृहद्भिः सवित्स्तृभिः। वर्षिष्ठैर्देव मन्मंभिः। अग्ने दक्षैः पुनाहि मा। येनं देवा अपुनत। येनाऽऽपो दिव्यं कशः। तेनं दिव्येन् ब्रह्मणा॥४८॥

इदं ब्रह्मं पुनीमहे। यः पांवमानीर्ध्येतिं। ऋषिंभिः सम्भृत्रे रसम्। सर्वर् स पूतमंश्ञाति। स्वदितं मात्तरिश्वना। पावमानीर्यो अध्येतिं। ऋषिंभिः सम्भृत्रे रसम्। तस्मै सरंस्वती दुहे। क्षीर स्पर्पिर्मधूंदकम्। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः॥४९॥

सुद्घा हि पर्यस्वतीः। ऋषिभिः सम्भृतो रसः। ब्राह्मणेष्वमृत १ हितम्। पावमानीर्दिशन्तु नः। इमं लोकमथीं अमुम्। कामान्थ्समध्यन्तु नः। देवीर्देवैः समाभृताः। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः। सुद्घा हि घृतश्चतः। ऋषिभिः सम्भृतो रसः॥५०॥

ब्राह्मणेष्वमृत रे हितम्। येनं देवाः प्वित्रेण। आत्मानं पुनते सदाँ। तेनं सहस्रंधारेण। पावमान्यः पुनन्तु मा। प्राजापत्यं प्वित्रम्ं। श्तोद्यांम र हिर्ण्मयम्। तेनं ब्रह्मविदों वयम्। पूतं ब्रह्मं पुनीमहे। इन्द्रंः सुनीती सह मां पुनातु। सोमंः स्वस्त्या वरुणः समीच्यां। यमो राजां प्रमृणाभिः पुनातु मा। जातवेदा मोर्जयंन्त्या पुनातु॥५१॥
अतं रयोणां ब्रह्मणा स्वस्त्ययेनः सुद्या हि इतिश्रुत क्राविकः सम्तेत रक्तः प्रनातु क्रीणि च॥——[८]

प्रजा वै स्त्रमांसत् तप्स्तप्यंमाना अर्जुहृतीः। देवा अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठ्नतमं- जुहवुः। तेनौर्धमास ऊर्जुमवांरुन्थत। तस्मांदर्धमासे देवा इंज्यन्ते। पितरोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं मास्यूर्जुमवांरुन्थत। तस्मौन्मासि पितृभ्यः क्रियते। मनुष्यां अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५२॥

तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं द्वयीमूर्ज्मवांरुन्थत। तस्माद्विरह्नां मनुष्येंभ्य उपहियते। प्रातश्चं सायं चं। प्रावोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्त-मंजुहवुः। तेनं त्रयीमूर्ज्मवारुन्थत। तस्मात्रिरह्नंः प्रावः प्रेरंते। प्रातः संङ्गवे सायम्। असुरा अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५३॥

तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं संवथ्सर ऊर्ज्मवांरुन्धता ते देवा अंमन्यन्त। अमी वा इदमंभूवन्। यद्वयः स्म इतिं। त एतानिं चातुर्मास्यान्यंपश्यन्। तानि निरंवपन्। तैरेवैषां तामूर्जमवृञ्जत। ततों देवा अभंवन्। पराऽसुंराः॥५४॥

यद्यजंते। यामेव देवा ऊर्जम्वारुंन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यत्पितृभ्यः करोतिं। यामेव पितर् ऊर्जम्वारुंन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यदांवस्थेऽत्रुष्ट् हरंन्ति। यामेव मंनुष्यां ऊर्जमवारुंन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यद्दक्षिणां ददांति॥५५॥

यामेव प्राव ऊर्जम्वारुंन्धत। तान्तेनावं रुन्थे। यचांतुर्मास्यैर्यजंते। यामेवासंरा ऊर्जम्वारुंन्धत। तान्तेनावं रुन्थे। भवंत्यात्मनां। परांस्य भ्रातृंव्यो भवति। विराजो वा एषा विक्रांन्तिः। यचांतुर्मास्यानिं। वैश्वदेवेनास्मिं होके प्रत्यंतिष्ठत्। वृरुणप्रघासेर्न्तिरक्षे। साक्रमेधेरमुष्मिं होके। एष ह त्वावेतथ्सर्वं भवति। य एवं विद्वाः श्वांतुर्मास्यैर्यजंते॥५६॥

मृनुष्यां अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णंक्ष् स्वधामसुंरा अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णंक्ष् स्वधामसुंरा ददाँत्यतिष्ठ**च**त्वारिं च॥ $\left[m{\gamma}
ight]$ 

अग्निर्वाव संवथ्मरः। आदित्यः परिवथ्मरः। चन्द्रमां इदावथ्मरः। वायुरंनुवथ्मरः। यद्वैश्वदेवेन यजंते। अग्निमेव तथ्संवथ्मरमाप्नोति। तस्माद्वश्वदेवेन यजंमानः। संवथ्मरीणाई स्वस्तिमा शास्त इत्याशासीत। यद्वरुण-प्रघासैर्यजंते। आदित्यमेव तत्परिवथ्मरमाप्नोति॥५७॥

तस्मौद्वरुणप्रघासैर्यजंमानः। परिवृथ्यरीणाई स्वस्तिमा शौस्त इत्याशांसीत। यथ्सांकमेधेर्यजंते। चन्द्रमंसमेव तिदंदावथ्यरमौप्रोति। तस्मौथ्साकमेधेर्यजंमानः। इदा-वृथ्यरीणाई स्वस्तिमा शौस्त इत्याशांसीत। यत्पितृयज्ञेन यजते। देवानेव तदन्ववंस्यति। अथ् वा अंस्य वायुश्चांनु-वथ्यरश्चाप्रीतावुच्छिंष्येते। यच्छुंनासीरीयेण यजते॥५८॥

वायुमेव तदंनुवथ्मरमाँप्रोति। तस्माँच्छुनासीरीयेण् यजमानः। अनुवथ्मरीणाई स्वस्तिमा शाँस्त इत्याशांसीत। संवथ्मरं वा एष ईफ्मतीत्यांहः। यश्चांतुर्मास्यैर्यजंत इति। एष ह् त्वै संवथ्मरमाँप्रोति। य एवं विद्वाइश्चांतुर्मास्यैर्यजंते। विश्वे देवाः समयजन्त। तैंऽग्निमेवायंजन्त। त एतं लोकमंजयन्॥५९॥

यस्मिन्नग्निः। यद्वैश्वदेवेन यजिते। एतमेव लोकं जियति। यस्मिन्नग्निः। अग्नेरेव सायुज्यमुपैति। यदा वैश्वदेवेन यजिते। अर्थ संवथ्सरस्यं गृहपैतिमाप्नोति। यदा सेवथ्सरस्यं गृहपंतिमाप्रोतिं। अर्थं सहस्रयाजिनंमाप्रोति। यदा सहस्रयाजिनंमाप्रोतिं॥६०॥

अर्थ गृहमेधिनंमाप्नोति। यदा गृहमेधिनंमाप्नोति। अथाग्निर्भवति। यदाग्निर्भवंति। अथ गौर्भवति। एषा वै वैश्वदेवस्य मात्राँ। एतद्वा एतेषांमव्मम्। अतोतो वा उत्तरिणि श्रेयार्श्स भवन्ति। यद्विश्वं देवाः समयंजन्त। तद्वैश्वदेवस्य वैश्वदेवत्वम्॥६१॥

अथांऽऽदित्यो वर्रण् रांजानं वरुणप्रघासैरंयजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्नादित्यः। यद्वरुणप्रघासैर्यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्नादित्यः। आदित्यस्यैव सायुज्यमुपैति। यदांदित्यो वर्रण् राजांनं वरुणप्रघासे-रयंजत। तद्वरुणप्रघासानां वरुणप्रघासत्वम्। अथ् सोमो राजा छन्दार्से साकमेधेर्यजत॥६२॥

स पृतं लोकमंजयत्। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। यथ्मांकमेधेर्यजंते। पृतमेव लोकं जंयति। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। चन्द्रमंस पृव सायुंज्यमुपैति। सोमो वै चन्द्रमाः। पृष हु त्वै साक्षाथ्सोमं भक्षयति। य पृवं विद्वान्थ्सांकमेधेर्यजंते। यथ्सोमंश्च राजा छन्दाईसि च समैधंन्त॥६३॥

तथ्सांकमेधाना र्ेसाकमेधत्वम्। अथुर्तवेः पितरेः प्रजापंतिं पितरें पितृयुज्ञेनांयजन्त। त पुतं लोकमंजयन्। यस्मिन्नृतवंः। यत्पितृयज्ञेन् यजिते। पृतमेव लोकं जियति। यस्मिन्नृतवंः। ऋतूनामेव सायुज्यमुपैति। यदृतवंः पितरंः प्रजापितिं पितरं पितृयज्ञेनायंजन्त। तत्पितृयज्ञस्यं पितृयज्ञत्वम्॥६४॥

अथौषंधय इमं देवं त्र्यंम्बकैरयजन्त प्रथेमहीतिं। ततो वै ता अप्रथन्त। य एवं विद्वा इस्त्र्यंम्बकैर्यजंते। प्रथंते प्रजयां पृश्विमिः। अथं वायुः पंरमेष्ठिन ई शुनासीरीयेणायजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्वायुः। यच्छुंनासीरीयेण यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्वायुः॥६५॥

वायोरेव सायुंज्यमुपैति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्र चांतुर्मास्ययाजी मींयता (३) न प्रमींयता (३) इतिं। जीवन्वा एष ऋतूनप्येति। यदिं वसन्तां प्रमीयंते। वसन्तो भंवति। यदिं ग्रीष्मे ग्रीष्मः। यदिं वर्षासुं वर्षाः। यदिं श्रिदें श्रत्। यदि हेमंन् हेम्न्तः। ऋतुर्भूत्वा संवथ्सरमप्येति। संवथ्सरः प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥६६॥

परिवर्ध्सरमांप्रोति शुनासीरीयंण् यजंतेऽजयन्थ्सहस्रयाजिनंमाप्रोति वैश्वदेवत्वः सांकमेधेरंयजत समेधंन्त पितृयज्ञत्वं जंयित् यस्मिन्वायुर्हेम्नतस्रीणि च॥—————[१०]

उभर्ये युव॰ सुराममुदंस्थान्नि वै यस्यं प्रातः सबुन एकैकोऽसुर्यं पर्वमानः प्रजा वे सुत्रमांसताप्रिर्वाव संवथ्सरो दशं॥१०॥

उभये वा उर्दस्थाथ्सर्वाभिर्मध्यतोऽत्र वाव ब्राँह्मणेष्वथं गृहमेधिन् पर्ध्यष्टिः॥६६॥ उभये वा वैषः॥

### हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥पञ्चमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

अग्नेः कृत्तिंकाः। शुक्रं प्रस्ताञ्च्योतिर्वस्तांत्। प्रजापंते रोहिणी। आपः प्रस्तादोषंधयोऽवस्तांत्। सोमंस्येन्वका विततानि। प्रस्ताद्वयंन्तोऽवस्तांत्। रुद्रस्यं बाहू। मृग्यवंः प्रस्तांद्विक्षारोऽवस्तांत्। अदित्ये पुनर्वसू। वातः प्रस्तांदार्द्रम्वस्तांत्॥१॥

बृह्स्पतें स्तिष्यः। जुह्वेतः प्रस्ताद्यजंमाना अवस्तौत्। सूर्पाणांमाश्रेषाः। अभ्यागच्छंन्तः प्रस्तांदभ्यानृत्यंन्तो-ऽवस्तौत्। पितृणां मुघाः। रुदन्तः प्रस्तांदपभ्रश्शोऽवस्तौत्। अर्यम्णः पूर्वे फल्गुंनी। जाया प्रस्तांदषभोऽवस्तौत्। भगस्योत्तरे। वहुतवंः प्रस्ताद्वहंमाना अवस्तौत्॥२॥

देवस्यं सिवतुर्हस्तंः। प्रस्तवः प्रस्तांथ्यनिर्वस्तांत्। इन्द्रस्य चित्रा। ऋतं प्रस्तांथ्यत्यम्वस्तांत्। वायोर्निष्ठ्यां व्रतिः। प्रस्तादसिंद्धिर्वस्तांत्। इन्द्राग्नियोर्विशांखे। युगानिं प्रस्तांत्कृषमांणा अवस्तांत्। मित्रस्यांनूराधाः। अभ्यारोहंत्प्रस्तांदभ्यारूढम्वस्तांत्॥३॥

इन्द्रंस्य रोहिणी। शृणत्परस्तांत्प्रतिशृणद्वस्तांत्। निर्ऋत्ये मूलवर्हणी। प्रतिभुञ्जन्तेः पुरस्तांत्प्रतिशृणन्तो-ऽवस्तांत्। अपां पूर्वा अषाढाः। वर्चः पुरस्ताथ्सिमितिर्वस्तांत्। विश्वेषां देवानामुत्तंराः। अभिजयंत्पुरस्तांद्भिजितम्वस्तांत्। विष्णोः श्रोणा पृच्छमानाः। प्रस्तात्पन्थां अवस्तात्॥४॥ वसूना्ड् श्रविष्ठाः। भूतं प्रस्ताद्भृतिर्वस्तात्। इन्द्रंस्य श्तिभिषक्। विश्वव्यंचाः प्रस्ताद्भिश्वक्षितिर्वस्तात्। अजस्यैकंपदः पूर्वे प्रोष्ठपदाः। वैश्वान् प्रस्ताद्धिश्विष्ठितिर्वस्तात्। अजस्यैकंपदः पूर्वे प्रोष्ठपदाः। वैश्वान् प्रस्ताद्धिश्वावस्वम्वस्तात्। अहेर्बुध्नियस्योत्तरे। अभिष्ठिश्चन्तेः प्रस्तादिभिष्णवन्तोऽवस्तात्। पूष्णो रेवतीः। गावंः प्रस्ताद्धश्मा अवस्तात्। अश्विनोरश्वयुजौः। ग्रामंः प्रस्ताव्यसेनाऽवस्तात्। यमस्याप्भरंणीः। अपकर्षन्तः प्रस्तादप्वहंन्तोऽवस्तात्। पूर्णा पृश्वाद्यते देवा अदधुः॥५॥

श्राह्मवस्त्राहृश्मान अवस्ताव्यसं ह्यवस्त्राव्यसं अवस्ताव्यसं वाः——[१]

यत्पुण्यं नक्षंत्रम्। तद्बद्वंवीतोपव्युषम्। यदा वै सूर्यं उदेति।
अथ् नक्षंत्रं नैति। यावंति तत्र सूर्यो गच्छैत्। यत्रं जघन्यं
पश्यैत्। तावंति कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते।
एव॰ ह वै यज्ञेषं च शतद्यंम्नं च माथ्स्यो निरवसाय्यां
चंकार॥६॥

यो वै नेक्ष्रत्रियं प्रजापंतिं वेदं। उभयोरेनं लोकयोर्विदुः। हस्तं एवास्य हस्तंः। चित्रा शिरंः। निष्ट्या हृदंयम्। ऊरू विशाखे। प्रतिष्ठाऽनूराधाः। एष वै नेक्ष्रत्रियः प्रजापंतिः। य एवं वेदं। उभयोरेनं लोकयोर्विदुः॥७॥

अस्मि इश्चामुष्मि ईश्च। यां कामयेत दुहितरें प्रिया स्यादितिं। तां निष्ट्यायां दद्यात्। प्रियैव भवति। नेव तु पुन्रागंच्छति। अभिजिन्नाम् नक्षंत्रम्। उपरिष्टादषाढानांम्। अवस्तांच्छ्रोणायैं। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवास्तस्मिन्नक्षंत्रेऽभ्यंजयन्॥८॥

यद्भ्यजंयन्। तदंभिजितों ऽभिजित्त्वम्। यं कामयेतानप-ज्ययं जंयेदितिं। तमेतस्मिन्नक्षंत्रे यातयेत्। अनुपज्य्यमेव जयित। पापपंराजितिमव् तु। प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। ते नक्षंत्रं नक्षत्रमुपांतिष्ठन्त। ते समावंन्त एवाभंवन्। ते रेवतीमुपांतिष्ठन्त॥९॥

ते रेवत्यां प्राभवन्। तस्माँद्रेवत्यां पशूनां कुंवीत। यत्किं चाँर्वाचीन् सोमाँत्। प्रैव भवन्ति। सुलिलं वा इदमन्त्रासीत्। यदत्रिन्। तत्तारिकाणां तारकृत्वम्। यो वा इह यजेते। अमु स लोकं नेक्षते। तन्नक्षेत्राणां नक्षत्रत्वम्॥१०॥

देवगृहा वै नक्षंत्राणि। य एवं वेदं। गृह्यंव भंवति। यानि वा इमानि पृथिव्याश्चित्राणि। तानि नक्षंत्राणि। तस्मादश्चीलनाम इश्चित्रे। नावंस्येन्न यंजेत। यथां पापाहे कुंरुते। तादगेव तत्। देवनुक्षुत्राणि वा अन्यानि॥११॥

यम्नक्षत्राण्यन्यानि। कृत्तिंकाः प्रथमम्। विशांखे उत्तमम्। तानि देवनक्षत्राणि। अनूराधाः प्रथमम्। अपभर्गणीरुत्तमम्। तानि यमनक्षत्राणि। यानि देवनक्षत्राणि। तानि दक्षिणेन् परियन्ति। यानि यमनक्षत्राणि॥१२॥ तान्युत्तंरेण। अन्वेषामराथ्स्मेतिं। तदंनूराधाः। ज्येष्ठमेषामवधिष्मेतिं। तज्ञ्येष्ठघ्नी। मूलंमेषामवृक्षामेतिं। तन्मूलवर्हंणी। यन्नासंहन्त। तदंषाढाः। यदश्लोणत्॥१३॥

तच्छ्रोणा। यदर्शणोत्। तच्छ्रविष्ठाः। यच्छ्तमभिषज्यन्। तच्छ्रतभिषक्। प्रोष्ठपदेषूदंयच्छन्त। रेवत्यांमरवन्त। अश्वयुजोरयुञ्जत। अपभरणीष्वपांवहन्। तानि वा एतानि यमनक्ष्त्राणि। यान्येव देवनक्ष्त्राणि। तेषुं कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते॥१४॥

देवस्यं सिवतुः प्रातः प्रंस्वः प्राणः। वरुणस्य सायमांस्वो-ऽपानः। यत्प्रंतीचीनं प्रात्स्तनात्। प्राचीनर् सङ्गवात्। ततो देवा अग्निष्टोमं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। मित्रस्यं सङ्गवः। तत्पुण्यं तेज्रस्व्यहंः। तस्मात्तर्हं पृशवंः सुमायंन्ति। यत्प्रंतीचीनर् सङ्गवात्॥१५॥

प्राचीनं मध्यं दिनात्। ततों देवा उक्थ्यं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। बृह्स्पतेंर्मध्यं दिनः। तत्पुण्यं तेज्रस्व्यहंः। तस्मात्तर्ह् तेक्ष्णिष्ठं तपति। यत्प्रंतीचीनं मध्यं दिनात्। प्राचीनंमपराह्णात्। ततों देवाः षोंड्शिनं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः॥१६॥

भगस्यापराह्नः। तत्पुण्यं तेजस्व्यहंः। तस्मादपराह्ने

कुंमार्यो भगंमिच्छमांनाश्चरन्ति। यत्प्रंतीचीनंमपराह्वात्। प्राचीन सायात्। ततो देवा अंतिरात्रं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। वरुणस्य सायम्। तत्पुण्यं तेजस्व्यहंः। तस्मात्तर्हि नानृतं वदेत्॥१७॥

ब्राह्मणो वा अष्टाविश्यो नक्षेत्राणाम्। समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षेत्राणि। चत्वार्यश्चीलानि। तानि नवि। यचे प्रस्तान्नक्षेत्राणां यच्चावस्तांत्। तान्येकांदश। ब्राह्मणो द्वांदशः। य एवं विद्वान्थ्यंवथ्यरं व्रतं चरित। संवथ्यरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भवित। समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षेत्राणि। चत्वार्यश्चीलानि। तानि नवि। आग्नेयी रात्रिः। ऐन्द्रमहेः। तान्येकांदश। आदित्यो द्वांद्शः। य एवं विद्वान्थ्यंवथ्यरं व्रतं चरित। संवथ्यरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भवित॥१८॥ सङ्बाध्यांइशिन् विरिमिमत् तत्वरात्तीर्थ विमाणं विदेवति समानस्याङ्क पश्च प्रण्यानि नक्षेत्राण्यशे चे॥—[३]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कित पात्राणि यज्ञं वंहुन्तीतिं। त्रयोदशेतिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कस्तानि निरंमिमीतेतिं। प्रजापंतिरितिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कुत्स्तानि निरंमिमीतेतिं। आत्मन् इतिं। प्राणापानाभ्यांमेवोपाई-श्वन्तर्यामौ निरंमिमीत॥१९॥

व्यानादुंपा १शुसवंनम्। वाच ऐन्द्रवायवम्। दृक्षु ऋतुभ्यां मैत्रावरुणम्। श्रोत्रांदाश्विनम्। चक्षुंषः शुक्रामृन्थिनौ। आत्मनं आग्रयणम्। अङ्गेभ्य उक्थ्यम्। आयुंषो ध्रुवम्। प्रतिष्ठायां ऋतुपात्रे। यज्ञं वाव तं प्रजापंतिर्निरंमिमीत। स निर्मितो नाद्धियत् समंब्लीयत। स एतान्प्रजापंतिरिपवापानंपश्यत्। तां निरंवपत्। तैर्वे स यज्ञमप्यंवपत्। यदंपिवापा भवंन्ति। यज्ञस्य धृत्या असंब्लयाय॥२०॥

उपार्श्वन्तर्यामौ निरंमिमीतामिमीत षद्गं॥

[8]

ऋतमेव पंरमेष्ठि। ऋतं नात्येति किश्चन। ऋते संमुद्र आहितः। ऋते भूमिरियङ्श्रिता। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रान्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंतिये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि वर्तये। तदतं तथ्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२१॥

यद्घर्मः पूर्यवंतियत्। अन्तांन्पृथिव्या दिवः। अग्निरीशांन् ओजंसा। वरुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्भिः सिखंभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आऋांन्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वान्रस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंतिये। स्त्येन् परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि वंतिये। तद्दतं तथ्सत्यम्। तद्दतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२२॥

यो अस्याः पृथिव्यास्त्वचि। निवर्तयत्योषंधीः। अग्निरीशांन् ओजंसा। वरुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्धिः सर्खिभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आऋांन्तमुष्णिहां। शिर्स्तपस्याहितम्। वैश्वान्रस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंतिये। सृत्येन् परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वंतिये। तद्दतं तथ्सृत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२३॥

एकं मास्मुदंसृजत्। प्रमेष्ठी प्रजाभ्यः। तेनाँभ्यो मह् आवंहत्। अमृतं मर्त्याँभ्यः। प्रजामनु प्र जांयसे। तदं ते मर्त्यामृतमं। येन मासां अर्धमासाः। ऋतवंः परिवथ्सराः। येन ते ते प्रजापते। ईजानस्य न्यवंत्यन्। तेनाहम्स्य ब्रह्मणा। निवंत्यामि जीवसें। अग्निस्त्ग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रान्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वान्रस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंत्ये। स्त्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। श्रग्मेनांस्याभि वर्तये। तद्तं तथ्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२४॥

परिवर्तये सहाभिवर्तय उष्णिहां राध्यासुं न्यवर्तयृत्रुपंवर्तये चृत्वारिं च। (ऋतमेव षोडंश। यद्धुर्मो यो अस्याः सप्तदंशसप्तदश। एकं मासुं चतुर्वि श्रातिः)॥————[५]

देवा वै यद्यज्ञेऽकुंर्वत। तदसुंरा अकुर्वत। तेऽसुंरा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्यो नापंश्यन्। ते केशानग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रूंणि। अथोपपृक्षौ। तत्स्तेऽवाश्च आयन्। परांऽभवन्। यस्यैवं वपंन्ति। अवांङेति॥२५॥

अथो परैव भंवति। अथं देवा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्योऽपश्यन्। त उंपपक्षावग्रेऽवपन्त। अथु श्मश्रृंणि। अथु केशान्। ततुस्ते- ऽभवन्। सुवृगं लोकमायन्। यस्यैवं वर्पन्ति। भवंत्यात्मनां। अथो सुवृगं लोकमेति॥२६॥

अथैतन्मनुंर्वित्रे मिथुनमंपश्यत्। स श्मश्रूण्यग्रेऽवपतः। अथोपपक्षौ। अथ् केशान्। ततो वै स प्राजायत प्रजयां पशुभिः। यस्यैवं वपन्ति। प्र प्रजयां पशुभिर्मिथुनैर्जायते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते संवथ्सरे व्यायंच्छन्तः। तान्देवाश्चांतुर्मास्यैरेवाभि प्रायुंञ्जत॥२७॥

वैश्वदेवनं चतुरों मासोऽवृञ्जतेन्द्रंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चार्वर्तयन्त परिं च। वरुणप्रघासैश्चतुरों मासोऽवृञ्जत वर्रण-राजानः। ताञ्छीर्षं नि चार्वर्तयन्त परिं च। साक्मेधेश्चतुरों मासोऽवृञ्जत सोमराजानः। ताञ्छीर्षं नि चार्वर्तयन्त परिं च। या संवथ्मर उंपजीवाऽऽसींत्। तामेषामवृञ्जत। ततो देवा अभवन्। पराऽसुराः॥२८॥

य एवं विद्वा इश्चांतुर्मा स्यैर्य जंते। भ्रातृं व्यस्यैव मासो वृक्ता। शीर्षं नि चं वर्तयंते परिं च। येषा संवथ्सर उंपजीवा। वृक्के तां भ्रातृं व्यस्य। क्षुधाऽस्य भ्रातृं व्यः परां भवति। लोहितायसेन नि वर्तयते। यद्वा इमाम् ग्रिर्ऋतावागंते निवर्तयति। एतदेवैना ई रूपं कृत्वा निवर्तयति। सा ततः श्वश्वो भूयंसी भवंन्त्येति॥ २९॥

प्र जांयते। य एवं विद्वाँ होंहितायसेनं निवर्तयंते। एतदेव

रूपं कृत्वा नि वंर्तयते। स ततः श्वश्वो भूयान्भवंन्नेति। प्रैव जायते। त्रेण्या शंलुल्या नि वंर्तयेत। त्रीणि त्रीणि वै देवानांमृद्धानि। त्रीणि छन्दा रेसि। त्रीणि सवंनानि। त्रयं इमे लोकाः॥३०॥

ऋध्यामेव तद्वीर्यं पृषु लोकेषु प्रतिं तिष्ठति। यचांतुर्मास्य-याज्यांत्मनो नावद्येत्। देवेभ्य आवृंश्च्येत। चृतृषु चंतृषु मासेषु नि वंतियेत। प्रोक्षंमेव तद्देवेभ्यं आत्मनोऽवंद्यत्यनांत्रस्काय। देवानां वा पृष आनीतः। यश्चांतुर्मास्ययाजी। य पृवं विद्वान्नि चं वृत्तयंते परिं च। देवतां पृवाप्येति। नास्यं रुद्रः प्रजां पश्निमे मन्यते॥३१॥

आयुंषः प्राणः सन्तंनु। प्राणादंपानः सन्तंनु। अपानाद्यानः सन्तंनु। व्यानाचक्षुः सन्तंनु। चक्षुंषः श्रोत्रः सन्तंनु। श्रोत्रान्मनः सन्तंनु। मनसो वाचः सन्तंनु। वाच आत्मानः सन्तंनु। आत्मनः पृथिवीः सन्तंनु। पृथिव्या अन्तरिक्षः सन्तंनु। अन्तरिक्षाद्दिवः सन्तंनु। दिवः सुवः सन्तंनु॥३२॥

इन्द्रों दधीचो अस्थिभिः। वृत्राण्यप्रतिष्कुतः। ज्ञ्घानं नवतीर्नवं। इच्छन्नश्वंस्य यच्छिरंः। पर्वतेष्वपंश्रितम्। तिद्वंदच्छर्यणाविति। अत्राह् गोरमंन्वत। नाम् त्वष्टुंरपीच्यम्। इत्था चन्द्रमंसो गृहे। इन्द्रमिद्गाथिनों बृहत्॥३३॥ इन्द्रंमकेंभिर्किणः। इन्द्रं वाणीरनूषत। इन्द्रं इद्धर्योः सर्चा। सम्मिश्च आवंचो युजां। इन्द्रों वृज्जी हिरण्ययः। इन्द्रों दीर्घाय चक्षंसे। आ सूर्य रोहयद्दिवि। वि गोभिरद्रिमैरयत्। इन्द्रं वार्जेषु नो अव। सहस्रंप्रधनेषु च॥३४॥

उग्र उग्राभिंक्तिभिंः। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तेवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। इन्द्रः स दामने कृतः। ओजिंष्टः स बलें हितः। द्युम्नी श्लोकी स सौम्यः। गिरा वज्रो न सम्भृतः। सबंलो अनंपच्युतः। वृवक्षुरुग्रो अस्तृतः॥३५॥ वृहवास्तंः।———[८]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स प्रजापंतिरिन्द्रं ज्येष्ठं पुत्रमप् न्यंधत्तः। नेदेनमसुरा बलीया स्सोऽहन्त्रितिं। प्रह्लादों हु वै कायाधवः। विरोचन् स्वं पुत्रमप् न्यंधत्तः। नेदेनं देवा अहन्त्रितिं। ते देवाः प्रजापंतिमुपस्मेत्योचुः। नाराजकस्य युद्धमस्ति। इन्द्रमन्विंच्छामेतिं। तं यंज्ञकृतुभिरन्वैंच्छन्॥३६॥

तं यंज्ञऋतुभिनान्वंविन्दन्। तमिष्टिंभिरन्वैंच्छन्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दन्। तदिष्टींनामिष्टित्वम्। एष्टंयो ह् वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तस्मां पुतमांग्नावैष्ण्वमेकांदशकपालं दीक्षणीयं निरंवपन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। तान्पंत्रीसंयाजान्त उपानयन्॥३७॥

ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। ते प्रांयणीयंमुभि सुमारोहन्।

तदंपद्रुत्यांतन्वत। ताञ्छ्य्यंन्त उपांनयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। त आंतिथ्यम्भि समारोहन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। तानिडांन्त उपांनयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। तस्मांदेता पुतदंन्ता इष्टंयः सन्तिष्ठन्ते॥३८॥

पुव हे देवा अर्कुर्वत। इति देवा अंकुर्वत। इत्यु वै मंनुष्याः कुर्वते। ते देवा ऊंचुः। यद्वा इदमुचैर्यज्ञेन चराम। तन्नोऽसुराः पाप्माऽनुंविन्दन्ति। उपा शूंप्सदां चराम। तथा नोऽसुराः पाप्मा नानुंवेथ्स्यन्तीति। त उपा शूंप्सदंमतन्वत। तिस्र एव सांमिधेनीर्नूच्यं॥३९॥

स्रुवेणांघारमाघायं। तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा।
स्रुवेणांपसदं जुह्वां चंकुः। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं
वचो अपांवधी इस्वाहेतिं। अशन्यापिपासे ह्वा उग्रं वचः।
एनंश्च वैरहत्यं च त्वेषं वचः। एत इवाव तचंतुर्धाविहितं
पाप्मानं देवा अपंजिष्ठिरे। तथो एवैतदेवंविद्यजमानः। तिस्र
एव सांमिधेनीर्नूच्यं। स्रुवेणांघारमाघार्य॥४०॥

तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणोंप्सदं जुहोति। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधी हु स्वाहेतिं। अशन्यापिपासे हु वा उग्रं वचंः। एनंश्च वैरहत्यं च त्वेषं वचंः। एतमेव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं यजमानोऽपं हते। तेंऽभिनीयैवाहंः पृशुमाऽलंभन्त। अह्नं एव तद्देवा अवंर्तिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे। तेनांभिनीयंव रात्रेः प्राचंरन्। रात्रिया एव तद्देवा अवंर्तिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे॥४१॥

तस्मांदिभ्नीयैवाहं पृशुमा लेभेत। अह्रं एव तद्यजंमानो-ऽवंतिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। तेनांभिनीयेव रात्रेः प्रचंरेत्। रात्रिया एव तद्यजंमानोऽवंतिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। स एष उंपवस्थीयेऽहं द्विदेवृत्यः पृशुरा लेभ्यते। द्वयं वा अस्मिँ श्लोके यर्जमानः। अस्थि च मार्सं चं। अस्थिं चैव तेनं मार्सं च यर्जमानः सङ्स्कुरुते। ता वा एताः पश्चं देवताः। अग्नीषोमांवग्निर्मित्रावरुंणौ॥४२॥

पृश्रपृश्ची वै यर्जमानः। त्वङ्गार्सः स्नावाऽस्थिं
मृज्ञा। एतमेव तत्पंश्वधाविहितमात्मानं वरुणपाशान्मुंश्चति।
भेषजतांयै निर्वरुणत्वायं। तर सप्तिभिश्छन्दोभिः प्रातरंह्वयन्।
तस्मांथ्मप्त चंतुरुत्तराणि छन्दारेसि प्रातरनुवाकेऽनूंच्यन्ते।
तमेतयोपस्मेत्योपासीदन्। उपास्मै गायता नर् इतिं।
तस्मांदेतयां बहिष्यवमान उपसर्वः॥४३॥

ऐच्छुत्रनृय्ङ्स्तिष्टन्तेऽनूच्यानूच्यं खुवेणांघारमाघार्यं रात्रिया एवं तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे मित्रावरुंणो नवं च (देवा यजमानो देवा देवा यजमानो यजमानः प्राचरं प्रचेरेदालंभुन्तालंभेत मृत्युमपंजिघ्नरे भ्रातृंच्यान्॥॥——[९]

स संमुद्र उत्तर्तः प्राज्वंलद्भृम्यन्तेनं। एष वाव स संमुद्रः। यच्चात्वांलः। एष उवेव स भूम्यन्तः। यद्वैद्यन्तः। तदेतित्रिश्वलं त्रिंपूरुषम्। तस्मात्तं त्रिंवित्स्तं खंनन्ति। स सुंवर्णरज्ताभ्यां कुशीभ्यां परिंगृहीत आसीत्। तं यद्स्या अध्यजनंयन्। तस्मांदादित्यः॥४४॥

अथ् यथ्सुंवर्णरज्ञताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत् आसीत्। साऽस्यं कौशिकतां। तं त्रिवृताऽभि प्रास्तुंवत। तं त्रिवृताऽदंदत। तं त्रिवृताऽहंरन्। यावंती त्रिवृतो मात्रां। तं पंश्रद्शेनाभि प्रास्तुंवत। तं पंश्रद्शेनादंदत। तं पंश्रदशेनाहंरन्। यावंती पश्चदशस्य मात्रां॥४५॥

त १ संप्तद्शेनाभि प्रास्तुंवत। त १ संप्तद्शेनादंदत। त १ संप्तद्शेनाहं १ यावंती सप्तद्शस्य मात्रां। तस्यं सप्तद्शेनं हियमांणस्य तेजो हरों ऽपतत्। तमें कि वि १ शेनाभि प्रास्तुंवत। तमें कि वि १ शेनाहं १ यावंत्येकि वि १ शस्य मात्रां। ते यित्रवृतां स्तुवतं॥ ४६॥

त्रिवृतेव तद्यजंमान्मादंदते। तं त्रिवृतेव हंरन्ति। यावंती त्रिवृतो मात्रां। अग्निर्वे त्रिवृत्। यावृद्वा अग्नेदंहंतो धूम उदेत्यानु व्येतिं। तावंती त्रिवृतो मात्रां। अग्नेरेवैनं तत्। मात्रा सायंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ यत्पंश्रदृशेनं स्तुवतें। पृश्रदृशेनैव तद्यजंमान्मादंदते॥४७॥

तं पंश्चद्रशेनैव हंरन्ति। यावंती पश्चद्रशस्य मात्रां। चन्द्रमा वै पंश्चद्रशः। एष हि पंश्चद्रयामंपक्षीयतें। पृश्चद्रयामांपूर्यतें। चन्द्रमंस एवेनं तत्। मात्रा सायुंज्य सलोकतांं गमयन्ति। अथ् यथ्संप्तद्रशेनं स्तुवतें। स्प्तद्रशेनैव तद्यजंमान्मादंदते। तर् संप्तद्रशेनैव हंरन्ति॥४८॥

यावंती सप्तद्शस्य मात्रौ। प्रजापंतिर्वे संप्तद्शः। प्रजा-

पंतेरेवैनं तत्। मात्रा सायंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ् यदेकिवि शेनं स्तुवतें। एकिवि शेनेव तद्यजंमान्मादंदते। तमेकिवि शेनेव हंरन्ति। यावंत्येकिवि श्रस्य मात्रां। असौ वा आंदित्य एंकिवि श्राः। आदित्यस्यैवेनं तत्॥४९॥

मात्रा सायंज्य सलोकतां गमयन्ति। ते कुश्यौ। व्यंप्रन्। ते अहोरात्रे अभवताम्। अहंरेव सुवर्णाऽभवत्। रज्ता रात्रिः। स यदांदित्य उदेतिं। एतामेव तथ्सुवर्णां कुशीमनु समेति। अथ यदंस्तमेति। एतामेव तद्रज्तां कुशीमनुसंविशति। प्रहादों हु वे कांयाध्वः। विरोचन् इं स्वं पुत्रमुदांस्यत्। स प्रंदरोंऽभवत्। तस्मौत्प्रद्रादुंदकं नाचांमेत्॥५०॥

आदित्यः पंश्चद्रशस्य मात्रां स्तुवतं पश्चद्शेनेव तद्यजंमानुमादंदते सप्तद्शेनेव हंरन्त्यादित्यस्यैवेनं तद्विंशति चुत्वारिं च॥\_\_\_\_\_\_\_[१०]

ये वै चत्वारः स्तोमाः। कृतं तत्। अथ् ये पश्चं। किलः सः। तस्माचतुंष्टोमः। तचतुंष्टोमस्य चतुष्टोमृत्वम्। तदांहुः। कृतमानि तानि ज्योती १षि। य पृतस्य स्तोमा इति। त्रिवृत्पंश्चद्शः सप्तद्श एंकवि १ शः॥५१॥

पुतानि वाव तानि ज्योती १षि। य पुतस्य स्तोमाः। सौंऽब्रवीत्। सप्तद्शेनं ह्रियमाणो व्यंलेशिषि। भिषज्यंत मेतिं। तमृश्विनौ धानाभिरभिषज्यताम्। पूषा कंर्म्भेणं। भारती परिवापेणं। मित्रावरुंणौ पयस्यंया। तदांहुः॥५२॥ यदिश्वभ्यां धानाः। पूष्णः कर्म्भः। भारंत्ये परिवापः। मित्रावरुणयोः पयस्याऽथं। कस्मदितेषा हिवषामिन्द्रमेव यंजन्तीति। एता ह्यंनं देवता इति ब्रूयात्। एतैर्ह्विर्भि-रभिषज्य इस्तस्मादिति। तं वसंवोऽष्टाकंपालेन प्रातः सवने-ऽभिषज्यन्। रुद्रा एकांदशकपालेन् माध्यं दिने सर्वने। विश्वं देवा द्वादंशकपालेन तृतीयसवने॥५३॥

स यद्ष्टाकंपालान्प्रातः सव्ने कुर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सर्वने। द्वादंशकपालाङ्स्तृतीयसव्ने।
विलोम् तद्यज्ञस्यं क्रियेत। एकांदशकपालानेव प्रांतः
सव्ने कुर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सर्वने।
एकांदशकपालाङ्स्तृतीयसव्ने। यज्ञस्यं सलोम्त्वायं।
तदांहुः। यद्वसूनां प्रातः सवनम्। रुद्राणां माध्यं दिन् स्
सर्वनम्। विश्वेषां देवानां तृतीयसवनम्। अथ् कस्मांदेतेषा इ
हिवषामिन्द्रंमेव यंजन्तीति। एता ह्येनं देवता इति ब्रूयात्।
एतैर्ह्विर्भिरभिषज्युङ्स्तस्मादिति॥५४॥
पुक्षिक्ष अहिस्तीयसवने प्रांतः सवनं पर्व च॥———[११]

तस्यावांचोऽवपादादंबिभयुः। तमेतेषुं सप्तसु छन्दंः स्वश्रयन्। यदश्रंयन्। तच्छ्रांयन्तीयंस्य श्रायन्तीयृत्वम्। यदवांरयन्। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयृत्वम्। तस्यावांच प्वावंपादादंबिभयुः। तस्मां पृतानिं सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दा इस्युपांदधुः। तेषामित् त्रीण्यंरिच्यन्त। न त्रीण्युदं-

### भवन्॥५५॥

स बृंह्तीमेवास्पृंशत्। द्वाभ्यांमक्षरांभ्याम्। अहोरात्राभ्यांमेव। तदांहुः। कृतमा सा देवाक्षंरा बृह्ती। यस्यान्तत्प्रत्यतिंष्ठत्। द्वादंश पौर्णमास्यः। द्वादृशाष्टंकाः। द्वादंशामावास्याः। एषा वाव सा देवाक्षंरा बृहती॥५६॥

यस्यां तत्प्रत्यतिष्ठिदितिं। यानिं च छन्दा ईस्यत्यिरच्यन्त। यानिं च नोदर्भवन्। तानि निर्वीर्याणि हीनान्यंमन्यन्त। साऽब्रंबीद्वहृती। मामेव भूत्वा। मामुप सङ्श्रंयतेतिं। चतुर्भिरक्षरैरनुष्ठुग्बृंहृतीं नोदंभवत्। चतुर्भिरक्षरैः पङ्किर्बृहृती-मत्यरिच्यत। तस्यांमेतानिं चत्वार्यक्षराण्यपच्छिद्यां-दधात्॥५७॥

ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। अष्टाभि-रक्षरैरुण्णिग्बृंह्तीं नोदंभवत्। अष्टाभिरक्षरैष्ट्रिष्टुग्बृंह्तीमत्यं-रिच्यत। तस्यांमेतान्यष्टावृक्षराण्यप्च्छिद्यांदधात्। ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। द्वाद्शभिरक्षरैर्गायत्री बृंह्तीं नोदंभवत्। द्वाद्शभिरक्षरैर्जगंती बृह्तीमत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानि द्वादंशाक्षराण्यपच्छिद्यांदधात्॥५८॥

ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। सौंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। छन्दार्शस् रथों मे भवत। युष्माभिरहमेतमध्वांनमनु सश्चराणीतिं। तस्यं गायत्री च जगंती च पृक्षावंभवताम्। उष्णिक्नं त्रिष्ठुप्य प्रष्ट्यौं। अनुष्ठुप्यं पृङ्किश्च धुर्यौ। बृह्त्येवोद्धिरंभवत्। स एतं छंन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वानमनु समंचरत्। एत॰ ह् वै छंन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वानमनु सश्चरित। येनैष एतथ्सश्चरित। य एवं विद्वान्थ्सोमेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥५९॥

अभव-वाव सा देवाक्षरा बृहुत्यंदधाद्वादंशाक्षरांण्यपुच्छिद्यांदधादास्थाय पद्वं॥---------------------------------[१२]

अुग्नेः कृत्तिंका यत्पुर्ण्यं देवस्यं सिवृतुर्वहाविद्यः कत्यृतमेव देवा वा आयुंषः प्राणिमन्द्रों दधीचो देवासुराः स प्रजापंतिः स संमुद्रो ये वै चृत्वार्स्तस्यावांचो द्वादंश॥१२॥ अुग्नेः कृत्तिका देवगृहा ऋतमेवर्ध्यामेव तिस्रः परांचीयें वै चृत्वारो नवंपश्चाशत्॥५९॥ अग्नेः कृत्तिका य उं चैनमेवं वेदं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥षष्ठमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

अनुंमत्यै पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपति। ये प्रत्यश्चः शम्याया अवृशीयंन्ते। तन्नैर्ऋतमेकंकपालम्। इयं वा अनुंमतिः। इयं निर्ऋतिः। नैर्ऋतेन् पूर्वेण प्रचंरति। पाप्मानंमेव निर्ऋतिं पूर्वां निरवंदयते। एकंकपालो भवति। पुक्धैव निर्ऋतिं निरवंदयते। यदहुंत्वा गार्हंपत्य ईयुः॥१॥

रुद्रो भूत्वाऽग्निरंनूत्थायं। अध्वर्यं च यजंमानं च हन्यात्। वीह् स्वाहाऽऽहुंतिं जुषाण इत्याह। आहुंत्येवेन रं शमयति। नार्तिमार्च्छंत्यध्वर्युर्न यजंमानः। एकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्ध निर्ऋत्ये भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै निर्ऋत्ये दिक्। स्वायांमेव दिशि निर्ऋतिं निरवंदयते॥२॥

स्वकृंत इरिणे जुहोति प्रद्रे वाँ। एतद्वै निर्ऋंत्या आयतंनम्। स्व एवाऽऽयतंने निर्ऋंतिं निरवंदयते। एष ते निर्ऋते भाग इत्यांह। निर्दिशत्येवैनांम्। भूतें ह्विष्मंत्यसीत्यांह। भूतिंमे्वोपावंतिते। मुश्चेमम १ हंस् इत्यांह। अ१ हंस एवैनंं मुश्चति। अङ्गुष्ठाभ्यांं जुहोति॥३॥

अन्तत एव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णं वासंः कृष्णतूंषं दक्षिणा। एतद्वै निर्ऋत्यै रूपम्। रूपेणैव निर्ऋतिं निरवंदयते। अप्रतिक्षमायंन्ति। निर्ऋत्या अन्तर्हित्यै। स्वाहा नमो य इदं चकारेति पुन्रेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। आहुंत्यैव नंमस्यन्तो गार्हंपत्यमुपावर्तन्ते। आनुमृतेन प्रचरित। इयं वा अनुमितिः॥४॥

इयमेवास्मै राज्यमन् मन्यते। धेनुर्दक्षिणा। इमामेव धेनुं कुंरुते। आदित्यं चुरुं निर्वपति। उभयीष्वेव प्रजास्वभिषिंच्यते। दैवीषु च मानुषीषु च। वरो दक्षिणा। वरो हि राज्य समृद्धे। आग्नावैष्णवमेकादशकपालं निर्वपति। अग्निः सर्वा देवताः॥५॥

विष्णुंर्यज्ञः। देवतांश्चैव यज्ञं चार्व रुन्थे। वामनो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनांऽऽग्नेयः। यद्वांमनः। तेनं वैष्णवः समृंद्धौ। अग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति। अग्नीषोमांभ्यां वा इन्द्रों वृत्रमंहन्नितिं। यदंग्नीषोमीयमेकां-दशकपालं निर्वपंति॥६॥

वार्त्रघ्रमेव विजित्यै। हिरंण्यं दक्षिणा समृद्धौ। इन्द्रों वृत्र श्रह्तवा। देवतांभिश्चेन्द्रियेणं च व्यार्ध्यत। स एतमैंन्द्राग्रमेकां-दशकपालमपश्यत्। तन्निरंवपत्। तेन् वै स देवतांश्चेन्द्रियं चावांरुन्धा। यदैन्द्राग्रमेकांदशकपालं निर्वपंति। देवतांश्चेव तेनेन्द्रियं च यज्ञंमानोऽवं रुन्धे। ऋषभो वही दक्षिणा॥७॥

यद्वही। तेनाँऽऽग्नेयः। यदंष्भः। तेनै्न्द्रः समृंद्धै। आग्नेयमृष्टाकंपालुं निर्वपति। ऐन्द्रं दिधं। यदाँग्नेयो भवंति। अग्निर्वे यंज्ञमुखम्। युज्ञमुखमेवर्द्धिं पुरस्तौद्धत्ते। यदैन्द्रं दिधं॥८॥

इन्द्रियमेवावं रुन्थे। ऋषभो वही दक्षिणा। यह्नही। तेनाँऽऽग्नेयः। यदंषभः। तेनैन्द्रः समृद्धै। यावंतीर्वे प्रजा ओषंधीनामहुंतानामाश्ञन्। ताः परांऽभवन्। आग्रयणं भंवति हुताद्यांय। यजंमानुस्यापंराभावाय॥९॥

देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता इंन्द्राग्नी उदंजयताम्। तावेतमैंन्द्राग्नं द्वादंशकपालं निरंवृणाताम्। यदैंन्द्राग्नो भवत्युज्जित्ये। द्वादंशकपालो भवति। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। वैश्वदेव-श्वरुर्भवति। वैश्वदेवं वा अन्नम्ं। अन्नमेवास्मैं स्वदयति॥१०॥

प्रथम्जो वृथ्सो दक्षिणा समृद्धे। सौम्य श्र्यामाकं च्रं निर्वपति। सोमो वा अंकृष्टप्च्यस्य राजां। अकृष्टप्च्यमेवासमें स्वदयति। वासो दक्षिणा। सौम्य हि देवत्या वासः समृद्धे। सरंस्वत्ये च्रं निर्वपति। सरंस्वते च्रम्। मिथुनमेवावं रुन्थे। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धे। एति वा एष यंज्ञमुखादध्याः। योंऽग्नेर्देवताया एति। अष्टावेतानि ह्वी श्षे भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रोंऽग्निः। तेनैव यंज्ञमुखादध्यां अग्नेर्देवतांयै नैति॥११॥

र्डुयुर्निरवंदयतेऽङ्गुष्टाभ्याँ जुहोत्यनुंमतिर्देवतां निर्वपंति वहीं दक्षिणा यदैन्द्रं दध्यपंराभावाय स्वदयति गावो दक्षिणा समृद्धो षद्वं॥\_\_\_\_\_\_\_\_[१] वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टा न प्राजायन्त। सौंऽग्निरंकामयत। अहमिमाः प्रजंनयेयमितिं। स प्रजापंतये शुचंमदधात्। सोंऽशोचत्प्रजामिच्छमानः। तस्माद्यं चं प्रजा भुनक्ति यं च न। तावुभौ शोंचतः प्रजामिच्छमानौ। तास्वग्निमप्यंसृजत्। ता अग्निरध्यैत्॥१२॥

सोमो रेतोंऽदधात्। स्विता प्राजंनयत्। सरंस्वती वाचंमदधात्। पूषाऽपोषयत्। ते वा एते त्रिः संवथ्सरस्य प्रयुंज्यन्ते। ये देवाः पृष्टिंपतयः। स्वथ्सरो वै प्रजापंतिः। स्वथ्सरेणैवास्मै प्रजाः प्राजंनयत्। ताः प्रजा जाता म्रुतोंऽप्रन्। अस्मानिष् न प्रायुंक्षतेतिं॥१३॥

स पृतं प्रजापंतिर्मारुतः सप्तकंपालमपश्यत्। तन्निरंवपत्। ततो वै प्रजाभ्योऽकल्पत। यन्मांरुतो निरुप्यतें। यज्ञस्य क्रुप्त्यें। प्रजानामघाताय। सप्तकंपालो भवति। सप्तगंणा वै मुरुतः। गृणुश पुवास्मै विशं कल्पयति। स प्रजापंतिरशोचत्॥१४॥

याः पूर्वाः प्रजा असृक्षि। मुरुत्स्ता अंवधिषुः। कथमपंराः सृजेयेति। तस्य शुष्मं आण्डं भूतं निरंवर्तत। तद्युदंहरत्। तदंपोषयत्। तत्प्राजायत। आण्डस्य वा एतद्रूपम्। यदामिक्षाः। यद्युद्धरंति॥१५॥

प्रजा एव तद्यजंमानः पोषयति। वैश्वदेव्यांमिक्षां भवति। वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। प्रजा एवास्मै प्रजंनयति। वाजिन्मानंयति। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतों दधाति। द्यावापृथिव्यं एकंकपालो भवति। प्रजा एव प्रजांता द्यावापृथिवीभ्यांमुभ्यतः परि गृह्णाति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्॥१६॥

मामग्रे यजत। मया मुखेनासुराञ्जेष्यथेति। मां द्वितीयमिति सोमौंऽब्रवीत्। मया राज्ञां जेष्यथेति। मां तृतीयमिति सविता। मया प्रसूता जेष्यथेति। मां चंतुर्थीमिति सर्रस्वती। इन्द्रियं वोऽहं धास्यामीति। मां पंश्वमिति पूषा। मया प्रतिष्ठयां जेष्यथेति॥१७॥

तेंऽग्निना मुखेनासुंरानजयन्। सोमेन राज्ञां। स्वित्रा प्रसूंताः। सरंस्वतीन्द्रियमंदधात्। पूषा प्रंतिष्ठाऽऽसींत्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदेतानिं ह्वी॰षिं निरुप्यन्ते विजित्यै। नोत्तरवेदिमुपंवपति। पृशवो वा उंत्तरवेदिः। अजांता इव ह्यंतर्हिं पशवंः॥१८॥

त्रिवृह्यर्हिर्भविति। माता पिता पुत्रः। तदेव तन्मिथुनम्। उल्बं गर्भो जरायुं। तदेव तन्मिथुनम्। त्रेधा बर्हिः सन्नेद्धं भवित। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेव लोकेषु प्रति तिष्ठति। एकधा पुनः सन्नेद्धं भवित। एकं इवृ ह्ययं लोकः॥१९॥

अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रतिं तिष्ठति। प्रसुवों भवन्ति। प्रथमजामेव पुष्टिमवं रुन्थे। प्रथमजो वथ्सो दक्षिणा समृद्धै। पृषदाज्यं गृह्णाति। पृशवो वै पृषदाज्यम्। पृशूनेवावं रुन्धे। पृश्चगृहीतं भवति। पाङ्गा हि पृशवः। बहुरूपं भवति॥२०॥

बहुरूपा हि प्शवः समृद्धै। अग्निं मंन्थन्ति। अग्निमुंखा वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। यद्ग्निं मन्थंन्ति। अग्निमुंखा एव तत्प्रजा यजंमानः सृजते। नवं प्रयाजा इंज्यन्ते। नवांनूयाजाः। अष्टौ ह्वी॰िषं। द्वावांघारौ। द्वावाज्यंभागौ॥२१॥

त्रिष्शथ्सम्पंद्यन्ते। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराज्ञैवान्नाद्यमवं रुन्धे। यजंमानो वा एकंकपालः। तेज् आज्यम्। यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव तेजंसा समर्धयति। यजंमानो वा एकंकपालः। पृशव आज्यम्॥२२॥

यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव पृशुभिः समर्धयति। यदल्पंमानयंत्। अल्पां एनं पृशवों भुञ्जन्त उपंतिष्ठेरन्। यद्घह्वांनयंत्। बहवं एनं पृशवोऽभुञ्जन्त उपंतिष्ठेरन्। बह्वांनीयाविः पृष्ठं कुर्यात्। बहवं एवैनं पृशवों भुञ्जन्त उपंतिष्ठन्ते। यजंमानो वा एकंकपालः। यदेकंकपालस्यावद्येत्॥२३॥

यजंमान्स्यावंद्येत्। उद्घा माद्येद्यजंमानः। प्र वां मीयेत। स्कृदेव होत्व्यः। स्कृदिव हि सुंवर्गो लोकः। हुत्वाऽभि जुंहोति। यजंमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमयित्वा। तेजंसा समर्थयति। यजंमानो वा एकंकपालः। सुवर्गो लोक

# आंहवनीयं:॥२४॥

यदेकंकपालमाहवनीयें जुहोतिं। यजंमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमयति। यद्धस्तेन जुहुयात्। सुवर्गाल्लोकाद्यजंमानमवं-विध्येत्। स्रुचा जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्ये। यत्प्राङ्घदेत। देवलोकम्भिजंयेत्। यद्दंक्षिणा पितृलोकम्। यत्प्रत्यक्॥२५॥

रक्षा रेसि युज्ञ र हेन्युः। यदुदङ्कं। मृनुष्युलोकम्भिजंयेत्। प्रतिष्ठितो होत्व्यः। एकंकपालं वै प्रतितिष्ठंन्तं द्यावांपृथिवी अनु प्रतिं तिष्ठतः। द्यावांपृथिवी ऋतवः। ऋतून् युज्ञः। युज्ञं यजमानः। यजमानं प्रजाः। तस्मात्प्रतिष्ठितो होत्व्यः॥२६॥

वाजिनों यजित। अग्निर्वायुः सूर्यः। ते वै वाजिनः। तानेव तद्यंजिति। अथो खल्बांहुः। छन्दा १ सि वै वाजिन इति। तान्येव तद्यंजिति। ऋख्सामे वा इन्द्रंस्य हरी सोम्पानौं। तयोः परिधयं आधानम्। वाजिनं भागधेयम्॥२७॥

यदप्रहत्य परिधीं जुंहुयात्। अन्तरांधानाभ्यां घासं प्रयंच्छेत्। प्रहत्यं परिधीं जुंहोति। निरांधानाभ्यामेव घासं प्रयंच्छिति। बर्हिषं विषिश्चन्वाजिनमा नंयति। प्रजा वै बर्हिः। रेतो वाजिनम्। प्रजास्वेव रेतो दधाति। समुपहूर्यं भक्षयन्ति। पृतथ्सोमपीथा ह्येते। अथो आत्मन्नेव रेतो दधते। यजमान उत्तमो भंक्षयति। पृशवो वै वाजिनम्। यजमान पृव पृश्नम्प्रतिष्ठापयन्ति॥२८॥

लोको बंहुरूपं भंवत्याज्यंभागौ पृशव् आज्यंमवृद्येदांहवृनीयः प्रत्यक्तस्मात्प्रतिष्ठितो होतृव्यों भाग्धेयंमेते चत्वारिं च॥ [३]

प्रजापंतिः सिवता भूत्वा प्रजा अंसृजत। ता एंन्मत्यंमन्यन्त। ता अंस्मादपांक्रामन्। ता वर्रणो भूत्वा प्रजा वर्रणेनाग्राहयत्। ताः प्रजा वर्रणगृहीताः। प्रजापंतिं पुन्रुपांधावन्नाथिम् च्छमांनाः। स एतान्य्रजापंतिर्वरुणप्रघासानंपश्यत्। तां निरंवपत्। तैर्वे स प्रजा वंरुणपाशादंमुञ्चत्। यद्वंरुणप्रघासा निरुप्यन्ते॥२९॥

प्रजानामवंरुणग्राहाय। तासां दक्षिणो बाहुर्न्यंक्र आसींत्। स्व्यः प्रसृंतः। स एतां द्वितीयां दक्षिणतो वेदिमुदंहन्। ततो वे स प्रजानां दक्षिणं बाहुं प्रासारयत्। यद्वितीयां दक्षिणतो वेदिमुद्धन्ति। प्रजानांमेव तद्यजंमानो दक्षिणं बाहुं प्रसारयित। तस्मांचातुर्मास्ययाज्यंमुष्मिं ल्लोक उभ्याबांहुः। यज्ञाभिजित् क् ह्यंस्य। पृथमात्राद्वेदी असंम्भिन्ने भवतः॥३०॥

तस्मौत्पृथमात्रं व्यश्सौं। उत्तरस्यां वेद्यांमुत्तरवेदिमुपं वपति। पृशवो वा उत्तरवेदिः। पृशूनेवावं रुन्धे। अथों यज्ञप्रषोऽनंन्तरित्ये। पृतद्वौह्मणान्येव पश्चं ह्वीश्षिं। अथैष ऐन्द्राग्नो भंवति। प्राणापानौ वा पृतौ देवानौम्। यदिन्द्राग्नी। यदैन्द्राग्नो भवंति॥३१॥

प्राणापानावेवावं रुन्धे। ओजो बलं वा एतौ देवानांम्। यदिन्द्राग्नी। यदैन्द्राग्नो भवंति। ओजो बलमेवावं रुन्धे। मारुत्यांमिक्षां भवति। वारुण्यांमिक्षां। मेषी चं मेषश्चं भवतः। मिथुना एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति। लोमशौ भंवतो मेध्यत्वायं॥३२॥

शुमीपणिन्युपं वपति। घासमेवाभ्यामिपं यच्छति। प्रजापितमृत्राद्यं नोपानमत्। स एतेनं श्रतेध्मेन हृविषा-ऽत्राद्यमवारुन्थ। यत्परः श्रतानि शमीपणीनि भवन्ति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। सौम्यानि वे क्रीरांणि। सौम्या खलु वा आहुंतिर्दिवो वृष्टिं च्यावयति। यत्क्रीरांणि भवन्ति। सौम्ययैवाऽऽहुंत्या दिवो वृष्टिमवं रुन्थे। काय एकंकपालो भवति। प्रजानां कन्त्वायं। प्रतिपूरुषं कंरम्भपात्राणि भवन्ति। जाता एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति। एक्मितिरिक्तम्। जानिष्यमाणा एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति॥३३॥ कृत्यनं भवते भेष्यलायं रुक्षे पदं॥——[४]

उत्तरस्यां वेद्यांमन्यानि ह्वी १ षि सादयति। दक्षिणायां मारुतीम्। अप्धुरमेवेनां युनक्ति। अथो ओजं एवासामवं हरति। तस्माद्धह्मणश्च क्षुत्राच्च विशों उन्यतोऽपकृमिणींः। मारुत्या पूर्वया प्रचरित। अनृतमेवावं यजते। वारुण्योत्तरया। अन्तत एव वरुणमवं यजते। यदेवाध्वर्युः करोतिं॥३४॥

तत्प्रंतिप्रस्थाता कंरोति। तस्माद्यच्छ्रेयाँन्क्रोतिं। तत्पापीं-यान्करोति। पत्नीं वाचयति। मेध्यांमेवैनां करोति। अथो तपं एवैनामुपं नयति। यज्ञार सन्तन्न प्रंब्रूयात्। प्रियं ज्ञाति र रुन्ध्यात्। असौ में जार इति निर्दिशेत्। निर्दिश्यैवैनं

# वरुणपाशेनं ग्राहयति॥३५॥

प्रघास्यान् हवामह् इति पत्नीमुदानंयति। अहंतैवैनांम्। यत्पत्नी पुरोनुवाक्यांमनुब्रूयात्। निर्वींयों यजंमानः स्यात्। यजंमानोऽन्वांह। आत्मन्नेव वीर्यं धत्ते। उभौ याज्यार्थं सवीर्यत्वायं। यद्गामे यदरंण्य इत्यांह। यथोदितमेव वर्रणमवं यजते। यजमानदेवत्यों वा आहवनीयः॥३६॥

भ्रातृब्यदेवत्यों दक्षिणः। यदांहवनीयें जुहुयात्। यजंमानं वरुणपाशेनं ग्राहयेत्। दक्षिणेऽग्नौ जुंहोति। भ्रातृंव्यमेव वरुणपाशेनं ग्राहयति। शूर्पेण जुहोति। अन्यंमेव वरुणमवं यजते। शीर्षत्रंधि निधायं जुहोति। शीर्षत एव वरुणमवं यजते। प्रत्यिङ्गिष्ठं जुहोति॥३७॥

प्रत्यङ्केव वंरुणपाशान्निर्मुच्यते। अऋन्कर्म कर्मकृत् इत्याहा देवाऽनृणं निरवदायं। अनृणा गृहानुप प्रेतेति वावैतदाहा वरुणगृहीतं वा एतद्यज्ञस्यं। यद्यजुंषा गृहीतस्यांतिरिच्यंते। तुषांश्च निष्कासश्चं। तुषैश्च निष्कासेनं चावभृथमवैति। वरुणगृहीतेनैव वरुणमवयजते। अपों-ऽवभृथमवैति॥३८॥

अपसु वै वर्रुणः। साक्षादेव वर्रुणमवयजते। प्रति-युतो वर्रुणस्य पाश इत्याह। वरुणपाशादेव निर्मुच्यते। अप्रतीक्षमा यन्ति। वरुणस्यान्तर्हित्यै। एधौऽस्येधिषीमही- त्याह। समिधेवाग्निं नंमस्यन्तं उपायन्ति। तेजोऽसि तेजो मियं धेहीत्याह। तेजं पुवाऽऽत्मन्धंत्ते॥३९॥
करोति ग्राहयत्याहवनीयस्तिष्ठं जुहोत्यपंऽवभ्यमवैति धते॥————[५]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममेयमनीक-वती तुनः। तां प्रीणीत। अथासुरानुभि भविष्यथेति। ते देवा अग्नयेऽनीकवते पुरोडाशमष्टाकपालं निरंवपन्। सौंऽग्निरनीकवान्थ्स्वेनं भाग्धेयेन प्रीतः। चतुर्धाऽनीकान्य-जनयत। ततो देवा अभवन्। पराऽसुराः॥४०॥

यद्ग्रयेऽनींकवते पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपंति। अग्निमेवानींकवन्त्र् स्वेनं भाग्धेयेंन प्रीणाति। सौंऽग्निरनींकवान्थ्स्वेनं भाग्धेयेंन प्रीतः। चतुर्धाऽनींकानि जनयते। असौ वा आंदित्योंऽग्निरनींकवान्। तस्यं र्श्मयो-ऽनींकानि। साक्र सूर्यणोद्यता निर्वपति। साक्षादेवास्मा अनींकानि जनयति। तेऽसुंराः परांजिता यन्तः। द्यावापृथिवी उपांश्रयन्॥४१॥

ते देवा मुरुद्धाः सान्तप्नेभ्यंश्चरं निरंवपन्। तान्द्यावांपृथिवीभ्यांमेवोभयतः समंतपन्। यन्मुरुद्धाः सान्तप्नेभ्यंश्चरं निर्वपंति। द्यावांपृथिवीभ्यांमेव तद्भ्यतो यजंमानो भ्रातृंव्यान्थ्यन्तंपति। मुध्यन्दिने निर्वपति। तर्हि हि तेक्ष्णिष्ठं तपंति। चुरुर्भवति। सूर्वतं पुवैनान्थ्यन्तंपति। ते देवाः श्वोविज्यिनः सन्तंः। सर्वासां दुग्धे गृहम्धीयं चुरुं

# निरंवपन्॥४२॥

आशिता पृवाद्योपंवसाम। कस्य वाऽहेदम्। कस्यं वा श्वो भवितेति। स शृतोऽभवत्। तस्याहुंतस्य नाश्जन्। न हि देवा अहुंतस्या्श्जन्ति। तैंऽब्रुवन्। कस्मां इम॰ हौंष्याम् इति। मुरुद्धों गृहमे्धिभ्य इत्यंब्रुवन्। तं मुरुद्धों गृहमे्धिभ्यों-ऽजुहवुः॥४३॥

ततों देवा अभंवन्। पराऽसुंराः। यस्यैवं विदुषों मुरुद्धों गृहमेधिभ्यों गृहे जुह्वंति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंब्यो भवति। यद्वै यज्ञस्यं पाकुत्रा क्रियतें। पृशुब्यं तत्। पाकुत्रा वा पृतिक्रियते। यन्नेध्माबुर्हिभ्वंति। न सांमिधेनीर्न्वाहं॥४४॥

न प्रयाजा इज्यन्तै। नानूयाजाः। य एवं वेदे। पशुमान्भवित। आज्यंभागौ यजित। यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरेति। मुरुतों गृहमेधिनों यजित। भागधेयेंनैवैनान्थ्समंधियित। अग्निश्स्वंष्टकृतं यजित प्रतिष्ठित्यै। इडाँन्तो भवित। पश्वो वा इडाँ। पशुष्वेवोपिर्षष्टात्प्रतिं तिष्ठति॥४५॥ अस्य अभ्यन्गहम्भवं वर्ष वित्वप्रज्ञहस्यनहेडाँनो भवित हे वं॥———[६]

यत्पत्नीं गृहमेधीयंस्याश्जीयात्। गृहुमेध्येव स्याँत्। वि त्वंस्य युज्ञ ऋष्येत। यन्नाश्जीयात्। अगृहमेधी स्यात्। नास्यं युज्ञो व्यृंद्धोत। प्रतिवेशं पचेयुः। तस्याँश्जीयात्। गृहुमेध्येव भेवति। नास्यं युज्ञो व्यृंद्धाते॥४६॥

ते देवा गृंहमेधीयेनेष्ट्वा। आशिता अभवन्। आश्चेताभ्यंश्चत।

अनुं वृथ्मानंवासयन्। तेभ्योऽसुंराः क्षुधं प्राहिंण्वन्। सा देवेषुं लोकमविंत्वा। असुंरान्युनंरगच्छत्। गृह्मेधीयेनेष्ट्वा। आशिंता भवन्ति। आञ्जतेऽभ्यंञ्जते॥४७॥

अनुं वृथ्सान् वांसयन्ति। भ्रातृंव्यायैव तद्यजंमानः क्षुधं प्रिहंणोति। ते देवा गृंहमेधीयेंनेष्ठा। इन्द्रांय निष्कासं न्यंदधुः। अस्मानेव श्व इन्द्रो निहिंतभाग उपावर्तितेति। तानिन्द्रो निहिंतभाग उपावर्तितेति। तानिन्द्रो निहिंतभाग उपावर्ततेत। गृह्मेधीयेंनेष्ठा। इन्द्रांय निष्कासं निदंध्यात्। इन्द्रं एवैनं निहिंतभाग उपावर्तते। गार्हंपत्ये जुहोति॥४८॥

भागधेयेनेवेन् समर्धयित। ऋषभमाह्वयित। वृषद्भार एवास्य सः। अथो इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यजमानो भातृव्यस्य वृङ्का। इन्द्रों वृत्र हत्वा। पर्गं परावर्तमगच्छत्। अपाराधमिति मन्यमानः। सौंऽब्रवीत्। क इदं वेदिष्यतीति। तैंऽब्रुवन्मरुतो वरं वृणामहै॥४९॥

अर्थ व्यं वेदाम। अस्मभ्यंमेव प्रंथम हिविर्निरुप्याता इतिं। त एंनमध्यंक्रीडन्। तत्क्रीडिनां क्रीडित्वम्। यन्मरुद्धाः क्रीडिभ्यः प्रथम हिविर्निरुप्यते विजित्यै। साक सूर्येणोद्यता निर्वपति। एतस्मिन्वे लोक इन्द्रों वृत्रमंहन्थ्समृंद्धौ। एतद्वाँह्मणान्येव पश्चं ह्वी १ षिं। एतद्वाँह्मण ऐन्द्राग्नः। अथैष ऐन्द्रश्चरुभंवति॥५०॥

वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता वंरुण-प्रघासैर्वरुणपाशादंमुश्चत्। साक्रमेधेः प्रत्यंस्थापयत्। त्र्यंम्बकै रुद्रं निरवादयत। पितृयज्ञेनं सुवर्गं लोकमंगमयत्। यद्वैश्वदेवेन यजंते। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। ता वंरुणप्रघासैर्वरुणपाशान्मंश्चति। साक्रमेधेः प्रतिष्ठापयति। त्र्यंम्बकै रुद्रं निरवदयते॥५२॥

पितृयज्ञेनं सुवर्गं लोकं गंमयति। दक्षिणतः प्रांचीनावीती निर्वपति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। अनांदृत्य तत्। उत्तर्त एवोपवीय निर्वपत्। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तें। अथो यदेव दक्षिणार्धेऽधि श्रयंति। तेनं दक्षिणावृत्। सोमांय पितृमते पुरोडाश् ष्ष्यंपालं निर्वपति। संवथ्सरो वै सोमंः पितृमान्॥५३॥

संवथ्सरमेव प्रीणाति। पितृभ्यों बर्हिषद्धों धानाः। मासा वै पितरों बर्हिषदेः। मासानेव प्रीणाति। यस्मिन्वा ऋतौ पुरुषः प्रमीयंते। सौंऽस्यामुष्मिं ह्योके भवति। बहुरूपा धाना भंवन्ति। अहोरात्राणांमभिजिंत्यै। पितृभ्योंऽग्निष्वात्तेभ्यों मन्थम्। अर्धमासा वै पितरोंऽग्निष्वात्ताः॥५४॥

अर्धमासानेव प्रीणाति। अभिवान्यांयै दुग्धे भंवति। सा हि पितृदेवत्यं दुहे। यत्पूर्णम्। तन्मंनुष्यांणाम्। उपर्यर्धो देवानांम्। अर्धः पितृणाम्। अर्ध उपमन्थति। अर्धो हि पितृणाम्। एकयोपंमन्थति॥५५॥

एका हि पिंतृणाम्। दक्षिणोपंमन्थति। दक्षिणावृद्धि पिंतृणाम्। अनारभ्योपंमन्थति। तद्धि पितृन्गच्छंति। इमान्दिशं वेदिमुद्धंन्ति। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तै। चतुंः स्रक्तिर्भवति। सर्वा ह्यनु दिशंः पितरंः। अखांता भवति॥५६॥

खाता हि देवानांम्। मध्यतोंऽग्निराधीयते। अन्ततो हि देवानांमाधीयतें। वर्षीयानिध्म इध्माद्भवित व्यावृत्त्ये। परिश्रयति। अन्तर्हितो हि पिंतृलोको मंनुष्यलोकात्। यत्पर्रुषि दिनम्। तद्देवानांम्। यदंन्तरा। तन्मंनुष्यांणाम्॥५७॥

यथ्समूलिम्। तित्पंतृणाम्। समूलं ब्र्हिभंवित् व्यावृत्त्यै। दक्षिणा स्तृंणाति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। त्रिः पर्येति। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रींणाति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। यत्प्रस्तरं यजुंषा

गृह्णीयात्। प्रमायुंको यजंमानः स्यात्। यन्न गृह्णीयात्। अनायतनः स्यात्। तूष्णीमेव न्यंस्येत्। न प्रमायुंको भवंति। नानायतनः। यत्रीन्यंरिधीन्यंरिदध्यात्॥५९॥

मृत्युना यजंमानं परिगृह्णीयात्। यन्न परिद्ध्यात्। रक्षांश्रेसि यज्ञः हंन्युः। द्वौ पंरिधी परिद्धाति। रक्षंसामपंहत्यै। अथों मृत्योरेव यजंमानम्भ्र्यंजिति। यत्रीणि त्रीणि ह्वीः ध्यंदाहरेयुः। त्रयंस्रय एषाः साकं प्रमीयेरन्। एकैकमनूचीनांन्युदाहंरन्ति। एकैक पृवैषांमन्वश्चः प्रमीयते। कृशिपं कशिप्व्यांय। उपबर्हंणमुपबर्ह्ण्यांय। आञ्जंनमाञ्चन्यांय। अभ्यञ्जंनमभ्यञ्जन्यांय। यथाभागमे-वैनांन्प्रीणाति॥६०॥

निरवंदयते पितृमानंग्निष्वात्ता एक्योपं मन्थृत्यखांता भवति मनुष्यांणां पद्यन्ते परिदुध्यान्मीयते पश्चं च॥——[८]

अग्नये देवेभ्यः पितृभ्यः सिम्ध्यमानायान् ब्रूहीत्यांह। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तें। एकामन्वांह। एका हि पितृणाम्। त्रिरन्वांह। त्रिर्हि देवानांम्। आघारावाघांरयति। यज्ञपुरुषोरनंन्तरित्ये। नार्षेयं वृंणीते। न होतांरम्॥६१॥

यदार्षेयं वृंणीत। यद्धोतारम्। प्रमायुंको यजमानः स्यात्। प्रमायुंको होता। तस्मान्न वृंणीते। यजमानस्य होतुंर्गोपीथायं। अपं बर्हिषः प्रयाजान् यंजति। प्रजा वै ब्र्हिः। प्रजा एव मृत्योरुथ्मृंजति। आज्यंभागौ यजति॥६२॥

युज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरंति। प्राचीनावीती सोमं यजित।

पितृदेवत्यां हि। एषाऽऽहुंतिः। पश्चकृत्वोऽवं द्यति। पश्च ह्यंता देवताः। द्वे पुरोऽनुवाक्ये। याज्यां देवतां वषद्वारः। ता एव प्रीणाति। सन्तंतमवं द्यति॥६३॥

ऋतूना सन्तंत्यै। प्रैवैभ्यः पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽऽह। प्रणंयति द्वितीयंया। गुमयंति याज्यंया। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। अहं एवैनान्पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽत्यानंयति। रात्रिये द्वितीयंया। ऐवैनान् याज्यंया गमयति। दक्षिणतों-ऽवदायं। उद्दुःतिं क्रामित् व्यावृत्त्यै॥६४॥

आ स्वधेत्याश्रांवयित। अस्तुं स्वधितिं प्रत्याश्रांवयित। स्वधा नम् इति वषंद्वरोति। स्वधाकारो हि पितृणाम्। सोम्मग्रें यजित। सोमंप्रयाजा हि पितरंः। सोमं पितृमन्तं यजित। संवथ्सरो वै सोमंः पितृमान्। संवथ्सरमेव तद्यंजित। पितृन्बंहिंषदों यजित॥६५॥

ये वै यज्वांनः। ते पितरों बर्हिषदंः। तानेव तद्यंजित। पितृनंग्निष्वात्तान् यंजित। ये वा अयंज्वानो गृहमेधिनंः। ते पितरौंऽग्निष्वात्ताः। तानेव तद्यंजिति। अग्निं कंव्यवाहंनं यजित। य एव पितृणामग्निः। तमेव तद्यंजिति॥६६॥

अथो यथाऽग्निः स्विष्टकृतं यजिति। ताहगेव तत्। एतत्ते तत् ये च त्वामन्वितिं तिसृषुं स्रक्तीषु निदंधाति। तस्मादा तृतीयात्पुरुषान्नाम् न गृह्णन्ति। एतावन्तो हीज्यन्तैं। अत्रं पितरो यथाभागं मन्दध्वमित्यांह। ह्लीका हि पितरंः। उदंश्रो निष्क्रांमन्ति। एषा वै मनुष्यांणां दिक्। स्वामेव तद्दिशमनु निष्क्रांमन्ति॥६७॥

आह्वनीयमुपंतिष्ठन्ते। न्यंवास्मै तद्भुवते। यथ्मत्याहवनीयै। अथान्यत्र चरंन्ति। आतिमेतोरुपंतिष्ठन्ते। अग्निमेवोपंद्रष्टारं कृत्वा। पितृन्निरवंदयन्ते। अन्तं वा एते प्राणानां गच्छन्ति। य आतिमेतोरुप तिष्ठंन्ते। सुसुन्दशं त्वा व्यमित्यांह॥६८॥

प्राणो वै सुंस्नन्दक्। प्राणमेवाऽऽत्मन्दंधते। योजा न्विन्द्र ते हरी इत्यांह। प्राणमेव पुनरयुक्त। अक्षन्नमींमदन्त हीति गार्हंपत्यमुपंतिष्ठन्ते। अक्षन्नमींमदन्ताथ त्वोपंतिष्ठामह इति वावैतदांह। अमींमदन्त पितरंः सोम्या इत्यभि प्रपंद्यन्ते। अमींमदन्त पितरोऽथं त्वाऽभि प्रपंद्यामह इति वावैतदांह। अपः परिषिश्चति। मार्जयंत्येवैनान्॥६९॥

अथों तुर्पयंत्येव। तृप्यंति प्रजयां पृश्निः। य एवं वेदं। अपं बर्हिषावनूयाजौ यंजति। प्रजा वे बर्हिः। प्रजा एव मृत्योरुथ्मृंजित। चतुरंः प्रयाजान् यंजित। द्वावंनूयाजौ। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। न पत्यन्वांस्ते। न संयांजयन्ति। यत्पत्यन्वासीत। यथ्संयाजयेयुः। प्रमायुंका स्यात्। तस्मान्नान्वांस्ते। न संयांजयन्ति। पित्रंये गोपीथायं॥७०॥

प्रतिपूरुषमेकंकपालां निर्वपिति। जाता एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकमितंरिक्तम्। जनिष्यमाणा एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकंकपाला भवन्ति। एक्धैव रुद्रं निरवंदयते। नाभिघांरयति। यदंभिघारयेत्। अन्तर्वचारिण र्रं रुद्रं कुर्यात्। एकोल्मुकेनं यन्ति॥७१॥

ति रुद्रस्यं भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्रो वा अंपृशुकांया आहुंत्यै नातिष्ठत। असौ ते पृशुरिति निर्दिशेद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तमंस्मै पृशुं निर्दिशति। यदि न द्विष्यात्। आखुस्ते पृशुरितिं ब्रूयात्॥७२॥

न ग्राम्यान्पशून् हिनस्ति। नारण्यान्। चृतुष्पथे जुंहोति। एष वा अंग्रीनां पड्बीशो नामं। अग्निवत्येव जुंहोति। मध्यमेनं पूर्णेनं जुहोति। सुग्घ्येषा। अथो खलुं। अन्तमेनैव होत्व्यम्। अन्तुत एव रुद्रं निरवंदयते॥७३॥

पुष ते रुद्र भागः सह स्वस्नाऽम्बिक्येत्यांह। श्ररह्मा अस्याम्बिका स्वसा। तया वा पुष हिनस्ति। य॰ हिनस्ति। तयौवन॰ सह शंमयति। भेषजङ्गव इत्यांह। यावन्त पुव ग्राम्याः पृशवंः। तेभ्यों भेषुजं कंरोति। अवाम्ब रुद्रमंदिमहीत्यांह। आमेवैतामा शास्ते॥७४॥

त्र्यंम्बकं यजामह् इत्यांह। मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतादिति

वावैतदांह। उत्किरन्ति। भगस्य लीफ्सन्ते। मूर्तेकृत्वा-ऽऽसंजन्ति। यथा जनं यतेऽवसं करोति। ताहगेव तत्। एष ते रुद्र भाग इत्यांह निरवंत्त्ये। अप्रतीक्षमा यंन्ति। अपः परिषिश्चति। रुद्रस्यान्तर्हित्ये। प्र वा एतेऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये त्र्यंम्बकैश्चरंन्ति। आदित्यं चुरुं पुनरेत्य निर्वपति। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥७५॥

अर्नुमत्यै वैश्वदेवेन ताः सृष्टाञ्चिवृत्र्यजापंतिः सिव्तोत्तंरस्यान्देवासुराः सौंऽग्निर्यत्पन्नीं वैश्वदेवेन ता वंरुणप्रघासैरुग्नयें देवेभ्यः प्रतिपूरुषं दर्श॥१०॥

अर्नुमत्यै प्रथम्जो वृथ्सो बंहुरूपा हि पुशवुस्तस्मांत्पृथमात्रं यदुग्नयेऽनींकवत उद्धारं वा अग्नयें देवेभ्यः प्रतिपूरुषं पर्श्वसप्तिः॥७५॥

अनुमत्यै प्रतिं तिष्ठन्ति॥

### हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥ सप्तमः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

पुराद्वाँह्मणान्येव पश्चं ह्वी १ षिं। अथेन्द्रांय शुनासीरांय पुरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपिति। संवथ्सरो वा इन्द्राशुनासीरंः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्थे। वायव्यं पयो भवति। वायुर्वे वृष्ट्यं प्रदापियता। स पुवास्मे वृष्टिं प्रदापयति। सौर्यं एकंकपालो भवति। सूर्येण वा अमुष्मिं ल्लोके वृष्टिंधृता। स पुवास्मे वृष्टिं निर्यच्छिति॥१॥

द्वाद्शग्व सीरं दक्षिणा समृद्धे। देवासुराः संयेता आसन्। ते देवा अग्निमंब्रुवन्। त्वयां वीरेणासुरान्भिभंवामेति। सौंऽब्रवीत्। त्रेधाऽहमात्मानं विकंरिष्य इति। स त्रेधा-ऽऽत्मानं व्यंकुरुत। अग्निं तृतीयम्। रुद्रं तृतीयम्। वर्रणं तृतीयम्॥२॥

सों ऽब्रवीत्। क इदं तुरीयमितिं। अहमितीन्द्रों-ऽब्रवीत्। सन्तु सृंजावहा इतिं। तौ समंसृजेताम्। स इन्द्रंस्तुरीयंमभवत्। यदिन्द्रंस्तुरीयमभंवत्। तदिंन्द्र-तुरीयस्येन्द्रतुरीयत्वम्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदिंन्द्रतुरीयं निरुप्यते विजित्ये॥३॥

वृहिनीं धेनुर्दक्षिणा। यद्घहिनीं। तेनांऽऽग्नेयी। यद्गोः। तेनं रौद्री। यद्धेनुः। तेनैन्द्री। यथ्म्री स्ती दान्ता। तेनं वारुणी समृद्धे। प्रजापंतिर्यज्ञमंसृजत॥४॥ त १ सृष्ट १ रक्षा १ स्यजिघा १ सन्। स पृताः प्रजा-पंतिरात्मनो देवता निरंमिमीत। ताभिर्वे स दिग्भ्यो रक्षा १ सि प्राणुंदत। यत्पंश्चावृत्तीयं जुहोति। दिग्भ्य पृव तद्यजंमानो रक्षा १ सि प्रणुंदते। समृंढ १ रक्षः सन्दंग्ध १ रक्ष इत्याह। रक्षा १ स्योव सन्दंहति। अग्नयं रक्षोघ्ने स्वाहेत्यांह। देवतांभ्य पृव विजिग्यानाभ्यों भाग्धेयं करोति। प्रष्टिवाही रथो दक्षिणा समृंद्धे॥ ५॥

इन्द्रों वृत्र हत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। नमुंचिमासुरं नार्लभत। त श्रच्यांऽगृह्णात्। तौ समेलभेताम्। सौंऽस्माद्भिशुंनतरोऽभवत्। सौंऽब्रवीत्। सुन्धा श् सन्दंधावहै। अथ् त्वाऽवं स्रक्ष्यामि। न मा शुष्केण् नाऽऽर्द्रेणं हनः॥६॥

न दिवा न नक्तमितिं। स एतम्पां फेनंमसिश्चत्। न वा एष शुष्को नाऽऽद्रों व्युंष्टाऽऽसीत्। अनुंदितः सूर्यः। न वा एतद्दिवा न नक्तम्। तस्यैतस्मिं होके। अपां फेनेंन् शिर् उदंवर्तयत्। तदेनमन्वंवर्तत। मित्रंद्रुगितिं॥७॥

स एतानेपामार्गानेजनयत्। तानेजुहोत्। तैर्वे स रक्षाङ्स्यपाहत। यदंपामार्गहोमो भवंति। रक्षंसामपंहत्यै। एकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्धे रक्षंसां भागधेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै रक्षंसां दिक्। स्वायांमेव दिशि रक्षांश्रीस हन्ति॥८॥ स्वकृत इरिणे जुहोति प्रदरे वाँ। एतद्वै रक्षंसामायतनंम्। स्व एवाऽऽयतंने रक्षा १ सि हन्ति। पूर्णमयेन स्रुवेणं जुहोति। ब्रह्मं वै पूर्णः। ब्रह्मंणैव रक्षा १ सि हन्ति। देवस्यं त्वा सिवृतः प्रंस्व इत्यांह। स्वितृप्रंसूत एव रक्षा १ सि हन्ति। हृत १ रक्षो-ऽवंधिष्म रक्ष्म इत्यांह। रक्षंसा १ स्तृत्यें। यद्वस्ते तद्दक्षिणा निरवंत्ये। अप्रतिक्षमायंन्ति। रक्षंसाम्नत्रिंहेत्ये॥ ९॥ युच्छति वर्षणं वर्तियं विकित्या अस्वत सर्वे हते विवेद्या हिते वर्ते वर्ति वर्ते वर्ति वर्ते वर्तियं वर्तियं

धात्रे पुरोडाशं द्वादेशकपालं निर्वपित। संवथ्सरो वै धाता। संवथ्सरेणैवास्मैं प्रजाः प्रजनयित। अन्वेवास्मा अनुमितर्मन्यते। राते राका। प्र सिनीवाली जनयित। प्रजास्वेव प्रजातासु कुह्वां वाचं दधाति। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धे। आग्नावैष्णवमेकांदशकपालं निर्वपित। ऐन्द्रावैष्णवमेकांदशकपालम्॥१०॥

वैष्ण्वं त्रिंकपालम्। वीर्यं वा अग्निः। वीर्यमिन्द्रः। वीर्यं विष्णुः। प्रजा एव प्रजाता वीर्ये प्रतिष्ठापयति। तस्मौत्प्रजा वीर्यावतीः। वामन ऋष्भो वही दक्षिणा। यहही। तेनौऽऽग्नेयः। यदंषभः॥११॥

तेनैन्द्रः। यद्वांमनः। तेनं वैष्णवः समृद्धै। अग्नीषोमीयमेकां-दशकपालुं निर्वपति। इन्द्रासोमीयमेकांदशकपालम्। सौम्यं चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। अग्निः प्रजानां प्रजनयिता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं पुवास्मै रेतो दर्धाति॥१२॥ अग्निः प्रजां प्रजांनयति। वृद्धामिन्द्रः प्रयंच्छति। बुभुदिक्षिणा समृद्धौ। सोमापौष्णं चुरुं निर्वपति। ऐन्द्रापौष्णं चुरुम्। सोमो वै रेतोधाः। पूषा पंशूनां प्रजनियता। वृद्धानामिन्द्रेः प्रदापयिता। सोमं एवास्मै रेतो दधांति। पूषा पृशून्प्रजनयति॥१३॥

वृद्धानिन्द्रः प्रयंच्छति। पौष्णश्चरुभंवति। इयं वै पूषा। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। श्यामो दक्षिणा समृद्धौ। बहु वै पुरुषो मेध्यमुपंगच्छति। वैश्वान्रं द्वादंशकपालं निर्वपति। संवथ्सरो वा अग्निवैश्वान्रः। संवथ्सरेणैवैन ई स्वदयति। हिरंण्यं दक्षिणा॥१४॥

प्वित्रं वै हिरंण्यम्। पुनात्येवेनम्। बहु वै राजन्योऽनृतं करोति। उपं जाम्ये हरंते। जिनाति ब्राह्मणम्। वदत्यनृतम्। अनृते खलु वै क्रियमाणे वरुणो गृह्णाति। वारुणं यंवमयं चरुं निर्वपति। वरुणपाशादेवेनं मुश्रति। अश्वो दक्षिणा। वारुणो हि देवत्याऽश्वः समृंद्धै॥१५॥

पुन्द्रावेष्ण्वमेकांदशकपालुं यहंपुभो दर्धाति पूषा पुश्न्यजनयति हिरण्युं दक्षिणा दक्षिणैकं च॥———[२]

र्विनांमेतानिं ह्वी १ षिं भवन्ति। एते वै राष्ट्रस्यं प्रदातारेः। एतेंऽपादातारेः। य एव राष्ट्रस्यं प्रदातारेः। येऽपादातारेः। त एवास्में राष्ट्रं प्रयंच्छन्ति। राष्ट्रमेव भवति। यथ्संमाहृत्यं निर्वपेत्। अरंबिनः स्युः। यथायथं निर्वपति रिवत्वायं॥१६॥

यथ्सद्यो निर्वपेत्। यावंतीमेकंन ह्विषाऽऽशिषंमव रुन्धे। तावंतीमवंरुन्धीत। अन्वहन्निर्वंपति। भूयंसीमेवाशिषमवं रुन्धे। भूयंसो यज्ञऋतूनुपैति। बार्हस्पत्यं च्रं निर्वंपति ब्रह्मणो गृहे। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंन्नेव क्षुत्रमुन्वारंम्भयति। शितिपृष्ठो दक्षिणा समृद्धौ॥१७॥

पुन्द्रमेकांदशकपाल र राज्न्यंस्य गृहे। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। ऋष्भो दक्षिणा समृद्धे। आदित्यं चरुं महिष्ये गृहे। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। धेनुर्दक्षिणा समृद्धे। भगांय चरुं वावातांये गृहे। भगंमेवास्मिन्दधाति। विचित्तगर्भा पष्ठौही दक्षिणा समृद्धे॥१८॥

नैर्ऋतं चुरुं परिवृत्त्यै गृहे कृष्णानां व्रीहीणां न्खिनिर्भित्रम्। पाप्मानमेव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णा कूटा दक्षिणा समृद्धौ। आग्नेयमृष्टाकंपाल सेनान्यों गृहे। सेनांमेवास्य सङ्श्यंति। हिरंण्यं दक्षिणा समृद्धौ। वारुणं दश्वंकपाल स्तूतस्यं गृहे। वरुणसवमेवावं रुन्थे। महानिरष्टो दक्षिणा समृद्धौ। मारुत सप्तकंपालं ग्रामण्यों गृहे॥१९॥

अत्रं वै मुरुतः। अत्रंमेवावं रुन्धे। पृश्चिद्क्षिणा समृद्धे। सावित्रं द्वादशकपालं क्षुत्तुर्गृहे प्रसूत्ये। उपध्वस्तो दक्षिणा समृद्धे। आश्विनं द्विकपालः संङ्गृहीतुर्गृहे। अश्विनौ वै देवानां भिषजौ। ताभ्यांमेवास्मे भेषजं करोति। स्वात्यौ दक्षिणा समृद्धे। पौष्णं चुरुं भागदुघस्यं गृहे॥२०॥ अत्रं वै पूषा। अत्रमेवावं रुन्धे। श्यामो दक्षिणा समृद्धे। रौद्रं गांवीधुकं चरुमंक्षावापस्यं गृहे। अन्तत एव रुद्रं निरवंदयते। शबल उद्घारो दक्षिणा समृद्धे। द्वादंशैतानिं ह्वी १ षि भवन्ति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मैं राष्ट्रमवं रुन्धे। राष्ट्रमेव भवति॥२१॥

यन्न प्रंति निर्वपेत्। रिवर्न आशिषोऽवंरुन्धीरन्। प्रतिनिर्वपिति। इन्द्रांय सुत्राम्णे पुरोडाश्मेकांदशकपालम्। इन्द्रांया होमुचैं। आशिषं एवावं रुन्धे। अयं नो राजां वृत्रहा राजां भूत्वा वृत्रं वंध्यादित्यांह। आमेवतामा शौस्ते। मैत्राबार्हस्पत्यं भंवति। श्वेतायैं श्वेतवंथ्सायै दुग्धे॥२२॥

बार्हस्पत्ये मैत्रमपिं दधाति। ब्रह्मं चैवास्मैं क्षत्रं चं समीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रं प्रतिष्ठापयति। बार्ह्स्पत्येन पूर्वेण प्रचरति। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रमन्वारंम्भयति। स्वयं कृता वेदिर्भवति। स्वयं दिनं बर्हिः। स्वयं कृत इध्मः। अनंभिजितस्याभिजित्यै। तस्माद्राज्ञामरंण्यम्भिजितम्। सैव श्वेता श्वेतवंथ्सा दक्षिणा समृंख्ये॥२३॥

र्बित्वाय समृंद्धे पष्टोही दक्षिणा समृंद्धे ग्राम्ण्यों गृहे भांगदुघस्यं गृहे भंवति दुग्धेंऽभिजिंत्ये द्वे चं॥ $lue{2}$ 

देवसुवामेतानि हुवी १ षि भवन्ति। एतावन्तो वै देवाना १ स्वाः। त एवास्मै स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एन १ स्वन्ते। अग्निरेवैनं गृहपंतीना १ सुवते। सोमो वनस्पतीनाम्। रुद्रः पंशूनाम्। बृह्स्पतिंर्वाचाम्। इन्द्रौ ज्येष्ठानौम्। मित्रः सत्यानौम्॥२४॥

वर्रणो धर्मपतीनाम्। एतदेव सर्वं भवति। स्विता त्वा प्रस्वानारं सुवतामिति हस्तं गृह्णाति प्रसूँत्यै। ये देवा देवः सुवः स्थेत्याह। यथायजुरेवैतत्। महते क्षत्रायं महत आधिपत्याय महते जानराज्यायेत्याह। आमेवैतामा शांस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानार् राजेत्याह। तस्माथ्सोमराजानो ब्राह्मणाः। प्रति त्यन्नामे राज्यमधायीत्याह॥२५॥

राज्यमेवास्मिन्प्रतिदधाति। स्वां तनुवं वर्रणो अशिश्वेदित्यांह। वरुणस्वमेवावं रुन्धे। शुचैर्मित्रस्य व्रत्यां अभूमेत्यांह। शुचिमेवेनं व्रत्यं करोति। अमन्मिह मह्त ऋतस्य नामेत्यांह। मनुत एवेनम्। सर्वे व्राता वर्रणस्याभूवित्रत्यांह। सर्वव्रातमेवेनं करोति। वि मित्र एवेररांतिमतारीदित्यांह॥२६॥

अरांतिमेवेनं तारयति। असूंषुदन्त युज्ञियां ऋतेनेत्यांह। स्वदयंत्येवेनम्। व्युं त्रितो जंरिमाणं न आन्डित्यांह। आयुरेवास्मिन्दधाति। द्वाभ्यां विमृष्टे। द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्ये। अग्नीषोमीयंस्य चैकांदशकपालस्य देवसुवां चं ह्विषांमुग्नयें स्विष्टकृतें समवंद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभ्यतः परिगृह्णाति। विष्णुऋमान्क्रमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ श्लोकान्भि-जंयति॥२७॥

सुत्यानांमधायीत्यांहाताग्रीदित्यांह कमत् एकं च॥\_\_\_\_\_\_[४]

अर्थेतः स्थेति जुहोति। आहुंत्यैवैनां निष्क्रीयं गृह्णाति। अथों ह्विष्कृंतानामेवाभिघृंतानां गृह्णाति। वहंन्तीनां गृह्णाति। एता वा अपा॰ राष्ट्रम्। राष्ट्रमेवास्में गृह्णाति। अथो श्रियंमेवैनंम्भिवंहन्ति। अपां पतिंर्सीत्यांह। मिथुनमेवाकंः। वृषांऽस्यूर्मिरित्यांह॥२८॥

ऊर्मिमन्तंमेवैनं करोति। वृष्सेनोंऽसीत्यांह। सेनांमेवास्य सङ्श्यंति। ब्रजिक्षितः स्थेत्यांह। एता वा अपां विशंः। विशंमेवास्मै पर्यूहति। मुरुतामोजः स्थेत्यांह। अन्नं वै मुरुतः। अन्नमेवावं रुन्थे। सूर्यवर्चसः स्थेत्यांह॥२९॥

राष्ट्रमेव वंर्चस्व्यंकः। सूर्यंत्वचसः स्थेत्यांह। सृत्यं वा एतत्। यद्वर्षंति। अनृतं यदातपंति वर्षंति। सृत्यानृते एवावं रुन्थे। नैन रं सत्यानृते उंदिते हिर्इस्तः। य एवं वेदं। मान्दाः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव ब्रह्मवर्चस्यंकः॥३०॥

वाशाः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव वश्यंकः। शक्वंरीः स्थेत्यांह। पशवो वै शक्वंरीः। पशूनेवावं रुन्धे। विश्वभृतः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव पंयुस्व्यंकः। जनभृतः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। अग्नेस्तेजस्याः स्थेत्यांह॥३१॥

राष्ट्रमेव तेजस्व्यंकः। अपामोषंधीना १ रसः स्थेत्यांह।

गृष्ट्रमेव मंध्व्यंमकः। सार्स्वतं ग्रहं गृह्णाति। एषा वा अपां पृष्ठम्। यथ्सरंस्वती। पृष्ठमेवैन समानानां करोति। षोड्शिभंगृह्णाति। षोडंशकलो वे पुर्रुषः। यावांनेव पुर्रुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। षोड्शिभंजुंहोतिं षोड्शिभंगृह्णाति। द्वात्रिर्श्राथ्सम्पंद्यन्ते। द्वात्रिर्श्रादक्षरा-ऽनुष्टुक्। वागंनुष्टुपसर्वाणि छन्दार्श्रसे। वाचैवैन्र् सर्वेभिश्छन्दोंभिर्भिषिश्चति॥३२॥

देवीरापः सं मधुंमतीर्मधुंमतीभिः सृज्यध्वमित्यांह। ब्रह्मंणैवैनाः स॰सृंजति। अनांधृष्टाः सीद्तेत्यांह। ब्रह्मंणैवैनाः सादयति। अन्तरा होतुंश्च धिष्णियं ब्राह्मणाच्छु॰सिनंश्च सादयति। आग्नेयो वे होतां। ऐन्द्रो ब्राह्मणाच्छु॰सी। तेजंसा चैवेन्द्रियेणं चोभ्यतो राष्ट्रं परिगृह्णाति। हिरण्येनोत्पुंनाति। आहुंत्यै हि प्वित्रांभ्यामृत्पुनन्ति व्यावृंत्त्यै॥३३॥

श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रति तिष्ठति। अनिभृष्टम्सीत्यांह। अनिभृष्ट्र् ह्यंतत्। वाचो बन्धुरित्यांह। वाचो ह्यंष बन्धुंः। तृपोजा इत्यांह। तृपोजा ह्यंतत्। सोमंस्य दात्रमुसीत्यांह॥३४॥

सोमंस्य ह्यंतद्दात्रम्। शुक्रा वंः शुक्रेणोत्पुंनामीत्यांह। शुक्रा ह्यापंः। शुक्र १ हिरंण्यम्। चन्द्राश्चन्द्रेणेत्यांह। चन्द्रा ह्यापंः। चन्द्र १ हिरंण्यम्। अमृतां अमृत्नेनेत्यांह। अमृता ह्यापंः।

## अमृत्र हिरंण्यम्॥३५॥

स्वाहां राज्यस्यायेत्यांह। राज्यस्याय ह्यंना उत्पुनाति। सधमादों द्युम्निनीरूर्ज एता इति वारुण्यर्चा गृह्णाति। वरुणस्वमेवावं रुन्धे। एकंया गृह्णाति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। क्षत्रस्योल्बंमिस क्षत्रस्य योनिर्सीति तार्यं चोष्णीषं च प्रयंच्छति सयोनित्वायं। एकंशतेन दर्भपुञ्जीलैः पंवयति। श्तायुर्वे पुरुषः श्तवीर्यः। आत्मैकंश्तः॥३६॥

यावांनेव पुरुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। दध्यांशयति। इन्द्रियमेवावं रुन्थे। उदुम्बरंमाशयति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। शष्पांण्याशयति। सुरांबलिमेवैनं करोति। आविदं एता भेवन्ति। आविदंमेवैनं गमयन्ति॥३७॥

अग्निरेवैनं गार्हंपत्येनावति। इन्द्रं इन्द्रियेणं। पूषा पृश्निः। मित्रावर्रुणौ प्राणापानाभ्याम्। इन्द्रों वृत्राय् वज्रमुदंयच्छत्। स दिवंमलिखत्। सौंऽर्यम्णः पन्थां अभवत्। स आवित्रे द्यावांपृथिवी धृतव्रंते इति द्यावांपृथिवी उपांधावत्। स आभ्यामेव प्रसूत् इन्द्रों वृत्राय् वज्रं प्राहंरत्। आवित्रे द्यावांपृथिवी धृतव्रंते इति यदाहं॥३८॥

आभ्यामेव प्रसूतो यर्जमानो वज्रं भ्रातृंव्याय प्रहंरति। आविन्ना देव्यदितिर्विश्वरूपीत्याह। इयं वे देव्यदितिर्विश्व-रूपी। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। आविन्नोऽयम्सावांमुष्या- यणौंऽस्यां विश्यंस्मित्राष्ट्र इत्यांह। विशेवैन रे राष्ट्रेण् समर्धयति। मृह्ते क्षुत्रायं मह्त आधिपत्याय मह्ते जानंराज्यायेत्यांह। आमेवैतामा शांस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना राजेत्यांह। तस्माथ्सोमंराजानो ब्राह्मणाः॥३९॥

इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रघ इति धनुः प्रयंच्छति विजित्यै। श्रृ बार्धनाः स्थेतीषून्। श्रृ नेवास्यं बाधन्ते। पात माँ प्रत्यश्चं पात मां तिर्यश्चंमन्वश्चं मा पातेत्यांह। तिस्रो व शंर्व्याः। प्रतीचीं तिरश्च्यनूचीं। ताभ्यं एवैनं पान्ति। दिग्भ्यो मां पातेत्यांह। दिग्भ्य एवैनं पान्ति। विश्वाभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पातेत्यांह। अपंरिमितादेवेनं पान्ति। हिरंण्यवर्णावुषसां विरोक इति त्रिष्टुभां बाहू उद्गृह्णाति। इन्द्रियं व वीर्यं त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव वीर्यमुपरिष्टादात्मन्धंत्ते॥४०॥ व्यवंत्य द्वम्सीत्याह्मवः हरंण्यमेकश्लो गंमयन्याहं ब्राह्मण नाष्ट्रग्यः प्रतित्याह च्वारि च॥——[६]

दिशो व्यास्थांपयति। दिशाम्भिजिंत्यै। यदंनु प्रक्रामेंत्। अभि दिशों जयेत्। उत्त माँद्येत्। मन्साऽनु प्रक्रांमित। अभि दिशों जयित। नोन्माँद्यति। सुमिध्मा तिष्ठेत्यांह। तेजं पृवावं रुन्थे॥४१॥

उग्रामा तिष्ठेत्यांह। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। विराजमातिष्ठेत्यांह। अन्नाद्यमेवावं रुन्धे। उदीचीमा तिष्ठेत्यांह। पृश्ननेवावं रुन्धे। ऊर्ध्वामातिष्ठेत्यांह। सुवर्गमेव लोकम्भिजंयति। अनून्निंहीते।

# सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्ये॥४२॥

मारुत एष भेवति। अन्नं वै मुरुतः। अन्नेमेवावं रुन्थे। एकंविश्शतिकपालो भवति प्रतिष्ठित्यै। योऽरण्येऽनुवाक्यों गणः। तं मध्यत उपंदधाति। ग्राम्यैरेव पृशुभिरारण्यान्पशून्परि गृह्णाति। तस्माँद्राम्यैः पृशुभिरारण्याः पृशवः परिगृहीताः। पृथिवैन्यः। अभ्यषिच्यत॥४३॥

स राष्ट्रं नाभवत्। स एतानि पार्थान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स राष्ट्रमंभवत्। यत्पार्थानि जुहोतिं। राष्ट्रमेव भवति। बार्ह्स्पत्यं पूर्वेषामुत्तमं भवति। ऐन्द्रमुत्तरेषां प्रथमम्। ब्रह्मं चैवास्मै क्षत्रं चं समीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रं प्रतिं-ष्ठापयति॥४४॥

षदुरस्तांदिभिषेकस्यं जुहोति। षडुपरिष्टात्। द्वादंश् सम्पंद्यन्ते। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरः खलु वै देवानां पूः। देवानांमेव पुरं मध्यतो व्यवंसपिति। तस्य न कुतंश्चनोपांव्याधो भंवति। भूतानामवेष्टीर्जुहोति। अत्रात्र वै मृत्युर्जायते। यत्रंयत्रैव मृत्युर्जायते। ततं एवैन्मवंयजते। तस्माद्राज्सूयेनेजानो नाभिचंरित्वै। प्रत्यगेनमभिचारः स्तृंणुते॥४५॥

सोमंस्य त्विषिरसि तवेव मे त्विषिर्भयादिति शार्दूल-चर्मोपंस्तृणाति। यैव सोमे त्विषिः। या शाँदूले। तामेवावं रुन्थे। मृत्योर्वा एष वर्णः। यच्छाँदूंलः। अमृत् हरेण्यम्। अमृतंमिस मृत्योर्मा पाहीति हिरेण्यमुपाँस्यति। अमृतंमेव मृत्योर्न्तर्थत्ते। शृतमानं भवति॥४६॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। दिद्योन्मां पाहीत्युपिरष्टादिधे निदंधाति। उभयतं एवास्मै शर्म दधाति। अवेष्टा दन्दश्का इतिं क्रीब॰ सीसेन विध्यति। दन्दश्कांनेवावंयज्ञते। तस्मौत्क्रीबं दंन्दश्कां द॰श्काः। निरंस्तं नम्ंचेः शिर् इतिं लोहितायसं निरंस्यति। पाप्मानमेव नम्ंचिं निरवंदयते। प्राणा आत्मनः पूर्वेऽभिषिच्या इत्यांहुः॥४७॥

सोमो राजा वर्रणः। देवा धंर्मसुवंश्च ये। ते ते वाचर् सुवन्तां ते ते प्राणर सुवन्तामित्यांह। प्राणानेवाऽऽत्मनः पूर्वान्भिषिश्चति। यद्भूयात्। अग्नेस्त्वा तेजंसाऽभिषिश्चामीति। तेजस्व्येव स्यात्। दुश्चर्मा तु भवत्। सोमंस्य त्वा द्युम्नेनाभिषिश्चामीत्यांह। सौम्यो वै देवतंया पुरुषः॥४८॥

स्वयैवैनं देवतंयाऽभिषिश्चित। अग्नेस्तेज्सेत्यांह। तेजं पुवास्मिन्दधाति। सूर्यस्य वर्चसेत्यांह। वर्च पुवास्मिन्दधाति। इन्द्रंस्येन्द्रियेणेत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। मित्रावर्रुण-योवीर्येणेत्यांह। वीर्यमेवास्मिन्दधाति। मुरुतामोज्सेत्यांह॥४९॥ ओजं पुवास्मिन्दधाति। क्षत्राणां क्षत्रपंतिर्सीत्यांह। क्षत्राणांमेवेनं क्षत्रपंतिं करोति। अति दिवस्पाहीत्यांह। अत्यन्यान्पाहीति वावैतदांह। समावंवृत्रन्नध्रागुदींचीरित्यांह। राष्ट्रमेवास्मिन्ध्रुवमंकः। उच्छेषंणेन जुहोति। उच्छेषंणभागो वै रुद्रः। भागधेयेंनैव रुद्रं निरवंदयते॥५०॥

उदं बुरेत्याग्नीं द्धे जुहोति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायां मेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्र यत्ते ऋयी परं नामेत्यां ह। यद्वा अस्य ऋयी परं नामं। तेन वा एष हिनस्ति। यश हिनस्ति। तेनैवैन सह शंमयति। तस्मैं हुतमंसि यमेष्टं मुसीत्यां ह। यमादेवास्यं मृत्युमवंयजते॥५१॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्य इति तस्यै गृहे जुंहुयात्। यां कामयेत राष्ट्रमंस्यै प्रजा स्यादिति। राष्ट्रमेवास्यै प्रजा भंवति। पूर्णमयेनाध्वर्युर्भिषिश्चति। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्त्विषं दधाति। औदुंम्बरेण राजन्यः। ऊर्जमेवास्मिन्नन्नाद्यं दधाति। आश्वंत्थेन वैश्यः। विश्नमेवास्मिन्पृष्टिं दधाति। नैयंग्रोधेन जन्यः। मित्राण्येवास्मै कत्पयति। अथो प्रतिष्ठित्यै॥५२॥ भृवत्याङ्क पुरुष् ओज्नसेत्यांह विरवंद्यके यज्जे जन्यो हे बंगा——[८]

इन्द्रंस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरति विजित्यै। मित्रावरुणयोस्त्वा प्रशास्त्रोः प्रशिषां युन्ज्मीत्यांह। ब्रह्मंणैवैनं देवतांभ्यां युनक्ति। प्रष्टिवाहिनं युनक्ति। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्में युनक्ति। त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। द्वौ

### संव्येष्ठसारथी। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५३॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं युनक्ति। विष्णुक्रमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ छोकान्भिजंयति। यः क्षित्रयः प्रतिहितः। सौंऽन्वारंभते। राष्ट्रमेव भंवति। त्रिष्टुभाऽन्वारंभते। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति॥५४॥

मुरुतां प्रस्वे जेषमित्यांह। मुरुद्धिरेव प्रसूत उर्ज्ञयित। आप्तं मन् इत्यांह। यदेव मन्सैफ्सींत्। तदांपत्। राज्ञन्यं जिनाति। अनांकान्त एवाकंमते। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणध्यते। यो राज्ञन्यं जिनातिं। सम्हिमंन्द्रियेणं वीर्येणत्यांह॥५५॥

इन्द्रियमेव वीर्यमात्मन्धंते। पृश्नां मृन्युरंसि तवेंव मे मृन्युर्भूयादिति वाराही उपानहावुपं मुश्रते। पृश्नां वा एष मृन्युः। यद्वंराहः। तेनैव पंश्नां मृन्युमात्मन्धंते। अभि वा इय स्पुषुवाणं कांमयते। तस्यैश्वरेन्द्रियं वीर्यमादांतोः। वाराही उपानहावुपंमुश्रते। अस्या एवान्तर्धत्ते। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यानांत्यै॥५६॥

नमों मात्रे पृंथिव्या इत्याहाहि ईसायै। इयंद्स्यायुंर्स्यायुंर्मे धेहीत्यांह। आयुंरेवाऽऽत्मन्धंत्ते। ऊर्ग्स्यूर्जं मे धेहीत्यांह। ऊर्जमेवाऽऽत्मन्धंत्ते। युङ्कंसि वर्चोऽसि वर्चो मिये धेहीत्यांह।

वर्च एवाऽऽत्मन्धंत्ते। एक्धा ब्रह्मण् उपंहरति। एक्धेव यजमान् आयुरूर्जं वर्चो दधाति। रथविमोचनीयां जुहोति प्रतिष्ठित्ये॥५७॥

त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। तस्मांचतुर्जुहोति। यदुमौ सहावतिष्ठंताम्। समानं लोकिमंयाताम्। सह संङ्ग्रहीत्रा रथवाहंने रथमादंधाति। स्वृ्वर्गादेवैनं लोकादन्तदंधाति। हुर्सः श्रुंचिषित्यादंधाति। ब्रह्मणैवैनंमुपावहरंति। ब्रह्मणा-ऽऽदंधाति। अतिच्छन्द्साऽऽदंधाति। अतिच्छन्दा वे सर्वाणि छन्दार्शस। सर्वेभिरेवैनं छन्दोभिरादंधाति। वर्ष्म् वा एषा छन्दंसाम्। यदतिच्छन्दाः। यदतिच्छन्दस्म दधाति। वर्ष्म् वा वर्ष्मेवैन र समानानां करोति॥५८॥
पृष्के व्यक्ति वर्ष्मेलयहानांके प्रतिष्ठिक ब्रह्मणाऽऽदंधाति स्म च॥———[९]

मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसीत्यांह। मैत्रं वा अहंः। वारुणी रात्रिः। अहोरात्राभ्यामेवैनंमुपावंहरति। मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसीत्यांह। मैत्रो वे दक्षिणः। वारुणः सव्यः। वैश्वदेव्यांमिक्षां। स्वमेवैनौं भाग्धेयंमुपावंहरति। समहं विश्वैदिवरित्यांह॥५९॥

वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। ता एवाद्याः कुरुते। क्ष्रत्रस्य नाभिरिस क्षत्रस्य योनिर्सीत्यंधीवासमास्तृंणाति सयोनित्वायं। स्योनामा सींद सुषदामा सीदेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। मा त्वां हिश्सीन्मा मां हिश्सीदित्याहाहिश्सायै। निषंसाद धृतव्रंतो वरुंणः पुस्त्यांस्वा साम्रांज्याय सुऋतुरित्यांह। साम्राज्यमेवैन रे सुऋतुंं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व राजन्ब्रह्माऽसिं सविताऽसिं सृत्यसंव इत्यांह। सवितारंमेवैन रे सत्यसंवं करोति॥६०॥

ब्रह्मा(३)न्त्व १ रांजन्ब्रह्माऽसीन्द्रोंऽसि सृत्यौजा इत्यांह। इन्द्रंमेवेन १ सृत्यौजंसं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व १ रांजन्ब्रह्माऽसिं मित्रोंऽसि सुशेव इत्यांह। मित्रमेवेन १ सुशेवं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व १ रांजन्ब्रह्मासि वर्रुणोऽसि सृत्यधर्मेत्यांह। वर्रुणमेवेन १ सृत्यधर्माणं करोति। सृविताऽसिं सृत्यसंव इत्यांह। गायत्रीमेवेतेनांभि व्याहरित। इन्द्रोंऽसि सृत्यौजा इत्यांह। त्रिष्टुभंमेवेतेनांभि व्याहरित॥६१॥

मित्रोंऽसि सुशेव इत्यांह। जगंतीमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यमेता देवताः। सत्यमेतानि छन्दार्शसा। सत्यमेवावं रुन्धे। वर्रुणोऽसि सत्यधर्मेत्यांह। अनुष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यानृते वा अनुष्टुप्। सत्यानृते वर्रुणः। सत्यानृते एवावं रुन्धे॥६२॥

नैन र्स्सत्यानृते उंदिते हि र्स्तः। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वज्रों ऽसि वार्त्रघ्न इति स्फ्यं प्रयंच्छति। वज्रो वै स्फ्यः। वज्रेणैवास्मां अवरप्र रस्ययित। एव रहि तच्छ्रेयः। यदंस्मा एते रध्येयः। दिशो ऽभ्यंय र राजां ऽभूदिति पश्चाक्षान्प्रयंच्छति। एते वै सर्वेऽयाः। अपंराजायिनमेवैनं करोति॥६३॥ ओदनमुद्भुंबते। प्रमेष्ठी वा एषः। यदोदनः। प्रमामेवैन्ड्ं श्रियं गमयित। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्गलाँ(४) सत्यंराजा(३)-नित्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते। शौनः शेपमाख्यांपयते। वरुणपाशादेवेनं मुश्रिति। प्रः शतं भंवति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रति तिष्ठति। मारुतस्य चैकंविश्शितकपालस्य वैश्वदेव्ये चामिक्षांया अग्नयं स्विष्टकृतं समवंद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभ्यतः परि गृह्णाति। अपान्नश्रे स्वाहोर्जो नश्रे स्वाहाऽग्नयं गृहपंतये स्वाहेतिं तिस्र आहंतीर्जुहोति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेव लोकेषु प्रतिं तिष्ठति॥६४॥

देवैरित्यांह सुत्यसंवं करोति त्रिष्टुर्भमे्वेतेनांभि व्याहंरति सत्यानृते एवावं रुन्धे करोति श्रुतेन्द्रियः पट् चं॥ ि 🗘 🔾 ]

एतद्वाँह्मणानि धात्रे रुब्बिनाँन्देवसुवामुर्थेतो देवीदिशः सोमुस्थेन्द्रंस्य मित्रो दशं॥१०॥

एतद्वाँह्मणानि वैष्णवं त्रिंकपालमत्रं वे पूषा वाशाः स्थेत्यांह दिशो व्यास्थापयत्युर्दद्वरेत्य ब्रह्मा(३)न्त्वर राजश्रतुंष्यष्टिः॥६४॥

एतद्वाँह्मणानि प्रतिं तिष्ठति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥अष्टमः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

वर्रणस्य सुषुवाणस्यं दश्धेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। तथ्स्रसृद्धिरन् समंसर्पत्। तथ्स्रसृपारं सरसृत्त्वम्। अग्निनां देवेन प्रथमेऽह्न्ननु प्रायुंङ्कः। सरस्वत्या वाचा द्वितीयें। स्वित्रा प्रंस्वेनं तृतीयें। पूष्णा प्रशुभिंश्चतुर्थे। बृह्स्पतिना ब्रह्मणा पश्चमे। इन्द्रेण देवेनं षष्ठे। वर्रणेन् स्वयां देवत्या सप्तमे॥१॥

सोमेन राज्ञांऽष्ट्रमे। त्वष्ट्रां रूपेणं नव्नमे। विष्णुंना युज्ञेनां-ऽऽप्रोत्। यथ्स् १ सृपो भवंन्ति। इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यजंमान आप्रोति। पूर्वापूर्वा वेदिर्भवति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावंरुद्धौ। पुरस्तांदुप्सदा १ सौम्येन प्रचंरति। सोमो वै रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। अन्तरा त्वाष्ट्रेणं। रेतं एव हितं त्वष्टां रूपाणि विकंरोति। उपरिष्टाद्वैष्ण्वेनं। युज्ञो वै विष्णुः। युज्ञ एवान्ततः प्रतिं तिष्ठति॥२॥

जामि वा एतत्कुर्वन्ति। यथ्मद्यो दीक्षयन्ति सद्यः सोमं क्रीणन्ति। पुण्डरिस्रजां प्रयंच्छत्यजांमित्वाय। अङ्गिरसः सुवर्गं लोकं यन्तिः। अपसु दीक्षात्पसी प्रावेशयन्। तत्पुण्डरीकमभवत्। यत्पुण्डरिस्रजां प्रयच्छंति। साक्षादेव दीक्षात्पसी अवं रुन्थे। दशभिवंथ्सत्रैः सोमं क्रीणाति।

### दशाँक्षरा विराट्॥३॥

अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। मुष्करा भविन्ति सेन्द्रत्वायं। दशपेयों भवित। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। शृतं ब्राँह्यणाः पिंबन्ति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। सुप्तदशङ् स्तोन्नं भविति। सुप्तदशः प्रजापंतिः॥४॥

प्रजापंतेरास्यै। प्राकाशाविध्वर्यवे ददाति। प्रकाशमेवैनं गमयति। स्रजंमुद्गात्रे। व्येवास्मै वासयति। रुका होत्रै। आदित्यमेवास्मा उन्नयति। अर्थं प्रस्तोतृप्रतिहुर्तृभ्याम्। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापंतेरास्यै॥५॥

द्वादंश पष्टौहीर्ब्रह्मणें। आयुरेवावं रुन्धे। वृशां मैंत्रावरुणायं। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। ऋष्मं ब्राह्मणाच्छुर्सिनें। राष्ट्रमेविन्द्रियाव्यंकः। वासंसी नेष्टापोतृभ्यांम्। प्वित्रे प्वास्यैते। स्थूरि यवाचितमंच्छावाकायं। अन्तत एव वर्रणमवं यजते॥६॥

अनुङ्गाहं मुग्नीधं। विह्नुर्वा अनुङ्गान्। विह्नं रुग्नीत्। विह्नं वेव विह्नं यज्ञस्यावं रुन्धे। इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं त्रेधेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। भृगुस्तृतीयमभवत्। श्रायन्तीयं तृतीयम्। सरंस्वती तृतीयम्। भार्ग्वो होतां भवति। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भंवति। वार्वन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। सार्स्वतीर्पो गृह्णाति। इन्द्रियस्यं वीर्यंस्यावंरुद्धे। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भंवति।

इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं श्रयति। वार्वन्तीयमग्निष्टोमसामम्। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं वारयति॥७॥

विसद्वापंतिरक्षं प्रजापंतरक्षं प्रजापंतरक्षं प्रजा ब्रह्मसामं भवति सप्त चं॥————[२]

र्ड्श्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। दिशामवेष्टयो भवन्ति। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय। पश्चं देवतां यजित। पश्च दिशंः। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति। हिवषोहिवष इष्ट्वा बार्हस्पृत्यम्भिघारयित। यज्ञमानदेवत्यो वै बृह्स्पितिः। यज्ञमानमेव तेजंसा समर्थयित॥८॥

आदित्यां मृल्हां गुर्भिणीमा लंभते। मारुतीं पृश्विं पष्टौहीम्। विशं चैवास्मै राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आदित्यया पूर्वया प्रचंरति। मारुत्योत्तंरया। राष्ट्र एव विश्वमनुंबध्नाति। उचैरादित्याया आश्रावयति। उपार्शु मारुत्यै। तस्मौद्राष्ट्रं विशमतिंवदति। गर्भिण्यांदित्या भवति॥९॥

इन्द्रियं वै गर्भः। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। अगुर्भा मांकृती। विश्वे मुरुतः। विश्वमेव निरिन्द्रियामकः। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अश्विनौः पूषन्वाचः सृत्यः संन्निधायं। अनृतेनासुरान्भ्यंभवन्। तैंऽश्विभ्यां पूष्णे पुरोडाश्ं द्वादंशकपालं निर्वपन्। ततो वै ते वाचः सत्यमवांकन्धत॥१०॥

यद्श्विभ्यां पूष्णे पुरोडाशुं द्वादेशकपालं निर्वपिति।

अनृतेनैव भ्रातृंव्यानिभूयं। वाचः स्त्यमवं रुन्धे। सरंस्वते सत्यवाचे च्रम्। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। स्वित्रे स्त्यप्रंसवाय पुरोडाशं द्वादंशकपालं प्रसूँत्यै। दूतान्प्रहिंणोति। आविदं एता भंवन्ति। आविदंमेवेनं गमयन्ति। अथों दूतेभ्यं एव न छिंद्यते। तिसृधन्वश् शुंष्कदृतिदक्षिंणा समृद्धै॥११॥

अर्ध्यति भ्वत्युरु-यत् गुम्यन्ति हे चे॥————[३]

आग्नेयम्ष्टाकंपालं निर्वपति। तस्माच्छिशिरे कुरुपश्चालाः प्राश्चो यान्ति। सौम्यं चुरुम्। तस्मौद्धस्नतं व्यंवसायांदयन्ति। सावित्रं द्वादंशकपालम्। तस्मौत्पुरस्ताद्यवांनाः सवित्रा विरुन्धते। बार्ह्स्पत्यं चुरुम्। सवित्रेव विरुध्यं। ब्रह्मणा यवानादंधते। त्वाष्ट्रमृष्टाकंपालम्॥१२॥

रूपाण्येव तेनं कुर्वते। वैश्वान्रं द्वादंशकपालम्। तस्मां ज्ञघन्यं नैदांघे प्रत्यश्चंः कुरुपञ्चाला याँन्ति। सारुस्वतं चरुं निर्वपति। तस्मांत्प्रावृष्टि सर्वा वाचो वदन्ति। पौष्णेन् व्यवस्यन्ति। मैत्रेणं कृषन्ते। वारुणेन् विधृंता आसते। क्षेत्रपत्येनं पाचयन्ते। आदित्येनादंधते॥१३॥

मासिमाँस्येतानिं ह्वी १ षिं निरुप्याणीत्यांहुः। तेनैवर्तून्प्रयुंङ्कः इतिं। अथो खल्वांहुः। कः संवथ्सरं जीविष्यतीतिं। षडेव पूर्वेद्युर्निरुप्यांणि। षडुंत्तरेद्युः। तेनैवर्तून्प्रयुंङ्कः। दक्षिंणो रथवाहनवाहः पूर्वेषां दक्षिंणा। उत्तर्

उत्तरिषाम्। सुंवृथ्स्रस्यैवान्तौ युनक्ति। सुवृर्गस्यं लोकस्य सम्ष्रये॥१४॥

त्वाष्ट्रमुष्टार्कपालं दधते युनुत्त्तग्रेर्कं च॥—————[४]

इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं दश्धेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। स यत्प्रंथमं निरष्ठींवत्। तत्कंलमभवत्। यद्वितीयम्। तद्वदंरम्। यत्तृतीयम्। तत्कुर्कन्धुं। यन्नुस्तः। स सि्र्हः। यदक्ष्यौः॥१५॥

स शाँदूंलः। यत्कर्णयोः। स वृक्तंः। य ऊर्ध्वः। स सोमंः। याऽवांची। सा सुरां। त्रयाः सक्तंवो भवन्ति। इन्द्रियस्यावंरुख्यै। त्रुयाणि लोमांनि॥१६॥

त्विषिमेवावं रुन्धे। त्रयो ग्रहाः। वीर्यमेवावं रुन्धे। नाम्नां दशमी। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दशमी। प्राणा इंन्द्रियं वीर्यम्। प्राणानेवेन्द्रियं वीर्यं यजमान आत्मन्धेत्ते। सीसेन क्रीबाच्छष्पांणि कीणाति। न वा एतदयो न हिरंण्यम्॥१७॥

यथ्सीसम्। न स्त्री न पुमान्। यत्क्रीबः। न सोमो न सुराँ। यथ्सौत्रामणी समृंद्धौ। स्वाद्वीं त्वाँ स्वादुनेत्यांह। सोमंमेवैनाँ करोति। सोमोंऽस्यश्विभ्याँ पच्यस्व सरंस्वत्यै पच्यस्वेन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्वेत्यांह। एताभ्यो ह्येषा देवताभ्यः पच्यंते। तिस्रः स॰सृंष्टा वसति॥१८॥

तिस्रो हि रात्रीः क्रीतः सोमो वसंति। पुनातुं ते परिस्रुतमिति यजुंषा पुनाति व्यावृत्त्यै। पुवित्रेण पुनाति। प्वित्रंण हि सोमं पुनन्ति। वारंण शश्वंता तनेत्यांह। वारंण हि सोमं पुनन्ति। वायुः पूतः प्वित्रेणेति नैतयां पुनीयात्। व्यृंद्धा ह्यंषा। अतिप्वितस्यैतयां पुनीयात्। कुविद्ङ्गेत्यनिरुक्तया प्राजापृत्ययां गृह्णाति॥१९॥

अनिंरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। आश्विनं धूम्रमालंभते। अश्विनौ वै देवानां भिषजौ। ताभ्यांमेवास्मे भेषजं कंरोति। सारुस्वतं मेषम्। वाग्वे सरंस्वती। वाचैवैनं भिषज्यति। ऐन्द्रमृष्भ स्नैन्द्रत्वायं॥२०॥

यित्रषु यूपेंष्वालभेत। बहिर्धाऽस्मांदिन्द्रियं वीर्यं दध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एक्यूप आलंभते। एक्धेवास्मिन्निन्द्रियं वीर्यं दधाति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। नैतेषां पशूनां पुंरोडाशां भवन्ति। ग्रहंपुरोडाशां ह्यंते। युवश् सुरामंमिश्वनेतिं सर्वदेवृत्यं याज्यानुवाक्यं भवतः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति॥२१॥

ब्राह्मणं परिक्रीणीयादुच्छेषंणस्य पातारम्। ब्राह्मणो ह्याहुंत्या उच्छेषंणस्य पाता। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। वल्मीक्वपायामवं नयेत्। सैव ततः प्रायंश्वित्तिः। यद्वै सौत्रामण्ये व्यृद्धम्। तदंस्यै समृद्धम्। नानादेवत्याः पृशवंश्व पुरोडाशांश्च भवन्ति समृद्धै। ऐन्द्रः पंशूनामृत्तमो भवति। ऐन्द्रः पुरोडाशांनां प्रथमः॥२२॥

इन्द्रिये एवास्मैं समीचीं दधाति। पुरस्तांदनूयाजानां पुरोडाशैः प्रचरित। पुशवो व पुरोडाशौः। पुश्नेवावं रुन्धे। ऐन्द्रमेकांदशकपालं निर्वपिति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। सावित्रं द्वादंशकपालं प्रस्ति। वारुणं दशकपालम्। अन्तत एव वर्रणमवं यजते। वर्डबा दिश्वणा॥२३॥

उत वा एषाऽश्व स्ते। उताऽश्वंतरम्। उत सोमं उत स्रां। यथ्मौत्रामणी समृद्धे। बार्ह्स्पत्यं पृशुं चंतुर्थमंतिपवितस्या लेभते। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैव यज्ञस्य व्यृद्धमिपं वपति। पुरोडाशंवानेष पृशुर्भवित। न ह्यंतस्य ग्रहं गृह्णन्ति। सोमंप्रतीकाः पितरस्तृण्णुतेतिं शतातृण्णाया समवंनयित॥२४॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। दक्षिणेऽग्रौ जुंहोति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। हिरंण्यमन्त्रा धारयति। पूतामेवैनां जुहोति। श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। यत्रैव शंतातृण्णां धारयंति॥२५॥

तन्निदंधाति प्रतिष्ठित्यै। पितृन् वा एतस्यैन्द्रियं वीर्यं गच्छति। य सोमोऽति पवंते। पितृणां याज्यानुवाक्यांभिरुपं

तिष्ठते। यदेवास्यं पितृनिन्द्रियं वीर्यं गच्छंति। तदेवावं रुन्धे। तिसृभिरुपं तिष्ठते। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। अथो त्रीणि वै यज्ञस्यैन्द्रियाणि। अध्वर्युरहोतां ब्रह्मा। त उपंतिष्ठन्ते। यान्येव यज्ञस्यैन्द्रियाणि। तैरेवास्मैं भेषजं करोति॥२६॥

प्रीणाति प्रथमो दक्षिणा समवंनयति धारयंतीन्द्रियाणि चुत्वारि च॥—————[६]

अग्निष्टोममग्र आहंरति। यज्ञमुखं वा अंग्निष्टोमः। यज्ञमुखमेवारभ्यं स्वमा क्रंमते। अथैषोंऽभिषेचनीयंश्चतु-स्त्रिष्शपंवमानो भवति। त्रयंस्त्रिष्श्चद्वे देवताः। ता एवाऽऽप्नोंति। प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्ट्शः। तमेवाऽऽप्नोंति। स्र्श्र एष स्तोमानामयंथापूर्वम्। यद्विषंमाः स्तोमाः॥२७॥

पुतावान् वै यज्ञः। यावान्यवंमानाः। अन्तः श्लेषंणं त्वा अन्यत्। यथ्समाः पर्वमानाः। तेनाऽस १ शरः। तेनं यथापूर्वम्। आत्मनैवाग्निष्टोमेनुप्नोतिं। आत्मना पुण्यो भवति। प्रजा वा उक्थानिं। पृशवं उक्थानिं। यदुक्थ्यो भवत्यनु सन्तंत्त्यै॥२८॥ स्त्रोमं पृशवं उक्थावेतं वा———[७]

उपं त्वा जामयो गिर् इतिं प्रतिपद्भवित। वाग्वै वायुः। वाच एवैषों ऽभिषेकः। सर्वासामेव प्रजाना रं सूयते। सर्वा एनं प्रजा राजेतिं वदन्ति। एतम् त्यन्दश् क्षिप् इत्यांह। आदित्या वै प्रजाः। प्रजानां मेवेतेनं सूयते। यन्ति वा एते यंज्ञमुखात्। ये संम्भार्या अक्रन्॥२९॥ यदाह् पर्वस्व वाचो अग्निय् इति। तेनैव यंज्ञमुखान्नयंन्ति। अनुष्टुक्प्रथमा भवति। अनुष्टुगुंत्तमा। वाग्वा अनुष्टुक्। वाचैव प्रयन्ति। वाचोद्यंन्ति। उद्वंतीर्भवन्ति। उद्वद्वा अनुष्टुभों रूपम्। आनुष्टुभो राजन्यः॥३०॥

तस्मादुद्वंतीर्भवन्ति। सौर्यनुष्टुगुंत्तमा भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। यो वै स्वादेतिं। नैनर्ं स्व उपनमित। यः सामभ्य एतिं। पापीयान्थ्सुषुवाणो भंवति। एतानि खलु वै सामानि। यत्पृष्ठानिं। यत्पृष्ठानि भवन्ति॥३१॥

तैर्व स्वान्नैतिं। यानिं देवराजाना् सामानि। तैरमुष्मिंश्लोक ऋंध्रोति। यानिं मनुष्यराजाना् सामानि। तैरस्मिंश्लोक ऋंध्रोति। उभयोर्व लोकयोर् ऋध्रोति। देवलोके चं मनुष्यलोके चं। एकविश्शोंऽभिषेचनीयंस्योत्तमो भवति। एकविश्शः केशवपनीयंस्य प्रथमः। सप्तद्शो दंशपेयः॥३२॥

विड्वा एंकविर्शः। राष्ट्र संप्तद्शः। विशं एवैतन्मध्यतीं-ऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशां प्रियः। विशो हि मध्यतोऽभिषिच्यतें। यद्वा एनम्दो दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। तथ्सुंवर्गं लोकम्भ्या रोहति। यदिमं लोकं न प्रत्यवरोहेंत्। अतिजनं वेयात्। उद्घां माद्येत्। यदेष प्रतीचीनः स्तोमो भवंति। इममेव तेनं लोकं प्रत्यवरोहति। अथो अस्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठत्यनुंन्मादाय॥३३॥

[८]

ड्यं वै रंज्ता। असौ हरिणी। यद्रुक्मौ भवंतः। आभ्यामेवेनंमुभ्यतः परिं गृह्णाति। वरुणस्य वा अभिष्च्यमांनस्याऽऽपंः। इन्द्रियं वीर्यं निरंप्रन्। तथ्सुवर्ण् हरिंण्यमभवत्। यद्रुक्ममंन्तर्दधांति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्या- निर्घाताय। शतमांनो भवति शतक्षरः। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। आयुर्वे हिरंण्यम्। आयुष्यां एवेनंमुभ्यतिं क्षरन्ति। तेजो वे हिरंण्यम्। तेजस्यां एवेनंमुभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चो वे हिरंण्यम्। वर्चस्यां एवेनंमभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चो वे हिरंण्यम्। वर्चस्यां

युतक्षंगुऽष्टौ चं॥————[९]

अप्रीतिष्ठितो वा एष इत्यांहुः। यो रांज्यसूयेन यजंत इतिं। यदा वा एष एतेन द्विरात्रेण यजंते। अर्थ प्रतिष्ठा। अर्थ संवथ्सरमाप्नोति। यावंन्ति संवथ्सरस्यांहोरात्राणि। तावंतीरेतस्यं स्तोत्रीयाः। अहोरात्रेष्वेव प्रतिं तिष्ठति। अग्निष्टोमः पूर्वमहंर्भवति। अतिरात्र उत्तरम्॥३५॥

नानैवाहोंरात्रयोः प्रतिं तिष्ठति। पौर्णमास्यां पूर्वमहंर्भवति। व्यंष्टकायामुत्तंरम्। नानैवार्धमासयोः प्रतिं तिष्ठति। अमावास्यायां पूर्वमहंर्भवति। उद्दृष्ट उत्तंरम्। नानैव मासंयोः प्रतिं तिष्ठति। अथो खलुं। ये एव संमानपक्षे पुंण्याहे स्याताम्। तयोः कार्यं प्रतिष्ठित्यै॥३६॥

अपुशुव्यो द्विंरात्र इत्यांहुः। द्वे ह्यंते छन्दंसी।

गायत्रं च त्रेष्टुंभं च। जगंतीम्नत्यंन्ति। न तेन् जगंती कृतेत्यांहुः। यदेनान्तृतीयसवने कुर्वन्तीति। यदा वा एषाऽहीन्स्याहुर्भजंते। साह्रस्यं वा सवनम्। अथैव जगंती कृता। अथं पश्रव्यः। व्यंष्टिर्वा एष द्विंरात्रः। य एवं विद्वान्द्विंरात्रेण यजंते। व्यंवास्मां उच्छति। अथो तमं एवापं हते। अग्निष्टोममंन्तृत आ हंरति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतांस्वेव प्रतिं तिष्ठति॥३७॥

उत्तरं प्रतिष्ठित्यै पश्वयः सप्त चं॥————[१०]

वर्रणस्य जामि वा ईंश्वर आँग्नेयमिन्द्रंस्य यित्रुष्विप्रिष्टोममुपं त्वेयं वै रंजुताऽप्रतिष्ठितो दर्श॥१०॥ वर्रणस्य यद्श्विन्यां यित्रुषु तस्मादुद्वंतीः सुप्तत्रिर्शत्॥३७॥ वर्रणस्य प्रतिं तिष्ठति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥ अष्टकम् २॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अङ्गिरसो वै स्त्रमांसत। तेषां पृश्तिर्धर्मधुगांसीत्। सर्जीषेणांजीवत्। तेंंऽब्रुवन्। कस्मै नु स्त्रमांस्महे। येंंऽस्या ओषधीर्न जनयांम् इतिं। ते दिवो वृष्टिमसृजन्त। यावंन्तः स्तोका अवापंद्यन्त। तावंतीरोषंधयोऽजायन्त। ता जाताः पितरों विषेणांलिम्पन्॥१॥

तासाँ जुग्ध्वा रुप्यन्त्यैत्। तैंऽब्रुवन्। क इदिमृत्थमंक्रितिं। वयं भागधेयंमिच्छमाना इति पितरोंऽब्रुवन्। किं वों भागधेयमितिं। अग्निहोत्र एव नोऽप्यस्त्वित्यंब्रुवन्। तेभ्यं एतद्भांगधेयं प्रायंच्छन्। यद्भुत्वा निमार्ष्टिं। ततो वै त ओषंधीरस्वदयन्। य एवं वेदं॥२॥

स्वदंन्तेऽस्मा ओषंधयः। ते वृथ्समुपावांसृजन्। इदं नों हृव्यं प्रदांपयेतिं। सोंऽब्रवीद्वरं वृणे। दशं मा रात्रींर्जातं न दोहन्। आसङ्गवं मात्रा सह चंराणीतिं। तस्मांद्वथ्सं जातं दश रात्रीर्न दुंहन्ति। आसङ्गवं मात्रा सह चंरति। वारेवृत्ड् ह्यंस्य। तस्मांद्वथ्स॰ स॰सृष्टध्य॰ रुद्रो घातुंकः। अति हि सन्धान्धयंति॥३॥

प्रजापंतिर्ग्निमंसृजत। तं प्रजा अन्वंसृज्यन्त। तमंभाग

उपाँस्त। सोंऽस्य प्रजाभिरपाँकामत्। तमंव्रुरुंथ्समानो-ऽन्वैत्। तमंव्रुधं नाशंक्रोत्। स तपोऽतप्यत। सोंऽग्निरुपांरम्तातांपि वे स्य प्रजापंतिरितिं। स र्राटादुदंमृष्ट॥४॥

तद्घृतमंभवत्। तस्माद्यस्यं दक्षिणतः केशा उन्मृंष्टाः। ताञ्चेष्ठलक्ष्मी प्रांजापत्येत्यांहुः। यद्रराटांदुदमृष्ट। तस्मांद्रराटे केशा न संन्ति। तद्ग्री प्रागृंह्णात्। तद्यंचिकिथ्सत्। जुहवानी(३) मा हौषा(३)मितिं। तद्विंचिकिथ्सायै जन्मं। य पृवं विद्वान् विचिकिथ्संति॥५॥

वसीय एव चेतयते। तं वाग्भ्यंवदञ्जुहुधीतिं। सौंऽब्रवीत्। कस्त्वम्सीतिं। स्वैव ते वागित्यंब्रवीत्। सोंऽजुहोथ्स्वाहेतिं। तथ्स्वांहाकारस्य जन्मं। य एवङ्स्वांहाकारस्य जन्म वेदं। क्रोतिं स्वाहाकारेणं वीर्यम्। यस्यैवं विदुषंः स्वाहाकारेण जुह्वंति॥६॥

भोगांयैवास्यं हुतं भंवति। तस्या आहुंत्यै पुरुषमसृजत। द्वितीयंमजुहोत्। सोऽश्वंमसृजत। तृतीयंमजुहोत्। स गामं-सृजत। चृतुर्थमंजुहोत्। सोऽविंमसृजत। पृश्चममंजुहोत्। सोऽजामंसृजत॥७॥

सौंऽग्निरंबिभेत्। आहुंतीभिवें मांऽऽप्नोतीतिं। स प्रजापंतिं पुनः प्राविंशत्। तं प्रजापंतिरब्रवीत्। जायुस्वेतिं। सौंऽब्रवीत्। किं भांगुधेयंमुभि जंनिष्यु इतिं। तुभ्यंमेवेदः हूंयाता इत्यंब्रवीत्। स एतद्भांगुधेयंमुभ्यंजायत। यदंग्निहोत्रम्॥८॥

तस्मांदग्निहोत्रमुंच्यते। तद्धूयमांनमादित्यों ऽब्रवीत्। मा हौषीः। उभयोर्वे नांवेतदितिं। सों ऽग्निरंब्रवीत्। कथं नौं होष्यन्तीतिं। सायमेव तुभ्यं जुहवन्ं। प्रातर्मह्यमित्यंब्रवीत्। तस्मांद्ग्नयं साय हूंयते। सूर्याय प्रातः॥९॥

आग्नेयी वै रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। यदनुंदिते सूर्ये प्रातर्जुहुयात्। उभयमेवाग्नेय स्यात्। उदिते सूर्ये प्रातर्जुहोति। तथाऽग्नये साय हूंयते। सूर्याय प्रातः। रात्रिं वा अनुं प्रजाः प्र जांयन्ते। अहा प्रतिं तिष्ठन्ति। यथ्सायं जुहोतिं॥१०॥

प्रैव तेनं जायते। उदिते सूर्ये प्रातर्जुहोति। प्रत्येव तेनं तिष्ठति। प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेति। स एतदिग्निहोत्रं मिथुनमंपश्यत्। तदुदिते सूर्येऽजुहोत्। यजुंषाऽन्यत्। तूष्णीम्न्यत्। ततो वै स प्राजायत। यस्यैवं विदुष उदिते सूर्येऽग्निहोत्रं जुह्वंति॥११॥

प्रैव जांयते। अथो यथा दिवाँ प्रजानन्नेतिं। ताहगेव तत्। अथो खल्वांहुः। यस्य वे द्वौ पुण्यौ गृहे वसंतः। यस्तयोर्न्यश् राधयंत्यन्यं न। उभौ वाव स तावृंच्छ्तीतिं। अग्निं वावा-ऽऽदित्यः सायं प्र विंशति। तस्मांद्ग्निर्दूरान्नक्तंं दहशे। उभे हि तेजंसी सम्पद्यंते॥१२॥ उद्यन्तं वावाऽऽदित्यम्ग्निरन् स्मारोहित। तस्मौद्धूम एवाग्नेर्दिवां दद्दशे। यद्ग्नयें सायं जुंहुयात्। आ सूर्याय वृश्चेत। यथ्सूर्याय प्रातर्जुंहुयात्। आऽग्नयें वृश्चेत। देवतांभ्यः स्मदं दथ्यात्। अग्निज्योंतिज्योंतिः सूर्यः स्वाहेत्येव सायश् होत्व्यम्। सूर्यो ज्योतिज्योंतिरिग्नः स्वाहेतिं प्रातः। तथोभाभ्यारं सायश् हूंयते॥१३॥

उभाभ्यां प्रातः। न देवतांभ्यः समदं दधाति। अग्निज्यांति-रित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। प्रजा ज्योतिरित्यांह। प्रजा एवास्मै प्र जंनयति। सूर्यो ज्योतिरित्यांह। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतो दधाति। ज्योतिरिग्निः स्वाहेत्यांह। प्रजा एव प्रजांता अस्यां प्रतिष्ठापयति॥१४॥

तूष्णीमुत्तंरामाहंतिं जुहोति। मिथुन्त्वाय् प्रजाँत्यै। यदुदिते सूर्ये प्रांतर्जुहुयात्। यथाऽतिंथये प्रद्रंताय शून्यायांवस्थायांहार्य हरंन्ति। ताहगेव तत्। काऽऽहु तत्स्तद्भवतीत्यांहुः। यथ्म न वेदं। यस्मै तद्धर्न्तीतिं। तस्माद्यदौष्मं जुहोतिं। तदेव संम्प्रति। अथो यथा प्रार्थमौष्मं पंरिवेवेष्टि। ताहगेव तत्॥१५॥

अमृष्ट् विचिकिथ्संति जुह्नंत्युजामंसुजताग्निहोत्र ${}^{\circ}$  स्यांय प्रातर्जुहोति जुह्नंति सम्पर्धेते हूयते स्थापयित सम्प्रति द्वे = =

रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। पत्नी स्थाली। यन्मध्ये-ऽग्नेरिधेश्रयेत्। रुद्राय पत्नीमपि दध्यात्। प्रमायुंका स्यात्। उदीचोऽङ्गांरान्निरूह्याधि श्रयति। पत्नियै गोपीथायं। व्यन्तान्करोति। तथा पत्यप्रमायुका भवति॥१६॥

घुर्मो वा एषोऽशाँन्तः। अहंरहः प्र वृंज्यते। यदंग्निहोत्रम्। प्रतिषिश्चेत्पशुकांमस्य। शान्तिमेव हि पंश्व्यम्। न प्रतिं-षिश्चेद्वस्ववंसकांमस्य। सिमंद्धमिव हि ब्रह्मवर्च्सम्। अथो खलुं। प्रतिषिच्यंमेव। यत्प्रतिषिश्चिति॥१७॥

तत्पंशव्यम्। यञ्जुहोति। तद्वंह्मवर्चसि। उभयंमेवाकः। प्रच्युंतं वा एतद्स्माल्लोकात्। अगंतं देवलोकम्। यच्छृतः ह्विरनंभिघारितम्। अभि द्यांतयति। अभ्येवैनंद्घारयति। अथों देवत्रैवैनंद्गमयति॥१८॥

पर्यम्नि करोति। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पर्यम्नि करोति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। यत्प्राचीनंमुद्धासयेंत्। यज्ञंमान शुचाऽपंयेत्। यद्दंक्षिणा। पितृदेवत्य ई स्यात्। यत्प्रत्यक्॥१९॥

पत्नी १ शुचा ऽपंयेत्। उदीचीन् मुद्वां सयित। एषा वै देवमनुष्याणा १ शान्ता दिक्। तामे वैन्दनूद्वां सयित शान्त्यै। वर्त्म करोति। युज्ञस्य सन्तंत्यै। निष्टंपित। उपैव तथ्स्तृंणाित। चतुरुन्नंयित। चतुंष्यादः पृशवंः॥२०॥

पृश्नेवावं रुन्धे। सर्वांन्पूर्णानुन्नंयति। सर्वे हि पुण्यां राद्धाः। अनूच उन्नंयति। प्रजायां अनूचीनुत्वायं। अनूच्येवास्यं प्रजा- ऽर्धुका भवति। सम्मृंशित् व्यावृत्त्यै। नाहौंष्युन्नुपं सादयेत्। यदहौंष्यन्नुपसादयैत्। यथाऽन्यस्मां उपनिधायं॥२१॥

अन्यस्मैं प्रयच्छंति। ताहगेव तत्। आऽस्मैं वृश्च्येत। यदेव गार्हंपत्येऽधि श्रयंति। तेन गार्हंपत्यं प्रीणाति। अग्निरंबिभेत्। आहुंतयो माऽत्येष्यन्तीतिं। स पुताश् समिधंमपश्यत्। तामाऽधंत्त। ततो वा अग्नावाहुंतयो-ऽध्रियन्त॥२२॥

यदेन र समयंच्छत्। तथ्सिमिधंः सिम्त्वम्। सिमिधमा दंधाति। समेवैनं यच्छति। आहुंतीनां धृत्यैं। अथों अग्निहोत्रमेवेध्मवंत्करोति। आहुंतीनां प्रतिष्ठित्यै। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदेका र सिमिधंमाधाय द्वे आहुंती जुहोतिं। अथ कस्या र सिमिधं द्वितीयामाहुंतिं जुहोतीतिं॥२३॥

यद्वे स्मिधांवा द्ध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एका र स्मिधंमाधायं। यजुंषाऽन्यामाहुंतिं जुहोति। उभे एव स्मिद्धंती आहुंती जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। आदींप्तायां जुहोति। सिमंद्धमिव हि ब्रंह्मवर्च्सम्। अथो यथाऽतिंथिं ज्योतिंष्कृत्वा परि वेवेष्टि। तादगेव तत्। चतुरुन्नयित। द्विर्जुहोति। तस्मौद्विपाचतुंष्पादमित्त। अथौ द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठापयित॥२४॥

भूवति प्रतिष्विति गमयित प्रत्यवपुगर्व उपनिपायांप्रियनति वचलारि व॥——[3]

उत्तरावंतीं वै देवा आहुंतिमजुंहवुः। अवांचीमसुंराः। ततों

देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यं कामयेत् वसीयान्थस्यादिति। कनीयस्तस्य पूर्वर्ष हुत्वा। उत्तरं भूयो जुहुयात्। एषा वा उत्तरावृत्याहुंतिः। तान्देवा अजुहवुः। ततुस्तेऽभवन्॥२५॥

यस्यैवं जुह्वंति। भवंत्येव। यं कामयंत् पापीयान्थस्यादितिं। भूयस्तस्य पूर्व हुत्वा। उत्तरं कनीयो जुहुयात्। एषा वा अवाच्याहुंतिः। तामसुंरा अजुहवुः। तत्स्ते परांऽभवन्। यस्यैवं जुह्वंति। परैव भवति॥२६॥

हुत्वोपं सादयत्यजांमित्वाय। अथो व्यावृत्त्यै। गार्हंपत्यं प्रतींक्षते। अनंनुध्यायिनमेवेनं करोति। अग्निहोत्रस्य वे स्थाणुरंस्ति। तं य ऋच्छेत्। यज्ञस्थाणुमृंच्छेत्। एष वा अग्निहोत्रस्यं स्थाणुः। यत्पूर्वाऽऽहुंतिः। तां यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥२७॥

यज्ञस्थाणुमृंच्छेत्। अतिहाय पूर्वामाहुंतिं जुहोति। यज्ञस्थाणुमेव परिं वृणक्ति। अथो भ्रातृंव्यमेवास्वाऽतिं क्रामति। अवाचीन सायमुपंमार्षि। रेतं एव तद्दंधाति। ऊर्ध्वं प्रातः। प्र जनयत्येव तत्। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। चतुरुन्नंयति॥२८॥

द्विर्जुहोति। अथ के द्वे आहुंती भवत इति। अग्नौ वैश्वान्र इति ब्रूयात्। एष वा अग्निवैश्वान्रः। यद्वाँह्मणः। हुत्वा द्विः प्राश्ञांति। अग्नावेव वैश्वान्रे द्वे आहुंती जुहोति। द्विर्जुहोतिं। द्विर्निमाँष्टिं। द्विः प्राश्ञांति॥२९॥

षद्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। किं देवत्यंमग्निहोत्रमितिं। वैश्वदेवमितिं ब्र्यात्। यद्यज्ञंषा जुहोतिं। तदैन्द्राग्नम्। यत्तूष्णीम्। तत्प्रांजापत्यम्॥३०॥

यन्निमार्ष्टि। तदोषंधीनाम्। यद्वितीयम्। तत्पंतृणाम्। यत्प्राश्ञांति। तद्गर्भांणाम्। तस्माद्गर्भा अनंश्ञन्तो वर्धन्ते। यदाचामंति। तन्मंनुष्यांणाम्। उदंङ्घर्यावृत्याचांमति॥३१॥

आत्मनों गोपीथायं। निर्णनिक्ति शुद्धौं। निष्टंपति स्वगाकृत्यै। उद्दिशति। सप्तर्षीनेव प्रींणाति। दक्षिणा पूर्यावर्तते। स्वमेव वीर्यमन् पूर्यावर्तते। तस्माद्दक्षिणोऽर्ध आत्मनों वीर्यावत्तरः। अथों आदित्यस्यैवावृत्मन् पूर्यावर्तते। हुत्वोप समिन्धे॥३२॥

ब्रह्मवर्चसस्य सिमंद्धे। न ब्र्हिरनु प्र हंरेत्। असईस्थितो वा एष यज्ञः। यदिग्निहोत्रम्। यदेनु प्रहरेत्। यज्ञं विच्छिन्द्यात्। तस्मान्नानुं प्रहृत्यम्। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अपो नि नंयति। अव्भृथस्यैव रूपमंकः॥३३॥

अभुवु-भुवृति जुहुयात्रंयति मार्ष्ट् द्विः प्राश्ञांति प्राजापृत्यमाचांमती-थेऽकः॥**————** [४]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। अग्निहोत्रप्रांयणा यज्ञाः। किं प्रांयणमग्निहोत्रमितिं। वथ्सो वा अग्निहोत्रस्य प्रायंणम्। अग्निहोत्रं यज्ञानांम्। तस्यं पृथिवी सर्दः। अन्तरिक्षमाग्नींद्धम्। द्यौर्हं विर्धानम्। दिव्या आपः प्रोक्षंणयः। ओषंधयो ब्रहिः॥३४॥

वन्स्पतंय इध्मः। दिशः परिधयः। आदित्यो यूपः। यजंमानः पृशः। स्मुद्रोऽवभृथः। संवथ्सरः स्वंगाकारः। तस्मादाहिताग्रेः सर्वमेव बहिष्यं दत्तं भेवति। यथ्सायं जुहोतिं। रात्रिमेव तेनं दक्षिण्यां कुरुते। यत्प्रातः॥३५॥

अहंरेव तेनं दक्षिण्यं कुरुते। यत्ततो ददांति। सा दक्षिणा। यावन्तो वै देवा अहंतमादन्। ते परांऽभवन्। त एतदंग्निहोत्र श् सर्वस्येव समवदायां जुहवुः। तस्मांदाहुः। अग्निहोत्रं वै देवा गृहाणां निष्कृतिमपश्यन्निति। यथ्सायं जुहोति। रात्रिया एव तद्धुताद्यांय॥३६॥

यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्प्रातः। अहं एव तद्धुताद्यांय। यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्ततोऽश्ञातिं। हुतमेव तत्। द्वयोः पर्यसा जुहुयात्पृशुकांमस्य। एतद्वा अग्निहोत्रं मिथुनम्। य एवं वेदं। प्र प्रजयां पृशुभिर्मिथुनैर्जायते॥३७॥

इमामेव पूर्वया दुहे। अमूमुत्तंरया। अधिश्रित्योत्तंरमा नंयति। योनांवेव तद्रेतः सिश्चति प्रजनंने। आज्येन जुहुयात्तेजंस्कामस्य। तेजो वा आज्यम्। तेज्रस्येव भंवति। पर्यसा पृशुकांमस्य। एतद्वे पंशूनाः रूपम्। रूपेणैवास्में पृशूनवं रुन्थे॥३८॥ पृशुमानेव भेवति। द्ध्रेन्द्रियकांमस्य। इन्द्रियं वै दिधे। इन्द्रियाव्येव भेवति। यवाग्वां ग्रामंकामस्योषधा वै मेनुष्याः। भागधेयेनैवास्में सजातानवं रुन्धे। ग्राम्येव भेवति। अयंज्ञो वा एषः। योऽसामा॥३९॥

चतुरुन्नंयति। चतुंरक्षर रथन्तरम्। रथन्तरस्यैष वर्णः। उपरीव हरति। अन्तरिक्षं वामदेव्यम्। वामदेव्यस्यैष वर्णः। द्विर्जुहोति। द्येक्षरं बृहत्। बृह्त एष वर्णः। अग्निहोत्रमेव तथ्सामन्वत्करोति॥४०॥

यो वा अंग्निहोत्रस्योपसदो वेदं। उपैनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्ं। उन्नीयोपं सादयति। पृथिवीमेव प्रीणाति। होष्यन्नुपंसादयति। अन्तरिक्षमेव प्रीणाति। हुत्वोपं सादयति। दिवंमेव प्रीणाति। एता वा अंग्निहोत्रस्योपसदं:॥४१॥

य पृवं वेदं। उपैनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्ं। यो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितं प्रत्याश्रांवित् होतांरं ब्रह्माणं वषद्कारं वेदं। तस्य त्वेव हुतम्। प्राणो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितम्। अपानः प्रत्याश्रांवितम्। मनो होतां। चक्षुंर्ब्रह्मा। निमेषो वंषद्कारः॥४२॥

य एवं वेदं। तस्य त्वेव हुतम्। सायं यावांनश्च वै देवाः प्रांतुर्यावांणश्चाग्निहोत्रिणों गृहमार्गच्छन्ति। तान् यन्न

तुर्पयेत। प्रजयांऽस्य पृशुभिर्वि तिष्ठेरन्। यत्तुर्पयेत्। तृप्ता एंनं प्रजयां पृशुभिस्तर्पयेयुः। सृजूर्देवैः सायं याविभिरिति साय सम्मृंशति। सृजूर्देवैः प्रातर्याविभिरिति प्रातः। ये चैव देवाः सायं यावीनो ये चे प्रातर्यावीणः॥४३॥

तानेवोभयाईस्तर्पयति। त एंनं तृप्ताः प्रजयां पृशुभिस्तर्प-यन्ति। अरुणो हं स्माहौपंवेशिः। अग्निहोत्र एवाहर सायं प्रांत्वं भ्रातृंव्येभ्यः प्र हंरामि। तस्मान्मत्पापीयारसो भ्रातृंव्या इति। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। समिथ्संप्तमी। सप्तपंदा शक्वंरी। शाक्वरो वर्ज्यः। अग्निहोत्र एव तथ्सायं प्रांत्वंज्रं यजंमानो भ्रातृंव्याय प्र हंरति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति॥४४॥

बुर्हिः प्रातरहुताद्यांय जायते रुन्धेऽसामा कंरोत्येता वा अग्निहोत्रस्योपसदो वषद्भारश्चं प्रात्यावाणो वज्रस्रीणि च॥  $oldsymbol{\left(\zeta\right)}$ 

प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मन्वन्मं जायेतेति। सोंऽजुहोत्। तस्यांऽऽत्मन्वदंजायत। अग्निर्वायुरांदित्यः। तेंंऽब्रुवन्। प्रजा-पंतिरहौषीदात्मन्वन्मं जायेतेतिं। तस्यं व्यमंजनिष्महि। जायंतात्र आत्मन्वदित् तेऽजुहवुः। प्राणानांम्गिः। तनुवैं वायुः॥४५॥

चक्षुंष आदित्यः। तेषा हुतादंजायत् गौरेव। तस्यै पर्यासे व्यायंच्छन्त। ममं हुतादंजिन् ममेतिं। ते प्रजा-पंतिं प्रश्ञमायन्। स आदित्यौऽग्निमंब्रवीत्। यत्रो नौ जयात्। तन्नौ सहासदिति। कस्यै कोऽहौंषीदितिं प्रजापंतिरब्रवीत्कस्यै क इतिं। प्राणानांमहमित्यग्निः॥४६॥ त्नुवां अहमितिं वायुः। चक्षुंषोऽहमित्यांदित्यः। य एव प्राणानामहौषीत्। तस्यं हुतादंजनीतिं। अग्नेर्हुतादंजनीतिं। तदंग्निहोत्रस्यांग्निहोत्रत्वम्। गौर्वा अग्निहोत्रम्। य एवं वेद् गौरंग्निहोत्रमितिं। प्राणापानाभ्यांमेवाग्निः समंध्यति। अव्यर्धुकः प्राणापानाभ्यां भवति॥४७॥

य पृवं वेदं। तौ वायुरंब्रवीत्। अनु मा भंजत्मिति। यदेव गार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयंमभ्यंद्रवान्। तेन त्वां प्रीणानित्यंब्रूताम्। तस्माद्यद्गार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयं-मर्भ्युद्ववंति। वायुमेव तेन प्रीणाति। प्रजापंतिर्देवताः सृजमानः। अग्निमेव देवतानां प्रथममंसृजत। सौंऽन्यदां-लम्भ्यंमवित्वा॥४८॥

प्रजापंतिम्भि प्रयावंतित। स मृत्योरंबिभेत्। सोंऽमुमांदित्यमात्मनो निरंमिमीत। त॰ हुत्वा परांष्ट्र्यावंतित। ततो वै स मृत्युमपांजयत्। अपं मृत्युं जंयति। य एवं वेदं। तस्माद्यस्यैवं विदुषंः। उतैकाहमुत द्यहं न जुह्वंति। हुतमेवास्यं भवति। असौ ह्यांदित्योंऽग्निहोत्रम्॥४९॥ वृत्ये व्ययुक्तिमंवत्यांव्यांवत्वा भवत्ये वा [६]

रौद्रं गिवं। वायव्यंमुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्। सौम्यं दुग्धम्। वारुणमिधं श्रितम्। वैश्वदेवा भिन्दवंः। पौष्णमुदंन्तम्। सारुस्वतं विष्यन्दंमानम्। मैत्र॰ शरंः। धातुरुद्वांसितम्। बृह्स्यतेरुत्रीतम्। सवितुः प्र क्रौन्तम्। द्यावापृथिव्य ६ हियमांणम्। ऐन्द्राग्नमुपंसन्नम्। अग्नेः पूर्वा-ऽऽहुंतिः। प्रजापंतेरुत्तंरा। ऐन्द्र ९ हुतम्॥५०॥

दक्षिणत उपं सृजित। पितृलोकमेव तेनं जयित। प्राचीमा वंतियति। देवलोकमेव तेनं जयित। उदींचीमावृत्यं दोग्धि। मृनुष्यलोकमेव तेनं जयित। पूर्वौ दृह्याङ्येष्ठस्यं ज्यैष्ठिनेयस्यं। यो वां गृतश्रीः स्यात्। अपंरौ दृह्यात्किनिष्ठस्यं कानिष्ठिनेयस्यं। यो वा बुभूषेत्॥५१॥

न सं मृंशति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। वायव्यं वा पृतदुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्। मैत्रं दुग्धम्। अर्यम्ण उद्घास्यमानम्। त्वाष्ट्रमुंत्रीयमानम्। बृह्स्पते्रत्नीतम्। सवितः प्रक्रौन्तम्। द्यावापृथिव्यः हियमाणम्॥५२॥

प्रेन्द्राग्नम्पं सादितम्। सर्वाभ्यो वा एष देवताभ्यो जुहोति। यौऽग्निहोत्रं जुहोति। यथा खलु वै धेनुं तीर्थे तर्पयंति। एवमंग्निहोत्री यजंमानं तर्पयति। तृप्यंति प्रजयां पृश्भिः। प्र सुंवर्गं लोकं जांनाति। पश्यंति पुत्रम्। पश्यंति पौत्रम्। प्र प्रजयां पृश्भिर्मिथुनैर्जायते। यस्यैवं विदुषौऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५३॥

बुभूंषिद्ध्यमाणञ्जायते द्वे चं॥\_\_\_\_\_\_[८]

त्रयो वै प्रैयमेधा आंसन्। तेषां त्रिरेकौंऽग्निहोत्रमंजुहोत्। द्विरेकः। स्कृदेकः। तेषां यस्त्रिरजुंहोत्। स ऋचाऽजुंहोत्। यो द्विः। स यर्जुषा। यः सुकृत्। स तूष्णीम्॥५४॥

यश्च यजुषाऽजुंहोद्यश्चं तूष्णीम्। तावुभावाँर्भुताम्। तस्माद्यजुषाऽऽहुंतिः पूर्वा होत्व्याँ। तूष्णीमृत्तंरा। उभे एवधी अवं रुन्थे। अग्निज्यींतिज्यींतिरिग्नः स्वाहेतिं सायं जुंहोति। रेतं एव तद्दंधाति। सूर्यो ज्योतिज्यींतिः सूर्यः स्वाहेतिं प्रातः। रेतं एव हितं प्र जनयित। रेतो वा एतस्यं हितं न प्र जांयते॥५५॥

यस्याँग्निहोत्रमहुंत्र सूर्योऽभ्युंदेतिं। यद्यन्ते स्यात्। उन्नीय् प्राङुदाद्रंवेत्। स उपसाद्यातिर्मितोरासीत। स यदा ताम्येँत्। अथ भूः स्वाहेतिं जुहुयात्। प्रजापंतिर्वे भूतः। तमेवोपांसरत्। स एवेनं तत् उन्नयति। नार्तिमार्च्छति यजमानः॥५६॥ वृष्णं जांयते यजमानः॥५६॥

यद्ग्रिमुद्धरंति। वसंवस्तर्द्ध्याः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। वसुंष्वेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। निहितो धूपायञ्छेते। रुद्रास्तर्द्धाग्नः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। रुद्रेष्वेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। प्रथममिध्ममर्चिरा लेभते। आदित्यास्तर्द्धाग्नः॥५७॥

तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। आदित्येष्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भविति। सर्व एव संवृंश इध्म आदींग्नो भवित। विश्वं देवास्तर्द्याग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। विश्वंष्वेवास्यं

देवेष्वंग्निहोत्र हुतं भंवति। नित्रामुर्चिरुपावैति लोहिनीकेव भवति। इन्द्रस्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। इन्द्रं पुवास्यांग्निहोत्र हुतं भंवति॥५८॥

अङ्गारा भवन्ति। तेभ्योऽङ्गारेभ्योऽर्चिरुदेति। प्रजा-पंतिस्तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। प्रजापंतावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। शरोऽङ्गारा अध्यूहन्ते। ब्रह्म तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। ब्रह्मंन्नेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। वसुंषु रुद्रेष्वांदित्येषु विश्वंषु देवेषुं। इन्द्रें प्रजापंतौ ब्रह्मन्। अपंरिवर्गमेवास्यैतासुं देवतांसु हुतं भवति। यस्यैवं विदुषोंऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५९॥

आृदित्यास्तर्ध्यग्निरिन्द्रं पृवास्याँग्निहोत्र२ हुतं भंवित देवेषुं चृत्वारिं च (यद्ग्नित्रिहिंतः प्रथम२ सर्वं पृव निंतुरामङ्गायाः शरोऽङ्गाया ब्रह्म वसुंष्वष्टौ॥॥————[ ${f y} \circ$ ]

ऋतं त्वां सृत्येन परिषिश्चामीतिं सायं परिषिश्चति। सृत्यं त्वर्तेन परिषिश्चामीतिं प्रातः। अग्निर्वा ऋतम्। असावांदित्यः सृत्यम्। अग्निमेव तदांदित्येनं सायं परिषिश्चति। अग्निनां-ऽऽदित्यं प्रातः सः। यावंदहोरात्रे भवंतः। तावंदस्य लोकस्यं। नार्तिनं रिष्टिः। नान्तो न पर्यन्तौऽस्ति। यस्यैवं विदुषौऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उंचैनदेवं वेदं॥६०॥

अस्ति <u>दे</u> चं॥———[१९]

अङ्गिरसो य उंचैनदेवं वेदं॥

अङ्गिरसः प्रजापंतिर्ग्निश्च रुद्र उंत्तरावंतीं ब्रह्मवादिनौंऽग्निहोत्रप्रांयणा युज्ञाः प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मुन्बद्रौद्रङ्गविं दक्षिणतस्त्रयो वै यद्ग्निमृतं त्वां सुत्येनैकांदश॥११॥ अङ्गिरसः प्रैव तेनं पश्नेव यन्निमार्ष्टि यो वा अग्निहोत्रस्योपसदों दक्षिणतः पष्टिः॥६०॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंज्येतिं। स पृतं दर्शहोतारम-पश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बेऽजुहोत्। ततो वै स प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टा अपाँक्रामन्। ता ग्रहेणागृह्णात्। तद्गहंस्य ग्रह्त्वम्। यः कामयेत् प्रजायेयेतिं। स दर्शहोतार् मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बे जुंहुयात्। प्रजापंति्वै दर्शहोता॥१॥

प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। मनंसा जुहोति। मनं इव् हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। पूर्णयां जुहोति। पूर्ण इंव् हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। न्यूंनया जुहोति। न्यूंनाद्धि प्रजा-पंतिः प्रजा असृंजत। प्रजाना ५ सृष्ट्यैं॥२॥

दुर्भस्तम्बे जुंहोति। एतस्माद्वे योनैंः प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। यस्मादेव योनैंः प्रजापंतिः प्रजा असृंजत। तस्मादेव योनेः प्रजायते। ब्राह्मणो दंक्षिणत उपास्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येव प्रजायते। ग्रहों भवति। प्रजानां सृष्टानां धृत्यैं। यं ब्राह्मणं विद्यां विद्वाः सं यशो नर्च्छत्॥३॥

सोऽरंण्यं प्रेत्यं। दुर्भस्तम्बमुद्गर्थ्यं। ब्राह्मणं देक्षिणतो निषाद्यं। चतुंर्होतृन्व्याचेक्षीत। पृतद्वै देवानां पर्मं गृह्यं ब्रह्मं। यचतुंर्होतारः। तदेव प्रंकाशं गंमयति। तदेनं प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयति। दुर्भस्तम्बमुद्गथ्य व्याचेष्टे॥४॥ अग्निवान् वै दंर्भस्तम्बः। अग्निवत्येव व्याचंष्टे। ब्राह्मणो दंक्षिणत उपाँस्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येवैनं यशं ऋच्छति। ईश्वरन्तं यशोर्तोरित्यांहुः। यस्यान्ते व्याचष्ट् इतिं। वर्स्तस्मै देयः। यदेवैनं तत्रोपनमंति। तदेवावं रुन्थे॥५॥

अग्निमादधांनो दर्शहोत्राऽरणिमवं दध्यात्। प्रजातमेवैनमा धंत्ते। तेनैवोद्गुत्यांग्निहोत्रं जुंहुयात्। प्रजातमेवैनंज्ञुहोति। ह्विर्निर्वपस्यं दर्शहोतारं व्याचंक्षीत। प्रजातमेवैनं निर्वपति। सामिधेनीरंनुवक्ष्यं दर्शहोतारं व्याचंक्षीत। सामिधेनीरेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। अथों युज्ञो वै दर्शहोता। युज्ञमेव तंनुते॥६॥

अभिचरं दर्शहोतारं जुहुयात्। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिदंशमी। सप्राणमेवेनंमभि चंरति। एतावद्वै पुरुषस्य स्वम्। यावंत्प्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तद्भि चंरति। स्वकृत् इरिणे जुहोति प्रदरे वाँ। एतद्वा अस्यै निर्ऋतिगृहीतम्। निर्ऋतिगृहीत एवेनं निर्ऋत्या ग्राहयित। यद्वाचः कूरम्। तेन वषंद्वरोति। वाच एवेनं कूरेण प्र वृंश्चति। ताजगार्तिमार्च्छंति॥७॥

दर्शहोता सृष्ट्यां ऋष्छेद्धाचंष्टे रुन्थ एव तंनुते निर्ऋतिगृहीतुं पश्चं च॥———[१]

प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंजेयेतिं। स एतं चतुर्होतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वे स दंर्शपूर्णमासावंसृजत। तावंस्माथ्सृष्टावपां- क्रामताम्। तौ ग्रहेणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। दुर्शपूर्णमासावालभंमानः। चतुंर्होतारं मनंसाऽनुद्रुत्यां-हवनीयं जुहुयात्। दुर्शपूर्णमासावेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते॥८॥

ग्रहों भवति। दुर्शपूर्णमासयौः सृष्टयोर्धृत्यै। सोऽकामयत चातुर्मास्यानि सृजेयेति। स एतं पश्चेहोतारमपश्यत्। तं मनसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स चांतुर्मास्यान्यं-सृजत। तान्यंस्माथ्सृष्टान्यपौकामन्। तानि ग्रहेंणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रहुत्वम्। चातुर्मास्यान्यालभंमानः॥९॥

पश्चंहोतार्ं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयें जुहुयात्। चातुर्मास्यान्येव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। ग्रहों भवति। चातुर्मास्यानार्ं सृष्टानां धृत्यैं। सोंऽकामयत पशुबन्धरं सृंजेयेतिं। स एतर षड्ढांतारमपश्यत्। तं मनंसा-ऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स पंशुबन्धमंसृजत। सौस्माथ्सृष्टोऽपांकामत्। तं ग्रहेणागृह्णात्॥१०॥

तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। पृशुब्न्धेनं युक्ष्यमाणः। षङ्कोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीये जुहुयात्। पृशुब्न्धमेव सृष्ट्वा-ऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। पृशुब्न्धस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। सोऽकामयत सौम्यमंध्वर सृज्वेयेतिं। स एत स्महोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो व स सौम्यमंध्वरमंसृजत॥११॥

सों ऽस्माथ्सृष्टोऽपां कामत्। तं ग्रहेंणागृह्णात्। तद्ग्रहेंस्य ग्रह्त्वम्। दीक्षिष्यमांणः। सप्तहोंतारं मनंसाऽनुद्रुत्यां-ऽऽहवनीयं जुहुयात्। सौम्यमेवाध्वर सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। सौम्यस्याध्वरस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। देवेभ्यो वै युज्ञो न प्राभंवत्। तमेतावुच्छः समंभरन्॥१२॥

यथ्संम्भाराः। ततो वै तेभ्यों यज्ञः प्रामंवत्। यथ्संम्भारा भवंन्ति। यज्ञस्य प्रभूँत्ये। आतिथ्यमासाद्य व्याचंष्टे। यज्ञमुखं वा आतिथ्यम्। मुख्त एव यज्ञः सम्भृत्य प्र तंनते। अयज्ञो वा एषः। योऽप्रक्षोकः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्नीर्व्याचंष्टे। यज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजनंनाय। उपसथ्सु व्याचंष्टे। एतद्वे पत्नीनामायतंनम्। स्व एवैनां आयत्नेऽवंकल्पयति॥१३॥ वक्षु आल्पंमानोऽग्रहादस्जनाभरआयेख्यदं॥——[२]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेति। स तपोऽतप्यत। स त्रिवृत्र स्तोमंमसृजत। तं पश्चद्शः स्तोमो मध्यत उदंतृणत्। तौ पूर्वपक्षश्चापरपक्षश्चाभवताम्। पूर्वपक्षं देवा अन्वसृंज्यन्त। अपरपक्षमन्वसृंगः। ततो देवा अभवन्। पराऽसुंगः। यं कामयेत वसीयान्थस्यादिति॥१४॥

तं पूर्वपक्षे यांजयेत्। वसीयानेव भेवति। यं कामयेत् पापीयान्थस्यादिति। तमंपरपक्षे यांजयेत्। पापीयानेव भेवति। तस्मौत्पूर्वपक्षोऽपरपक्षात्करुण्यंतरः। प्रजापंतिर्वे दशंहोता। चतुंर्होता पश्चंहोता। षङ्कोता सप्तहोता। ऋतवंः

### संवथ्सरः॥१५॥

प्रजाः प्शवं इमे लोकाः। य एवं प्रजापंतिं बहोर्भूया रेसं वेदं। बहोरेव भूयाँन्भवति। प्रजापंतिर्देवासुरानं सृजत। स इन्द्रमपि नासृंजत। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येतिं। सौं ऽब्रवीत्। यथाऽहं युष्मा इस्तप्साऽसृंक्षि। एविमन्द्रं जनयध्वमितिं॥१६॥

ते तपोऽतप्यन्त। त आत्मिन्निन्द्रंमपश्यन्। तमंब्रुवन्। जायस्वेतिं। सोंऽब्रवीत्। किं भांगुधेयंमुभि जंनिष्य इतिं। ऋतून्थ्यंवथ्यरम्। प्रजाः पृशून्। इमाँ ह्योकानित्यं ब्रुवन्। तं वै माऽऽहुंत्या प्र जनयतेत्यं ब्रवीत्॥१७॥

तं चतुंर्होत्रा प्राजंनयन्। यः कामर्यंत वीरो म् आजांयेतेति। स चतुंर्होतारं जुहुयात्। प्रजा-पंतिर्वे चतुंर्होता। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहेति ग्रहेण जुहोति। आऽस्यं वीरो जांयते। वीर॰ हि देवा एतयाऽऽहुंत्या प्राजंनयन्। आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकेंऽस्पर्धन्त। व्यं पूर्वे सुवर्गं लोकिमेयाम वयं पूर्व इतिं॥१८॥

त आंदित्या पृतं पश्चंहोतारमपश्यन्। तं पुरा प्रांतरनु-वाकादाग्नींध्रेऽजुहवुः। ततो वै ते पूर्वे सुवर्गं लोकमायन्। यः सुवर्गकामः स्यात्। स पश्चंहोतारं पुरा प्रांतरनुवाकादाग्नींध्रे जुहुयात्। संवथ्सरो वै पश्चंहोता। संवथ्सरः सुवर्गो लोकः। स्ंवृथ्सर एवर्तुषुं प्रतिष्ठायं। सुवृगं लोकमेति। तेंऽब्रुवृन्निङ्गरस आदित्यान्॥१९॥

क्वं स्थ। क्वं वः सुद्धो हूव्यं वंक्ष्याम् इतिं। छुन्दः स्वित्यं ब्रुवन्। गायत्रियां त्रिष्ठुभि जगत्यामितिं। तस्माच्छन्दः सु सुद्ध आदित्येभ्यः। आङ्गीर्सीः प्रजा हूव्यं वहन्ति। वहन्त्यस्मै प्रजा बिलम्। ऐनमप्रतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं। द्वादंश मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एंकवि १ शः। एतस्मिन्वा एष श्रितः। एतस्मिन्प्रतिष्ठितः। य एवमेत १ श्रितं प्रतिष्ठितं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥२०॥ स्यावितं स्वय्यो जनयप्रमितीत्यंवत्यात् पदं॥———[३]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेविति। स एतं दर्शहोतारमपश्यत्। तेनं दश्यधाऽऽत्मानं विधायं। दर्शहोत्राऽतप्यत। तस्य चित्तिः सुगासीत्। चित्तमाज्यम्। तस्यैतावंत्येव वागासीत्। एतावानं यज्ञऋतुः। स चतुंर्होतारमसृजत। सोऽनन्दत्॥२१॥

असृंक्षि वा इमिमितिं। तस्य सोमों ह्विरासींत्। स चतुंर्होत्राऽतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भूरिति व्याहंरत्। स भूमिंमसृजत। अग्निहोत्रं दंर्शपूर्णमासौ यजूर्षेषि। स द्वितीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भुव इति व्याहंरत्॥२२॥

सों ऽन्तरिक्षमसृजत। चातुर्मास्यानि सामानि। स तृतीयंमतप्यत। सों ऽताम्यत्। स सुव्रिति व्याहंरत्। स दिवंमसृजत। अग्निष्टोममुक्थ्यंमतिरात्रमृचंः। एता वै व्याहृतय इमे लोकाः। इमान्खलु वै लोकानन् प्रजाः पृशवृश्छन्दार्शसे प्राजायन्त। य एवमेताः प्रजापेतेः प्रथमा व्याहृतीः प्रजाता वेदं॥२३॥

प्र प्रजयां पृशुभिर्मिथुनैर्जायते। स पश्चंहोतारम-सृजत। स ह्विर्नाविन्दत। तस्मै सोमंस्तृनुवं प्रायंच्छत्। पृतत्ते ह्विरितिं। स पश्चंहोत्राऽतप्यत। सोऽताम्यत्। स प्रत्यङ्कंबाधत। सोऽसुंरानसृजत। तद्स्याप्रियमासीत्॥२४॥

तद्दुर्वर्ण् हरेण्यमभवत्। तद्दुर्वर्णस्य हिरेण्यस्य जन्मं। स द्वितीयंमतप्यतः। सोऽताम्यत्। स प्राङंबाधतः। स देवानं-सृजतः। तदंस्य प्रियमांसीत्। तथ्सुवर्ण् हरेण्यमभवत्। तथ्सुवर्णस्य हिरेण्यस्य जन्मं। य एव स्वर्णस्य हिरेण्यस्य जन्म वेदं॥२५॥

सुवर्ण आत्मनां भवति। दुर्वर्णों ऽस्य भ्रातृं व्यः। तस्मां थ्सुवर्ण् हिरंण्यं भार्यम्। सुवर्णं एव भंवति। ऐनं प्रियं गंच्छति नाप्रियम्। स सप्तहोतारमसृजत। स सप्तहोत्रैव सुंवर्णं लोकमैत्। त्रिणवेन स्तोमेनैभ्यो लोकभ्यो- ऽसुंरान्प्राणुंदत। त्र्यस्त्रिष्ट्रशेन प्रत्यंतिष्ठत्। एकविष्ट्रशेन रुचंमधत्त॥२६॥

सप्तदृशेन प्राजांयत। य एवं विद्वान्थ्सोमेन यजंते। सप्तहोत्रैव सुंवर्गं लोकमेति। त्रिणवेन स्तोमेनैभ्यो लोकेभ्यो भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। त्रयस्त्रिष्शेन् प्रतिं तिष्ठति। एकविष्शेन् रुचं धत्ते। स्प्तद्शेन् प्र जांयते। तस्मांध्सप्तद्शः स्तोमो न निर्हृत्यः। प्रजापंतिवैं संप्तद्शः। प्रजापंतिमेव मध्यतो धंते प्रजात्यै॥२७॥

देवा वै वर्रणमयाजयन्। स यस्यैयस्यै देवतांयै दक्षिणामनंयत्। तामंब्रीनात्। तेंंऽब्रुवन्। व्यावृत्य प्रतिंगृह्णाम। तथां नो दक्षिणा न ब्रेंष्यतीतिं। ते व्यावृत्य प्रत्यंगृह्णन्। ततो वै तान्दक्षिणा नाब्रीनात्। य एवं विद्वान्व्यावृत्य दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। नैनं दक्षिणा ब्रीनाति॥२८॥

राजाँ त्वा वर्रुणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्नये हिर्ण्यमित्यांह। आग्नेयं वै हिर्ण्यम्। स्वयेवेनंद्देवतया प्रतिगृह्णाति। सोमाय वास् इत्याह। सौम्यं वै वासः। स्वयेवेनंद्देवत्या प्रतिगृह्णाति। रुद्राय गामित्यांह। रौद्री वै गौः। स्वयेवेनां देवत्या प्रति-गृह्णाति। वर्रुणायाश्वमित्यांह॥२९॥

वारुणो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिगृह्णाति। प्रजा-पंतये पुरुषमित्यांह। प्राजापत्यो वे पुरुषः। स्वयैवैनं देवतंया प्रति गृह्णाति। मनंवे तल्पमित्यांह। मान्वो वे तल्पंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रति गृह्णाति। उत्तानायाँ क्षीर्सायान् इत्यांह। इयं वा उत्तान आँक्षीर्सः॥३०॥

अनयैवैन्त्प्रतिं गृह्णाति। वैश्वानुर्यर्चा रथं प्रतिं गृह्णाति।

वैश्वानरो वै देवतंया रथंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं गृह्णाति। तेनांमृत्त्वमंश्यामित्यांह। अमृतंमेवाऽऽत्मन्धत्ते। वयो दात्र इत्यांह। वयं पृवैनं कृत्वा। सुवर्गं लोकं गंमयति। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्र इत्यांह॥३१॥

यद्वै शिवम्। तन्मयंः। आत्मनं एवेषा परींत्तिः। क इदं कस्मां अदादित्यांह। प्रजापंतिर्वे कः। स प्रजापंतये ददाति। कामः कामायेत्यांह। कामेन् हि ददांति। कामेन प्रतिगृह्णातिं। कामों दाता कामः प्रतिग्रहीतेत्यांह॥३२॥

कामो हि दाता। कामः प्रतिग्रहीता। काम र समुद्रमाविशे-त्यांह। समुद्र इंव हि कामः। नेव हि कामस्यान्तोऽस्ति। न समुद्रस्य। कामेन त्वा प्रतिगृह्णामीत्यांह। येन कामेन प्रतिगृह्णाति। स एवैनंममुष्मिं श्लोक काम आगंच्छित। कामेतत्तं एषा ते काम दक्षिणेत्यांह। कामं एव तद्यजंमानो-ऽमुष्मिं श्लोक दक्षिणामिच्छिति। न प्रतिग्रहीतिरिं। य एवं विद्वान्दिश्वेणां प्रतिगृह्णातिं। अनृणामेवैनां प्रति गृह्णाति॥३३॥ क्ष्मित्यंहाक्षितः प्रतिगृह्णातिं। अनृणामेवैनां प्रति गृह्णाति॥३३॥

अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। दुश्मे-ऽहंन्थ्सर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंवन्ति। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। अन्नाद्यमवं रुन्थते। तिसृभिः स्तुवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्योऽन्नाद्यमवं रुन्थते। पृश्चिवतीर्भवन्ति। अन्नं वै पृश्चि॥३४॥ अन्नमेवार्व रुन्थते। मनंसा प्रस्तौति। मन्सोद्गीयति। मनंसा प्रति हरति। मनं इव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरात्यै। देवा वै सूर्पाः। तेषांमिय राज्ञी। यथ्संपराज्ञियां ऋग्भिः स्तुवन्ति। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥३५॥

चतुंरहोतृन् होता व्याचेष्टे। स्तुतमनुंशश्सित् शान्त्यैं। अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। एतत्खलु वै देवानां पर्मं गृह्यं ब्रह्मं। यचतुंरहोतारः। दश्मेऽह्ध्श्चतुंर्होतृन्व्याचेष्टे। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। प्रमं देवानां गृह्यं ब्रह्मावं रुन्थे। तदेव प्रंकाशं गंमयति॥३६॥

तदेनं प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयति। वाचं यच्छति। यज्ञस्य धृत्यै। यज्ञमानदेवत्यं वा अहं। भ्रातृव्यदेवत्यां रात्रिः। अहा रात्रिं ध्यायेत्। भ्रातृंव्यस्यैव तल्लोकं वृंङ्के। यद्दिवा वाचं विसृजेत्। अह्भ्रातृंव्यायोच्छि १षेत्। यन्नक्तं विसृजेत्। रात्रिं भ्रातृंव्यायोच्छि १षेत्। अधिवृक्षसूर्ये वाचं विसृजिति। पृतावंन्तमेवास्मं लोकमुच्छि १षति। यावंदादित्यौं-ऽस्तमेतिं॥३७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टाः समंक्षिष्यन्। ता रूपेणानुप्राविंशत्। तस्मांदाहुः। रूपं वै प्रजापंतिरितिं। ता नाम्नाऽनु प्राविंशत्। तस्मादाहुः। नाम् वै प्रजापंतिरितिं। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्ध्वयेते॥३८॥

मित्रमेव भंवतः। प्रजापंतिर्देवासुरानंसृजत। स इन्द्रमपि नासृंजत। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येतिं। स आत्मित्रन्द्रंमपश्यत्। तमंसृजत। तं त्रिष्टुग्वीर्यं भूत्वाऽनु प्राविंशत्। तस्य वर्ज्ञः पश्चद्शो हस्त आपंद्यत। तेनोदय्यासुंरानभ्यंभवत्॥३९॥

य एवं वेदं। अभि भ्रातृंव्यान्भवति। ते देवा असुंरैर्विजित्यं। सुव्गं लोकमायन्। तेंऽमुष्मिं लोक व्यंक्षध्यन्। तेंऽब्रुवन्। अमृतंः प्रदानं वा उपंजिजीविमेति। ते सप्तहोंतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीर्सं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्पयेति॥४०॥

तस्य वा इयं क्रृप्तिः। यदिदं किं चं। य एवं वेदं। कल्पंतेऽस्मै। स वा अयं मंनुष्येषु यज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं स्द्र्यो देवेभ्यो हृव्यं वंहति। य एवं वेदं। उपैनं यज्ञो नंमित। सोऽमन्यत। अभि वा इमेंऽस्माल्लोकादमुं लोकं किमिष्यन्त इतिं। स वार्चस्पते हृदिति व्याहंरत्। तस्मौत्पुत्रो हृदंयम्। तस्मौद्स्माल्लोकादमुं लोकं नाभि कामयन्ते। पुत्रो हि हृदंयम्॥४१॥

देवा वै चतुंर्होतृभिर्य्ज्ञमंतन्वत। ते वि पाप्मना

भ्रातृं व्येणार्जयन्त। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। य एवं विद्वाः श्चतुं रहोतृभिर्यु ज्ञं तंनुते। वि पाप्मना भ्रातृं व्येण जयते। अभि सुंवर्गं लोकं ज्यति। षड्ढों त्रा प्रायणीयमा सांदयित। अमुष्मे वे लोकाय षड्ढोंता। घ्रन्ति खलु वा एतथ्सोमम्। यदंभिषुण्वन्ति॥४२॥

ऋजुधेवैनंमुमुं लोकं गंमयित। चतुंर्होत्राऽऽतिथ्यम्। यशो वे चतुंर्होता। यशं एवाऽऽत्मन्धंत्ते। पश्चंहोत्रा पशुमुपंसादयित। सुव्गर्यो वे पश्चंहोता। यजंमानः पृशुः। यजंमानमेव सुंवृगं लोकं गंमयित। ग्रहानगृहीत्वा सप्तहोतारं जुहोति। इन्द्रियं वे सप्तहोता॥४३॥

ड्रन्द्रियमेवाऽऽत्मन्धंत्ते। यो वै चतुंर्होतॄननुसव्नं तुर्पयंति। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैन॰ सोमपीथो नमिति। बहिष्प्वमाने दशंहोतारं व्याचंक्षीत। माध्यं दिने पवमाने चतुंर्होतारम्। आर्भवे पवमाने पश्चंहोतारम्। पितृयज्ञे षङ्कोतारम्। यज्ञायज्ञियंस्य स्तोत्रे सप्तहोतारम्। अनुस्वनमेवैना ईस्तर्पयति॥४४॥

तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैन सोमपीथो नमित। देवा वै चतुंरहोतृभिः स्त्रमांसत। ऋद्धिपरिमितं यशंस्कामाः। तेऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषान्नस्तथ्सहास्दितिं। सोमश्चतुंरहोत्रा। अग्निः पश्चंहोत्रा।

# धाता षड्ढों त्रा॥४५॥

इन्द्रंः सप्तहौत्रा। प्रजापंतिर्दर्शहोत्रा। तेषा् सोम् सोम् राजांनं यशं आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापांकामत्। तेनं प्रलायंमचरत्। तं देवाः प्रेषेः प्रेषंमैच्छन्। तत्प्रेषाणां प्रेषत्वम्। निविद्धिन्यंवेदयन्। तन्निविद्यांन्निवित्त्वम्॥४६॥

आप्रीभिराप्नुवन्। तदाप्रीणांमाप्रित्वम्। तमंघ्नन्। तस्य यशो व्यंगृह्णतः। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रहृत्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृंहीताः। तेंऽब्रुवन्। यो वै नः श्रेष्ठो-ऽभूत्॥४७॥

तमंबिधष्म। पुनिरिम र सुंवामहा इतिं। तं छन्दोभिरसुवन्त। तच्छन्दंसां छन्द्स्त्वम्। साम्ना समानयन्। तथ्साम्नेः सामृत्वम्। उक्थैरुदंस्थापयन्। तदुक्थानांमुक्थृत्वम्। य एवं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥४८॥

सर्वमायुरिति। सोमो वै यशः। य एवं विद्वान्थ्सोमंमागच्छंति। यशं एवैनंमृच्छति। तस्मादाहुः। यश्चैवं वेद यश्च न। तावुभौ सोम्मागंच्छतः। सोमो हि यशः। तं त्वाऽव यशं ऋच्छ्तीत्यांहुः। यः सोमे सोमं प्राहेतिं। तस्माथ्सोमे सोमः प्रोच्यः। यशं एवैनंमृच्छति॥४९॥

अभिष्णवित्तं स्महांना तर्पवित पश्चेंना विवित्त्वम्भैनिष्ठित ॥६० हे चं॥———[८]

इदं वा अग्रे नैव किं च नाऽऽसींत्। न द्यौरांसीत्। न पृंथिवी। नान्तरिक्षम्। तदसंदेव सन्मनोंऽकुरुत स्यामितिं। तदंतप्यत। तस्मौत्तेपानाद्धूमोऽजायत। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपानादुग्निरंजायत। तद्भूयोऽतप्यत॥५०॥

तस्मौत्तेपानाञ्चोतिरजायत। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपाना-द्विरंजायत। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपानान्मरीचयो-ऽजायन्त। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपानादुंदारा अंजायन्त। तद्भूयोऽतप्यत। तद्भूमिव समहन्यत। तद्वस्तिमीभनत्॥५१॥

स संमुद्रोऽभवत्। तस्माँथ्समुद्रस्य न पिंबन्ति। प्रजनंनमिव हि मन्यंन्ते। तस्माँत्पृशोर्जायंमानादापंः पुरस्ताँद्यन्ति। तद्दशंहोताऽन्वंसृज्यत। प्रजापंतिर्वे दशंहोता। य एवं तपंसो वीर्यं विद्वाङ्स्तप्यंते। भवंत्येव। तद्वा इदमापंः सिल्लमांसीत्। सोंऽरोदीत्प्रजापंतिः॥५२॥

स कस्मां अज्ञि। यद्यस्या अप्रंतिष्ठाया इतिं। यद्फ्स्वंवापंद्यत। सा पृंथिव्यंभवत्। यद्यमृष्ट। तद्न्तिरिक्षम-भवत्। यदूर्ध्वमुदमृष्ट। सा द्यौरंभवत्। यदरोदीत्। तद्नयो रोदस्त्वम्॥५३॥

य एवं वेदे। नास्यं गृहे रुंदन्ति। एतद्वा एषां लोकानां जन्मं। य एवमेषां लोकानां जन्म वेदे। नैषु लोकेष्वार्तिमार्च्छति। स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। स इमां प्रतिष्ठां वित्वाऽकांमयत् प्रजायेयेति। स तपोऽतप्यत। सौऽन्तर्वानभवत्। स जघनादसुंरानसृजत॥५४॥ तेभ्यो मृन्मये पात्रेऽन्नंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासीत्। तामपाहत। सा तिमस्राऽभवत्। सोऽकामयत् प्रजायेयेति। स तपोऽतप्यत। सोन्तर्वानभवत्। स प्रजननादेव प्रजा अं-सृजत। तस्मादिमा भूयिष्ठाः। प्रजननाद्धोना असृजत॥५५॥

ताभ्यों दारुमये पात्रे पयोंऽदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्। तामपाहत। सा जोथ्स्नांऽभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंंऽन्तर्वानभवत्। स उंपपक्षाभ्यांमेवर्तूनं-सृजत। तेभ्यों रज्तते पात्रे घृतमंदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्॥५६॥

तामपांहत। सोंऽहोरात्रयोः सुन्धिरंभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स मुखाँद्देवानंसृजत। तेभ्यो हरिंते पात्रे सोमंमदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्। तामपांहत। तदहंरभवत्॥५७॥

पुते वै प्रजापंतेर्दोहाँः। य पुवं वेदं। दुह पुव प्रजाः। दिवा वै नोंऽभूदितिं। तद्देवानांं देवत्वम्। य पुवं देवानांं देवत्वं वेदं। देववांनेव भंवति। पुतद्वा अंहोरात्राणां जन्मं। य पुवमंहोरात्राणां जन्म वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छति॥५८॥

अस्तोऽधि मनोंऽसृज्यत। मनेः प्रजापंतिमसृजत। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तद्वा इदं मनंस्येव पंर्मं प्रतिष्ठितम्। यदिदं किं चे। तदेतच्छ्वोवस्यसन्नाम् ब्रह्मं। व्युच्छन्तींव्युच्छन्त्यस्मै वस्यंसीवस्यसी व्यंच्छति। प्रजांयते प्रजयां पृशुभिः। प्र पंरमेष्ठिनो मात्रांमाप्नोति। य एवं वेदं॥५९॥

अभिग्रंजायत् तद्भूयेंऽतप्यताभिनदरोदीत्प्रजापंतीरोदस्त्वमंस्ज्ञतासृंजत घृतमंद्हुद्याऽस्य सा तुनूरासीदहंरभवदच्छति वेदं (ह्रदं धूमोंऽग्निज्योंतिंर्चिर्मरींचय उदारास्तद्अश्य स ज्ञ्चनाथ्सा तिमस्रा स प्रजनंनाथ्सा जोथ्स्रा स उपपक्षाभ्याः सोंऽहोरात्रयौंः सुन्धिः स मुखात्तदहेंदेववांन्मृन्मयें दारुमयें रज्ञते हिरिते तेभ्यस्ताभ्यो द्वे तेऽत्रृं पर्यो घृतः सोमम्॥॥——[९]

प्रजापितिरिन्द्रंमसृजतानुजाव्रं देवानांम्। तं प्राहिणोत्। परेहि। एतेषां देवानामधिपतिरेधीति। तं देवा अंब्रुवन्। कस्त्वमिसे। व्यं वै त्वच्छ्रेयार्श्सः स्मृ इति। सोंऽब्रवीत्। कस्त्वमिसे व्यं वै त्वच्छ्रेयार्श्सः स्मृ इति मा देवा अंवोचन्निति। अथ् वा इदं तर्हि प्रजापंतौ हरं आसीत्॥६०॥

यद्स्मिन्नांदित्ये। तदेनमब्रवीत्। एतन्मे प्रयंच्छ। अथाहमेतेषां देवानामधिपतिभीविष्यामीति। कोऽह इ स्यामित्यंब्रवीत्। एतत्प्रदायेति। एतथ्स्या इत्यंब्रवीत्। यदेतद्ववीषीति। को हु वै नामं प्रजापतिः। य एवं वेदं॥६१॥

विदुरेंनं नाम्नां। तदंस्मे रुकां कृत्वा प्रत्यंमुश्चत्। ततो वा इन्द्रों देवानामधिपतिरभवत्। य एवं वेदं। अधिपतिरेव संमानानां भवति। सोऽमन्यत। किं किं वा अंकर्मितिं। स चन्द्रं म् आह्रेति प्रालंपत्। तच्चन्द्रमंसश्चन्द्रम्स्त्वम्। य एवं वेदं॥६२॥

चुन्द्रवानेव भवति। तं देवा अंब्रुवन्। सुवीर्यो मर्या

यथां गोपायत् इति। तथ्सूर्यस्य सूर्यत्वम्। य एवं वेदं। नैनं दभ्नोति। कश्च नास्मिन्वा इदिमिन्द्रियं प्रत्यंस्थादितिं। तदिन्द्रंस्थेन्द्रत्वम्। य एवं वेदं। इन्द्रियाव्येव भवति॥६३॥

अयं वा इदं पंरमों ऽभूदितिं। तत्पंरमेष्ठिनः परमेष्ठित्वम्। य एवं वेदं। प्रमामेव काष्ठां गच्छति। तं देवाः संमन्तं पर्यविशन्। वसंवः पुरस्तांत्। रुद्रा देक्षिणतः। आदित्याः पश्चात्। विश्वे देवा उत्तर्तः। अङ्गिरसः प्रत्यश्चम्॥६४॥

साध्याः पराँश्चम्। य एवं वेदं। उपैंन समानाः संविंशन्ति। स प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा आवंयत्। ता अंस्मै नातिंष्ठन्तान्नाद्यांय। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। दक्षिणतः पर्यायन्। स दक्षिणतः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः॥६५॥

पृश्चात्पर्यायन्। स पृश्चात्पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः। मुखं पृश्चात्। उत्तर्तः पर्यायन्। स उत्तर्तः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः। मुखं पृश्चात्॥६६॥

मुखंमुत्तर्तः। ऊर्ध्वा उदांयन्। स उपरिष्टान्त्र्यंवर्तयत। ताः सूर्वतोमुखो भूत्वाऽऽवंयत्। ततो वै तस्मै प्रजा अतिष्ठन्तान्नाद्यांय। य एवं विद्वान्परि च वृर्तयंते नि र्च। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा अंति। तिष्ठंन्तेऽस्मै प्रजा अन्नाद्यांय। अन्नाद एव भंवति॥६७॥

प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामितिं। स एतं दशंहोतारमपश्यत्। तं प्रायुंङ्का तस्य प्रयुंक्ति बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामितिं। स दशंहोतारं प्रयुंजीत। बहोरेव भूयाँन्भवति। सोऽकामयत वीरो म् आजांयेतेतिं। स दशंहोतुश्चतुंरहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्का ६८॥

तस्य प्रयुक्तीन्द्रोंऽजायत। यः कामयेत वीरो म् आजायेतेति। स चतुर्होतारं प्रयुक्षीत। आऽस्ये वीरो जायते। सोऽकामयत पशुमान्थ्स्यामिति। स चतुर्होतुः पश्चेहोतारं निर्रमिमीत। तं प्रायुक्का तस्य प्रयुंक्ति पशुमानंभवत्। यः कामयेत पशुमान्थ्स्यामिति। स पश्चेहोतारं प्रयुक्षीत॥६९॥

पृशुमानेव भंवति। सोंऽकामयत्तिवों मे कल्पेर्न्नितिं। स पश्चंहोतुः षड्ढोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंत्त्व्यृतवों-ऽस्मा अकल्पन्त। यः कामयेत्तिवों मे कल्पेर्न्नितिं। स षड्ढोतारं प्रयुंक्षीत। कल्पंन्तेऽस्मा ऋतवंः। सोंऽकामयत सोम्पः सोंमयाजी स्यांम्। आ में सोम्पः सोंमयाजी जांयेतेतिं॥७०॥

स षड्ढोतुः सप्तहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्का तस्य

प्रयंक्ति सोम्पः सोमयाज्यंभवत्। आऽस्यं सोम्पः सोमयाज्यंजायत। यः कामयेत सोम्पः सोमयाजी स्याम्। आ में सोम्पः सोमयाजी जांयेतेति। स सप्तहोतारं प्रयंश्वीत। सोम्प एव सोमयाजी भंवति। आऽस्यं सोम्पः सोमयाजी जायते। स वा एष पृशुः पश्चिधा प्रतिं तिष्ठति॥७१॥

पद्भिमुंखेन। ते देवाः पृशून् वित्वा। सुवर्गं लोकमांयन्। तेऽमुष्मिं लोके व्यंक्षुध्यन्। तेंऽब्रुवन्। अमुतः प्रदानं वा उपंजिजीविमेति। ते सप्तहोतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीर्सं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्प्येति। तस्य वा इयं कृप्तिः॥७२॥

यदिदं किं चं। य एवं वेदं। कल्पंतेऽस्मे। स वा अयं मंनुष्येषु यज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं सुद्धो देवेभ्यो ह्व्यं वहित। य एवं वेदं। उपैनं यज्ञो नमित। यो वे चतुंरहोतृणां निदानं वेदं। निदानंवान्भवित। अग्निहोत्रं वे दशहोतुर्निदानम्। दुर्शपूर्णमासौ चतुंरहोतुः। चातुर्मास्यानि पश्चंहोतुः। पृशुबन्धः षङ्कोतुः। सौम्यौऽध्वरः सप्तहोतुः। एतद्वै चतुंरहोतृणां निदानम्। य एवं वेदं। निदानंवान्भवित॥७३॥ अभिनीत व प्रायंक्व पश्चेहतारं प्र यंक्वित जायेति तिष्ठति क्षिति क्षिति क्षिति क्षिति क्षिति क्षिति क्षिति क्षिति विदानं स्व

प्रजापंतिरकामयत निदानंबान्भवति॥

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः स्ंजेयेतिं प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ स्ंजेयेतिं प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेति स तपः स त्रिवृतं प्रजापंतिरकामयत् दर्शहोतापुं तेनं दशुधाऽऽत्मानं देवा वै वर्रुणमन्तो वै प्रजापंतिस्ताः सृष्टाः समेश्चिष्यं देवा वै चतुरहोतृभिरिदं वा अग्रें प्रजापंतिरिन्द्रं प्रजापंतिरकामयत बहोभूयानेकांदश॥११॥

प्रजापंतिस्तद्वहंस्य प्रजापंतिरकामयतानयेवैनत्तस्य वा इयं क्रिप्तिस्तस्मांत्तेपानाज्ञ्योतिर्यदस्मिन्नांदित्ये स पह्वांतुः सप्तहांतारं त्रिसंप्ततिः॥७३॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। किं चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वमितिं। यदेवैषु चतुर्धा होतांरः। तेन् चतुंर्होतारः। तस्माचतुंर्होतार उच्यन्ते। तचतुर्रहोतृणां चतुर्होतृत्वम्। सोमो वै चतुंर्होता। अग्निः पश्चंहोता। धाता षड्ढोता। इन्द्रंः सप्तहोता॥१॥

प्रजापंतिर्दर्शहोता। य एवं चतुंर्होतृणामृद्धिं वेदी ऋभ्रोत्येव। य एषामेवं बन्धुतां वेदी बन्धुंमान्भवति। य एषामेवं कृप्तिं वेदी कल्पंतेऽस्मै। य एषामेवमायतेनं वेदी आयतेनवान्भवति। य एषामेवं प्रतिष्ठां वेदी।२॥

प्रत्येव तिष्ठति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। दर्शहोता चतुंरहोता। पश्चंहोता षड्ढोता सप्तहोता। अथ कस्माचतुंरहोतार उच्यन्त इति। इन्द्रो वै चतुंरहोता। इन्द्रः खलु वै श्रेष्ठों देवतानामुप्-देशनात्। य एविमन्द्रङ् श्रेष्ठं देवतानामुप्देशनाद्वेदं। विसेष्ठः समानानां भवति। तस्माच्छ्रेष्ठमायन्तं प्रथमेनैवानुं बुध्यन्ते। अयमागन्। अयमवासादिति। कीर्तिरंस्य पूर्वाऽऽगंच्छिति जनतांमायतः। अथों एनं प्रथमेनैवानुं बुध्यन्ते। अयमागन्। अयमवांसादिति॥ ३॥ स्वर्धेत वर्षे बुध्यन्ते प्रथमे वर्षे बुध्यन्ते प्रथमे वर्षे प्रथमे वर्षे प्रथमे वर्षे प्रथमे वर्षे प्रथमे वर्षे प्रथमे प्रथमे वर्षे प्रथमे प्रविध्यन्ते। अयमागन्।

दक्षिणां प्रतिग्रहीष्यन्थ्सप्तदंशकृत्वोऽपाँन्यात्। आत्मानंमेव समिन्धे। तेजंसे वीर्याय। अथौं प्रजापंतिरेवैनांं भूत्वा प्रतिगृह्णाति। आत्मनोऽनाँत्यै। यद्येनमार्त्विज्याद्वृतः सन्तं निर्हरेरन्। आग्नीभ्रे जुहुयाद्दशंहोतारम्। चुतुर्गृहीतेनाऽऽज्येन। पुरस्ताँत्प्रत्यिङ्गिष्ठन्। प्रतिलोमं विग्राहम्॥४॥

प्राणानेवास्योपं दासयति। यद्येनं पुनरुप् शिक्षेयुः। आग्नींध्र एव जुंहुयाद्दशंहोतारम्। चृतुर्गृहीतेनाऽऽज्येन। पृश्चात्प्राङासीनः। अनुलोममविंग्राहम्। प्राणानेवास्में कल्पयति। प्रायंश्चित्ती वाग्घोतेत्यृतुमुखऋतुमुखे जुहोति। ऋतूनेवास्में कल्पयति। कल्पंन्तेऽस्मा ऋतवंः॥५॥

कुप्ता अस्मा ऋतव आयंन्ति। षड्ढोता वै भूत्वा प्रजापंतिरिदश् सर्वमसृजत। स मनोऽसृजत। मन्सोऽधिं गायत्रीमंसृजत। तद्गायत्रीं यशं आर्च्छत्। तामाऽलंभत। गायत्रिया अधि छन्दाईस्यसृजत। छन्दोभ्योऽधि सामं। तथ्साम यशं आर्च्छत्। तदाऽलंभत॥६॥

साम्रोऽधि यज्र्ईष्यसृजत। यजुर्भ्योऽधि विष्णुम्। तिद्वष्णुं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। विष्णोरध्योषंधीर-सृजत। ओषंधीभ्योऽधि सोमम्। तथ्सोमुं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। सोमादिधं पृशूनंसृजत। पृशुभ्योऽधीन्द्रम्॥७॥

तिदन्द्रं यशं आर्च्छत्। तदेनं नाति प्राच्यंवत। इन्द्रं इव यश्स्वी भवति। य एवं वेदं। नैनं यशोऽति प्रच्यंवते। यद्वा इदं किं चं। तथ्सर्वमुत्तान एवाऽऽङ्गीरुसः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिं- गृहीतं नाहिंनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तथ्सवंमुत्तानस्त्वां-ऽऽङ्गीर्सः प्रतिंगृह्णात्वित्येव प्रतिंगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आंङ्गीर्सः। अनयेवेनत्प्रतिंगृह्णाति। नैन रे हिनस्ति। बर्हिषा प्रतींयाद्गां वाऽश्वं वा। एतद्वे पंशूनां प्रियं धामं। प्रियेणैवेनं धाम्ना प्रत्येति॥८॥

विग्राहंमृतवस्तदाऽलंभृतेन्द्रं गृह्णीयाथ्यद्वं॥

[२]

यो वा अविद्वान्निवर्तयंते। विशीर्षा सपौप्माऽमुिष्में हो के भेवति। अथ् यो विद्वान्निवर्तयंते। सशीर्षा विपौप्मा-ऽमुिष्में हो के भेवति। देवता वै सप्त पुष्टिकामा न्यंवर्तयन्त। अग्निश्चं पृथिवी चं। वायुश्चान्तिरक्षं च। आदित्यश्च द्यौश्चं चन्द्रमाः। अग्निर्यंवर्तयत। स सांहुस्रमंपुष्यत्॥९॥

पृथिवी न्यंवर्तयत। सौषंधीभिवंनस्पतिंभिरपुष्यत्। वायुर्न्यवर्तयत। स मरींचीभिरपुष्यत्। अन्तरिंक्षं न्यंवर्तयत। तद्वयोंभिरपुष्यत्। आदित्यो न्यंवर्तयत। स रिश्मिभिरपुष्यत्। द्यौर्न्यवर्तयत। सा नक्षंत्रैरपुष्यत्। चन्द्रमा न्यंवर्तयत। सोऽहोरात्रैर्र्धमासैर्मासैर्त्र्ऋतुभिः संवथ्सरेणांपुष्यत्। तान्योषान्युष्यति। याइस्तेऽपुष्यन्। य एवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परिं च॥१०॥

अपुष्यन्नक्षंत्रेरपुष्यत्पश्चं च

<u>[</u> ३ ]

तस्य वा अग्नेर्हिरंण्यं प्रतिजग्रहुषंः। अर्धिमिन्द्रियस्यापाँ- क्रामत्। तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै सौंऽर्धिमिन्द्रिय-

स्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। अर्धिमंन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वान् हिरंण्यं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। अर्धमंस्येन्द्रियस्यापंक्रामित। तस्य वै सोमंस्य वासंः प्रतिजग्रहुषंः। तृतींयमिन्द्रियस्यापांक्रामत्॥११॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स तृतींयिमिन्द्रिय-स्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। तृतींयिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वान् वासंः प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविंद्वान्प्रति-गृह्णातिं। तृतींयमस्येन्द्रियस्यापंक्रामित। तस्य वै रुद्रस्य गां प्रतिजग्रहुषंः। चतुर्थिमिन्द्रियस्यापाँक्रामत्। तामेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स चतुर्थिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त॥१२॥

चतुर्थिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वान्गां प्रितिगृह्णातिं। अथ योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। चतुर्थमंस्येन्द्रिय-स्यापंक्रामित। तस्य वे वर्रुणस्यार्श्वं प्रतिजग्रहुषंः। पश्चमिनिद्रयस्यापाकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वे स पश्चमिनिद्रयस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त। पश्चमिनिद्रयस्या-ऽऽत्मन्नुपार्धत्त। पश्चमिनिद्रयस्या-ऽऽत्मन्नुपार्धत्त। य एवं विद्वानश्वं प्रतिगृह्णाति॥१३॥

अथ् योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। पृश्चममंस्येन्द्रियस्यापं-क्रामित। तस्य वै प्रजापंतेः पुरुषं प्रतिजग्रहुषंः। षष्ठिमिन्द्रियस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स षष्ठिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। षष्ठिमिन्द्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य पृवं विद्वान्पुरुषं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। षुष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंत्रामति॥१४॥

तस्य वै मनोस्तल्पं प्रतिजग्रहुषंः। सप्तमिन्द्रिय-स्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स संप्तमिनिद्र्यस्याऽऽत्मन्रुपाधंत्त। सप्तमिनिद्र्यस्या-ऽऽत्मन्रुपाधंत्ते। य एवं विद्वाङ्स्तल्पं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। सप्तममंस्येन्द्र्यस्यापंकामित। तस्य वा उंत्तानस्याँऽऽङ्गीर्सस्याप्राणत्प्रतिजग्रहुषंः। अष्टमिनिद्र्यस्यापाँकामत्॥१५॥

तदेतेनेव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै सौंऽष्ट्रमिमिन्द्रिय-स्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त। अष्ट्रममिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त। य एवं विद्वानप्रांणत्प्रतिगृह्णाति। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णाति। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णाति। अष्ट्रममेस्येन्द्रियस्यापंक्रामित। यद्वा इदं किं चं। तथ्सर्वमुत्तान एवाऽऽङ्गीरसः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिगृहीतं नाहिनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तथ्सर्वमुत्तानस्त्वौ-ऽऽङ्गीरसः प्रतिगृह्णात्वत्येव प्रतिगृह्णीयात्। तथ्सर्वमुत्तानस्त्वौ-ऽऽङ्गीरसः प्रतिगृह्णात्वत्येव प्रतिगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आङ्गीरसः। अनयेवेनत्प्रतिगृह्णाति। नैनर् हिनस्ति॥१६॥ वृत्तंयमिद्र्यस्यापंक्रामचतुर्थमिद्र्यस्यापक्ष्मचतुर्थनिद्र्यस्यापंक्रामचतुर्थमिद्र्यस्यापंक्रामचतुर्थनिद्र्यस्यापंक्रामचतुर्थनिद्र्यस्यापंक्रामचतुर्थनिद्र्यस्यापंक्रामचतुर्थनिद्र्यस्यापंक्रामचतुर्यनिव्वानिस्य विद्र्यन्ति। विद्र्यने विद्र्यन्ति विद्र्यने विद

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यद्दर्शहोतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनं प्रजा अंसृजुन्तेतिं। प्रजा- पंतिना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्यवन्। तेनं प्रजा अंसृजन्त। यचतुंर्होतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्यवन्। केनौषंधीरसृजन्तेतिं। सोमेन् वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्यवन्॥१७॥

तेनौषंधीरसृजन्त। यत्पश्चंहोतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनैभ्यो लोकभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। केनैषां पृशूनंवृञ्जतेतिं। अग्निना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनैभ्यो लोकभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। तेनैषां पृशूनंवृञ्जत। यथ्यङ्कांतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१८॥

केन्तूनंकल्पयन्तेति। धात्रा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन्तूनंकल्पयन्त। यथ्सप्तहोतारः सत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केन् सुवंरायन्। केन्माँ श्लोकान्थ्समं-तन्वित्रिति। अर्यम्णा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन् सुवंरायन्। तेन्माँ श्लोकान्थ्समंतन्वित्रिति॥१९॥

पृते वै देवा गृहपंतयः। तान् य पृवं विद्वान्। अप्यन्यस्यं गार्हपते दीक्षंते। अवान्तरमेव सत्त्रिणांमृभ्नोति। यो वा अर्थमणं वेदं। दानंकामा अस्मै प्रजा भवन्ति। यज्ञो वा अर्थमा। आर्यावस्तिरिति वै तमांहुर्यं प्रशक्तंनित। आर्यावस्तिर्भवति। य पृवं वेदं॥२०॥

यद्वा इदं किं चे। तथ्सर्वं चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधिं यज्ञो निर्मितः। स य एवं विद्वान् विवदेत। अहमेव भूयों वेद। यश्चतुंर्होतॄन् वेदेतिं। स ह्येव भूयो वेदं। यश्चतुंर्होतॄन् वेदं। यो वै चतुंर्होतृणाु र होतॄन् वेदं। सर्वांसु प्रजास्वन्नंमत्ति॥२१॥

सर्वा दिशोऽभि जंयति। प्रजापंतिर्वे दशंहोतृणा् होतां। सोमश्चतुंरहोतृणा् होतां। अग्निः पश्चंहोतृणा् होतां। धाता षड्ढांतृणा् होतां। अर्थमा सप्तहोतृणा् होतां। एते वै चतुंरहोतृणा् होतांरः। तान् य एवं वेदं। सर्वासु प्रजास्वन्नमत्ति। सर्वा दिशोऽभि जंयति॥२२॥

आर्धुवन्त्रार्धुवन्त्रित्येवं वेदाँत्ति सर्वा दिशोऽभि जंयति (वे तेनं सुत्रङ्कर्तनः)॥—————[५]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा व्यंस्नश्सत। स हृदंयं भूतों-ऽशयत्। आत्मन् हा (३) इत्यह्वंयत्। आपः प्रत्यंश्रण्वन्। ता अंग्निहोत्रेणैव यंज्ञकृतुनोपं पूर्यावंतन्त। ताः कुसिन्धमुपौंहन्। तस्मांदग्निहोत्रस्यं यज्ञकृतोः। एकं ऋत्विक्। चृतुष्कृत्वो-ऽह्वंयत्। अग्निर्वायुरांदित्यश्चन्द्रमाः॥२३॥

ते प्रत्यंश्वन्। ते दंर्शपूर्णमासाभ्यामेव यंज्ञकृत्नोपं पूर्यावर्तन्त। त उपौह इश्वत्वार्यङ्गानि। तस्माद्द्शपूर्ण-मासयौर्यज्ञकृतोः। चत्वारं ऋत्विजः। पृश्चकृत्वोऽह्वंयत्। पृशवः प्रत्यंश्वन्। ते चातुर्मास्येरेव यंज्ञकृत्नोपं पूर्यावर्तन्त। त उपौहं लोमं छुवीं मा समस्थिं मुज्ञानम्। तस्माचातुर्मास्यानां यज्ञकृतोः॥२४॥

पञ्चर्त्विजंः। षद्भृत्वोऽह्वंयत्। ऋतवः प्रत्यंशृण्वन्। ते पंशुबन्धेनैव यंज्ञऋतुनोपंपूर्यावंर्तन्त। त उपौहुन्थ्स्तनांवाण्डौ शिष्ठमवाञ्चं प्राणम्। तस्मौत्पशुबन्धस्यं यज्ञऋतोः। षड्विजंः। स्मकृत्वोऽह्वंयत्। होत्राः प्रत्यंश्रण्वन्। ताः सौम्येनैवाध्वरेणं यज्ञऋतुनोपंपुर्यावंर्तन्त॥२५॥

ता उपौहन्थ्सप्त शीर्षण्यान्प्राणान्। तस्माध्सौम्यस्याध्वरस्यं यज्ञकृतोः। सप्त होत्राः प्राचीर्वषं हुर्वन्ति। दशकृत्वोऽह्वं यत्। तपः प्रत्यंश्वणोत्। तत्कर्मणेव संवध्सरेण सर्वैयज्ञकृतिभूरुपं पूर्यावर्ततः। तथ्सर्वमात्मानमपरिवर्गमुपौहत्। तस्माध्संवध्सरे सर्वे यज्ञकृतवोऽवंरुध्यन्ते। तस्माद्दशंहोता चतुंर्होता। पश्चंहोता षङ्कोता सप्तहोता। एकहोत्रे बिलेश हंरन्ति। हर्रन्त्यस्मै प्रजा बिलम्। ऐन्मप्रंतिख्यातं गच्छति। य पृवं वेदं॥२६॥

चुन्द्रमाँश्चातुर्मास्यानाँ यज्ञकृतोरंध्युरेणं यज्ञकृतुनोपं पुर्यावर्तन्त सुप्तहोता चुत्वारि च॥\_\_\_\_\_\_ि ६ 🗍

प्रजापंतिः पुरुषमसृजत। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममायमन्नं-मस्त्विति। सोऽबिभेत्। सर्वं वे माऽयं प्र धंक्ष्यतीति। स एता इश्वतं रहोतृनात्मस्परंणानपश्यत्। तानं जुहोत्। तैर्वे स आत्मानं मस्पृणोत्। यदंग्निहोत्रं जुहोतिं। एकंहोतारमेव तद्यं ज्ञुतुमां प्रोत्यग्निहोत्रम्॥२७॥

कुसिन्धं चाऽऽत्मनः स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयित। चतुर्होतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति दर्शपूर्णमासौ। चत्वारिं चाऽऽत्मनोऽङ्गांनि स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयित। समित्पश्चमी। पश्चंहोतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति चातुर्मास्यानि। लोमं छुवीं मार्समस्थिं मुज्ञानम्॥२८॥

तानिं चाऽऽत्मनेः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति। षङ्कोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति पशुबन्धम्। स्तनांवाण्डौ शिश्ञमवाँश्चं प्राणम्। तानिं चाऽऽत्मनेः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति॥२९॥

स्मिथ्संप्तमी। स्प्तहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति सौम्यमंध्वरम्। सप्त चाऽऽत्मनः शीर्षण्याँन्प्राणान्थस्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। द्विर्निमाँष्टि। द्विः प्राश्ञांति। दशंहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति संवथ्सरम्। सर्वं चाऽऽत्मान्मपंरिवर्गः स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति॥३०॥

प्रजापंतिरकामयत् प्रजांयेयेति। स तपांऽतप्यत। साँऽन्तर्वानभवत्। स हरितः श्यावांऽभवत्। तस्माथ्स्र्यंन्तर्वत्नी। हरिणी स्ती श्यावा भवति। स विजायंमानो गर्भेणाताम्यत्। स तान्तः कृष्णः श्यावांऽभवत्। तस्मांतान्तः कृष्णः श्यावो भवति। तस्यासुरेवाजीवत्॥३१॥

तेनासुनाऽसुंरानसृजत। तदसुंराणामसुर्त्वम्। य एवम-सुंराणामसुर्त्वं वेदं। असुंमानेव भंवति। नैन्मसुंर्जहाति। सो-ऽसुंरान्थ्सृष्ट्वा पितेवांमन्यत। तदनुं पितृनंसृजत। तत्पितृणां पितृत्वम्। य एवं पितृणां पितृत्वं वेदं। पितेवैव स्वानां

#### भवति॥३२॥

यन्त्यंस्य पितरो हवम्ं। स पितॄन्थ्मृष्ट्वाऽऽमंनस्यत्। तदनुं मनुष्यांनसृजता तन्मंनुष्यांणां मनुष्यत्वम्। य एवं मंनुष्यांणां मनुष्यांन्थ्यसृजानायं। दिवां देवत्राऽभंवत्। तदनुं देवानं-सृजता तद्देवानां देवत्वम्। य एवं देवानां देवत्वं वेदं। दिवां हैवास्यं देवत्रा भंवति। तानि वा एतानि चत्वार्यम्भारंसि। देवा मंनुष्याः पितरोऽसुंराः। तेषु सर्वेष्वम्भो नभं इव भवति। य एवं वेदं॥३३॥

अजीवुध्स्वानां भवित देवानंस्जत सप्त चं॥\_\_\_\_\_\_[८]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यो वा इमं विद्यात्। यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायुंरियात्। न पुरा-ऽऽयुंषः प्र मीयेत। पृशुमान्थ्स्यात्। विन्देतं प्रजाम्। यो वा इमं वेदं॥३४॥

यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायुरिति। न पुराऽऽयुषः प्र मीयते। पृशुमान्भविति। विन्दते प्रजाम्। अद्भः पंवते। अपोऽभि पंवते। अपोऽभि सम्पंवते॥३५॥

अस्याः पंवते। इमाम्भि पंवते। इमाम्भि सम्पंवते। अग्नेः पंवते। अग्निम्भि पंवते। अग्निम्भि सम्पंवते। अन्तरिक्षात्पवते। अन्तरिक्षम्भि पंवते। अन्तरिक्षम्भि सम्पंवते। आदित्यात्पंवते॥३६॥ आदित्यम्भि पंवते। आदित्यम्भि सम्पंवते। द्योः पंवते। दिवंम्भि पंवते। दिवंम्भि सम्पंवते। दिग्भ्यः पंवते। दिशोऽभि पंवते। दिशोऽभि सम्पंवते। स यत्पुरस्ताद्वातिं। प्राण एव भूत्वा पुरस्तांद्वाति॥३७॥

तस्मौत्पुरस्ताद्वान्तम्। सर्वाः प्रजाः प्रति नन्दन्ति। प्राणो हि प्रियः प्रजानाम्। प्राण इंव प्रियः प्रजानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष प्राण एव। अथ् यद्दंक्षिणतो वातिं। मात्तिरश्वेव भूत्वा दंक्षिणतो वाति। तस्मौद्दक्षिणतो वान्तं विद्यात्। सर्वा दिश आ वाति॥३८॥

सर्वा दिशोऽनु वि वांति। सर्वा दिशोऽनु सं वातीति। स वा एष मांतिरश्वैव। अथ यत्पश्चाद्वाति। पर्वमान एव भूत्वा पश्चाद्वांति। पूतमंस्मा आहंरन्ति। पूतमुपंहरन्ति। पूतमंश्ञाति। य एवं वेदं। स वा एष पर्वमान एव॥३९॥

अथ यदुंतरतो वाति। स्वितैव भूत्वोत्तरतो वाति। स्वितेव स्वानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष संवितेव। ते य एनं पुरस्तादायन्तंमुप्वदंन्ति। य एवास्यं पुरस्तांत्पाप्मानंः। ताङ्स्तेऽपं घ्रन्ति। पुरस्तादितंरान्पाप्मनंः सचन्ते। अथ य एनं दक्षिणत आयन्तंमुप्वदंन्ति॥४०॥

य पुवास्यं दक्षिणतः पाप्मानः। ता इस्तेऽपं घ्रन्ति। दक्षिणत इतंरान्पाप्मनः सचन्ते। अथ् य एनं पृश्चादायन्तंमुप् वदंन्ति। य पुवास्यं पृश्चात्पाप्मानः। ता इस्तेऽपं घ्रन्ति। पृश्चादितंरान्पाप्मनंः सचन्ते। अथ् य एनमुत्तर्त आयन्तंमुप् वदंन्ति। य एवास्यौत्तर्तः पाप्मानंः। ताङ्स्तेऽपं घ्रन्ति॥४१॥

उत्तर्त इतंरान्याप्मनंः सचन्ते। तस्मांदेवं विद्वान्। वीवं नृत्येत्। प्रेवं चलेत्। व्यस्येवाक्ष्यौ भाषेत। मण्टयेदिव। काथयेदिव। शृङ्गायेतेव। उत मोपं वदेयुः। उत में पाप्मान्मपं हन्युरितिं। स यान्दिशः स्निमेष्यन्थस्यात्। यदा तान्दिशं वातों वायात्। अथु प्रवेयात्। प्र वां धावयेत्। सातमेव रेदितं व्यूंढं गुन्धम्भि प्रच्यंवते। आऽस्य तं जनपदं पूर्वा कीर्तिर्गच्छति। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। य पुवं वेदं॥४२॥

प्रजापंतिः सोम् राजानमसृजत। तं त्रयो वेदा अन्वसृज्यन्त। तान् हस्तेंऽकुरुत। अथ् ह सीतां सावित्री। सोम् राजांनं चकमे। श्रृद्धामु स चंकमे। साऽऽहं पितरंं प्रजापंतिमुपंससार। त॰ होवाच। नमंस्ते अस्तु भगवः। उपं त्वाऽयानि॥४३॥

प्रत्वां पद्ये। सोमं वै राजांनं कामये। श्रृद्धामु स कांमयत् इतिं। तस्यां उ ह स्थांग्रमंलङ्कारं केल्पयित्वा। दशहोतारं पुरस्तां द्याख्यायं। चतुंरहोतारं दक्षिणतः। पश्चंहोतारं पृश्चात्। षङ्कोतारमुत्तर्तः। सप्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारैश्च पित्निभिश्च मुखेंऽलङ्कत्यं॥४४॥ आऽस्यार्धं वंब्राज। ता होदीक्ष्योवाच। उप मा वंर्तस्वेति। त होवाच। भोगं तु मृ आचंक्ष्व। एतन्मृ आचंक्ष्व। यत्ते पाणाविति। तस्यां उह त्रीन् वेदान्प्रदेदौ। तस्मादुहु स्त्रियो भोगुमैव हारयन्ते। स यः कामयेत प्रियः स्यामिति॥४५॥

यं वां कामयेत प्रियः स्यादितिं। तस्मां एतः स्थांग्रमंलङ्कारं कंल्पयित्वा। दशंहोतारं पुरस्तां द्याख्यायं। चतुंर्होतारं दक्षिणतः। पश्चंहोतारं पृश्चात्। षङ्कांतारमुत्तर्तः। सम्भारेश्च पिनिभश्च मुखेंऽलङ्कृत्यं। आस्यार्धं व्रंजेत्। प्रियो हैव भवति॥४६॥

ब्रह्मौत्मन्वदंसृजत। तदंकामयत। समात्मनां पद्येयेतिं। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मै दश्म १ हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स दशंहूतोऽभवत्। दशंहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं दशंहूत १ सन्तम्। दशंहोतेत्याचेक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥४७॥

आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्में सप्तमः हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स स्प्तहूंतोऽभवत्। स्प्तहूंतो हु वै नामैषः। तं वा पृतः स्प्तहूंतः सन्तम्। स्प्तहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्में षष्ठः हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स षड्ढूंतोऽभवत्॥४८॥

षड्ढंतो हु वै नामैषः। तं वा एत षड्ढंतू सन्तम्।

षड्ढोतेत्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्में पश्चम ह्तः प्रत्यंश्वणोत्। स पश्चंहूतोऽभवत्। पश्चंहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं पश्चंहूत् सन्तम्। पश्चंहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षंण॥४९॥

प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मे चतुर्थ हूतः प्रत्यंशृणोत्। स चतुर्रहूतोऽभवत्। चतुर्रहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं चतुर्रहूत सन्तम्। चतुर्रहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं चतुर्रहूत सन्तम्। चतुर्ह्तोतत्याचं क्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तमंत्रवीत्। त्वं वे मे नेदिष्ठ हूतः प्रत्यंश्रौषीः। त्वयैनानाख्यातार् इति। तस्मान्त्र हैना इश्चतुर्होतार् इत्याचं क्षते। तस्मांच्छुश्रूषः पुत्राणा ह ह्यंतमः। नेदिष्ठो ह्यंतमः। नेदिष्ठो ह्यंतमः। नेदिष्ठो ह्रह्यंतमः। नेदिष्ठो ह्रह्यंतमः। नेदिष्ठो ह्रह्यंतमः। नेदिष्ठो ह्रह्यंतमः। नेदिष्ठो ह्रह्यंतमः। नेदिष्ठो ह्रह्यंतमः। निर्देष्ठो ह्याः।

ब्रह्मवादिनः किं दक्षिणां यो वा अविद्वान्तस्य वै ब्रह्मवादिनो यहशहोतारः प्रजापितिर्व्यस्यं प्रजापितिः पुरुषं प्रजापितिरकामयत् स तपः सौँऽन्तर्वां-ब्रह्मवादिनो यो वा हुमं विद्यात्प्रजापितिः सोम्॰ राजांनं ब्रह्मांत्मुन्वदेकांदश॥११॥ ब्रह्मवादिनस्तस्य वा अग्नेर्यद्वा हुदं किं चं प्रजापितिरकामयत् य पुवास्यं दक्षिणतः पंश्राशत्॥५०॥ ब्रह्मवादिनो य पुवं वेदं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥चतुर्थः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

जुष्टो दमूना अतिथिर्दुरोणे। इमं नो यज्ञमुपं याहि विद्वान्। विश्वां अग्नेऽभियुजों विहत्यं। शृत्रूयतामा भरा भोजनानि। अग्ने शर्धं महते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानि सन्तु। सञ्जांस्पृत्य सुयममा कृणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महा स्सि। अग्ने यो नोऽभितो जनः। वृको वारो जिघा स्ति॥१॥

ताइस्त्वं वृत्रहं जिहि। वस्वस्मभ्यमा भेर। अग्ने यो नो-ऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ट्यः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। त्विमेन्द्राभिभूरंसि। देवो विज्ञांतवीर्यः। वृत्रहा पुरुचेतंनः। अप प्राचं इन्द्र विश्वारं अमित्रान्॥२॥

अपापांचो अभिभूते नुदस्व। अपोदींचो अपंशूराध्रा चं ऊरौ। यथा तव शर्मन्मदेम। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तंवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। युजे रथं ग्वेषंण् हिर्रिभ्याम्। उप ब्रह्माणि जुजुषाणमंस्थुः। विबाधिष्टास्य रोदंसी महित्वा। इन्द्रों वृत्राण्यंप्रतीजंघन्वान्॥३॥

ह्व्यवाहंमभिमातिषाहम्ं। रक्षोहणं पृतंनासु जिष्णुम्। ज्योतिष्मन्तं दीद्यंतं पुरंन्धिम्। अग्निः स्विष्टकृतमा हुवेम। स्विष्टमग्ने अभि तत्पृणाहि। विश्वां देव पृतंना अभि ष्य। उरुं नः पन्थां प्रदिशन्विभांहि। ज्योतिष्मद्धेह्यजरंं न आयुंः।

# त्वामंग्ने हविष्मंन्तः। देवं मर्तास ईडते॥४॥

मन्यें त्वा जातवेदसम्। स ह्व्या वंक्ष्यानुषक्। विश्वांनि नो दुर्गहां जातवेदः। सिन्धुं न नावा दुंरिताऽतिं पर्षि। अग्नें अत्रिवन्मनंसा गृणानः। अस्माकंं बोध्यविता तनूनांम्। पूषा गा अन्वेतु नः। पूषा रेक्ष्त्वर्वतः। पूषा वाजर्ं सनोतु नः। पूषेमा आशा अनुंवेद सर्वाः॥५॥

सो अस्मार अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अघृंणिः सर्ववीरः। अप्रयुच्छन्पुर एंतु प्रजानन्। त्वमंग्ने सप्रथां असि। जुष्टो होता वरेण्यः। त्वयां यज्ञं वितंन्वते। अग्नी रक्षारंसि सेधति। शुक्रशोचिरमंत्र्यः। शुचिः पावक ईड्यः। अग्ने रक्षां णो अरहंसः॥६॥

प्रतिं ष्म देव रीषंतः। तिपंष्ठैर्जरों दह। अग्ने हश्स् न्यंत्रिणम्ं। दीद्यन्मर्त्येष्वा। स्वे क्षये शुचिव्रत। आ वांत वाहि भेषजम्। वि वांत वाहि यद्रपंः। त्वश्हि विश्वभेषजः। देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमौ वातौं वातः॥७॥

आ सिन्धोरा पंरावतः। दक्षं मे अन्य आवातुं। परान्यो वातु यद्रपः। यद्दो वात ते गृहे। अमृतंस्य निधिरहितः। ततो नो देहि जीवसें। ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो मह् आवंह। वातु आवातु भेषजम्। शम्भूर्मयोभूर्नों हृदे॥८॥ प्रण आयूर्षि तारिषत्। त्वमंग्ने अयासिं। अया सन्मनंसा हितः। अया सन् ह्व्यमूंहिषे। अया नों धेहि भेषजम्। इष्टो अग्निराहृंतः। स्वाहांकृतः पिपर्तु नः। स्वगा देवेभ्यं इदं नमः। कामों भूतस्य भव्यंस्य। सम्राडेको विरांजति॥९॥

स इदं प्रति पप्रथे। ऋतूनुथ्मृंजते वृशी। काम्स्तदग्रे समंवर्ततािधं। मनंसो रेतंः प्रथमं यदासींत्। स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। त्वयां मन्यो स्रथंमारुजन्तः। हर्षंमाणासो धृषता मंरुत्वः। तिग्मेषंव आयुंधा सर्शिशांनाः। उप प्रयंन्ति नरों अग्निरूपाः॥१०॥

मृन्युर्भगों मृन्युरेवासं देवः। मृन्युर्होता वर्रुणो विश्ववेदाः। मृन्युं विशं ईडते देवयन्तीः। पाहि नो मन्यो तपंसा श्रमेण। त्वमंग्ने व्रतभृच्छुचिः। देवा असांदया इह। अग्ने ह्व्याय् वोढंवे। व्रतानुबिभंद्रतपा अदौभ्यः। यजां नो देवा अजरंः सुवीरंः। दध्द्रव्लांनि सुविदानो अंग्ने। गोपाय नो जीवसं जातवेदः॥११॥

जिघारं सत्यमित्रां अघुन्वानींडते सर्वा अर्श्हंसो वातो हुदे राजत्युग्निरूपाः सुविदानो अंग्रु एकं च॥———[१]

चक्षुंषो हेते मनंसो हेते। वाचों हेते ब्रह्मंणो हेते। यो मांऽघायुरंभिदासंति। तमंग्ने मेन्या मेनिं कृणा। यो मा चक्षुंषा यो मनंसा। यो वाचा ब्रह्मंणाऽघायुरंभिदासंति। तयाँऽग्ने त्वं मेन्या। अमुमंमेनिं कृणा। यत्किश्चासौ मनंसा यचं वाचा। यज्ञैर्जुहोति यजुंषा ह्विर्भिः॥१२॥ तन्मृत्युर्निर्ऋंत्या संविदानः। पुरादिष्टादाहुंतीरस्य हन्तु। यातुधाना निर्ऋंतिरादुरक्षः। ते अस्य घ्रन्त्वनृंतेन स्त्यम्। इन्द्रेषिता आज्यंमस्य मथ्नन्तु। मा तथ्समृंद्धि यद्सौ क्रोतिं। हन्मिं तेऽहं कृत १ ह्विः। यो में घोरमचींकृतः। अपाँश्चौ त उभौ बाहू। अपंनह्याम्यास्यम्॥१३॥

अपं नह्यामि ते बाहू। अपं नह्याम्यास्यम्। अग्नेर्देवस्य ब्रह्मणा। सर्वं तेऽविधषं कृतम्। पुराऽमुष्यं वषद्भारात्। यज्ञं देवेषुं नस्कृधि। स्विष्टमुस्माकं भूयात्। माऽस्मान्प्रापन्न-रातयः। अन्तिं दूरे सुतो अंग्ने। भ्रातृंव्यस्याभिदासंतः॥१४॥

वृषद्भारेण वर्न्नेण। कृत्या हिन्म कृतामहम्। यो मा नक्तं दिवां सायम्। प्रातश्चाह्नां निपीयंति। अद्या तिमंन्द्र वर्न्नेण। भातृंव्यं पादयामिस। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तन्त्वां। प्रपंद्ये सगुः सार्श्वः। सह यन्मे अस्ति तेनं। ईडें अग्निं विपश्चितम्॥१५॥

गिरा यज्ञस्य सार्धनम्। श्रृष्टीवानंन्धितावांनम्। अग्नें श्वेकमं ते वयम्। यमं देवस्यं वाजिनंः। अति द्वेषार्रसे तरेम। अवंतं मा समंनसौ समोकसौ। सचेतसौ सरेतसौ। उभौ मामंवतञ्जातवेदसौ। शिवौ भंवतमुद्य नंः। स्वयं कृण्वानः सुगमप्रयावम्॥१६॥

तिग्मशृंङ्गो वृष्भः शोशृंचानः। प्रत्नः स्थस्थमनु पश्यमानः। आ तन्तुंमग्निर्दिव्यं तंतान। त्वन्नस्तन्तुंरुत सेतुंरग्ने। त्वं पन्थां भवसि देव्यानः। त्वयांऽग्ने पृष्ठं व्यमारुहेम। अथां देवैः संधुमादं मदेम। उदुंत्तमं मुंमुग्धि नः। वि पार्शं मध्यमश्चृंत। अवांधमानिं जीवसें॥१७॥

वय सोम व्रते तर्व। मनस्तनूषु बिभ्रतः। प्रजावन्तो अशीमिह। इन्द्राणी देवी सुभगां सुपत्नीं। उद शोन पित्विद्यें जिगाय। त्रिश्शदंस्या ज्यनं योजनानि। उपस्थ इन्द्र्श् स्थिवेरं बिभिति। सेनां हु नामं पृथिवी धंनञ्जया। विश्वव्यंचा अदिंतिः सूर्यंत्वक्। इन्द्राणी देवी प्रासहा ददांना॥१८॥

सा नो देवी सुहवा शर्म यच्छतु। आत्वांऽहार्षम्नतरंभूः। ध्रुवस्तिष्ठाविंचाचितः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमिधं भ्रशत्। ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृंथि्वी। ध्रुवं विश्वंमिदं जगत्। ध्रुवा हु पर्वता इमे। ध्रुवो राजां विशाम्यम्। इहैवैधि मा व्यंथिष्ठाः॥१९॥

पर्वत इवाविचाचिलः। इन्द्रं इवेह ध्रुवस्तिष्ठ। इह राष्ट्रमुं धारय। अभितिष्ठ पृतन्यतः। अधेरे सन्तु शत्रंवः। इन्द्रं इव वृत्रहा तिष्ठ। अपः क्षेत्राणि स्अयन्। इन्द्रं एणमदीधरत्। ध्रुवं ध्रुवेणं हृविषां। तस्मैं देवा अधिब्रवन्। अयं च् ब्रह्मणस्पतिः॥२०॥

हुविर्भिरास्यमिभु दासंतो विपृश्चित्मप्रयावश्चीवसे दर्दाना व्यथिष्ठा ब्रव्हेत्वे च॥—————[२]

जुष्टी नरो ब्रह्मणा वः पितृणाम्। अक्षंमव्ययं न

किलारिषाथ। यच्छक्नेरीषु बृह्ता रवेण। इन्द्रे शुष्ममदेधाथा वसिष्ठाः। पावका नः सरेस्वती। वाजेभिर्वाजिनीवती। युज्ञं वंष्टु धिया वंसुः। सरेस्वत्यभिनों नेषि वस्यः। मा पंस्फरीः पर्यसा मा न आधंक्। जुषस्वं नः सुख्यां वेश्यां च॥२१॥

मा त्वक्षेत्राण्यरंणानि गन्म। वृञ्जे ह्विर्नमंसा ब्रहिर्ग्रौ। अयांमि स्रुग्धृतवंती सुवृक्तिः। अम्यक्षि सद्म सदेने पृथिव्याः। अश्रांयि यज्ञः सूर्ये न चक्षुः। इहार्वाञ्चमितं ह्वये। इन्द्रं जैत्रांय जेतंवे। अस्माकंमस्तु केवंलः। अर्वाञ्चमिन्द्रंम्मुतों हवामहे। यो गोजिद्धंनजिदंश्वजिद्यः॥२२॥

ड्मं नो युज्ञं विंहुवे जुंषस्व। अस्य कुंमीं हरिवो मेदिनं त्वा। असंम्मृष्टो जायसे मातृवोः शुचिः। मृन्द्रः कृविरुदंतिष्ठो विवस्वतः। घृतेनं त्वा वर्धयन्नग्न आहुत। धूमस्ते कृतुरंभविद्द्वि श्रितः। अग्निरग्रै प्रथमो देवतांनाम्। संयातानामृत्तमो विष्णुंरासीत्। यजमानाय परिगृह्यं देवान्। दीक्षयेद १ हिवरा गंच्छतन्नः॥२३॥

अग्निश्चं विष्णो तपं उत्तमं महः। दीक्षापालेभ्योऽवनंत्र् हि शंक्रा। विश्वेंद्विर्यज्ञियैः संविद्यनो। दीक्षामस्मै यजंमानाय धत्तम्। प्र तद्विष्णुंः स्तवते वीर्याय। मृगो न भीमः कुंच्रो गिरिष्ठाः। यस्योरुषुं त्रिषु विक्रमंणेषु। अधिं क्षियन्ति भुवंनानि विश्वां। नूमर्तो दयते सनिष्यन् यः। विष्णंव उरुगायाय दाशंत्॥२४॥ प्रयः स्त्राचा मनंसा यजांतै। पृतावंन्त्त्रर्यमा विवासात्। विचंक्रमे पृथिवीमेष पृताम्। क्षेत्राय विष्णुर्मनुषे दशस्यन्। ध्रुवासो अस्य कीरयो जनांसः। उरुक्षिति स् सुजिनंमा चकार। त्रिर्देवः पृथिवीमेष पृताम्। विचंक्रमे शृतर्चंसं महित्वा। प्र विष्णुंरस्तु त्वस्स्तवीयान्। त्वेष इंस्य स्थविंरस्य नामं॥२५॥

होतांरं चित्ररंथमध्वरस्यं। यज्ञस्यंयज्ञस्य केतु र रुशंन्तम्। प्रत्यंधिं देवस्यंदेवस्य मृह्णा। श्रिया त्वंग्निमतिंथिं जनांनाम्। आ नो विश्वांभिरूतिभिंः स्जोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हंर्यश्व याहि। वरीवृज्धस्थविरेभिः सुशिप्र। अस्मे दधद्वृषण र शुष्मंमिन्द्र। इन्द्रंः सुवर्षा जनयन्नहांनि। जिगायोशिग्भः पृतंना अभि श्रीः॥२६॥

प्रारोचयन्मनंवे केतुमह्रांम्। अविन्दुज्योतिर्बृह्ते रणांय। अश्विनाववसे निह्नंये वाम्। आ नूनं यांत र सुकृतायं विप्रा। प्रात्युक्तेनं सुवृता रथेन। उपागंच्छत्मवसागंतन्नः। अविष्टं धीष्वश्विना न आसु। प्रजावद्रेतो अह्नंयं नो अस्तु। आवां तोके तनंये तूतुंजानाः। सुरत्नांसो देववीतिं गमेम॥२७॥

त्व र सोम् ऋतुंभिः सुऋतुंभूः। त्वं दक्षैः सुदक्षो विश्ववंदाः। त्वं वृषां वृष्त्वेभिर्मिह्त्वा। द्युम्नेभिर्द्युम्प्र्यंभवो नृचक्षाः। अषांढं युथ्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षाम्पस्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजा र सुंक्षिति र सुश्रवंसम्। जयंन्तं त्वामनुं मदेम सोम। भवां मित्रो न शेव्यों घृतासुंतिः। विभूतद्युम्न एव या उं सप्रथाः॥२८॥

अधां ते विष्णो विदुषां चिद्दध्यः। स्तोमां यज्ञस्य राध्यों ह्विष्मंतः। यः पूर्व्यायं वेधसे नवींयसे। सुमज्ञांनये विष्णंवे ददांशति। यो जातमस्य महतो महि ब्रवांत। सेदु श्रवोंभिर्युज्यं चिद्दभ्यंसत्। तम् स्तोतारः पूर्व्यं यथां विद ऋतस्यं। गर्भ ह्विषां पिपर्तन। आऽस्यं जानन्तो नामं चिद्विवक्तन। बृहत्तं विष्णो सुमृतिं भंजामहे॥२९॥

ड्मा धाना घृतस्रुवंः। हरीं इहोपंवक्षतः। इन्द्र रं सुखतंमे रथें। एष ब्रह्मा प्रतेमहे। विदथें शर्सिष्ट् हरीं। य ऋत्वियः प्रते वन्वे। वनुषों हर्यतं मदम्। इन्द्रो नामं घृतन्नयः। हरिंभिश्चारु सेचंते। श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु॥३०॥

हरिवर्पसङ्गिरंः। आचंर्षणिप्रा वृष्मो जनांनाम्। राजां कृष्टीनां पुंरुहूत इन्द्रंः। स्तुतश्रंवस्यन्नवसोपंमद्रिक्। युक्ता हरी वृष्णायां ह्यवाङ्। प्र यथ्सिन्धंवः प्रस्वं यदायन्। आपंः समुद्र रथ्येव जग्मुः। अतिश्चिदिन्द्रः सदंसो वरीयान्। यदी र् सोमः पृणतिं दुग्धो अर्शः। ह्वयांमसि त्वेन्द्रं याह्यंवाङ्॥३१॥

अरंन्ते सोमंस्त्नुवें भवाति। शतंक्रतो मादयंस्वा सुतेषुं। प्रास्मा अव पृतंनासु प्रयुथ्सु। इन्द्रांय सोमाः प्रदिवो विदानाः। ऋभुर्येभिवृषंपर्वा विहायाः। प्रयम्यमाणान्प्रति षू गृंभाय। इन्द्र पिब् वृषंधूतस्य वृष्णंः। अहेडमान् उपंयाहि यज्ञम्। तुभ्यं पवन्त इन्दंवः सुतासंः। गावो न वंज्रिन्थ्स्वमोको अच्छं॥३२॥

इन्द्रा गंहि प्रथमो युज्ञियांनाम्। या ते काकुथ्सुकृता या वरिष्ठा। यया शश्वत्यिवसि मध्वं ऊर्मिम्। तयां पाहि प्र ते अध्वर्युरंस्थात्। सन्ते वज्रो वर्ततामिन्द्र गुव्युः। प्रात्युंजा वि बोधय। अश्विनावेह गंच्छतम्। अस्य सोमंस्य पीतयै। प्रात्यावांणा प्रथमा यंजध्वम्। पुरा गृध्रादरंरुषः पिबाथः। प्रातर्राह यज्ञमश्विना दधांते। प्रश्रंसन्ति क्वयः पूर्वभाजः। प्रात्यंजध्वमश्विनां हिनोत। न सायमंस्ति देवया अजुंष्टम्। उतान्यो अस्मद्यंजते विचांयः। पूर्वः पूर्वो यजनानो वनीयान्॥३३॥

चाुर्श्वजिद्यो गंच्छतं नो दाशुन्नामांभिश्रीर्गमम सुप्रथा भजामहे विशन्तु याह्यवाङच्छं पिबाथः पद्गं॥———[३]

नृक्तं जाताऽस्योषधे। रामे कृष्णे असिंक्रि च। इद॰ रंजिन रजय। किलासं पिलतं च यत्। किलासं च पिलतं चं। निरितो नांशया पृषंत्। आ नः स्वो अंश्जुतां वर्णः। पर्गं श्वेतानि पातय। असितं ते निलयनम्। आस्थानमसितं तवं॥३४॥

असिक्रियस्योषधे। निरितो नांशया पृषंत्। अस्थिजस्यं किलासंस्य। तुनूजस्यं च यत्त्वचि। कृत्ययां कृतस्य ब्रह्मणा। लक्ष्मं श्वेतमंनीनशम्। सरूपा नामं ते माता। सरूपो नामं ते पिता। सर्रूपाऽस्योषधे सा। सर्रूपमिदं कृधि॥३५॥

शुन १ हुंवेम मृघवानिमिन्द्रम्। अस्मिन्भरे नृतंमं वाजंसातौ। शृण्वन्तंमुग्रमूतये समर्थ्सु। घ्रन्तं वृत्राणि सञ्जितं धनानाम्। धूनुथ द्यां पर्वतान्दाशुषे वस्। नि वो वनां जिहते यामं नो भिया। कोपयंथ पृथिवीं पृंश्ञिमातरः। युधे यदुंग्राः पृषंतीरयुंग्ध्वम्। प्रवेपयन्ति पर्वतान्। विविश्चन्ति वनस्पतीन्॥३६॥

प्रोवारत मरुतो दुर्मदां इव। देवांसः सर्वया विशा। पुरुत्रा हि सद्दृङ्गसिं। विशो विश्वा अनुं प्रभु। समर्थ्युं त्वा हवामहे। समथ्स्वग्निमवंसे। वाज्यन्तों हवामहे। वाजेषु चित्रराधसम्। सङ्गेच्छध्व संवद्ध्वम्। सं वो मनार्श्स जानताम्॥३७॥

देवा भागं यथा पूर्वे। सञ्जानाना उपासंत। समानो मन्नः समितिः समानी। समानं मनः सह चित्तमेषाम्। समानं केतो अभि स॰ रंभध्वम्। संज्ञानेन वो ह्विषां यजामः। समानी व आकूंतिः। समाना हृदंयानि वः। समानमंस्तु वो मनः। यथां वः सुसहासंति॥३८॥

संज्ञानं नः स्वैः। संज्ञान्मरंगैः। संज्ञानंमिश्विना युवम्। इहास्मासु नियंच्छतम्। संज्ञानं मे बृह्स्पतिः। संज्ञानरं सिवता करत्। संज्ञानंमिश्विना युवम्। इह मह्यं नि यंच्छतम्। उपं च्छायामिव घृगैः। अगन्म शर्म ते वयम्॥३९॥ अग्ने हिरंण्यसन्दशः। अदंब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्वम्। शिवेभिर्द्य परिपाहि नो गयम्। हिरंण्यजिह्वः सुविताय् नव्यंसे। रक्षा मार्किर्नो अघशर्रस ईशत। मदेमदे हि नो ददुः। यूथा गवांमृजुऋतुः। सङ्गृभाय पुरूशता। उभया हस्त्या वसुं। शिशीहि राय आ भर॥४०॥

शिप्रिंन्वाजानां पते। शचींवस्तवं दुर्सनां। आ तू नं इन्द्र भाजय। गोष्वश्वेषु शुभुषुं। सहस्रेषु तुवीमघ। यद्देवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्यास्तस्मांन्मा यूयम्। ऋतस्यर्तेनं मुश्चत। ऋतस्यर्तेनांऽऽदित्याः॥४१॥

यजंत्रा मुश्चतेह माँ। युज्ञैर्वो यज्ञवाहसः। आशिक्षंन्तो न शेंकिम। मेदंस्वता यजंमानाः। स्रुचाऽऽज्येंन जुह्वंतः। अकामा वो विश्वेदेवाः। शिक्षंन्तो नोपं शेकिम। यदि दिवा यदि नक्तम्। एनं एन्स्योकंरत्। भूतं मा तस्माद्भव्यं च॥४२॥

द्रुपदादिव मुश्चतु। द्रुपदादिवन्मुंमुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलादिव। पूतं पवित्रेणेवाऽऽज्यम्। विश्वे मुश्चन्तु मैनंसः। उद्वयं तमंस्स्परि। पश्यंन्तो ज्योति्रुत्तंरम्। देवं देवत्रा सूर्यम्। अगन्म ज्योतिंरुत्तमम्॥४३॥

तर्व कृषि वनस्पतीं आनतामसीत वयं भेरादित्याश्च नर्व च॥\_\_\_\_\_\_[४]

वृषा सो अ्ष्राः पंवते ह्विष्मान्थ्सोर्मः। इन्द्रंस्य भाग ऋंतयुः शतायुः। स मा वृषांणं वृष्भं कृणोतु। प्रियं विशार सर्ववीरर सुवीरम्ं। कस्य वृषां सुते सर्वां। नियुत्वांन्वृष्भो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। यस्ते शृङ्ग वृषोनपात्। प्रणंपात्कुण्डपाय्यः। न्यंस्मिन्दध्र आ मनः॥४४॥ तर सुधीचींकृतयो वृष्णियानि। पौ इस्यांनि नियुतः सश्चुरिन्द्रम्। सुमुद्रं न सिन्धंव उक्थशुंष्माः। उरुव्यचंसुङ्गिर् आ विंशन्ति। इन्द्रांय गिरो अनिंशितसर्गाः। अपः प्रैरंयन्थ्सगंरस्य बुध्नात्। यो अक्षेणेव चिक्रया शचींभिः। विष्वंक्तस्तम्भं पृथिवीमुत द्याम्। अक्षोदयुच्छवंसा क्षामंबुध्नम्। वार्णवांतस्तविंषीभिरिन्द्रः॥४५॥

दृढान्यौँघ्रादुशमांन् ओजंः। अवांभिनत्कुकुभः पर्वतानाम्। आ नो अग्ने सुकेतुनाँ। र्यिं विश्वायुंपोषसम्। मार्डीकं धेहि जीवसेँ। त्व॰ सोम महे भगम्ँ। त्वं यूनं ऋतायते। दक्षं दधासि जीवसेँ। रथं युअते मुरुतंः शुभे सुगम्। सूरो न मित्रावरुणा गविंष्टिषु॥४६॥

रजारेसि चित्रा विचंरन्ति त्न्यवंः। दिवः संम्राजा पर्यसा न उक्षतम्। वाच् सुमित्रावरुणाविरावतीम्। पूर्जन्यंश्चित्रां वंदित् त्विषीमतीम्। अभ्रा वंसत मरुतः सुमाययाँ। द्यां वंर्षयतमरुणामंरेपसम्। अयुक्त सप्त शुन्ध्युवंः। सूरो रथंस्य नित्रयंः। ताभिर्याति स्वयंक्तिभिः। विहेष्ठेभिर्विहरंन् यासि तन्तुम्॥४७॥

अवव्ययन्नितं देव वस्वः। दविध्वतो रुश्मयः सूर्यस्य। चर्मेवावाधुस्तमो अपस्वन्तः। पूर्जन्याय प्र गांयत। दिवस्पुत्रायं मीदुषें। स नों यवसंमिच्छतु। अच्छां वद त्वसंं गीर्भिराभिः। स्तुहि पूर्जन्यं नम्साऽऽविंवास। कनिंऋदद्वृष्भो जीरदानुः। रेतो दधात्वोषंधीषु गर्भम्॥४८॥

यो गर्भमोषंधीनाम्। गवाँ कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणाँम्। तस्मा इदास्ये हृविः। जुहोता मधुंमत्तमम्। इडाँ नः स्ंयतं करत्। तिस्रो यदंग्ने श्ररद्स्त्वामित्। शुचिं घृतेन शुचयः सप्यन्। नामांनि चिद्दिधिरे युज्ञियांनि। असूदयन्त तुनुवः सुजांताः॥४९॥

इन्द्रंश्च नः शुनासीरौ। इमं युज्ञं मिंमिक्षतम्। गर्भं धत्तः स्वस्तयौ। ययोरिदं विश्वं भुवनमा विवेशं। ययोरान्नदो निहितो महंश्च। शुनांसीरावृतुभिः संविदानौ। इन्द्रंवन्तौ ह्विरिदं जुंषेथाम्। आघाये अग्निमिन्धते। स्तृणन्तिं बर्हिरांनुषक्। येषामिन्द्रो युवा सखाँ। अग्न इन्द्रंश्च मेदिनाँ। हथो वृत्राण्यंप्रति। युव हि वृत्रहन्तंमा। याभ्या हस्वरजंयन्नग्रं एव। यावांतस्थतुर्भुवंनस्य मध्यौ। प्रचंर्षणी वृषणा वर्ज्रंबाहू। अग्नी इन्द्रांवृत्रहणां हवे वाम्॥५०॥

म् इन्द्रे गविष्यु वर्षु गर्भः स्वांकः सखं सम् वे॥———[५]

उत नेः प्रिया प्रियासुं। सप्तस्वसा सुजुंष्टा। सरंस्वती स्तोम्यां अत्त्। इमा जुह्वां नायुष्मदा नमोंभिः। प्रति स्तोम रे सरस्वति जुषस्व। तव शर्मन्प्रियतमे दर्धां नाः। उपंस्थेयाम शर्णं न वृक्षम्। त्रीणि पदा विचेत्रमे। विष्णुंर्गोपा अदाँभ्यः।

# ततो धर्माणि धारयन्॥५१॥

तदंस्य प्रियम्भि पाथों अश्याम्। नरो यत्रं देवयवो मदंन्ति। उरुक्रमस्य स हि बन्धुंरित्था। विष्णौः पदे पर्मे मध्व उथ्मः। कृत्वादा अंस्थु श्रेष्ठः। अद्य त्वां वन्वन्थ्सुरेक्णौः। मर्त आनाश सुवृक्तिम्। इमा ब्रह्म ब्रह्मवाह। प्रिया त आ ब्रह्मः सींद। वीहि सूर पुरोडाशम्॥५२॥

उपं नः सूनवो गिरंः। शृण्वन्त्वमृतंस्य ये। सुमृडीका भंवन्तु नः। अद्या नो देव सवितः। प्रजावंथ्सावीः सौभंगम्। परां दुःष्वप्निय सुव। विश्वांनि देव सवितः। दुरितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्म आ सुव। शुचिमकैर्बृहस्पतिम्॥५३॥

अध्वरेषुं नमस्यत। अनाम्योज आ चंके। या धारयंन्त देवा सुदक्षा दक्षंपितारा। असुर्याय प्रमंहसा। स इत् क्षेति सुधित ओकंसि स्वे। तस्मा इडां पिन्वते विश्वदानीं। तस्मै विशंः स्वयमेवानंमन्ति। यस्मिन्ब्रह्मा राजंनि पूर्व एतिं। सक्तिमिन्द्र सच्युंतिम्। सच्युंतिं ज्ञघनंच्युतिम्॥५४॥

कुनात्काभात्र आ भेर। प्रयपस्यत्रिव सुक्थ्यौ। वि नं इन्द्र मृधों जिह। किनींखुनिदव सापयन्। अभि नः सुष्टुंतिं नय। प्रजापंतिः स्त्रियां यशः। मुष्कयोरदधाथ्सपम्। कामस्य तृप्तिमानन्दम्। तस्यौग्ने भाजयेह मा। मोदः प्रमोद आनन्दः॥५५॥ मुष्कयोर्निहिंतः सपंः। सृत्वेव कामंस्य तृप्याणि। दक्षिणानां प्रतिग्रहे। मनंसिश्चत्तमाकूंतिम्। वाचः स्त्यमंशीमिह। पृश्नाः रूपमन्नंस्य। यशः श्रीः श्रंयतां मियं। यथाऽहम्स्या अतृंपः स्त्रियै पुमान्ं। यथा स्री तृप्यंति पुःसी प्रिये प्रिया। पृवं भगंस्य तृप्याणि॥५६॥

यज्ञस्य काम्यः प्रियः। ददामीत्यग्निर्वदित। तथेति वायुराह्
तत्। हन्तेति स्त्यं चन्द्रमाः। आदित्यः स्त्यमोमिति।
आप्स्तथ्सत्यमा भेरन्। यशो यज्ञस्य दक्षिणाम्। असो
मे कामः समृद्धताम्। न हि स्पश्मिविदन्नन्यम्स्मात्।
वैश्वान्रात्पुरप्तारम्ग्रेः॥५७॥

अथेममन्थन्नमृत्ममूराः। वैश्वान्रं क्षेत्रजित्यांय देवाः। येषांमिमे पूर्वे अर्मास् आसन्। अयूपाः सद्म विभृता पुरूणि। वैश्वानर् त्वया ते नुत्ताः। पृथिवीमन्याम्भितंस्थुर्जनांसः। पृथिवीं मातरं महीम्। अन्तरिक्षमुपं ब्रुवे। बृह्तीमूतये दिवम्। विश्वं बिभर्ति पृथिवी॥५८॥

अन्तरिक्षं वि पंप्रथे। दुहे द्यौर्बृह्ती पर्यः। न ता नंशन्ति न दंभाति तस्कंरः। नैनां अमित्रो व्यथिरादंधर्षति। देवाङ्श्च याभिर्यजते ददांति च। ज्योगित्ताभिः सचते गोपंतिः सह। न ता अर्वा रेणुकंकाटो अश्जते। न सङ्स्कृत्त्रमुपं यन्ति ता अभि। उरुगायमभेयं तस्य ता अनुं। गावो मर्त्यंस्य वि

## चंरन्ति यज्वंनः॥५९॥

रात्री व्यंख्यदायती। पुरुत्रा देव्यंक्षिभैः। विश्वा अधि श्रियोऽधित। उपं ते गा इवाकंरम्। वृणीष्व दुंहितर्दिवः। रात्री स्तोमं न जिग्युषीं। देवीं वाचंमजनयन्त देवाः। तां विश्वरूपाः पृशवों वदन्ति। सा नों मृन्द्रेष्मूर्जुं दुहांना। धेनुर्वागुस्मानुष सुष्टुतैतुं॥६०॥

यद्वाग्वदंन्त्यविचेत्नानिं। राष्ट्रीं देवानां निष्सादं मृन्द्रा। चतंस्र ऊर्जं दुदुहे पयार्श्सा। क्षं स्विदस्याः पर्मं जंगाम। गौरी मिंमाय सलिलानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा पर्मे व्योमन्। तस्यार्श्व समुद्रा अधि विक्षंरन्ति। तेनं जीवन्ति प्रदिशश्चतंस्रः॥६१॥

ततः क्षरत्यक्षरम्। तिद्वश्वमुपं जीवति। इन्द्रासूरां जनयंन्विश्वकंर्मा। मुरुत्वारं अस्तु गुणवांन्थ्सजातवान्। अस्य स्रुषा श्वशुंरस्य प्रशिष्टिम्। सपला वाचं मनसा उपांसताम्। इन्द्रः सूरों अतर्द्रजारंसि। स्रुषा सपला श्वशुंरोऽयमंस्तु। अयर शत्रूं अयत् जर्हंषाणः। अयं वाजं जयतु वाजंसातौ। अग्निः क्षंत्रभृदिनिभृष्टमोजः। स्हस्त्रियों दीप्यतामप्रयुच्छन्। विभ्राजंमानः समिधा न उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहृदगुन्द्याम्॥६२॥

धुग्यंस्रोश्राणं बहस्पति ज्यनंत्रितान्यो भगस्य व्याण्यक्षः पृथ्वी यन्त्रनं एत् प्रदिश्ववतेष्क्षे वाजंसातौ चूत्वारि

च⊩\_\_\_\_\_[६]

वृषाँऽस्य १ शुर्वृष्मायं गृह्यसे। वृषाऽयमुग्रो नृचक्षंसे। दिव्यः कंर्मण्यो हितो बृहन्नामं। वृष्मस्य या क्कुत्। विष्वान् विष्णो भवत्। अयं यो मामको वृषाँ। अथो इन्द्रं इव देवेभ्यः। वि ब्रंवीतु जनेंभ्यः। आयुंष्मन्तं वर्चस्वन्तम्। अथो अधिपतिं विशाम्॥६३॥

अस्याः पृथिव्या अध्यक्षम्। इमिनन्द्र वृष्भं कृणु। यः सुश्रङ्गेः सुवृष्भः। कृत्याणो द्रोण आहितः। कार्षीवल प्रगाणेन। वृष्भेणं यजामहे। वृष्भेण यजमानाः। अर्क्रूरेणेव सुर्पिषां। मृद्धेश्च सर्वा इन्द्रेण। पृतनाश्च जयामसि॥६४॥

यस्यायमृष्भो ह्विः। इन्द्रांय परिणीयतेँ। जयांति शत्रुंमायन्तम्ँ। अथो हन्ति पृतन्यतः। नृणामहं प्रणीरसंत्। अग्रं उद्भिन्द्तामंसत्। इन्द्र शुष्मं तनुवा मेरंयस्व। नीचा विश्वां अभितिष्ठाभिमांतीः। नि शृंणीह्याबाधं यो नो अस्ति। उरुं नो लोकं कृंणुहि जीरदानो॥६५॥

प्रेह्मभि प्रेह्मि प्र भेरा सहंस्व। मा विवेनो वि शृंणुष्वा जनेषु। उदींडितो वृंषभ् तिष्ठ शुष्मैः। इन्द्र शत्रूंन्पुरो अस्माकं युध्य। अग्ने जेता त्वं जंय। शत्रूंन्थ्सहस् ओजंसा। वि शत्रून् विमृधों नुद। एतं ते स्तोमं तुविजात् विप्रः। रथं न धीरः स्वपां अतक्षम्। यदीदंग्ने प्रतित्वं देव हर्याः॥६६॥ सुवंवितीर्प एंना जयेम। यो घृतेनाभिमांनितः। इन्द्र जैत्रांय जिज्ञषे। स नः सङ्कांसु पारय। पृत्नासाह्यंषु च। इन्द्रों जिगाय पृथिवीम्। अन्तिरिक्ष्ट्रं सुवंर्म्हत्। वृत्रहा पुंरुचेतनः। इन्द्रों जिगाय सहंसा सहार्रस। इन्द्रों जिगाय पृतेनानि विश्वा॥६७॥

इन्द्रों जातो वि पुरों रुरोज। स नंः पर्स्पा वरिंवः कृणोत्। अयं कृत्ररगृंभीतः। विश्वजिदुद्धिदिथ्सोमंः। ऋषिर्विप्रः काव्येन। वायुरंग्रेगा यंज्ञप्रीः। साकङ्गन्मनंसा यज्ञम्। शिवो नियुद्धिः शिवाभिः। वायो शुक्रो अंयामि ते। मध्वो अग्रं दिविष्टिषु॥६८॥

आ यांहि सोमं पीतये। स्वारुहो देव नियुत्वंता। इमिनंद्र वर्धय क्षित्रयाणाम्। अयं विशां विश्पतिरस्तु राजां। अस्मा इंन्द्र मिह वर्चा स्सि धेहि। अवर्चसं कणुिह शत्रुं मस्य। इममा भंज ग्रामे अश्वेषु गोषुं। निर्मुं भंज योऽिमत्रों अस्य। वर्ष्मन् क्षत्रस्यं कुकुभिं श्रयस्व। ततों न उग्रो वि भंजा वसूं नि॥६९॥

अस्मे द्यांवापृथिवी भूरि वामम्। सन्दुंहाथां घर्मदुघेंव धेनुः। अय॰ राजाँ प्रिय इन्द्रंस्य भूयात्। प्रियो गवामोषंधीनामुतापाम्। युनज्मिं त उत्तरावंन्तमिन्द्रम्। येन् जयांसि न परा जयांसै। स त्वांऽकरेकवृष्भः स्वानांम्। अथो राजन्नुत्तमं मानवानांम्। उत्तर्स्त्वमधेरे ते सप्रताः। एकंवृषा इन्द्रंसखा जिगीवान्॥७०॥ विश्वा आशाः पृतंनाः सञ्जयं जयन्। अभि तिष्ठ शत्र्यतः संहस्व। तुभ्यं भरन्ति क्षितयो यविष्ठ। बिलिमंग्ने अन्तित् ओत दूरात्। आ भन्दिष्ठस्य सुमृतिं चिकिद्धि। बृहत्ते अग्ने मिह् शर्म भद्रम्। यो देह्यो अनंमयद्वध्स्नैः। यो अर्यपत्नीरुषसंश्वकारं। स निरुध्या नहुंषो यह्वो अग्निः। विशंश्वके बलिहृतः सहोभिः॥७१॥

प्र सद्यो अंग्रे अत्येष्यन्यान्। आविर्यस्मै चार्रुतरो बुभूथं। ईडेन्यो वपुष्यो विभावा। प्रियो विशामितिथिर्मानुंषीणाम्। ब्रह्मंज्येष्ठा वीर्या सम्भृतानि। ब्रह्माग्रे ज्येष्ठं दिवमा तंतान। ऋतस्य ब्रह्मं प्रथमोत जंज्ञे। तेनार्हित ब्रह्मंणा स्पर्धितुङ्कः। ब्रह्म सुचो घृतवंतीः। ब्रह्मंणा स्वरंवो मिताः॥७२॥

ब्रह्मं यज्ञस्य तन्तंवः। ऋत्विजो ये हंविष्कृतंः। शृङ्गंणीवेच्छुङ्गिणा समन्दंदिश्रिरे। च्यालंवन्तः स्वरंवः पृथिव्याम्। ते देवासः स्वरंवस्तस्थिवा संः। नमः सर्खिभ्यः सन्नान्माऽवंगात। अभिभूरग्निरंतरद्रजा स्मि। स्पृधो विहत्य पृतंना अभिश्रीः। जुषाणो म् आहुंतिं मामिहष्ट। हृत्वा सपत्नान् वरिवस्करन्नः। ईशानं त्वा भुवंनानामिभिश्रयम्। स्तौम्यंग्न उरुकृत स् सुवीरम्। ह्विर्जुषाणः सपत्ना स्अभिभूरंसि। जहि शत्रू रप मृधो नृदस्व॥७३॥ विश्वा वर्षा विश्व वर्षा विश्व वर्षा वर्षा

स प्रत्वन्नवीयसा। अग्नै चुम्नेने संयतौ। बृहत्तंतन्थ भानुनौ। नवं नु स्तोमंम्ग्नयौ। दिवः श्येनायं जीजनम्। वसौः कुविद्वनाति नः। स्वारुहा यस्य श्रियो दृशे। र्यिर्वीरवंतो यथा। अग्ने युज्ञस्य चेतंतः। अदौभ्यः पुरएता॥७४॥

अग्निर्विशां मानुंषीणाम्। तूर्णी रथः सदा नवंः। नव्र् सोमाय वाजिनें। आज्यं पर्यसोऽजिन। जुष्ट्र् शुचितम् वसुं। नवर् सोम जुषस्व नः। पीयूषंस्येह तृंण्णुहि। यस्ते भाग ऋता व्यम्। नवंस्य सोम ते व्यम्। आ सुंमृतिं वृंणीमहे॥७५॥

स नो रास्व सहस्रिणंः। नव हिवर्जुषस्व नः। ऋतुिनः सोम् भूतंमम्। तदङ्ग प्रतिहर्य नः। राजन्थ्सोम स्वस्तयै। नव्हस्तोम् त्रव हिवः। इन्द्राग्निभ्यां नि वेदय। तज्जषेता ह सचेतसा। शुचिं नु स्तोमं नवंजातम् द्य। इन्द्रौग्नी वृत्रहणा जुषेथांम्॥ ७६॥

उभा हि वार् सुहवा जोहंवीमि। ता वाजरं सद्य उंश्ते धेष्ठां। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। इह देवौ संहुस्निणौं। युज्ञं न आ हि गच्छंताम्। वसुंमन्तर सुवुर्विदम्। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। विश्वान्देवाइस्तंप्यत॥७७॥

हुविषोऽस्य नवंस्य नः। सुवुर्विदो हि जंजिरे। एदं बुर्हिः सुष्टरीमा नवेन। अयं यज्ञो यजमानस्य भागः। अयं बंभूव भुवंनस्य गर्भः। विश्वं देवा इदम्द्यागंमिष्ठाः। इमे नु द्यावांपृथिवी समीचीं। तुन्वाने यज्ञं पुरुपेशंसन्धिया। आऽस्में पृणीतां भुवंनानि विश्वां। प्रजां पुष्टिंममृतं नवंन॥७८॥

इमे धेनू अमृतं ये दुहातैं। पर्यस्वत्युत्तरामेतु पृष्टिः। इमं यज्ञं जुषमाणे नवेन। समीची द्यावापृथिवी घृताचीं। यविष्ठो हव्यवाहंनः। चित्रभानुर्घृतासुंतिः। नवंजातो वि रोचसे। अग्ने तत्ते महित्वनम्। त्वमंग्ने देवताभ्यः। भागे देव न मीयसे॥७९॥

स एंना विद्वान् यंक्ष्यसि। नव् स्तोमं जुषस्व नः। अग्निः प्रंथमः प्राश्नांतु। स हि वेद यथां ह्विः। शिवा अस्मभ्यमोषंधीः। कृणोतुं विश्वचंर्षणिः। भृद्रान्नः श्रेयः समंनैष्ट देवाः। त्वयांऽवसेन् समंशीमहि त्वा। स नों मयोभूः पितो आ विशस्व। शं तोकायं तनुवें स्योनः। एतमु त्यं मधुना संयुतं यवम्। सरंस्वत्या अधिमनावंचकृषुः। इन्द्रं आसीथ्सीरंपतिः श्तन्तंतुः। कीनाशां आसन्म्रुतंः सुदानंवः॥८०॥

### हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥पञ्चमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

प्राणो रंक्षति विश्वमेजंत्। इर्यो भूत्वा बंहुधा बहूनि। स इथ्सर्वं व्यानशे। यो देवो देवेषुं विभूरन्तः। आवृंदूदात् क्षेत्रियंध्वगद्वृषां। तमित्प्राणं मन्सोपं शिक्षत। अग्रं देवानांमिदमंत्तु नो ह्विः। मनस्थितेदम्। भूतं भव्यं च गुप्यते। तिद्धे देवेष्वंग्रियम्॥१॥

आ नं एतु पुरश्चरम्। सह देवैरिम हवम्। मनः श्रेयंसिश्रेयसि। कर्मन् युज्ञपंतिं दर्धत्। जुषतां मे वागिद श् ह्विः। विराङ्देवी पुरोहिता। ह्व्यवाडनंपायिनी। ययां रूपाणि बहुधा वदंन्ति। पेशा श्रेसि देवाः पंरमे ज्नित्रें। सा नों विराडनंपस्फुरन्ती॥२॥

वाग्देवी जुंषतामिद हिवः। चक्षुंर्देवानां ज्योतिर्मृते न्यंक्तम्। अस्य विज्ञानाय बहुधा निधीयते। तस्य सुम्नमंशीमिह। मा नो हासीद्विचक्षणम्। आयुरिन्नः प्रतीयताम्। अनंन्याश्चक्षुंषा वयम्। जीवा ज्योतिरशीमिह। सुवर्ज्योतिरुतामृतम्। श्रोत्रेण भद्रमुत शृंण्वन्ति सत्यम्। श्रोत्रेण वाचं बहुधोद्यमानाम्। श्रोत्रेण मोदश्च महश्च श्रूयते। श्रोत्रेण सर्वा दिश् आ शृंणोिम। येन प्राच्यां उत देक्षिणा। प्रतीच्यै दिशः शृण्वन्त्युंत्रात्। तदिच्छ्रोत्रं बहुधोद्यमानम्।

अरान्न नेमिः परि सर्वं बभूव॥३॥

[8]

उदेहिं वाजिन्यो अस्यपस्वंन्तः। इदः राष्ट्रमा विंश सूनृतांवत्। यो रोहिंतो विश्वंमिदं जजानं। स नों राष्ट्रेषु सुधितान्दधातु। रोहं रेरोह् रेरोहिंत आर्रुरोह। प्रजािमवृद्धिं जनुषांमुपस्थम्। तािभः सःरंब्धो अविद्थ्यडुर्वीः। गातुं प्रपश्यंत्रिह राष्ट्रमाऽहाः। आऽहांर्षीद्राष्ट्रमिह रोहिंतः। मृधो व्यांस्थदभंयं नो अस्तु॥४॥

अस्मभ्यं द्यावापृथिवी शक्वंरीभिः। राष्ट्रं दुंहाथामिह रेवतीभिः। विमंमर्श रोहितो विश्वरूपः। समाच्ऋाणः प्ररुहो रुहंश्च। दिवं गृत्वायं महृता मंहिम्ना। वि नो राष्ट्रम्नेन्तु पर्यसा स्वेनं। यास्ते विश्वस्तपंसा सं बभूवुः। गायत्रं वृथ्समनु तास्त आऽगुः। तास्त्वा विशन्तु महंसा स्वेनं। सं मांता पुत्रो अभ्येतु रोहितः॥५॥

यूयमुंग्रा मरुतः पृश्ञिमातरः। इन्द्रेण स्युजा प्रमृणीथ् शत्रून्। आ वो रोहिंतो अशृणोदभिद्यवः। त्रिसंप्तासो मरुतः स्वादुसम्मुदः। रोहिंतो द्यावांपृथिवी जंजान। तस्मिड्स्तन्तुं परमेष्ठी तंतान। तस्मिञ्छिश्रिये अज एकंपात्। अद्दर्दद्यावांपृथिवी बलेन। रोहिंतो द्यावांपृथिवी अंद्दर्हत्। तेन सुवंः स्तभितन्तेन नाकंः॥६॥

सो अन्तरिक्षे रजंसो विमानः। तेनं देवाः सुवरन्वंविन्दन्।

सुशेवं त्वा भानवां दीदिवा सम्म समग्रासो जुह्वां जातवेदः। उक्षन्तिं त्वा वाजिनमा घृतेनं। सरसंमग्ने युवसे भोजंनानि। अग्ने शर्ध मह्ते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सऔस्पत्य सुयममा कृंणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महार्ससा७॥

अस्त्वेतु रोहिंतो नाको महा रसि॥=

[२]

पुनंन् इन्द्रो मघवां ददातु। धनांनि श्रुक्तो धन्यः सुराधाः। अर्वाचीनं कृणुतां याचितो मनः। श्रुष्टी नो अस्य ह्विषों जुषाणः। यानि नोऽजिनं धनांनि। जहर्थं शूर मृन्युनां। इन्द्रानुंविन्द नुस्तानि। अनेनं ह्विषा पुनः। इन्द्र आशांभ्यः परि। सर्वाभ्योऽभंयं करत्॥८॥

जेता शत्रून् विचंर्षणिः। आकूँत्यै त्वा कामांय त्वा समृधे त्वा। पुरो देधे अमृत्त्वायं जीवसे आकूतिम्स्यावंसे। कामंमस्य समृद्धौ। इन्द्रंस्य युञ्जते धियः। आकूंतिं देवीं मनंसः पुरो देधे। युज्ञस्यं माता सुहवां मे अस्तु। यदिच्छामि मनंसा सकांमः। विदेयंमेनद्धृदंये निविष्टम्॥९॥

सेदग्निर्ग्नी श्रत्यैत्यन्यान्। यत्रं वाजी तनयो वीडुपाणिः। सहस्रंपाथा अक्षरां समेतिं। आशानां त्वाऽऽशापालेभ्यः। चतुभ्यों अमृतैभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः। विधेमं ह्विषां वयम्। विश्वा आशा मधुना सश् सृंजामि। अनुमीवा आप् ओषंधयो भवन्तु। अयं यजमानो मृधो व्यंस्यताम्॥१०॥ अगृंभीताः पृशवंः सन्तु सर्वें। अग्निः सोमो वर्रणो मित्र इन्द्रंः। बृह्स्पतिः सिवता यः संहस्री। पूषा नो गोभिरवंसा सरंस्वती। त्वष्टां रूपाणि समनक्तु युज्ञैः। त्वष्टां रूपाणि दर्धती सरंस्वती। पूषा भगरं सिवता नो ददातु। बृह्स्पतिद्दिदिन्द्रंः सहस्रम्ं। मित्रो दाता वर्रणः सोमो अग्निः॥११॥

\_\_\_\_ करित्रविंष्टमस्यतात्रवं च॥\_\_\_\_\_\_

[३]

आ नों भर् भगंमिन्द्र द्युमन्तम्। नि तें देष्णस्यं धीमहि प्ररेके। उर्व इंव पप्रथे कामों अस्मे। तमापृंणा वसुपते वसूंनाम्। इमं कामंं मन्दया गोभिरश्वैः। चन्द्रवंता राधंसा पप्रथंश्व। सुवर्यवों मृतिभिस्तुभ्यं विप्राः। इन्द्रांय वाहंः कृशिकासों अऋन्। इन्द्रंस्य नु वीर्याणे प्रवोचम्। यानिं चकारं प्रथमानिं वज्री॥१२॥

अह्न्नहिमन्वपस्तंतर्द। प्रवृक्षणां अभिनृत्पर्वतानाम्। अह्न्निहुं पर्वते शिश्रियाणम्। त्वष्टां उस्मै वज्र इं स्वर्यन्ततक्ष। वाश्रा इंव धेनवः स्यन्दंमानाः। अञ्जः समुद्रमवं जग्मुरापः। वृषायमाणोऽवृणीत् सोमम्। त्रिकंद्रुकेष्विपबथ्सुतस्यं। आ सायंकं मघवां दत्त वज्रम्। अहंन्नेनं प्रथमजा महीनाम्॥१३॥

यदिन्द्राह्नंन्प्रथम्जा महीनाम्। आन्मायिनामिनाः प्रोत मायाः। आथ्सूर्यं जनयन्द्यामुषासम्। तादीक्रा शत्रून्न किलांविविथ्से। अहंन्वृत्रं वृत्र्तरं व्यश्सम्। इन्द्रो वर्त्रेण मह्ता वधेनं। स्कन्धारंसीव कुलिंशेनाविवृंक्णा। अहिंः शयत उपपृक्पृंथिव्याम्। अयोध्येव दुर्मद् आ हि जुह्ने। महावीरं तुंविबाधमृंजीषम्॥१४॥

नातांरीरस्य समृतिं वधानांम्। स॰ रुजानाः पिपिष् इन्द्रंशत्रुः। विश्वो विहांया अर्तिः। वसुंदिधे हस्ते दक्षिणे। त्रणिर्न शिश्रथत्। श्रवस्यंया न शिश्रथत्। विश्वंस्मा इदिष्ध्यसे। देवत्रा ह्व्यमूहिषे। विश्वंस्मा इथ्सुकृते वारंमृण्वति। अग्निर्द्वारा व्यृण्वति॥१५॥

उदुजिहांनो अभि कामंमीरयन्। प्रपृश्चित्वश्वा भुवंनानि पूर्वथां। आ केतुना सुषंमिद्धो यिजेष्ठः। कामं नो अग्ने अभिहंर्य दिग्भ्यः। जुषाणो ह्व्यम्मृतेषु दूढ्यः। आ नो र्यिं बंहुलां गोमंतीमिषम्। नि धेहि यक्षंदमृतेषु भूषन्। अश्विना यज्ञमागंतम्। दाशुषः पुरुंद ससा। पूषा रक्षतु नो र्यिम्॥१६॥

ड्मं यज्ञम्श्विनां वर्धयंन्ता। ड्मौ र्यिं यजंमानाय धत्तम्। इमौ पृश्नत्रेक्षतां विश्वतों नः। पूषा नः पातु सद्मप्रयच्छन्। प्रते महे संरस्वति। सुभंगे वार्जिनीवति। सृत्यवाचे भरे मृतिम्। इदं ते हृव्यं घृतवंध्सरस्वति। सृत्यवाचे प्रभरेमा ह्वी १ षिं। ड्मानिं ते दुरिता सौभंगानि। तेभिवंय १ सुभगांसः स्याम॥१७॥

वुज्यहींनामृजी्षं व्यृण्वति रक्षतु नो र्यि सौभंगान्येकं च॥

युज्ञो रायो युज्ञ ईशे वसूनाम्। युज्ञः सस्यानांमुत सुंक्षितीनाम्। युज्ञ इष्टः पूर्विचित्तिं दधातु। युज्ञो ब्रह्मण्वा अप्येतु देवान्। अयं युज्ञो वर्धतां गोभिरश्वैः। इयं वेदिः स्वपत्या सुवीरां। इदं बर्हिरित बर्ही इष्यन्या। इमं युज्ञं विश्वे अवन्तु देवाः। भगं एव भगंवा अस्तु देवाः। तेनं वयं भगंवन्तः स्याम॥१८॥

तं त्वां भग् सर्व् इञ्जोहवीमि। स नों भग पुरएता भेवेह। भग् प्रणेत्भेग् सत्यंराधः। भग्मां धियमुदंव ददंत्रः। भग् प्र णों जनय् गोभिरश्वैः। भग् प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। शश्वेतीः समा उपयन्ति लोकाः। शश्वेतीः समा उपयन्त्यापः। इष्टं पूर्तर शश्वेतीनार् समानार शाश्वतेनं। ह्विषेष्वाऽनन्तं लोकं पर्मा रुरोह॥१९॥

ड्यमेव सा या प्रथमा व्योच्छंत्। सा रूपाणि कुरुते पश्च देवी। द्वे स्वसारौ वयत्स्तन्नमेतत्। सनातनं वितंत्र षणमयूखम्। अवान्या इस्तन्तून्किरतो धृत्तो अन्यान्। नावंपृज्याते न गमाते अन्तम्। आ वो यन्तूदवाहासो अद्या वृष्टिं ये विश्वे मुरुतो जुनन्ति। अयं यो अग्निर्मरुतः समिद्धः। एतं जुषध्वं कवयो युवानः॥२०॥

धारावरा मुरुतो धृष्णुवोजसः। मृगा न भीमास्तंविषेभि-रूर्मिभिः। अग्नयो न शुंशुचाना ऋजीषिणः। भ्रुमिन्धमन्त उप गा अवृण्वत। वि चंक्रमे त्रिर्देवः। आ वेधसं नीलंपृष्ठं बृहन्तम्। बृह्स्पति १ सदेने सादयध्वम्। सादद्योनिं दम् आ दीदिवा १ सम्। हिरंण्यवर्णमरुष १ संपेम। स हि शुचिः श्तपंत्रः स शुन्ध्यः॥ २१॥

हिरंण्यवाशीरिष्ट्रिः सुंवर्षाः। बृह्स्पतिः स स्वांवेश ऋष्वाः। पूरू सर्खिभ्य आसुतिं करिष्ठः। पूष्ट्रं स्तवं व्रवे व्यम्। नरिष्येम कदाचन। स्तोतारंस्त इह स्मंसि। यास्ते पूषन्ना वो अन्तः संमुद्रे। हिर्ण्ययीर्न्तरिक्षे चरंन्ति। याभिर्यासि दूत्या स्र्यस्य। कामेन कृतश्रवं इच्छमानः॥२२॥

अरंण्यान्यरंण्यान्यसौ। या प्रेव नश्यंसि। कथा ग्रामं न पृंच्छसि। न त्वाभीरिंव विन्दती (३)। वृषार्वाय् वदंते। यदुपावंति चिच्चिकः। आघाटीभिंरिव धावयन्। अर्ण्यानिर्महीयते। उत गावं इवादन्। उतो वेश्मेंव दृश्यते॥२३॥

वार्त्रहत्याय शवंसे। पृत्नासाह्यांय च। इन्द्र त्वा वर्तयामिस। सुब्रह्मांणं वीरवंन्तं बृहन्तम्। उरुं गंभीरं पृथुबंध्नमिन्द्र। श्रुतर्षिमुग्रमंभिमातिषाहम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण रियं दाः। क्षेत्रिये त्वा निर्ऋत्ये त्वा। द्रुहो मुंश्चामि वर्रुणस्य पाशात्। अनागसं ब्रह्मंणे त्वा करोमि॥२५॥

शिवे ते द्यावांपृथिवी उभे इमे। शं ते अग्निः सहाद्भिरंस्तु। शं द्यावांपृथिवी सहौषंधीभिः। शम्नतरिक्षः सह वातेन ते। शं ते चतंस्रः प्रदिशों भवन्तु। या दैवीश्चतंस्रः प्रदिशंः। वातंपत्नीर्भि सूर्यों विच्षे। तासाँ त्वा ज्रस् आ दंधामि। प्र यक्ष्मं एतु निर्ऋतिं पराचैः। अमोचि यक्ष्मांदुरितादवंत्रीं॥२६॥

द्रुहः पाशान्तिर्ऋत्यै चोर्दमोचि। अहा अवंर्तिमविंदथ्स्योनम्। अप्यंभूद्भद्रे सुंकृतस्यं लोके। सूर्यंमृतं तमंसो ग्राह्या यत्। देवा अमुंश्रृत्रसृंजन्व्यंनसः। एवम्हिम्मं क्षेत्रियाज्ञांमिश्रृष्ट्सात्। द्रुहो मुंश्रामि वर्रणस्य पाशात्। बृहंस्पते युविमन्द्रेश्च वस्वंः। दिव्यस्यंशाथे उत पार्थिवस्य। धृत्तर र्यिः स्तुंवते कीरयंचित्॥२७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। देवायुधिमन्द्रमा जोहंवानाः। विश्वावृधंमभि ये रक्षंमाणाः। येनं हुता दीर्घमध्वानुमायन्। अनुन्तमर्थमनिवथ्स्यमानाः। यत्तं सुजाते

हिमवंथ्सु भेषजम्। मयोभूः शन्तंमा यद्धृदोऽसिं। ततों नो देहि सीबले। अदो गिरिभ्यो अधि यत्प्रधावंसि। स्शोभंमाना कन्येव शुभ्रे॥२८॥

तां त्वा मुद्गेला ह्विषां वर्धयन्ति। सा नः सीबले र्यिमा भाजयेह। पूर्वं देवा अपरेणानुपश्यं जन्मंभिः। जन्मान्यवंरैः पराणि। वेदांनि देवा अयम्स्मीति माम्। अह॰ हित्वा शरीरं जर्मः प्रस्तात्। प्राणापानौ चक्षुः श्रोत्रम्। वाचं मनिस् सम्भृताम्। हित्वा शरीरं ज्रसः प्रस्तात्। आभूतिं भूतिं व्यमंश्वामहै। इमा एव ता उषसो याः प्रथमा व्यौच्छन्। ता देव्यः कुर्वते पश्चेरूपा। शश्वंतीर्नावंपृज्यन्ति। न गमन्त्यन्तम्॥२९॥

क्रोम्यवंत्रें चिच्छुभ्रेऽश्जवामहे चुत्वारिं च॥—————[ ६

वसूनां त्वाऽधीतेन। रुद्राणांमूर्म्या। आदित्यानां तेजंसा। विश्वेषां देवानां ऋतुंना। मुरुतामेम्नां जुहोमि स्वाहाँ। अभि-भूतिरहमागंमम्। इन्द्रंसखा स्वायुधंः। आस्वाशांसु दुष्यहंः। इदं वर्चो अग्निनां दत्तमागांत्। यशो भर्गः सह ओजो बलं च॥३०॥

दीर्घायुत्वायं श्तशांरदाय। प्रतिगृभ्णामि मह्ते वीर्याय। आयुंरिस विश्वायुंरिस। सर्वायुंरिस सर्वमायुंरिस। सर्वं म् आयुंर्भूयात्। सर्वमायुंर्गेषम्। भूर्भुवः सुवंः। अग्निर्धर्मेणान्नादः। मृत्युर्धर्मेणान्नंपितः। ब्रह्मं क्षत्र इस्वाहां॥३१॥ प्रजापंतिः प्रणेता। बृह्स्पतिः पुरण्ता। यमः पन्थाः। चन्द्रमाः पुनर्सुः स्वाहां। अग्निरंन्नादोऽन्नंपितः। अन्नाद्यंमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां। सोमो राजा राजंपितः। राज्यमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां। वरुणः सम्राट्थ्सम्राद्वंतिः। साम्राज्यमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां॥ ३२॥

मित्रः क्षत्रं क्षत्रपंतिः। क्षत्रमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। इन्द्रो बलं बलंपतिः। बलंमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। बृह्स्पतिर्ब्रह्म ब्रह्मंपतिः। ब्रह्मास्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। स्विता राष्ट्र राष्ट्रपंतिः। राष्ट्रमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। पूषा विशां विदेतिः। विशमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। पूषा विशां सरंस्वती पृष्टिः पृष्टिपत्नी। पृष्टिमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। सरंस्वती पृष्टिः पृष्टिपत्नी। पृष्टिमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। रवष्टां पशूनां मिथुनाना रे रूपकृद्रूपपंतिः। रुपेणास्मिन् युज्ञे यजमानाय पृष्ट्यंदत्तु स्वाहाँ॥३३॥ व्याहां साम्रांज्यमस्मिन् युज्ञे यजमानाय दवातु स्वाहां व्याहां व्याहां वार्षा विश्वा पृष्टा सरंस्वती त्वष्टा दवातु स्वाहां व्याहां व्याहां वार्षा विश्वा पृष्टा सरंस्वती त्वष्टा दवा।॥———[७]

स ईं पाहि य ऋंजीषी तरुंत्रः। यः शिप्रंवान्वृष्भो यो मंतीनाम्। यो गौंत्रभिद्वंज्रभृद्यो हंरिष्ठाः। स ईन्द्र चित्रा थ अभि तृन्धि वाजान्। आ ते शुष्मो वृष्भ एतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तौत्। आ विश्वतो अभिसमैत्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युम्न सुवंवंद्वेह्यस्मे। प्रोष्वंस्मै पुरोर्थम्। इन्द्रांय

# शूषमंर्चत॥३४॥

अभीके चिद् लोककृत्। सङ्गे समथ्सुं वृत्रहा। अस्माकं बोधि चोदिता। नर्भन्तामन्यकेषाँम्। ज्याका अधि धन्वंसु। इन्द्रं वय शुनासीरम्। अस्मिन् यज्ञे हेवामहे। आ वाजै्रूर्प नो गमत्। इन्द्राय शुनासीरांय। स्नुचा जुंहुत नो हुविः॥३५॥

जुषतां प्रति मेधिरः। प्र ह्व्यानि घृतवंन्त्यस्मै। हर्यश्वाय भरता स्जोषाः। इन्द्रर्तुभिब्रह्मणा वावृधानः। शुनासीरी ह्विरिदं जुषस्व। वयः सुपूर्णा उपसेदुरिन्द्रम्। प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुः। मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेऽव बृद्धान्। बृहदिन्द्रांय गायत॥३६॥

मर्रुतो वृत्रहन्तंमम्। येन् ज्योतिरजंनयत्रृतावृधंः। देवं देवाय जागृंवि। कामिहेकाः क इमे पंतुङ्गाः। मान्थालाः कुलिपरिमापतन्ति। अनांवृतैनान्प्रधंमन्तु देवाः। सौपंणं चक्षुंस्तुन्वां विदेय। एवा वन्दस्व वरुणं बृहन्तम्। नमस्याधीरंममृतंस्य गोपाम्। स नः शर्म त्रिवरूथं वियर्स्सत्॥३७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। नाकं सुप्णमुप् यत्पतंन्तम्। हृदा वेनंन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वरुंणस्य दूतम्। यमस्य योनौं शकुनं भुंर्ण्युम्। शं नो देवीर्भिष्टंये। आपों भवन्तु पीतयें। शं योर्भि स्रंवन्तु नः।

# ईशांना वार्याणाम्। क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्॥३८॥

अपो यांचामि भेषजम्। अपसु मे सोमों अब्रवीत्। अन्तर्विश्वांनि भेषजा। अग्निं चं विश्वशंम्भुवम्। आपश्च विश्वभेषजीः। यद्पसु ते सरस्वति। गोष्वश्वेषु यन्मध्री। तेनं मे वाजिनीवति। मुखंमिङ्गि सरस्वति। या सरस्वती वैशम्भल्या॥३९॥

तस्यां मे रास्व। तस्यांस्ते भक्षीय। तस्यांस्ते भूयिष्ठभाजों भूयास्म। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोंकुकुञ्जांतवेदः। इहैव सन्तत्र सन्तं त्वाऽग्ने। प्राणेनं वाचा मनंसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्॥४०॥

ज्योतिषा त्वा वैश्वान्रेणोपंतिष्ठे। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथां नो वर्धया र्यिम्। या ते अग्ने यज्ञियां तुनूस्तयेह्यारोहात्माऽऽत्मानम्ं। अच्छा वसूनि कृण्वन्नस्मे नर्या पुरूणि। यज्ञो भूत्वा यज्ञमा सींद स्वां योनिम्ं। जातंवेदो भुव आ जायंमानः सक्षय एहिं। उपावंरोह जातवेदः पुनस्त्वम्॥४१॥

देवेभ्यों ह्व्यं वंह नः प्रजानन्। आर्युः प्रजाः रियम्स्मासुं धेहि। अजस्रो दीदिहि नो दुरोणे। तिमन्द्रं जोहवीमि मुघवानमुग्रम्। सुत्रा दर्धानुमप्रतिष्कुत्रः शवाः सि। मश्हिंष्ठो गीर्भिरा चं यज्ञियों ऽववर्तत्। राये नो विश्वां सुपर्थां कृणोतु वृज्ञी। त्रिकंद्रुकेषु मिह्षो यवांशिरं तुविशुष्मंस्तृपत्। सोमंमिपबृद्धिष्णुंना सुतं यथाऽवंशत्। स ईं ममाद मिह् कर्म कर्तवे महामुरुम्॥४२॥

सैन र सश्चद्वेवं देवः सत्यिमन्दु र सत्य इन्द्रेः। विद्यतीं सरमां रुग्णमद्रेः। मिह् पार्थः पूर्व्य सिद्ध्येकः। अग्रं नयथ्सुपद्यक्षंराणाम्। अच्छा रवं प्रथमा जांनतीगांत्। विदद्गव्य र स्रमां दृढमूर्वम्। येनानुकं मानुषी भोजते विद्। आ ये विश्वाः स्वपृत्यानिं चुकुः। कृण्वानासों अमृत्त्वायं गातुम्। त्वं नृभिनृपते देवहूंतौ॥४३॥

भूरीणि वृत्वा हंर्यश्व हश्सि। त्वन्निदंस्युश्चमुंरिम्। धुनिं चास्वांपयो दभीतंये सुहन्तुं। एवा पांहि प्रत्नथा मन्दंतु त्वा। श्रुधि ब्रह्मं वावृधस्वोत गीर्मिः। आविः सूर्यं कृणुहि पीपिहीषः। जहि शत्रूरं रिमे गा इन्द्र तृन्धि। अग्ने बाधंस्व वि मृधों नुदस्व। अपामीवा अप रक्षारंसि सेध। अस्माध्संमुद्राह्मंहतो दिवो नंः॥४४॥

अपां भूमान्मुपं नः सृजेह। यज्ञ प्रतिं तिष्ठ सुमृतौ सुशेवा आ त्वाँ। वसूंनि पुरुधा विंशन्तु। दीर्घमायुर्यजंमानाय कृण्वन्। अथामृतेन जरितारंमङ्कि। इन्द्रेः शुनावृद्धितंनोति सीरम्। संवथ्सरस्यं प्रतिमाणंमेतत्। अर्कस्य ज्योतिस्तदिदांस ज्येष्ठम्। संव्थ्सर शुनव्थ्सीरंमेतत्। इन्द्रंस्य राधः प्रयंतं पुरु त्मना। तदंर्करूपं विमिमानमेति। द्वादंशारे प्रतिं तिष्ठतीद्वृषा। अश्वायन्तो ग्व्यन्तो वाज्यंन्तः। हवांमहे त्वोपंगन्तवा उ। आभूषंन्तस्त्वा सुमृतौ नवांयाम्। व्यमिन्द्र त्वा शुन १ हुंवेम॥४५॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥षष्ठमः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

स्वाद्वीं त्वौ स्वादुनौ। तीव्रां तीव्रेणी। अमृतांममृतेन। मधुंमतीं मधुंमता। सृजामि स॰ सोमेन। सोमौऽस्यिश्यौं पच्यस्व। सरंस्वत्यै पच्यस्व। इन्द्रीय सुत्राम्णे पच्यस्व। परीतो षिश्चता सुतम्। सोमो य उत्तम॰ हुविः॥१॥

द्धन्वा यो नर्यो अपस्वंन्तरा। सुषाव सोम्मिद्रंभिः। पुनातुं ते परिस्रुतम्। सोम् सूर्यस्य दुहिता। वारेण शश्वंता तना। वायुः पूतः प्वित्रंण। प्राङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः। इन्द्रंस्य युज्यः सखा। वायुः पूतः प्वित्रंण। प्रत्यङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः॥२॥

इन्द्रंस्य युज्यः सखाँ। ब्रह्मं क्ष्नं पंवते तेजं इन्द्रियम्। सुरंया सोमंः सुत आसृंतो मदांय। शुक्रेणं देव देवताः पिपृग्धि। रसेनान्नं यजंमानाय धेहि। कुविद्ङ्ग यवंमन्तो यवंश्चित्। यथा दान्त्यंनुपूर्वं विययं। इहेहैंषां कृणुत भोजंनानि। ये बर्हिषो नमोवृक्तिं न ज्ग्मः। उपयामगृंहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वा जुष्टं गृह्णामि॥३॥

सरंस्वत्या इन्द्रांय सुत्राम्णैं। एष ते योनिस्तेजंसे त्वा। वीर्याय त्वा बलाय त्वा। तेजों ऽसि तेजो मिये धेहि। वीर्यमिस वीर्यं मिये धेहि। बलंमिस बलं मिये धेहि। नाना हि वाँ देवहिंत्र सदंः कृतम्। मा सर्सृक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हि॰सीः स्वां योनिमाविशन्॥४॥

उपयामगृहीतोऽस्याश्विनं तेर्जः। सार्म्वतं वीर्यम्। ऐन्द्रं बलम्। एष ते योनिर्मोदांय त्वा। आनन्दायं त्वा महंसे त्वा। ओजोऽस्योजो मियं धेहि। मन्युरंसि मन्युं मियं धेहि। महोऽसि महो मियं धेहि। सहोऽसि सहो मियं धेहि। या व्याघ्रं विषूचिका। उभौ वृकं च रक्षंति। श्येनं पंतित्रण्णं सिन्हम्। सेमं पात्वन्हंसः। सम्पृचंः स्थ सं मां भुद्रेणं पृङ्का विपृचंः स्थ वि मां पाप्मनां पृङ्का। ५॥

हुविः प्रत्यङ्ख्सोमो अतिद्वतो गृह्णाम्याविशन्विष्चिका पश्च च॥————[१]

सोमो राजाऽमृत रे सुतः। ऋजीषेणांजहान्मृत्युम्। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। विपान रे शुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मध्री। सोमंमुद्धो व्यंपिबत्। छन्दंसा हुर्सः शुंचिषत्। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। अद्धः क्षीरं व्यंपिबत्॥६॥

त्रुङ्कः । भिया। ऋतेनं सत्यिमंन्द्रियम्। अन्नात्पिर्स्रुतो रसम्। ब्रह्मणा व्यंपिबत् क्षुत्रम्। ऋतेनं सत्यिमंन्द्रियम्। रेतो मूत्रं विजंहाति। योनिं प्रविशिदिन्द्रियम्। गर्भो ज्रायुणाऽऽवृंतः। उल्बं जहाति जन्मंना। ऋतेनं सत्यिमंन्द्रियम्॥७॥

वेदेन रूपे व्यंकरोत्। स्तास्ती प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। सोमेन् सोमो व्यंपिबत्। सुतासुतौ प्रजापितिः। ऋतेनं स्त्यिमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा रूपे व्याकिरोत्। सत्यानृते प्रजापितिः। अश्रंद्धामनृतेऽदेधात्। श्रद्धाः सत्ये प्रजापितिः। ऋतेनं स्त्यिमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा पिर्स्नुतो रसम्। शुक्रेणं शुक्रं व्यपिबत्। पयः सोमं प्रजापितः। ऋतेनं सत्यिमिन्द्रियम्। विपानः शुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं॥८॥

अञ्चः क्षीरं व्यपिबुक्कनमंनुर्तेनं सुत्यमिन्द्रियः श्रुद्धाः सुत्ये प्रजापंतिरृष्टौ चं॥\_\_\_\_\_\_[२]

सुरांवन्तं बर्हिषदर् सुवीरम्ं। यज्ञर हिन्वन्ति महिषा नमोभिः। दर्धानाः सोमं दिवि देवतांसु। मदेमेन्द्रं यजमानाः स्वर्काः। यस्ते रसः सम्भृत ओषंधीषु। सोमंस्य शुष्मः सुरंया सुतस्यं। तेनं जिन्व यजमानं मदेन। सरंस्वतीमृश्विनाविन्द्रंमृश्निम्। यमृश्विना नमुंचेरासुरादिधं। सरंस्वत्यसंनोदिन्द्रियायं॥९॥

इमन्तर शुक्रं मधुमन्तमिन्दुम्। सोम्र् राजानिम्ह भंक्षयामि। यदत्रं रिप्तर रिसनंः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिंबच्छचीभिः। अहं तदंस्य मनसा शिवेनं। सोम्र् राजानिम्ह भंक्षयामि। पितृभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। पितामहेभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। प्रपितामहेभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। अक्षंन्पितरः॥१०॥

अमींमदन्त पितरंः। अतींतृपन्त पितरंः। अमींमृजन्त पितरंः। पितरः शुन्धंध्वम्। पुनन्तुं मा पितरंः सोम्यासंः। पुनन्तुं मा पिताम्हाः। पुनन्तु प्रपितामहाः। प्वित्रेण शृतायुंषा। पुनन्तुं मा पिताम्हाः। पुनन्तु प्रपितामहाः॥११॥

प्वित्रंण श्तायंषा। विश्वमायुर्व्यंश्ववै। अग्न आयू शिष् पवसेऽग्ने पर्वस्व। पर्वमानः सुवर्जनः पुनन्तुं मा देवजनाः। जातंवदः प्वित्रंवद्यतें प्वित्रंमिषिं। उभाभ्यां देव सवितर्वेश्वदेवी पुनती। ये संमानाः समनसः। पितरो यम्राज्यें। तेषां लोकः स्वधा नमः। यज्ञो देवेषुं कल्पताम्॥१२॥

ये संजाताः समंनसः। जीवा जीवेषुं माम्काः। तेषा् श्रु श्रीमीयं कल्पताम्। अस्मिँ छोके श्रात समाँः। द्वे स्रुती अशृणवं पितृणाम्। अहं देवानांमृत मर्त्यानाम्। याभ्यांमिदं विश्वमेज्ञथ्समेति। यदंन्तरा पितरं मातरं च। इद स्ह्विः प्रजनंनं मे अस्तु। दर्शवीर स्वर्वगण स्वस्तये। आत्मसिनं प्रजासिनं। पृशुसन्यंभयसिनं लोकसिनं। अग्निः प्रजां बंहुलां में करोतु। अन्नं पयो रेतों अस्मासुं धत्त। रायस्पोषमिषमूर्जमस्मासुं दीधरथ्स्वाहाँ॥१३॥ इत्रियां प्रितरं श्वारंपा पुननं मा पितामहः पुनन् प्रितंमहः कल्पताः स्वस्तये पश्च चा—[3]

सीसेन तत्रुं मनसा मनीषिणः। ऊर्णासूत्रेणं क्वयों वयन्ति। अश्विनां यज्ञः संविता सरंस्वती। इन्द्रेस्य रूपं वरुणो भिषुज्यन्। तदंस्य रूपमृमृत्ः शचींभिः। तिस्रोऽदंधुर्देवताः सःरगुणाः। लोमानि शष्पैंबंहुधा न तोक्मंभिः। त्वर्गस्य माुरसमंभवन्न लाजाः। तद्श्विनां भिषजां रुद्रवर्तनी। सरस्वती वयति पेशो अन्तरः॥१४॥

अस्थिं मुज्ञानं मासंरैः। कारोतरेण दर्धतो गवाँ त्वचि। सरस्वती मनसा पेशलं वसुं। नासंत्याभ्यां वयति दर्शतं वपुः। रसं परिस्रुता न रोहितम्। नुग्रहुर्धीर्स्तसंरन्न वेमं। पर्यसा शुक्रम्मृतंं जनित्रम्ं। सुरंया मूत्रांज्ञनयन्ति रेतः। अपामंतिं दुर्मतिं बार्धमानाः। ऊर्वध्यं वातर्रस्बुवन्तदारात्॥१५॥

इन्द्रेः सुत्रामा हृदयेन स्त्यम्। पुरोडाशेन सिवता जंजान। यकृत्क्रोमानं वर्रणो भिष्ज्यन्। मतंस्रे वायव्यैर्न मिनाति पित्तम्। आन्नाणि स्थाली मधु पिन्वंमाना। गुदा पात्राणि सुद्धा न धेनुः। श्येनस्य पत्रं न प्रीहा शचींभिः। आस्नदी नाभिरुदरं न माता। कुम्भो विनेष्ठुर्जनिता शचींभिः। यस्मिन्नग्रे योन्यां गर्भो अन्तः॥१६॥

प्राशीर्व्यक्तः श्तधांर् उथ्संः। दुहे न कुम्भी स्वधां पितृभ्यंः। मुख्य सदंस्य शिर् इथ्सदेन। जिह्वा पिवत्रंमिश्वना सर्थ सरंस्वती। चप्पन्न पायुर्भिषगंस्य वालः। वस्तिन शेपो हरंसा तर्स्वी। अश्विभ्यां चक्षुंर्मृतं ग्रहाँभ्याम्। छागेन् तेजो ह्विषां शृतेनं। पक्ष्माणि गोधूमैः क्रेलेरुतानिं। पेशो न शुक्रमसितं वसाते॥१७॥ अविर्न मेषो नृसि वीर्याय। प्राणस्य पन्थां अमृतो ग्रहाँभ्याम्। सरंस्वृत्युप्वाकैंर्व्यानम्। नस्यांनि बर्हिर्बदंरैर्जजान। इन्द्रंस्य रूपमृष्भो बलांय। कर्णांभ्याः ॥ श्रोत्रंममृतं ग्रहाँभ्याम्। यवा न बर्हिर्भुवि केसंराणि। कर्कन्धं जज्ञे मधुं सार्घं मुखाँत्। आत्मन्नुपस्थे न वृकंस्य लोमं। मुखे श्मश्रूणि न व्यांघ्रलोमम्॥१८॥

केशा न शीर्षन् यशंसे श्रिये शिखाँ। सि्ट्हस्य लोम् त्विषिरिन्द्रियाणि। अङ्गाँन्यात्मिन्धिषजा तद्धिनाँ। आत्मान्मङ्गेः समंधाध्मरंस्वती। इन्द्रंस्य रूप॰ शतमान्मायुः। चन्द्रेण ज्योतिर्मृतं दधांना। सरंस्वती योन्यां गर्भम्नतः। अधिभ्यां पत्नी सुकृतं विभर्ति। अपा॰ रसेन् वरुणो न साम्नाँ। इन्द्रं श्रिये जनयंत्रपस् राजाँ। तेर्जः पश्ना॰ ह्विरिन्द्रियावंत्। प्रिस्रुता पर्यसा सार्घं मध्री अधिभ्यां दुग्धं भिषजा सरंस्वत्या सुतास्ताभ्यांम्। अमृतः सोम् इन्द्रं॥१९॥ अन्तर अपाइन्तवंसि वाप्रताम्यां चलारि चा [४]

मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसि। समृहं विश्वैर्देवैः। क्षुत्रस्य नाभिरिसे। क्षुत्रस्य योनिरिसे। स्योनामा सीद। सुषदामा सीद। मा त्वां हिश्सीत्। मा मां हिश्सीत्। निषंसाद धृतव्रतो वर्रुणः। पुस्त्यांस्वा॥२०॥

साम्रांज्याय सुऋतुंः। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंस्वे।

अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। अश्विनोर्भेषंज्येन। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। सरंस्वत्यै भैषंज्येन॥२१॥

वीर्यायात्राद्यांयाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। इन्द्रंस्येन्द्र्येणं। श्रिये यशंसे बलायाभिषिश्चामि। कोऽसि कत्मोऽसि। कस्मैं त्वा कार्यं त्वा। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्गलाँ(४) सत्यंराजा(३)न्। शिरो में श्रीः॥२२॥

यशो मुखम्ँ। त्विषिः केशाँश्च श्मश्रूंणि। राजां मे प्राणीं-ऽमृतम्ँ। सम्राद्वक्षुंः। विराद्ध्रोत्रम्ँ। जिह्वा में भुद्रम्। वाङ्गहंः। मनों मुन्युः। स्वराङ्गामंः। मोदाः प्रमोदा अङ्गुलीरङ्गांनि॥२३॥

चित्तं मे सहंः। बाहू मे बर्लमिन्द्रियम्। हस्तौ मे कर्म वीर्यम्। आत्मा क्षत्रमुरो ममं। पृष्टीर्मे राष्ट्रमुदर्म १ सौ। ग्रीवाश्च श्रोण्यौ। ऊरू अंरुब्री जानुनी। विशो मेऽङ्गानि सुर्वतः। नाभिर्मे चित्तं विज्ञानम्। पायुर्मेऽपंचितिर्भसत्॥ २४॥

आन्नन्द्नन्दावाण्डौ मैं। भगः सौभाँग्यं पसंः। जङ्गाँभ्यां प्रद्यां धर्मों ऽस्मि। विशि राजा प्रतिष्ठितः। प्रतिं क्षत्रे प्रतिं तिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्वेषु प्रतिं तिष्ठामि गोषुं। प्रत्यङ्गेषु प्रतिं तिष्ठाम्यात्मन्। प्रतिं प्राणेषु प्रतिं तिष्ठामि पुष्टे। प्रति

#### द्यावांपृथिव्योः। प्रतिं तिष्ठामि यज्ञे॥२५॥

त्रया देवा एकांदश। त्रयस्त्रिष्शाः सुराधंसः। बृह्स्पतिंपुरो-हिताः। देवस्यं सिवृतुः सवे। देवा देवैरंवन्तु मा। प्रथमा द्वितीयैः। द्वितीयांस्तृतीयैः। तृतीयाः सत्येनं। सत्यं यज्ञेनं। यज्ञो यजुंभिः॥२६॥

यजू १ षे सामंभिः। सामाँन्यृग्भिः। ऋचों याज्यांभिः। याज्यां वषद्कारेः। वृषद्कारा आहुंतिभिः। आहुंतयो मे कामान्थ्समंधयन्तु। भूः स्वाहाँ। लोमांनि प्रयंतिमंमं। त्वङ्म आनंतिरागंतिः। मार्सं म् उपनितः। वस्वस्थि। मृज्ञा म् आनंतिः॥२७॥

यद्देवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकृमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यदि दिवा यदि नक्तम्। एना १ सि चकृमा वयम्। वायुर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यदि जाग्रद्यदि स्वप्नें। एना १ सि चकृमा वयम्॥ २८॥

सूर्यो मा तस्मादेनंसः। विश्वान्मुञ्चत्व १ हंसः। यद्ग्रमे यदरंण्ये। यथ्सभायां यदिन्द्रिये। यच्छूद्रे यद्र्ये। एनंश्चकुमा वयम्। यदेकस्याधि धर्मणि। तस्यांवयजंनमसि। यदापो अघ्निया वरुणेति शपांमहे। ततो वरुण नो मुञ्ज॥२९॥

अवंभृथ निचङ्कुण निचे्रुरसि निचङ्कुण। अवं

देवैर्देवकृतमेनोंऽयाट्। अव मर्त्यूर्मर्त्यंकृतम्। उरोरा नों देव रिषस्पांहि। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु। दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चे व्यं द्विष्मः। द्रुपदादिवेन्मुंमुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलांदिव॥३०॥

पूतं प्वित्रेणेवाऽऽज्यम्। आपः शुन्धन्तु मैनंसः। उद्घयं तमंस्स्परि। पश्यंन्तो ज्योतिरुत्तरम्। देवं देवत्रा सूर्यम्। अगंन्म ज्योतिरुत्तमम्। प्रतियुतो वर्रणस्य पाशः। प्रत्यंस्तो वर्रणस्य पाशः। प्रत्यंस्तो वर्रणस्य पाशः। एधौऽस्येधिषीमहि। सुमिदंसि॥३१॥

तेजोंऽसि तेजो मियं धेहि। अपो अन्वंचारिषम्। रसेन् समंसृक्ष्मिह। पर्यस्वा अग्र आगंमम्। तं मा स॰स्ंज वर्चसा। प्रजयां च धनेन च। समावंवित पृथिवी। समुषाः। समु सूर्यः। समु विश्वंमिदं जगत्। वैश्वान्रज्योतिर्भूयासम्। विभुं कामं व्यंश्ञवै। भूः स्वाहां॥३२॥

स्वप्र एनारेस वकुमा व्यं मुंग मलीविव सुमिवंस जग्नीलि च॥———[६]

होतां यक्षथ्ममिधेन्द्रंमिडस्पदे। नाभां पृथिव्या अधि। दिवो वर्ष्मान्थ्समिध्यते। ओजिष्ठश्चर्षणी सहान्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्तत्तनूनपांतम्। ऊतिभिजेतांर्मपंराजितम्। इन्द्रं देव॰ सुंवर्विदम्। पृथिभिर्मधुंमत्तमैः। नराश॰सेन् तेजंसा॥३३॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्विडांभिरिन्द्रंमीडितम्। आजुह्वांनुममंर्त्यम्। देवो देवैः सवींर्यः। वर्ज्रहस्तः पुरन्दरः। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतांयक्षद्वर्हिषीन्द्रंन्निषद्वरम्। वृष्मं नर्यापसम्। वसुंभीरुद्रैरांदित्यैः। सयुग्भिंर्बर्हिरा-संदत्॥३४॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्रदोजो न वीर्यम्ं। सहो द्वार् इन्द्रंमवर्धयन्। सुप्रायणा विश्रयन्तामृतावृधंः। द्वार् इन्द्रांय मीदुषें। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदुषे इन्द्रंस्य धेनू। सुदुषे मातरौ मही। सवातरौ न तेजंसी। वथ्समिन्द्रंमवर्धताम्॥३५॥

वीतामाज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्ष्रद्देव्या होतांरा। भिषजा सखाया। ह्विषेन्द्रंं भिषज्यतः। क्वी देवौ प्रचेतसौ। इन्द्रांय धत्त इन्द्रियम्। वीतामाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीः। त्रयंस्त्रिधातंवोपसंः। इडा सरस्वती भारती॥३६॥

महीन्द्रंपत्नीर्ह्विष्मंतीः। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्ष्त्वष्टांर्मिन्द्रं देवम्। भिषज्रं सुयजं घृत्तिश्रयम्। पुरुरूपं सुरेतंसं मघोनिम्। इन्द्रांय त्वष्टा दधंदिन्द्रियाणि। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षद्वन्स्पतिम्। शमितारं श्रात्रंतुम्। धियो जोष्टारंमिन्द्रियम्॥३७॥

मध्वां सम्अन्य्थिभिः सुगेभिः। स्वदांति ह्व्यं मधुना घृतेनं। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्विन्द्रङ् स्वाहा-ऽऽज्यंस्य। स्वाहा मेदंसः। स्वाहां स्तोकानांम्। स्वाहा स्वाहांकृतीनाम्। स्वाहां ह्व्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवा॰ आँज्यपान्। स्वाहेन्द्र १ होत्राञ्जंषाणाः। इन्द्र आज्यंस्य वियन्तु। होतुर्यजं॥३८॥

तेर्जसाऽऽसददवर्धतां भारतीन्द्रियं जुंषाणा ह्वे चं (समिधेन्द्रन्तनूनपांतमिडांभिर्बुर्हिष्योर्ज उषे दैव्यां तिस्रस्त्वष्टार्ये वनस्पतिमिन्द्रम्॥ समिधेन्द्रं चतुर्वेत्वेको वियन्तु ह्विर्वीतामेको वियन्तु ह्विर्वेत्वेको वियन्तु होत्र्यज॥॥——— 🔰 🗍

सिमिंद्ध इन्द्रं उषसामनीके। पुरोरुचां पूर्वकृद्वांवृधानः। त्रिभिर्देवैस्त्रिष्शता वर्ज्रंबाहुः। ज्ञ्घानं वृत्रं वि दुरों ववार। नराशक्षः प्रतिशूरो मिमानः। तनूनपात्प्रतिं यज्ञस्य धामं। गोभिर्वपावान्मधुना सम्अन्। हिरंण्येश्चन्द्री यंजिति प्रचेताः। ईडितो देवैर्हिरंवाक अभिष्टिः। आजुह्वांनो हृविषा शर्धमानः॥३९॥

पुरन्दरो मघवान् वर्ज्ञंबाहुः। आयांतु यज्ञमुपंनो जुषाणः। जुषाणो बर्हिरहरिवान् इन्द्रः। प्राचीन र् सीदत्प्रदिशां पृथिव्याः। उरुव्यचाः प्रथमान स्योनम्। आदित्येर्क्तं वस्निः सजोषाः। इन्द्रं दुरंः कव्ष्यो धावंमानाः। वृषाणं यन्तु जनयः सुपत्नीः। द्वारो देवीर्भितो विश्रंयन्ताम्। सुवीरां वीरं प्रथमाना महोभिः॥४०॥

उषासानक्तां बृह्ती बृहन्तम्। पर्यस्वती सुदुघे शूरिमन्द्रम्। पेशंस्वती तन्तुंना संव्ययंन्ती। देवानां देवं यंजतः सुरुको। देव्या मिमाना मनंसा पुरुत्रा। होतांराविन्द्रं प्रथमा सुवाचां। मूर्धन् यज्ञस्य मधुंना दर्धाना। प्राचीनं ज्योतिंह्विषां वृधातः। तिस्रो देवीर्ह्विषा वर्धमानाः। इन्द्रं जुषाणा वृषेणं न

#### पर्लीः॥४१॥

अच्छिन्नं तन्तुं पर्यसा सरेस्वती। इडां देवी भारती विश्वतूँर्तिः। त्वष्टा दध्दिन्द्रांय शुष्मम्। अपाकोचिष्टुर्यशसे पुरूणि। वृषा यजन्वृषणं भूरिरेताः। मूर्धन् यज्ञस्य समनक्त देवान्। वनस्पतिरवंसृष्टो न पाशैः। त्मन्यां सम्अञ्छंिमता न देवः। इन्द्रंस्य ह्व्यैर्जुठरं पृणानः। स्वदांति ह्व्यं मधुना घृतेनं। स्तोकानामिन्दुं प्रति शूर इन्द्रः। वृषायमाणो वृष्भस्तुंराषाट्। घृतप्रुषा मधुना ह्व्यमुन्दन्। मूर्धन् यज्ञस्यं जुषता्ड् स्वाहां॥४२॥

आचंर्षणिप्रा विवेष यन्मां। तर स्प्रीचींः। सृत्यमित्तन्न त्वावारं अन्यो अस्ति। इन्द्रं देवो न मर्त्यो ज्यायान्। अह्नहीं पिर्शयांन्मणिः। अवांसृजोऽपो अच्छां समुद्रम्। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रून्। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरंस्तु। इन्द्रा भेर दक्षिणेना वसूंनि। पितः सिन्धूंनामिस रेवतींनाम्। स शेवृंधमिधं धाद्युम्नम्से। मिहं क्षत्रं जनाषािडंन्द्र तव्यम्। रक्षां च नो म्घोनः पाहि सूरीन्। राये चं नः स्वपत्या इषे धाः॥४३॥

रेवर्तीनां चुत्वर्रि च॥———[ १

देवं ब्रहिरिन्द्र रं सुदेवं देवैः। वीरवंध्स्तीणं वेद्यांमवर्धयत्। वस्तौर्वृतं प्राक्तौर्भृतम्। राया ब्रहिष्मतोऽत्यंगात्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वार् इन्द्र रं सङ्घाते। विङ्वीर्यामन्नवर्धयन्। आ वृथ्सेन् तर्रुणेन कुमारेणं चमीविता अपार्वाणम्। रेणुकंकाटं नुदन्ताम्। वृसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥४४॥

देवी उषासानक्तां। इन्ह्रं यज्ञे प्रयत्यंह्वेताम्। दैवीर्विशः प्रायांसिष्टाम्। सुप्रीते सुधिते अभूताम्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजा। देवी जोष्ट्री वसुधिती। देविमन्द्रंमवर्धताम्। अयांव्यन्याघा द्वेषा रेसि। आन्यावांक्षीद्वसु वार्याणि। यजांमानाय शिक्षिते॥४५॥

वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी ऊर्जाहंती दुघें सुदुघें। पयसेन्द्रंमवर्धताम्। इष्मूर्जम्न्याऽवांक्षीत्। सिग्ध्रिं सपीतिम्न्या। नवेन् पूर्वं दयमाने। पुराणेन् नवम्। अधातामूर्जमूर्जाहंती वसु वार्याणि। यजमानाय शिक्षिते। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥४६॥

देवा दैव्या होतांरा। देविमन्द्रंमवर्धताम्। हृताघंश श्सावा-भाष्टां वसुवार्याणि। यजंमानाय शिक्षितौ। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। पितिमिन्द्रंमवर्धयन्। अस्पृक्षद्भारंती दिवम्। रुद्रैर्यज्ञ सरंस्वती। इडा वसुंमती गृहान्॥४७॥

वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराशश्संः। त्रिवरूथिस्निवन्धुरः। देविमन्द्रमवर्धयत्। शतेनं शिति-

पृष्ठानामाहितः। सहस्रेण प्रवितते। मित्रावरुणेदेस्य होत्रमर्हतः। बृह्स्पतिः स्तोत्रम्। अश्विनाऽऽध्वेर्यवम्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं॥४८॥

देव इन्द्रो वनस्पतिः। हिर्गण्यपर्णो मधुंशाखः सुपिप्पृतः। देविमन्द्रंमवर्धयत्। दिव्मग्रेणाप्रात्। आऽन्तिरिक्षं पृथिवीमंह १ हीत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं बर्गहिर्वारितीनाम्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्वासुस्थिमन्द्रेणा-संन्नम्। अन्या बर्ही १ ष्युभ्यंभूत्। वसुवनं वसुधेयस्यं वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्विष्टं कुर्विन्थ्स्वंष्टकृत्। स्विष्टम्द्य करोतु नः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥ ४९॥

होतां यक्षथ्समिधाऽग्निमिडस्पदे। अश्विनेन्द्रभ् सरंस्वतीम्। अजो धूम्रो न गोधूमैः क्वंलैर्भेषजम्। मधु शष्पैर्न तेजं इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्ततनूनपाथ्सरंस्वती। अविमेषो न भेषजम्। पथा मधुमताभरन्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्॥५०॥

बदंरैरुप्वाकांभिर्भेषुजं तोकांभिः। पयः सोमः परिस्रुतां

घृतं मध्री। वियन्त्वाज्यंस्य होत्यंजी। होतां यक्षां नराशरसां न नग्नहुम्। पित्र सुराये भेषजम्। मेषः सरस्वती भिषक्। रथो न चन्द्रीश्विनौर्वपा इन्द्रंस्य वीर्यम्। बदंरेरुपवाकांभिर्भेषजं तोकांभिः। पयः सोमः पिर्स्रुतां घृतं मध्री। वियन्त्वाज्यंस्य होतर्यजी॥५१॥

होतां यक्षिदिडेडित आजुह्वांनः सरंस्वतीम्। इन्द्रं बलेन वर्धयन्। ऋषभेण गवेन्द्रियम्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्। यवैः कर्कन्धंभिः। मधुं लाजैर्न मासंरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वर्हिः सुष्टरीमोर्णम्रदाः। भिषङ्गासंत्या॥५२॥

भिषजाऽश्विनाऽश्वा शिशुंमती। भिषग्धेनुः सरंस्वती। भिषग्दुह इन्द्रांय भेषजम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्दुरो दिशंः। कृव्ष्यों न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशंः। इन्द्रो न रोदंसी दुधैं। दुहे कामान्थ्सरंस्वती॥५३॥

अश्विनेन्द्रांय भेषजम्। शुक्रं न ज्योतिंरिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजां। होतां यक्षथ्सुपेशंसोषे नक्तं दिवां। अश्विनां सञ्जानाने। समं जाते सरंस्वत्या। त्विषिमिन्द्रे न भेषजम्। श्येनो न रजंसा हृदा। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं॥५४॥

वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षुद्दैव्या होतांरा

भिषजाऽश्विनां। इन्द्रं न जागृंवी दिवा नक्तं न भेषुजैः। शूष्ट्रं सरंस्वती भिषक्। सीसेन दुह इन्द्रियम्। पयः सोर्मः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीर्न भेषुजम्। त्रयंस्त्रिधातंवोऽपसंः। रूपिनन्द्रें हिरण्ययम्॥५५॥

अश्विनेडा न भारती। वाचा सरंस्वती। मह् इन्द्रांय दध्रिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मध्रं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्त्त्वष्टांरिमन्द्रमश्विनां। भिषजुं न सरंस्वतीम्। ओजो न जूतिरिन्द्रियम्। वृको न रेभसो भिषक्। यशः सुरंया भेषजम्॥५६॥

श्रिया न मासंरम्। पयः सोमंः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिम्। शमितार श्रे शतक्रतुम्। भीमं न मृन्यु राजांनं व्याघ्रं नमंसाऽश्विना भामम्। सरंस्वती भिषक्। इन्द्रांय दुह इन्द्रियम्। पयः सोमंः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं॥५७॥

होतां यक्षद्ग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्तोकानांम्। स्वाहां मेदंसां पृथंक्। स्वाहा छागंमिश्वभ्यांम्। स्वाहां मेषः सरंस्वत्ये। स्वाहंर्ष्भिमिन्द्रांय सिःशाय सहंसेन्द्रियम्। स्वाहाऽग्निं न भेषजम्। स्वाहा सोमंमिन्द्रियम्। स्वाहेन्द्रः सुत्रामाणः सिवतारं वरुणं भिषजां पितम्। स्वाहा वनस्पितं प्रियं पाथो न भेषजम्। स्वाहां देवाः आंज्यपान्॥५८॥ स्वाहाऽग्निश् होत्राञ्जुंषाणो अग्निर्भेष्जम्। पयः सोमंः पिर्सुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदिश्वना सरंस्वतीमिन्द्रश्रे सुत्रामाणम्। इमे सोमाः सुरामाणः। छागैर्न मेषेर्ऋष्भः सुताः। शष्पैर्न तोकांभिः। लाजैर्महंस्वन्तः। मदा मासंरेण परिष्कृताः। शुकाः पर्यस्वन्तोऽमृताः। प्रस्थिता वो मधुश्चतः। तानिश्वना सरंस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रहा। जुषन्ताश्रं सौम्यं मधुं। पिबंन्तु मदंन्तु वियन्तु सोमम्ं। होतर्यजं॥५९॥

सिंद्धो अग्निरंश्विना। तृप्तो घूर्मी विराट्थ्सृतः। दुहे धेनुः सरंस्वती। सोमर् शुक्रमिहेन्द्रियम्। तृनूपा भिषजां सुते। अश्विनोभा सरंस्वती। मध्वा रजारंसीन्द्रियम्। इन्द्रांय पृथिभिर्वहान्। इन्द्रायेन्दुर् सरंस्वती। नराशरसेन नग्नहुं:॥६०॥

अधांताम्श्विना मधुं। भेषुजं भिषजां सुते। आजुह्वांना सरंस्वती। इन्द्रांयेन्द्रियाणि वीर्यम्। इडांभिरश्विनाविषम्। समूर्जु स् स् र्यिं दंधुः। अश्विना नमुंचेः सुतम्। सोमई शुक्रं पंरिस्रुतां। सरंस्वती तमाभरत्। बर्हिषेन्द्रांय पातंवे॥६१॥

कुवृष्यों न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशंः।

इन्द्रो न रोदंसी दुधं। दुहे कामान्थ्सरंस्वती। उषासा नक्तंमिश्वना। दिवेन्द्र सायमिन्द्रियेः। सञ्जानाने सुपेशंसा। समं जाते सरंस्वत्या। पातं नो अश्विना दिवां। पाहि नक्त स् सरस्वति॥६२॥

दैव्यां होतारा भिषजा। पातिमन्द्र सर्चां सुते। तिस्रश्चेधा सरंस्वती। अश्विना भारतीडाँ। तीव्रं परिस्रुता सोमम्ं। इन्द्रांय सुषवुर्मदम्ं। अश्विना भेषजं मधुं। भेषजं नः सरंस्वती। इन्द्रे त्वष्टा यशः श्रियम्ं। रूप र रूपमधः सुते। ऋतुथेन्द्रो वनस्पतिः। शशमानः परिस्रुतां। कीलालंमश्विभ्यां मधुं। दुहे धेनुः सरंस्वती। गोभिनं सोमंमश्विना। मासंरेण परिष्कृतां। समधाता स्वरं सरंस्वत्या। स्वाहेन्द्रे सुतं मधुं॥६३॥

अश्विनां ह्विरिन्द्रियम्। नमुंचेधिया सरेस्वती। आ शुक्रमांसुराद्वसु। मुघमिन्द्रांय जभ्रिरे। यमश्विना सरेस्वती। ह्विषेन्द्रमवर्धयन्। स बिंभेद वृलं मुघम्। नमुंचावासुरे सर्चां। तमिन्द्रं पुशवुः सर्चां। अश्विनोभा सरेस्वती॥६४॥

दधांना अभ्यंनूषत। ह्विषां यज्ञिमिन्द्रियम्। य इन्द्रं इन्द्रियं द्धुः। स्विता वर्रुणो भगः। स सुत्रामां ह्विष्पंतिः। यजमानाय सश्चत। स्विता वर्रुणोऽदधंत्। यजमानाय दाशुषे। आदंत्त नमुंचेर्वसुं। सुत्रामा बलंमिन्द्रियम्॥६५॥

वर्रणः क्षुत्रमिन्द्रियम्। भगेन सिवता श्रियम्।

सुत्रामा यशंसा बलम्। दर्धाना युज्ञमांशत। अश्विना गोभिरिन्द्रियम्। अश्वेभिर्वीर्यं बलम्। ह्विषेन्द्र सरंस्वती। यजमानमवर्धयन्। ता नासंत्या सुपेशंसा। हिरंण्यवर्तनी नर्गं। सरंस्वती ह्विष्मंती। इन्द्र कर्मसु नोऽवत। ता भिषजां सुकर्मणा। सा सुदुघा सरंस्वती। स वृंत्रहा शृतक्रंतुः। इन्द्रांय दधुरिन्द्रियम्॥६६॥

देवं ब्र्हिः सरंस्वती। सुदेविमन्द्रं अश्विनां। तेजो न चक्षुंरक्ष्योः। ब्र्हिषां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवीर्द्वारों अश्विनां। भिषजेन्द्रे सरंस्वती। प्राणं न वीर्यन्त्रिसा द्वारों दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६७॥

देवी उषासांविश्वनां। भिषजेन्द्रे सरंस्वती। बलं न वार्चमास्यें। उषाभ्यां दधुरिन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्ज। देवी जोष्ट्री अश्विनां। सुत्रामेन्द्रे सरंस्वती। श्रोत्रं न कर्णयोर्यशंः। जोष्ट्रीभ्यां दधुरिन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्ज॥६८॥

देवी ऊर्जाहुंती दुघे सुदुघें। पयसेन्द्र सरंस्वत्यश्विनां भिषजांऽवत। शुक्रं न ज्योतिः स्तनंयोराहुंती धत्त इन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवा देवानांं भिषजां। होतांराविन्द्रंमुश्विनां। वृष्द्वारैः सरंस्वती। त्विष्टं न हृदंये मृतिम्। होतृंभ्यां दध्रिन्द्रियम्। वृसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६९॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। सर्गस्वत्यश्विना भारतीडाँ। शूषत्र मध्ये नाभ्याँम्। इन्द्रांय दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा। देव इन्द्रो नराशर्थः। त्रिवरूथः सर्गस्वत्याऽश्विभ्यांमीयते रथः। रेतो न रूपम्मृतं जनित्रम्। इन्द्रांय त्वष्टा दधंदिन्द्रियाणि। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा॥७०॥

देव इन्द्रो वनस्पतिः। हिरंण्यपणी अश्विभ्याम्। सरंस्वत्याः सुपिप्पृलः। इन्द्रांय पच्यते मधुं। ओजो न जूतिमृंष्भो न भामम्। वनस्पतिंनीं दर्धदिन्द्रियाणि। वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवं बर्हिर्वारितीनाम्। अध्वरे स्तीर्णमश्विभ्यांम्। ऊर्णम्रदाः सरंस्वत्याः॥७१॥

स्योनिमंन्द्र ते सदंः। ईशायें मृन्यु राजांनं बर्हिषां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजां। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देवान् यंक्षद्यथायथम्। होतांराविन्द्रंमिश्वनां। वाचा वाच् सरंस्वतीम्। अग्नि सोम हितांराविन्द्रंमिश्वनां। वाचा स्वाप्य सरंस्वतीम्। अग्नि सोम हितां वन्स्पतिः। स्विष्ट इन्द्रंः सुत्रामां सिवता वर्रुणो भिषक्। इष्टो देवो वनस्पतिः। स्विष्टा देवा आज्यपाः। इष्टो अग्निर्ग्निनां। होतां होत्रे स्विष्टकृत्। यशो न दर्धदिन्द्रियम्। ऊर्ज्मपंचितिः स्वधाम्। वसुवनं

# वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा॥७२॥

द्वारों दशुरिन्त्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् जोष्ट्रींभ्यां दशुरिन्त्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् होतृंभ्यां दशुरिन्त्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् होतृंभ्यां दशुरिन्त्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् सरंस्वत्या वन्स्पतिः पद्वं (देवं वर्गुहिर्देवीद्वारों देवी उपासांवृश्विनां देवी जोष्ट्रीं देवी उर्जाहृती देवा देवानां भिषजां वपद्वारेर्देवीस्तिम्रस्तिम्रो देवीद्वं इन्द्रो नर्ग्यश्भ्यों देव इन्द्रो वन्स्पतिर्देवं वर्गुहिर्विर्विरीनान्देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवान्। स्पिभ्याऽग्निं देवं वर्गुहः सरंस्वत्यश्विन् सर्वं वियन्तु। द्वारिस्तमः सर्ववियन्तु। अज इन्द्रमोजोऽग्निं पर्ः सरंस्वतीम्। नक्तं पूर्वः सरंस्वति। अन्यत्र सरंस्वती। भिषक्पूर्वं दह इन्द्रियम्। अन्यत्रं दशुरिन्द्रियम्। सौत्रामुण्याश् स्तंतासुती। अक्षन्त्ययं यजमानः॥॥———[१४]

अग्निम् होतांरमवृणीत। अय स्रंतासुती यर्जमानः। पर्चन्पक्तीः। पर्चन्पुरोडाशान्। गृह्णन्म्महान्। ब्रभ्ननिश्चिभ्यां छागु सरंस्वत्या इन्द्रांय। ब्रभ्नन्थ्सरंस्वत्यै मेषिमन्द्रांयाश्वि-भ्यांम्। ब्रभ्निन्द्रांयर्षभम्श्विभ्या सरंस्वत्यै। सूपस्था अद्य देवो वनस्पतिरभवत्। अश्विभ्यां छागेन् सरंस्वत्या इन्द्रांय॥७३॥

सरंस्वत्यै मेषेणेन्द्रांयाश्विभ्यांम्। इन्द्रांयर्ष्भेणाश्विभ्याः सरंस्वत्यै। अक्षः स्तान्मेद्स्तः प्रतिपचताग्रंभीषः। अवीवृधन्त ग्रहैंः। अपातामश्विना सरंस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रहा। सोमान्थ्युराम्णः। उपो उक्थामदाः श्रौद्विमदां अदन्। अवीवृधन्ताङ्ग्षेः। त्वामद्यर्षं आर्षेयर्षीणां नपादवृणीत। अय स्तंतास्ती यजंमानः। बहुभ्य आ सङ्गंतेभ्यः। एष मे देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इतिं। ता या देवा देवदानान्यदुः। तान्यंस्मा आ च शास्वं। आ चं गुरस्व। इषितश्चं होत्रसं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः। सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूंहि॥७४॥ इत्रं व्यवस्य स्व वार्या वार्यः। सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूंहि॥७४॥ इत्रं वार्यः स्व वार्यः। स्व वार्यः स्व वार्यः स्व वार्यः। सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूंहि॥७४॥ इत्रं वार्यः स्व वार्यः वार्यः

उ्शन्तंस्त्वा हवामह आ नों अग्ने सुकेतुनाँ। त्व र सोंम

महे भगं त्वश् सोम् प्रचिकितो मनीषा। त्वया हि नेः पितरंः सोम् पूर्वे त्वश् सोम पितृभिः संविदानः। बर्हिषदः पितर् आऽहं पितृन्। उपहूताः पितरोऽग्निष्वात्ताः पितरः। अग्निष्वात्तानृंतुमतो हवामहे। नराशश्मे सोमपीथं य आशुः। ते नो अर्वन्तः सुहवां भवन्तु। शं नो भवन्तु द्विपदे शं चतुंष्पदे। ये अग्निष्वात्ता येऽनंग्निष्वात्ताः॥७५॥

अर्श्होमुर्चः पितरंः सोम्यासंः। परेऽवंरेऽमृतांसो भवंन्तः। अधि ब्रुवन्तु ते अवन्त्वस्मान्। वान्यांये दुग्धे जुषमाणाः कर्म्भम्। उदीरांणा अवंरे परे च। अग्निष्वात्ता ऋतुभिः संविदानाः। इन्द्रंवन्तो ह्विरिदं जुंषन्ताम्। यदंग्ने कव्यवाहन् त्वमंग्न ईडितो जांतवेदः। मातंली क्व्यैः। ये तांतृपुर्देवत्रा जेहंमानाः। होत्रावृधः स्तोमंतष्टासो अर्कैः। आऽग्ने याहि सुविदत्रेभिर्वाङ्। स्त्यैः क्व्यैः पितृभिर्घम्सिद्धेः। ह्व्यवाहंम् जरं पुरुप्रियम्। अग्निं घृतेनं ह्विषां सप्यन्। उपांसदं कव्यवाहं पितृणाम्। स नः प्रजां वीरवंती स् समृण्वतु॥ ७६॥

अनंग्निष्वात्ता जेहंमानाः सप्त चं॥\_\_\_\_\_\_[१६

होतां यक्षदिडस्पदे। समिधानं महद्यशंः। सुषिमिद्धं वरेण्यम्। अग्निमिन्द्रं वयोधसम्। गायत्रीं छन्दे इन्द्रियम्। त्र्यविं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्येस्य होतुर्यजे। होतां यक्षुच्छुचित्रतम्। तनूनपातमुद्भिदम्। यं

## गर्भमदितिर्द्धे॥७७॥

शुचिमिन्द्रं वयोधसम्। उष्णिह्ं छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाह्ं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदीडेन्यम्। ईडितं वृत्रहन्तंमम्। इडांभिरीड्यू सहंः। सोम्मिन्द्रं वयोधसम्। अनुष्टुभं छन्दं इन्द्रियम्। त्रिवृथ्सं गां वयो दर्धत्॥७८॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्षथ्सुबर्हिषदम्ं। पूषण्वन्तममंत्र्यम्। सीदंन्तं बर्हिषं प्रिये। अमृतेन्द्रं वयोधसम्। बृह्तीं छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविं गां वयो दधंत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्रयंजं। होतांयक्ष्रद्यचंस्वतीः। सुप्रायणा ऋतावृधंः॥७९॥

द्वारों देवीर्हिर्ण्ययीः। ब्रह्माण् इन्ह्रंं वयोधसम्। पृङ्किं छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाहं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्यजे। होतां यक्षथ्सुपेशंसे। सुशित्ये बृंहती उभे। नक्तोषासा न दंर्शते। विश्वमिन्द्रं वयोधसम्। त्रिष्टुमं छन्दं इन्द्रियम्॥८०॥

पृष्ठवाहुं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्रर्यजी होतां यक्षत्प्रचेतसा। देवानांमुत्तमं यर्शः। होतांरा दैव्यां कवी। स्युजेन्द्रं वयोधसम्। जर्गतीं छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्गाहुं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्रर्यजी। होतां

#### यक्षत्पेशंस्वतीः॥८१॥

तिस्रो देवीर्हिर्ण्ययीः। भारंतीर्बृह्तीर्म्हीः। पितृमिन्द्रं वयोधसम्। विराजं छन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुरेतंसम्। त्वष्टांरं पृष्टिवर्धनम्। रूपाणि विभ्रतं पृथंक्। पृष्टिमिन्द्रं वयोधसम्॥८२॥

द्विपदं छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षाणं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षच्छ्रतक्रंतुम्। हिरंण्य-पर्णमुक्थिनम्। रृश्नां बिभ्रंतं वृशिम्। भगमिन्द्रं वयोधसम्। क्कुभं छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशां वेहतं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्यस्वाहांकृतीः। अग्निं गृहपंतिं पृथंक्। वर्रणं भेषजं क्विम्। क्षुत्रमिन्द्रं वयोधसम्। अतिंच्छन्दसं छन्दं इन्द्रियम्। बृहद्ष्पभं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं॥८३॥

द्धे दर्धहतावृधं इन्द्रियं पेशंस्वतीर्वयोधम् वेत्वाऽऽज्यस्य होत्र्यंजं स्प्तः चं (इडस्प्रदेँऽग्निङ्गायतीश्र्यविम्। श्रुचित्रतुर् श्रुचिमुण्णिहिन्दित्यवाहम्। ईडेन्युर् सोमंमनुष्टुर्भं त्रिवृध्यम्। सुब्रुहिपदंममृतेन्द्रं बृहुर्ता पश्चाविम्। व्यचस्वतीः सुप्रायणा द्वारौं बृह्माणः पुङ्किमिह तुर्युवाहम्। सुपेशंसे विश्वमिन्द्रं त्रिष्टुर्भं पष्ठवाहम्। प्रचेतसा स्युजेन्द्रं जर्गतीमिहानुङ्गाहम्। पेशंस्वतीस्त्रियः पति विराजिमिह धेनुत्र। सुरेतस्नत्वष्टांर् पृष्टिमिन्द्रं द्विपदिमिहोक्षाण्त्र। श्रुतकेतुं भगमिन्द्रं कुकुर्भमिह वृशात्र। स्वाहांकृतीः क्षुत्रमतिंच्छन्दसं बृहृहंपुभं गां वयो दर्धदिन्द्रियमृषि वसु नवं दुशेहिन्द्रियमष्टं नव दश् गां न वयो दर्धदिङस्पदे सर्व वेतु॥)॥———[१७]

सिमंद्धो अग्निः सिमधां। सुषंमिद्धो वरेंण्यः। गायत्री छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविगींवयां दधुः। तनूनपाच्छुचिंव्रतः। तनूपाच् सरंस्वती। उष्णिक्छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाङ्गोर्वयां दधुः। इडांभिरग्निरीड्यः। सोमों देवो अमर्त्यः॥८४॥ अनुष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। त्रिव्थ्सो गौर्वयो दधुः। सुबर्हिरग्निः पूषण्वान्। स्तीर्णबर्हिरमर्त्यः। बृह्ती छन्दं इन्द्रियम्। पश्चाविर्गीर्वयो दधुः। दुरो देवीर्दिशो महीः। ब्रह्मा देवो बृह्स्पतिः। पङ्किश्छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाङ्गौर्वयो दधुः॥८५॥

उषे यही सुपेशंसा। विश्वं देवा अमंर्त्याः। त्रिष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। पृष्ठवाद्गौर्वयो दधुः। दैव्यां होतारा भिषजा। इन्द्रेण स्युजां युजा। जगंती छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्वान्गौर्वयो दधुः। तिस्र इडा सरंस्वती। भारंती मुरुतो विशंः॥८६॥

विराद्धन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुर्गौर्न वयो दधः। त्वष्टां तुरीपो अद्भंतः। इन्द्राग्नी पृष्टिवर्धना। द्विपाच्छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षा गौर्न वयो दधः। शमिता नो वनस्पतिः। स्विता प्रस्वन्भगम्। क्कुच्छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशा वेहद्गौर्न वयो दधः। स्वाहां यृज्ञं वर्रणः। सुक्षत्रो भेषुजं करत्। अतिंच्छन्दाश्छन्दं इन्द्रियम्। बृहदंष्भो गौर्वयो दधः॥८७॥

अमेर्त्यस्तुर्युवाङ्गोर्वयो दर्धुर्विशो वृशा वेहद्गौर्न वयो दर्धुश्रुत्वारि च॥————[१८]

वसन्तेन्त्न्नां देवाः। वसंविश्चिवृतां स्तुतम्। रथन्त्रेण् तेजंसा। ह्विरिन्द्रे वयो दधुः। ग्रीष्मेणं देवा ऋतुनां। रुद्राः पंश्चद्रशे स्तुतम्। बृह्ता यशंसा बलम्। ह्विरिन्द्रे वयो दधुः। वर्षाभिर्ऋतुनांऽऽदित्याः। स्तोमे सप्तद्रशे स्तुतम्॥८८॥

वैरूपेणं विशौजंसा। ह्विरिन्द्रे वयों दधुः। शार्देनुर्तुनां

देवाः। एकवि ५श ऋभवंः स्तुतम्। वैराजेनं श्रिया श्रियम्। हविरिन्द्रे वयों दधुः। हेम्न्तेनुर्तुनां देवाः। मुरुतंस्त्रिणुवे स्तुतम्। बलेन् शक्वरीः सहंः। हविरिन्द्रे वयो दधुः। शैशिरेणर्तुनां देवाः। त्रयस्त्रि ५ शेंऽमृत ई स्तुतम्। स्त्येनं रेवर्तीः क्षुत्रम्। हविरिन्द्रे वयो दधुः॥८९॥ 

देवं ब्रहिरिन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। गायुत्रिया छन्दंसेन्द्रियम्। तेज् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यर्जा। देवीर्द्वारों देविमन्द्रं वयोधसम्। देवीर्देवमंवर्धयन्। उष्णिहा छन्दंसेन्द्रियम्। प्राणिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यर्ज॥९०॥

देवी देवं वयोधसम्। उषे इन्द्रमवर्धताम्। अनुष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। वाच्मिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यर्जं। देवी जोष्ट्रीं देवमिन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। बृहत्या छन्दंसेन्द्रियम्। श्रोत्रमिन्द्रे वयो दधंत्। वृसुवनें वसुधेयंस्य वीतां यजं॥९१॥

देवी ऊर्जाहुंती देविमन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। पुङ्ग्या छन्दंसेन्द्रियम्। शुऋमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेर्यस्य वीतां यर्जा। देवा दैव्या होतांरा देवमिन्द्रं वयोधसम्। देवा देवमंवर्धताम्। त्रिष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्।

त्विषिमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥९२॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्वयोधसम्। पितिमिन्द्रंमवर्धयन्। जगत्या छन्दंसेन्द्रियम्। बलुमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराशश्सो देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। विराजा छन्दंसेन्द्रियम्। रेत इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधयस्य वेतु यजं॥९३॥

देवो वनस्पतिर्देविमिन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। द्विपदा छन्दंसेन्द्रियम्। भगमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं बर्हिवीरितीनां देविमन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। कुकुभा छन्दंसेन्द्रियम्। यश् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृद्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। अतिंच्छन्दसा छन्दंसेन्द्रियम्। क्षत्रिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥ वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥ वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥ १४॥

वियुन्तु यजं वीतां यजं वीतां यजं वेतु यजं वेतु यजं वेतु यज् पश्चं च (देवं बुग्हिर्गायियया तेजंः। देवीद्वरिं उप्णिहौं प्राणम्। देवी देवमुषे अंनुष्टुभा वाचम्। देवी जोष्ट्रीं बृह्त्या श्रोत्रम्। देवी ऊर्जाहृंती पृङ्क्या श्रुक्रम्। देवा देव्या होतारा त्रिष्टुभा त्विषिम्। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः पतिं जगंत्या बलम्। देवो नग्रशश्मों विराजा रेतः। देवो वन्स्पतिंद्विपदा भगम्। देवं बुग्हिर्वारितीनां कुकुभा यशः। देवो अग्निः स्विष्टुकुदतिंच्छन्दसा क्षुत्रम्। वेतु वियुन्तु चृतुर्वीतामेकों वियन्तु चृतुर्वैत्ववर्थयदवर्थयश्चुतुर्रवर्थतामकोऽवर्धयश्च बुतुर्वैत्ववर्थयदवर्थयश्चुतुर्रवर्थतामकोऽवर्धयश्च वृतुर्वैत्वर्थयत्वर्थयश्चतुर्वर्थतामेकोऽवर्धयश्च बुतुर्वेत्वर्थयत्वर्थयस्वर्थयः

स्वाद्वीं त्वा सोमः सुरावन्तर् सीसेन मित्रोऽसि यहेवा होता यक्षथ्यमिधेन्द्रर् सिमंद्ध इन्द्र आचर्पणिप्रा देवं बुर्हिरहोतां यक्षथ्यमिधाऽग्निर सिमंद्धो अग्निरिश्वनाऽश्विना हुविरिन्द्रियं देवं बुर्हिः सरस्वत्यग्निमुद्योशन्तो होतां यक्षदिडस्पदे सिमंद्धो अग्निः सुमिधा वसुन्तेनुर्तुना देवं बुर्हिरिन्द्रं वयोधसं विश्शुतिः॥२०॥

स्वाद्वीं त्वाऽमींमदन्त पितरः साम्राज्याय पूतं पवित्रेणोषासानक्ता वर्देरधातां देव इन्द्रो वनस्पतिः पष्ठवाहुङ्गां देवी देवं वयोधसुं चर्तुर्नवितिः॥९४॥

स्वाद्वीं त्वां वेतु यजं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥सप्तमः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

त्रिवृथ्स्तोमो भवति। ब्रह्मवर्चसं वै त्रिवृत्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। अग्निष्टोमः सोमो भवति। ब्रह्मवर्चसं वा अग्निष्टोमः। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। रथन्तर साम भवति। ब्रह्मवर्चसं वै रथन्तरम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। परिस्रुजी होतां भवति॥१॥

अरुणो मिर्मिरस्त्रिशुं ऋः। एतद्वै ब्रह्मवर्चसस्यं रूपम्। रूपेणैव ब्रह्मवर्चसमवं रुन्धे। बृह्स्पतिरकामयत देवानां पुरोधां गंच्छेयमिति। स एतं बृहस्पतिस्वमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजत। ततो वै स देवानां पुरोधामंगच्छत्। यः पुरोधाकांमः स्यात्। स बृहस्पतिसवेनं यजेत॥२॥

पुरोधामेव गंच्छति। तस्यं प्रातः सवने सन्नेषुं नाराश्र्येषुं। एकांदश् दक्षिंणा नीयन्ते। एकांदश् माध्यं दिने सवने सन्नेषुं नाराश्र्येषुं। एकांदश तृतीयसवने सन्नेषुं नाराश्र्येष्ठेश्य प्रकांदश तृतीयसवने सन्नेषुं नाराश्र्येष्ठेश्य नाराश्रयेष्ठेश्य नाराश्रयेष्ठेश्य नाराश्रयेष्ठेश्य नाराश्रयेष्ठेश्य नाराश्रयेष्ठेश्य नाराश्रयेष्ठेश्य नाराश्रयेष्ठेश्य नाराश्रयेष्ठेश्य नाराश्येष्ठेश्य नाराश्येष्ठेश्येष्ठेश्य नाराश्येष्ठेश्य नाराश्येष्ठेशेष्य नाराश्येष्ठेशेष

प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्ट्रशो देवतांनाम्। यावंतीरेव देवताः। ता एवावं रुन्धे। कृष्णाजिनेऽभिषिश्चिति। ब्रह्मणो वा एतद्रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मवर्चसेनैवेनुष्ट्र समर्धयति। आज्येनाभिषिश्चिति। तेजो वा आज्यम्। तेजं एवास्मिन्दधाति॥४॥ यदाँग्नेयो भवंति। अग्निम्ंखा ह्यृद्धिः। अथ् यत्पौष्णः। पृष्टिर्वे पूषा। पृष्टिर्वेश्यस्य। पृष्टिमेवावं रुन्धे। प्रस्वायं सावित्रः। अथ् यत्त्वाष्ट्रः। त्वष्टा हि रूपाणिं विकरोतिं। निर्वरुणत्वायं वारुणः॥५॥

अथो य एव कश्च सन्थ्सूयतें। स हि वांरुणः। अथ् यद्वैंश्वदेवः। वैश्वदेवो हि वैश्यः। अथ् यन्मांरुतः। मा्रुतो हि वेश्यः। स्प्तैतानिं ह्वी १ षि भवन्ति। स्प्तगंणा वै म्रुतः। पृश्जिः पष्टौही मांरुत्या लेभ्यते। विश्वे म्रुतः। विश्वं एवैतन्मध्यतोऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशः प्रियः। विशो हि मध्यतोऽभिषिच्यते। ऋष्मचर्मेऽध्यभिषिश्चति। स हि प्रजनियता। द्वाऽभिषिश्चति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जेवैनंमन्नाद्येन समर्धयति॥६॥

यदाँग्नेयो भवंति। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। अथु यथ्सौम्यः। सौम्यो हि ब्राँह्मणः। प्रस्वायैव सांवित्रः। अथु यद्वार्हस्पृत्यः। एतद्वे ब्राँह्मणस्यं वाक्पृतीयम्। अथु यदंग्नीषोमीयः। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। तौ यदा सङ्गच्छेते॥७॥

अर्थ वीर्यावत्तरो भवति। अथु यथ्मारस्वतः। एति प्रति प्रत्यक्षं ब्राह्मणस्यं वाक्पतीयम्। निर्वरुणत्वायैव वारुणः। अथो य एव कश्च सन्थ्सूयते॥ स हि वारुणः। अथय यद्यावापृथिव्यः। इन्द्रो वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। तं द्यावापृथिवी

# नान्वंमन्येताम्। तमेतेनैव भागधेयेनान्वंमन्येताम्॥८॥

वर्ज्रस्य वा एषोऽनुमानायं। अनुंमतवज्ञः सूयाता इतिं। अष्टावेतानिं ह्वी १ षिं भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्री ब्रंह्मवर्च्सम्। गायत्रियैव बंह्मवर्च्समवं रुन्धे। हिरंण्येन घृतमुत्पुंनाति। तेजंस एव रुचे। कृष्णाजिनेऽभिषिंश्चति। ब्रह्मंणो वा एतदंख्सामयों रूपम्। यत्कृंष्णाजिनम्। ब्रह्मंत्रेवेनंमृख्सामयोरध्यभिषिंश्चति। घृतेनाभिषिंश्चति। तथां वीर्यावत्तरो भवति॥९॥

न वै सोमंन सोमंस्य स्वौंऽस्ति। ह्तो ह्यंषः। अभिष्तो ह्यंषः। न हि हृतः सूयतें। सौमी स्तृतवंशामा लेभते। सोमो वै रेतोधाः। रेतं पृव तद्दंधाति। सौम्यर्चाऽभिषिश्चित। रेतोधा ह्यंषा। रेतः सोमः। रेतं पृवास्मिन्दधाति। यत्किं चं राजसूयंमृते सोमम्। तथ्सवं भवति। अषांढं युथ्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षाम्पस्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजा स्पृति स्पृत्रवंसम्। जयन्तं त्वामनं मदेम सोम॥१०॥

यो वै सोमेन सूयतें। स देवस्वः। यः पृशुनां सूयतें। स देवस्वः। य इष्ट्यां सूयतें। स मनुष्यस्वः। एतं वै पृथंये देवाः प्रायंच्छन्। ततो वै सोऽप्यांर्ण्यानांं पशूनामंसूयत। यावंतीः कियंतीश्च प्रजा वाचं वदंन्ति। तासार् सर्वांसार

### सूयते॥११॥

य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। नाराश्र्यस्यर्चा-ऽभिषिश्चति। मृनुष्यां वै नराश्र्यः। निह्नुत्य वावैतत्। अथाभिषिश्चति। यत्किं चं राज्यसूर्यमनुत्तरवेदीकम्। तथ्सर्वं भवति। ये में पञ्चाशतं दृदुः। अश्वांना र स्थस्तुंतिः। द्युमदंग्रे महि श्रवंः। बृहर्त्कृधि मुघोनांम्। नृवदंमृत नृणाम्॥१२॥ स्यते स्थस्तिक्षीणे वा————[५]

पुष गोंस्वः। षुद्भिष्श उक्थ्यों बृहथ्सांमा। पर्वमाने कण्वरथन्त्रं भंवति। यो वै वाज्येपयः। स सम्राट्थ्सवः। यो राजसूर्यः। स वंरुणस्वः। प्रजापंतिः स्वाराज्यं परमेष्ठी। स्वाराज्यं गौरेव। गौरिव भवति॥१३॥

य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदे। उभे बृहद्रथन्त्रे भंवतः। तिद्धे स्वारांज्यम्। अयुतं दक्षिंणाः। तिद्धे स्वारांज्यम्। अयुतं दक्षिंणाः। तिद्धे स्वारांज्यम्। प्रतिधुषाऽभिषिंश्वति। तिद्धे स्वारांज्यम्। अनुद्धते वेद्ये दक्षिणत आहवनीयंस्य बृह्तः स्तोत्रं प्रत्यभिषिंश्वति। इयं वाव रंथन्त्रम्॥१४॥

असौ बृहत्। अनयोर्वेन्मनंन्तर्हितम्भिषिंश्चिति। पृशुस्तोमो वा एषः। तेनं गोस्वः। षृद्विष्शः सर्वः। रेवज्ञातः सर्हसा वृद्धः। क्षुत्राणां क्षत्रभृत्तंमो वयोधाः। महान्मंहित्वे तंस्तभानः। क्षत्रे राष्ट्रे चं जागृहि। प्रजापंतेस्त्वा परमेष्ठिनः स्वारांज्येनाभिषिंश्चामीत्यांह। स्वारांज्यमेवैनं गमयति॥१५॥

सि १ हे व्याघ्र उत या पृदांकौ। त्विषिरुग्नौ ब्राँह्मणे सूर्ये या। इन्द्रं या देवी सुभगां ज्जानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या रांजन्ये दुन्दुभावायंतायाम्। अश्वंस्य ऋन्द्रे पुरुषस्य मायौ। इन्द्रं या देवी सुभगां ज्जानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या हस्तिनि द्वीपिनि या हिरंण्ये। त्विष्रश्वंषु पुरुषेषु गोषुं॥१६॥

इन्द्रं या देवी सुभगां ज्जानं। सा न आग्न्वर्चसा संविदाना। रथे अक्षेषुं वृष्भस्य वाजें। वाते पूर्जन्ये वर्रणस्य शृष्में। इन्द्रं या देवी सुभगां ज्जानं। सा न आग्न्वर्चसा संविदाना। राडंसि विराडंसि। सुम्राडंसि स्वराडंसि। इन्द्रांय त्वा तेजंस्वते तेजंस्वन्त श्रीणामि। इन्द्रांय त्वौजंस्वत ओजंस्वन्त श्रीणामि॥१७॥

इन्द्रांय त्वा पर्यस्वते पर्यस्वन्तः श्रीणामि। इन्द्रांय त्वाऽऽयुंष्मत् आयुंष्मन्तः श्रीणामि। तेजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। तेजंस्वदस्तु मे मुखम्। तेजंस्वच्छिरों अस्तु मे। तेजंस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। तेजंसा सम्पिपृग्धि मा। ओजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि॥१८॥

ओर्जस्वदस्तु मे मुखम्ँ। ओर्जस्वच्छिरों अस्तु मे। ओर्जस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। ओर्जसा सं पिपृग्धि मा। पयोऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। पयंस्वदस्तु मे मुखम्। पयंस्वच्छिरो अस्तु मे। पयंस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। पयंसा सं पिपृग्धि मा॥१९॥

आयुंरिस। तत्ते प्र यंच्छामि। आयुंष्मदस्तु मे मुखम्ं। आयुंष्मच्छिरों अस्तु मे। आयुंष्मान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। आयुंषा सं पिंपृग्धि मा। इममंग्र आयुंषे वर्चसे कृधि। प्रिय॰ रेतों वरुण सोम राजन्। मातेवास्मा अदिते शर्म यच्छ। विश्वें देवा जरंदष्टिर्यथाऽसंत्॥२०॥

आयुंरिस विश्वायुंरिस। सूर्वायुंरिस सर्वमायुंरिस। यतो वातो मनोजवाः। यतः क्षरंन्ति सिन्धंवः। तासाँ त्वा सर्वासाः रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। समुद्र इंवासि गृह्मनाँ। सोमं इवास्यदाँभ्यः। अग्निरिंव विश्वतः प्रत्यङ्कः। सूर्यं इव ज्योतिषा विभूः॥२१॥

अपां यो द्रवंणे रसंः। तमहम्स्मा आंमुष्यायणायं। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायं गृह्णामि। अपां य ऊर्मी रसंः। तमहम्स्मा आं-मुष्यायणायं। ओजंसे वीर्याय गृह्णामि। अपां यो मध्यतो रसंः। तमहम्स्मा आंमुष्यायणायं। पृष्ठौ प्रजनंनाय गृह्णामि। अपां यो यज्ञियो रसंः। तमहम्स्मा आंमुष्यायणायं। आयुंषे दीर्घायुत्वायं गृह्णामि॥२२॥

गोष्वोजंस्वनः श्रीणाम्योजाँऽसि तत्ते प्रयंच्छामि पर्यसा सम्पिपृष्ये माऽसिंद्विभूर्यंजियो रसो हे चे॥——[७] अभिप्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपत्नहा। आतिष्ठ

मित्रवर्धनः। तुभ्यं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्काव्भित् आतिष्ठ वृत्रहृत्रथम्। आतिष्ठंन्तं परि विश्वं अभूषन्। श्रियं वसानश्चरित स्वरोचाः। महत्तद्स्यासुरस्य नामं। आ विश्वरूपो अमृतांनि तस्थौ। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनु बृहुस्पितः॥२३॥

अनु सोमो अन्वग्निरांवीत्। अनुं त्वा विश्वं देवा अंवन्तु। अनुं सप्त राजांनो य उताभिषिक्ताः। अनुं त्वा मित्रावरुंणाविहावतम्। अनु द्यावांपृथिवी विश्वशंम्भू। सूर्यो अहांभिरनुं त्वाऽवतु। चन्द्रमा नक्षंत्रैरनुं त्वाऽवतु। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिकिता सोमो अग्निः। आऽयं पृंणक्तु रजंसी उपस्थम्॥२४॥

बृहस्पतिः सोमों अग्निरेकं च॥=

[2]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्। स एतं प्रजापंतिरोद्नमंपश्यत्। सोऽन्नं भूतोंऽतिष्ठत्। ता अन्यत्रान्नाद्यमविंत्वा। प्रजापंतिं प्रजा उपावंतिन्त। अन्नंमेवेनं भूतं पश्यंन्तीः प्रजा उपावंतिन्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। सर्वाण्यन्नांनि भवन्ति॥२५॥

सर्वे पुरुषाः। सर्वांण्येवान्नान्यवं रुन्धे। सर्वान्पुरुषान्। राडंसि विराड्सीत्यांह। स्वारांज्यमेवेनं गमयति। यद्धिरंण्यं ददांति। तेज्रस्तेनावं रुन्धे। यत्तिंसृधुन्वम्। वीर्यं तेनं।

# यदष्ट्रौम्॥२६॥

पुष्टिं तेनं। यत्कंमण्डलुम्ं। आयुष्टेनं। यद्धिरंण्यमा बुध्नातिं। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवास्मिन्दधाति। अथो तेजो वै हिरंण्यम्। तेजं एवाऽऽत्मन्धंत्ते। यदोद्नं प्राश्ञातिं। एतदेव सर्वमवरुध्यं॥२७॥

तदंस्मिन्नेक्धाऽधाँत्। रोहिण्यां कार्यः। यद्ग्राँह्मण एव रोहिणी। तस्मादेव। अथो वर्ष्मैवैन समानानां करोति। उद्यता सूर्येण कार्यः। उद्यन्तं वा एतस् सर्वाः प्रजाः प्रतिनन्दन्ति। दिदृक्षेण्यो दर्श्ननीयो भवति। य एवं वेदं। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥२८॥

अवेत्यों ऽवभृथा (३) ना (३) इतिं। यद्दर्भपृञ्जीकैः प्वयंति। तथ्स्वंदेवावैति। तन्नावैति। त्रिभिः पंवयति। त्रयं इमे लोकाः। पृभिरेवैनं लोकैः पंवयति। अथों अपां वा एतत्तेजो वर्चः। यद्दर्भाः। यद्दर्भपृञ्जीकैः प्वयंति। अपामेवैनं तेजसा वर्चसा-ऽभिषिञ्चति॥२९॥

भुव-त्यष्ट्रामवुरुष्यं वदन्ति दुर्भा यद्दर्भपुञ्जीलैः पुवयुत्येकं च॥\_\_\_\_\_\_[९]

प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँन्थस्यामितिं। स एतं पंश्चशार्दीयंमपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनायजता ततो वै स बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयांन्थस्यामितिं। स पंश्चशार्दीयेन यजेत। बहोरेव भूयांन्भवति। मुरुथ्स्तोमो वा एषः। मुरुतो हि देवानां भूयिष्ठाः॥३०॥

बहुर्भवति। य पृतेन् यजंते। य उंचैनमेवं वेदं। पश्चशार्दीयो भवति। पश्च वा ऋतवंः संवथ्सरः। ऋतुष्वेव संवथ्सरे प्रतिं तिष्ठति। अथो पश्चौक्षरा पङ्किः। पाङ्को यज्ञः। यज्ञमेवावं रुन्धे। सप्तद्शः स्तोमा नातिं यन्ति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै॥३१॥

अगस्त्यों मुरुद्धं उक्षणः प्रौक्षंत्। तानिन्द्र आदंत्त। त एंनं वज्रंमुद्यत्याभ्यांयन्त। तानगस्त्यंश्चैवेन्द्रंश्च कयाशुभीयंनाशमयताम्। ताञ्छान्तानुपाँह्वयत। यत्कंयाशुभीयं भवंति शान्त्यैं। तस्मांदेत ऐन्द्रामारुता उक्षाणंः सवनीयां भवन्ति। त्रयंः प्रथमेऽहुन्ना लेभ्यन्ते। एवं द्वितीयें। एवं तृतीयें॥३२॥

पृवं चंतुर्थे। पश्चौत्तमेऽहुन्ना लंभ्यन्ते। वर्षिष्ठमिव् ह्यंतदहंः। वर्षिष्ठः समानानां भवति। य एतेन् यजंते। य उंचैनमेवं वेदं। स्वारौज्यं वा एष युज्ञः। एतेन् वा एक्या वां कान्द्रमः स्वारौज्यमगच्छत्। स्वारौज्यं गच्छति। य एतेन् यजंते॥३३॥

य उं चैनमेवं वेदं। मा्रुतो वा एषः स्तोमंः। एतेन् वै म्रुतो देवानां भूयिष्ठा अभवन्। भूयिष्ठः समानानां भवति। य एतेन् यजते। य उं चैनमेवं वेदं। पृश्वशार्दीयो वा एष यज्ञः। आ पश्चमात्पुरुषादन्नमित्ति। य एतेन् यजते। य उं चैनमेवं वेदं। सप्तद्शङ् स्तोमा नातिं यन्ति। सप्तद्शः प्रजा-पंतिः। प्रजापंतेरेव नैतिं॥३४॥

अस्या जरांसो दमा मिरित्रौः। अर्चर्धूमासो अग्नयंः पावकाः। श्विचीचयंः श्वात्रासो भुरण्यवंः। वनुर्षदो वायवो न सोमौः। यजां नो मित्रावरुंणा। यजां देवा र ऋतं बृहत्। अग्ने यक्षि स्वन्दमम्। अश्विना पिबंत र सुतम्। दीद्यंग्नी शुचिव्रता। ऋतुनां यज्ञवाहसा॥३५॥

द्वे विरूपे चरतः स्वर्थैं। अन्याऽन्यां वृथ्समुपं धापयेते। हरिंर्न्यस्यां भवंति स्वधावान्। शुक्रो अन्यस्यां दहशे सुवर्चाः। पूर्वाप्रं चरतो माययैतौ। शिशू कीर्डन्तौ परिं यातो अध्वरम्। विश्वान्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टें। ऋतून्न्यो विदधंज्ञायते पुनः। त्रीणि शता त्रीष्हस्राण्यग्निम्। त्रि॰्शचं देवा नवं चाऽसपर्यन्॥३६॥

औक्षं घृतैरास्तृंणन्बर्हिरंस्मै। आदिद्धोतांरं न्यंषादयन्त। अग्निनाऽग्निः समिध्यते। कृविर्गृहपंति्युंवां। हृव्यवाङ्गुह्वांऽऽस्यः। अग्निर्देवानां जठरम्। पूतदंक्षः कृविक्रंतुः। देवो देवेभि्रा गंमत्। अग्निश्रियों मुरुतों विश्वकृष्टयः। आ त्वेषमुग्रमवं ईमहे व्यम्॥३७॥

ते स्वानिनों रुद्रियां वर्षनिंणिजः। सिर्हा न हे्षक्रंतवः

सुदानंवः। यदुंत्तमे मंरुतो मध्यमे वाँ। यद्वांऽवमे सुंभगासो दिवि ष्ठ। ततों नो रुद्रा उत वाऽन्वस्यं। अग्ने वित्ताद्धविषो यद्यजांमः। ईडे अग्निः स्ववंसन्नमोभिः। इह प्रसप्तो वि च यत्कृतं नः। रथैरिव प्रभेरे वाज्यद्भिः। प्रदक्षिणिन्म्रुताः स्तोमंमृद्धाम्॥३८॥

श्रुधि श्रुंत्कर्ण् वहिंभिः। देवैरंग्ने स्यावंभिः। आसींदन्तु बर्हिषिं। मित्रो वर्रुणो अर्यमा। प्रात्यावांणो अध्वरम्। विश्वेषामिदंतिर्यज्ञियांनाम्। विश्वेषामितंथिर्मानुंषाणाम्। अग्निर्देवानामवं आवृणानः। सुमृडीको भेवतु विश्ववेदाः। त्वे अग्ने सुमृतिं भिक्षंमाणाः॥३९॥

दिवि श्रवो दिधिरे यज्ञियांसः। नक्तां च चुकुरुषसा विरूपे। कृष्णं च वर्णमरुणं च सन्धुः। त्वामंग्न आदित्यासं आस्यम्। त्वां जिह्वा श्रचंयश्चकिरे कवे। त्वा श्रांतिषाचो अध्वरेषुं सिश्चरे। त्वे देवा ह्विरंदन्त्याहुंतम्। नि त्वां यज्ञस्य साधंनम्। अग्ने होतांरमृत्विजम्। वनुष्वद्देव धीमिह् प्रचेतसम्। जी्रं दूतममंर्त्यम्॥४०॥

तिष्ठा हरी रथ आ युज्यमांना याहि। वायुर्न नियुतों नो अच्छं। पिबास्यन्थों अभिसृष्टो अस्मे। इन्द्रः स्वाहां रिमा ते मदाय। कस्य वृषां सुते सचां। नियुत्वांन्वृष्भो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। इन्द्रं वयं महाधने। इन्द्रमर्भे हवामहे।

# युजं वृत्रेषुं वृज्जिणम्॥४१॥

द्विता यो वृंत्रहन्तंमः। विद इन्द्रंः शतक्रंतुः। उपं नो हरिभिः सुतम्। स सूर् आज्नयं ज्योतिरिन्द्रम्ं। अया धिया त्रिण्रिद्रंबर्हाः। ऋतेनं शुष्मी नवंमानो अर्कैः। व्यंस्निधों अस्रो अद्रिंबिभेद। उतत्यदाश्वश्वियम्। यदिन्द्र नाहुंषी्ष्वा। अग्रे विक्षु प्रतीदंयत्॥४२॥

भरेष्विन्द्र स्मुहव हिवामहे। अहि मुच हियुं जनम्। अग्निं मित्रं वर्रण सातये भगम्। द्यावापृथिवी मुरुतः स्वस्तये। मुहि क्षेत्रं पुरुश्चन्द्रं वि विद्वान्। आदिथ्सर्खिभ्यश्चरथ समैरत्। इन्द्रो नृभिरजन्दीद्यानः साकम्। सूर्यमुषसं गातुम्ग्निम्। उरुं नो लोकमन् नेषि विद्वान्। सुर्वर्वुङ्योतिरभय स्वस्ति॥४३॥

ऋष्वा तं इन्द्र स्थविंरस्य बाहू। उपंस्थेयाम शर्णा बृहन्तां। आ नो विश्वांभिरूतिभिः सजोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हर्यश्व याहि। वरीवृज्धस्थविंरभिः सुशिप्र। अस्मे दधृद्वृषंणु शृष्मंमिन्द्र। इन्द्रांय गावं आशिरम्ं। दुदुहे विज्ञिणे मधुं। यथ्सीमुपह्वरे विदत्। तास्ते विज्ञिन्धेनवों जोजयुर्नः॥४४॥

गर्भस्तयो नियतो विश्ववाराः। अहंरहुर्भूय इञ्जोगुंवानाः। पूर्णा इंन्द्र क्षुमतो भोजनस्य। इमां ते धियं प्र भेरे महो महीम्। अस्य स्तोत्रे धिषणा यत्तं आनुजे। तमुंथ्सवे चं प्रसुवे चं सास्हिम्। इन्द्रं देवासः शवंसा मदं ननुं॥४५॥
वृज्जिणंमयथ्यत्सिः जीजवृतः सम चं॥———[१३]

प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। तेंंऽस्माथ्सृष्टाः परांं च आयन्। तानंग्निष्टोमेन् नाऽऽप्नोंत्। तानुक्थ्येन् नाऽऽप्नोंत्। तान्थ्योंड्शिना् नाऽऽप्नोंत्। तान्नात्रिया् नाऽऽप्नोंत्। तान्थ्यन्धिना् नाऽऽप्नोंत्। सोंऽग्निमंब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तानृग्निस्त्रिवृता् स्तोमंन् नाऽऽप्नोंत्॥४६॥

स इन्द्रंमब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तानिन्द्रंः पश्चद्रशेन् स्तोमंन् नाऽऽप्नौत्। स विश्वौन्देवानंब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सतेतिं। तान् विश्वेदेवाः संप्तद्रशेन् स्तोमेन् नाऽऽप्नुंवन्। स विष्णुंमब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तान् विष्णुंरेकविश्शेन् स्तोमेनाऽऽप्रोत्। वार्वन्तीयेनावारयत॥४७॥

इदं विष्णुर्वि चंक्रम् इति व्यंक्रमत। यस्मौत्पृशवः प्रप्रेव् भ्रश्शेरन्। स एतेनं यजेत। यदाप्नौत्। तद्प्तोर्यामंस्याप्तोर्याम्-त्वम्। एतेन् वै देवा जैत्वांनि जित्वा। यं काम्मकांमयन्त् तमांऽऽप्रुवन्। यं कामं कामयंते। तमेतेनांऽऽप्नोति॥४८॥ स्तोमंन् नाऽऽप्नोदवारयत् नवं च॥——[१४]

व्याघ्रों ऽयम्ग्रौ चंरित प्रविष्टः। ऋषींणां पुत्रो अंभिशस्तिपा अयम्। नमस्कारेण नमंसा ते जुहोमि। मा देवानां मिथुयाकंर्म भागम्। सावीर्हि देव प्रस्वायं पित्रे। वर्ष्माणंमस्मै वरिमाणंमस्मै। अथास्मभ्य सवितः सर्वतांता। दिवेदिंव आ सुंवा भूरिं पृश्वः। भूतो भूतेषुं चरित प्रविष्टः। स भूतानामधिपतिर्बभूव॥४९॥

तस्यं मृत्यौ चंरित राज्ञसूयम्ं। स राजां राज्यमनुं मन्यतामिदम्। येभिः शिल्पैः पप्रथानामद्दर्हत्। येभिर्द्याम्भ्यपिर्श्यत्प्रजापितः। येभिर्वाचं विश्वरूपार समव्यंयत्। तेनेममंग्र इह वर्चसा समिद्धाः। येभिरादित्यस्तपिति प्र केतुभिः। येभिः सूर्यो दृद्शे चित्रभानुः। येभिर्वाचं पुष्कलेभिरव्यंयत्। तेनेममंग्र इह वर्चसा समिद्धिः॥५०॥

आऽयं भांतु शवंसा पश्चं कृष्टीः। इन्द्रं इव ज्येष्ठो भंवतु प्रजावान्। अस्मा अस्तु पुष्कुलं चित्रभांनु। आऽयं पृंणक्तु रजंसी उपस्थम्। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंत्पुष्कुलं चित्रभांनु। यस्मिन्थ्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्। तस्मिन्नाजांनुमधि विश्रंयेमम्। द्यौरंसि पृथिव्यंसि। व्याघ्रो वैयाघ्रेऽधिं॥५१॥

विश्रंयस्व दिशों महीः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमिधं भ्रशत्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवुः। या अन्तिरक्ष उत पार्थिवीर्याः। तासां त्वा सर्वासार रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। अभि त्वा वर्चसाऽसिचं दिव्येनं। पर्यसा सह। यथासां राष्ट्रवर्धनः॥५२॥

तथाँ त्वा सविता कंरत्। इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्।

समुद्रव्यंचस्ङ्गिरंः। र्थीतंमः रथीनाम्। वाजांनाः सत्पंतिं पितम्। वसंवस्त्वा पुरस्तांद्भिषिश्चन्तु गायत्रेण् छन्दंसा। रुद्रास्त्वां दक्षिण्तोंऽभिषिश्चन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। आदित्यास्त्वां पृश्चाद्भिषिश्चन्तु जागंतेन् छन्दंसा। विश्वं त्वा देवा उत्तर्तोऽभिषिश्चं त्वाऽनुंष्टुभेन् छन्दंसा। बृह्स्पितंस्त्वोपिरंष्टाद्भिषिश्चतु पाङ्केन् छन्दंसा॥५३॥

अरुणं त्वा वृकंमुग्रङ्क्षंजङ्करम्। रोचंमानं म्रुतामग्रें अर्चिषंः। सूर्यवन्तं मुघवानं विषास्हिम्। इन्द्रंमुक्थेषुं नाम्हूतंम १ हुवेम। प्र बाहवां सिसृतं जीवसं नः। आ नो गर्व्यातिमुक्षतं घृतेनं। आ नो जने श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इन्द्रंस्य ते वीर्य्कृतः। बाहू उपावं हरामि॥५४॥

बुभूबाव्यंयत्तेनेममंग्र इह वर्चसा समिक्कि वैयाघेऽधि राष्ट्रवर्धनः पाङ्केन छन्दसोपावंहरामि॥————[१५]

अभि प्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपत्नहा। आतिष्ठ वृत्रहन्तमः। तुभ्यंं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावभितो रथं यौ। ध्वान्तं वांताग्रमन्ं स्श्चरंन्तौ। दूरेहेतिरिन्द्रियावाँन्पत्त्री। ते नोऽग्नयः पप्रयः पारयन्तु। नमंस्त ऋषे गद। अव्यंथायै त्वा स्वधायै त्वा॥५५॥

मा नं इन्द्राभितस्त्वदृष्वारिष्टासः। एवा ब्रंह्मन्तवेदंस्तु। तिष्ठा रथे अधि यद्वज्रंहस्तः। आ र्श्मीन्देव युवसे स्वर्श्वः। आ तिष्ठ वृत्रहन्नातिष्ठंन्तं परिं। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनुं त्वा मित्रावर्रुणौ। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिंकिता सोमो अग्निः। अनुं त्वाऽवतु सविता सवेन ॥ ५६॥

इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। स्मुद्रव्यंचस्ङ्गिरंः। र्थीतंमश् रथीनाम्। वाजांनाश् सत्पंतिं पतिम्। परिमा सेन्या घोषाः। ज्यानां वृञ्जन्तु गृध्नवंः। मेथिष्ठाः पिन्वंमाना इह। मां गोपंतिम्भि संविंशन्तु। तन्मेऽनुमिति्रनुं मन्यताम्। तन्माता पृथिवी तित्पता द्यौः॥५७॥

तद्भावांणः सोम्सुतां मयो्भुवंः। तदंश्विना शृणुतः सौभगा युवम्। अवं ते हेड् उदुंत्तमम्। एना व्याघ्रं परिषस्वजानाः। सि्र्हः हिन्वन्ति महृते सौभंगाय। समुद्रं न सुहुवंन्तस्थिवाः सम्। मुमृज्यन्ते द्वीपिनंमुफ्स्वंन्तः। उद्सावेतु सूर्यः। उद्दिदं मांमुकं वचंः। उदिहि देव सूर्य। सह वृग्नुना ममं। अहं वाचो विवाचंनम्। मिय वागंस्तु धर्णसिः। यन्तुं नृदयो वर्षंन्तु पूर्जन्याः। सुपिप्पुला ओषंधयो भवन्तु। अन्नंवतामोद्नवंतामामिक्षंवताम्। एषाः राजां भूयासम्॥५८॥

स्वधायै त्वा सुवेन द्योः सूर्य सप्त चं॥\_\_\_\_\_\_[१६]

ये केशिनंः प्रथमाः स्त्रमासंत। येभिराभृतं यदिदं विरोचंते। तेभ्यों जुहोमि बहुधा घृतेनं। रायस्पोषेणेमं वर्चसा स॰ सृंजाथ। नर्ते ब्रह्मणस्तपंसो विमोकः। द्विनाम्नीं दीक्षा वृशिनी ह्यंग्रा। प्र केशाः सुवतं काण्डिनो भवन्ति। तेषां ब्रह्मदीशे वर्पनस्य नान्यः। आ रोह प्रोष्टं विषंहस्व शत्रून्। अवासाग्दीक्षा वृशिनी ह्यंग्रा॥५९॥

देहि दक्षिणां प्रतिर्स्वायुः। अथांमुच्यस्व वर्रुणस्य पाशांत्। येनावंपथ्सिवृता क्षुरेणं। सोमंस्य राज्ञो वर्रुणस्य विद्वान्। तेनं ब्रह्माणो वपतेदम्स्योर्जेमम्। र्य्या वर्चसा संज्ञाथ। मा ते केशाननं गाद्वर्चं पृतत्। तथां धाता करोतु ते। तुभ्यमिन्द्रो बृहस्पतिः। सविता वर्च आदंधात्॥६०॥

तेभ्यों निधानं बहुधा व्येच्छन्। अन्तरा द्यावांपृथिवी अपः सुवंः। दर्भस्तम्बे वीर्यकृते निधायं। पौइस्येनेमं वर्चसा सर सृजाथ। बलं ते बाहुवोः संविता दंधातु। सोमंस्त्वाऽनक्तु पर्यसा घृतेनं। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौइस्येनेमं वर्चसा सरसृंजाथ। यथ्सीमन्तं कङ्कंतस्ते लिलेखं। यद्वां क्षुरः परिववर्ज् वपईस्ते। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौइस्येनेम सर्मुंजाथो वीर्यण॥६१॥ अवांसार्थका वृष्यां व्रंगऽदंधाहुवर्ज् वपई स्ते हे वे। [१७]

इन्द्रं वै स्वाविशों मुरुतो नापांचायन्। सोऽनंपचाय्यमान एतं विघनमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजता तेनैवासान्तश् सर्श्रं स्तम्भं व्यंहन्। यद्यहन्ं। तिद्वेघनस्यं विघनत्वम्। वि पाप्मानं भ्रातृंव्यश् हते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं

### वेदं॥६२॥

य राजांनं विशो नाप्चायेयः। यो वा ब्राह्मणस्तमंसा पाप्मना प्रावृंतः स्यात्। स एतेनं यजेत। विघनेनैवैनंद्विहत्यं। विशामाधिपत्यं गच्छति। तस्य द्वे द्वांद्शे स्तोत्रे भवंतः। द्वे चंतुर्वि १ औद्विंद्यमेव तत्। एतद्वे क्षुत्रस्यौद्विंद्यम्। यदंस्मै स्वाविशो बुलि १ हर्रन्ति॥६३॥

हर्गन्त्यस्मै विशो बुलिम्। ऐन्मप्रतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं। प्रबाहुग्वा अग्रै क्षुत्राण्यातेपुः। तेषामिन्द्रः क्षुत्राण्यादेत्त। न वा इमानि क्षुत्राण्यंभूविन्निति। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्। आ श्रेयंसो भ्रातृंव्यस्य तेजं इन्द्रियं देत्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥६४॥

तद्यथां हु वै संचिक्तिणौ कप्लंकावुपावंहितौ स्यातांम्। पृवमेतौ युग्मन्तौ स्तोमौं। अयुक्षु स्तोमेषु क्रियेते। पाप्मनो-ऽपंहत्यै। अपं पाप्मानं भ्रातृंव्य हते। य पृतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। तद्यथां हु वै सूंतग्रामण्यंः। पृवं छन्दा सि। तेष्वसावांदित्यो बृंहतीर्भ्यूंढः॥६५॥

स्तोबृंहतीषु स्तुवते स्तो बृंहन्। प्रजयां प्शुभिरसानीत्येव। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तं व क्षत्रं विशा। विशेवनं क्षत्रेण व्यतिषज्ञति। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो व ग्रांमणीः संजातैः। स्जातैरेवेनं व्यतिषज्जित। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्ताभिः व पुरुषः पाप्मभिः। व्यतिषक्ताभिरेवास्यं

त्रिवृत्पाप्मनों नुदते॥

# पाप्मनों नुदते॥६६॥

वेद हर्रन्त्येनमेवं वेदाभ्यूंढः पाप्मभिरेकं च॥———[१८]

त्रिवृद्यदाँभ्रेयोंऽग्निमुंखा ह्यब्द्रियंदाँभ्रेय आँग्नेयो न वै सोमेंनु यो वै सोमेंनेष गोंसुवः सि्र्हेंऽभि प्रेहिं मित्रवर्धनः प्रजापंतिस्ता औदनं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयांनगस्त्योस्या जर्रासस्तिष्ठा हरीं प्रजापंतिः पृश्चन्याप्रांऽयम्भिप्रेहिं वृत्रहन्तंमो ये केशिन् इन्द्रं वा अष्टादंश॥१८॥ त्रिवृद्यो वे सोमेनायुंरिस बहुर्भवित् तिष्ठा हरी्रथ् आयं भांतु तेभ्यों निधान् ए पदर्थ्यष्टिः॥६६॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥अष्टमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

पीवौँन्ना रियृवधं सुमेधाः। श्वेतः सिंषक्ति नियुतां-मिभुशाः। ते वायवे समंनसो वितंस्थुः। विश्वेन्नरं स्वपत्यानिं चक्रुः। रायेऽनु यञ्जज्ञतू रोदंसी उभे। राये देवी धिषणां धाति देवम्। अधां वायुं नियुतं सश्चत् स्वाः। उत श्वेतं वसुंधितिन्निरेके। आ वायो प्र याभिः। प्र वायुमच्छां बृह्ती मंनीषा॥१॥

बृहद्रंयिं विश्ववाराः रथप्राम्। द्युतद्यांमा नियुतः पत्यंमानः। कविः कविमियक्षसि प्रयज्यो। आ नो नियुद्धिः शतिनीभिरध्वरम्। सहस्रिणीभिरुपं याहि यज्ञम्। वायो अस्मिन् ह्विषिं मादयस्व। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जुहुमस्तं नो अस्तु॥२॥

वय स्याम् पत्यो रयीणाम्। रयीणां पतिं यज्तं बृहन्तम्। अस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ। प्रजापतिं प्रथम्जामृतस्य। यजांम देवमिं नो ब्रवीत्। प्रजापते त्वित्रिंधिपाः पुराणः। देवानां पिता जंनिता प्रजानांम्। पतिर्विश्वंस्य जगेतः परस्पाः। ह्विनों देव विह्वे जुंषस्व। तवेमे लोकाः प्रदिशो दिशंश्च॥३॥

प्रावतों निवतं उद्वतंश्च। प्रजांपते विश्वसृज्जीवधंन्य इदं

नों देव। प्रतिहर्य ह्व्यम्। प्रजापितिं प्रथमं यज्ञियांनाम्। देवानामग्रे यज्ञतं यंजध्वम्। स नों ददातु द्रविण र सुवीर्यम्। रायस्पोषं वि ष्यंतु नाभिमस्मे। यो राय ईशे शतदाय उक्थ्यः। यः पंशूनार रिक्षेता विष्ठितानाम्। प्रजापितिः प्रथम्जा ऋतस्यं॥४॥

स्हस्रंधामा जुषता हिवर्नः। सोमांपूषणेमौ देवौ। सोमांपूषणा रजंसो विमानम्। सप्तचंकु रथमविश्वमिन्वम्। विषूवृतं मनंसा युज्यमानम्। तं जिन्वथो वृषणा पश्चरिष्टमम्। दिव्यंन्यः सदंनं चक्र उच्चा। पृथिव्यामन्यो अध्यन्तरिक्षे। तावस्मभ्यं पुरुवारं पुरुक्षुम्। रायस्पोषं विष्यंतान्नाभिमस्मे॥५॥

धियं पूषा जिन्वतु विश्वमिन्वः। र्यिश् सोमों रियपितिर्दधातु। अवंतु देव्यदितिरन्वां। बृहद्वेदेम विद्ये स्वीराः। विश्वान्यन्यो भुवना जजानं। विश्वमन्यो अभिचक्षांण एति। सोमांपूषणाववंतं धियं मे। युवभ्यां विश्वाः पृतना जयेम। उद्तममं वंरुणास्तभाद्याम्। यत्कि चेदं कित्वासः। अवं ते हेड्स्तत्त्वां यामि। आदित्यानामवंसा न दक्षिणा। धारयन्त आदित्यासंस्तिस्रो भूमीर्धारयन्। यज्ञो देवाना श्राचिरपः॥६॥

मर्गणाऽसं वर्तस्यासे कितवासंश्वारि व।

[१]

ते शुक्रासः शुचंयो रश्मिवन्तंः। सीदंन्नादित्या अधिं

ब्र्हिषिं प्रिये। कामेन देवाः स्रथं दिवो नंः। आ याँन्तु यज्ञमुपं नो जुषाणाः। ते सूनवो अदितेः पीवसामिषम्ँ। घृतं पिन्वत्प्रतिहर्यन्नृतेजाः। प्र यज्ञिया यजमानाय येमुरे। आदित्याः कामं पितुमन्तंम्स्मे। आ नंः पुत्रा अदितेर्यान्तु यज्ञम्। आदित्यासंः पृथिभिर्देवयानैः॥७॥

असमे कामं दाशुषे सन्नमंन्तः। पुरोडाशं घृतवंन्तं जुषन्ताम्। स्कुभायत् निर्ऋति सेधृतामंतिम्। प्र रिश्मिभिर्यतमाना अमृध्राः। आदित्याः काम् प्रयंतां वर्षद्वृतिम्। जुषध्वं नो ह्व्यदांतिं यजत्राः। आदित्यान्काम्मवंसे हुवेम। ये भूतानिं जनयंन्तो विचिख्युः। सीदंन्तु पुत्रा अदितेरुपस्थम्। स्तीणं बर्हिरहंविरद्यांय देवाः॥८॥

स्तीर्णं बर्हिः सींदता युज्ञे अस्मिन्। ध्राजाः सेधंन्तो अमंतिं दुरेवांम्। अस्मभ्यं पुत्रा अदितेः प्र यश्सत। आदित्याः कामं ह्विषो जुषाणाः। अग्ने नयं सुपर्था राये अस्मान्। विश्वानि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मज्जंहुराणमेनः। भूयिष्ठान्ते नमं उक्तिं विधेम। प्र वंः शुक्रायं भानवे भरध्वम्। ह्व्यं मृतिं चाग्नये सुपूतम्॥९॥

यो दैव्यांनि मानुषा जनूर्षि। अन्तर्विश्वांनि विद्यना जिगांति। अच्छा गिरों मृतयों देवयन्तीः। अग्निं यन्ति द्रविणं भिक्षंमाणाः। सुसन्दशर्र सुप्रतीक्र्रं स्वश्रम्॥ ह्व्यवाहंमर्तिं मानुंषाणाम्। अग्ने त्वम्स्मद्यंयोध्यमीवाः। अनिग्नित्रा अभ्यंमन्त कृष्टीः। पुनर्स्मभ्यर् सुवितायं देव। क्षां विश्वंभिरजरंभिर्यजत्र॥१०॥

अग्ने त्वं पारया नव्यों अस्मान्। स्वस्तिभिरतिं दुर्गाणि विश्वां। पूश्चं पृथ्वी बंहुला नं उवीं। भवां तोकाय तनयाय शं योः। प्रकारवो मन्ना वच्यमानाः। देवद्रीचीं नयथ देवयन्तः। दक्षिणावाङ्वाजिनी प्राच्येति। ह्विभरंन्त्यग्रये घृताचीं। इन्द्रं नरों युजे रथम्ं। जुगुभ्णाते दक्षिणिमन्द्र हस्तम्॥११॥

वसूयवो वसुपते वसूनाम्। विद्या हि त्वा गोपंति १ शूर् गोनाम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण १ रियन्दाः। तवेदं विश्वंमभितः पश्व्यम्। यत्पश्यंसि चक्षंसा सूर्यस्य। गवांमसि गोपंतिरेकं इन्द्र। भक्षीमिहं ते प्रयंतस्य वस्वंः। सिनंद्र णो मनंसा नेषि गोभिः। स १ सूरिभिर्मघवन्थ्स १ स्वस्त्या। सं ब्रह्मंणा देवकृतं यदस्ति॥१२॥

सं देवाना र् सुमृत्या युज्ञियांनाम्। आराच्छत्रुमपं बाधस्व दूरम्। उग्रो यः शम्बंः पुरुहूत तेनं। अस्मे धेहि यवंमुद्गोमंदिन्द्र। कृधीधियं जरित्रे वाजंरत्नाम्। आ वेधस्र स हि शुचिंः। बृह्स्पतिः प्रथमं जायंमानः। महो ज्योतिषः पर्मे व्योमन्। स्प्तास्यंस्तुविजातो रवेण। वि सप्तरंशिमरधमत्तमा रेसि॥१३॥ बृह्स्पतिः समंजयद्वसूनि। महो व्रजान्गोमंतो देव एषः। अपः सिषांस्न्थ्सुवरप्रतीत्तः। बृह्स्पतिर्हन्त्यमित्रंमकैंः। बृहंस्पते पर्येवा पित्रे। आ नो दिवः पावीरवी। इमा जुह्वांना यस्ते स्तनंः। सरंस्वत्यभि नो नेषि। इय शृष्मेभिर्बिस्खा इंवारुजत्। सानुं गिरीणां तंविषेभिंरूर्मिभिः। पारावद्ग्रीमवंसे सुवृक्तिभिः। सरंस्वतीमा विवासेम धीतिभिः॥१४॥

सोमों धेनु सोमों अर्वन्तमाशुम्। सोमों वीरं केर्मण्यं ददातु। सादन्यं विद्थ्य समेयम्। पितुः श्रवंणं यो ददांशदस्मै। अषांढं युथ्सु त्व सोम् ऋतुंभिः। या ते धामांनि ह्विषा यर्जन्ति। त्विममा ओषधीः सोम् विश्वाः। त्वमपो अंजनयस्त्वङ्गाः। त्वमातंतन्थोर्वन्तिरक्षम्। त्वं ज्योतिषा वि तमो ववर्थ॥१५॥

या ते धामांनि दिवि या पृथिव्याम्। या पर्वतेष्वोषधीष्वपस्। तेभिर्नो विश्वैः सुमना अहेडन्। राजैन्थ्सोम् प्रतिं ह्व्या गृंभाय। विष्णोर्नुकं तदस्य प्रियम्। प्र तिद्वष्णुः। प्रो मात्रया तनुवां वृधान। न ते महित्वमन्वंश्जुवन्ति। उभे ते विद्य रजंसी पृथिव्या विष्णों देव त्वम्। प्रमस्यं विथ्से॥१६॥

विचंत्रमे त्रिर्देवः। आ ते महो यो जात एव। अभि गोत्राणि। आभिः स्पृधीं मिथतीररिषण्यन्। अमित्रस्य व्यथया मृन्युमिन्द्र। आभिर्विश्वां अभियुजो विषूंचीः। आर्याय विशोवंतारीर्दासींः। अय शृंण्वे अध् जयंत्रुत घ्रन्। अयमुत प्र कृंणुते युधा गाः। यदा सृत्यं कृंणुते मृन्युमिन्द्रंः॥१७॥

विश्वं दृढं भंयत् एजंदस्मात्। अनुं स्वधामंक्षर्न्नापों अस्य। अवर्धत् मध्य आ नाव्यांनाम्। सुधीचीनेन मनसा तिमेन्द्र ओजिष्ठेन। हन्मंनाहन्नभिद्यून्। मुरुत्वंन्तं वृष्भं वांवृधानम्। अकंवारिं दिव्य शासिमन्द्रम्। विश्वासाहमवसे नूतंनाय। उग्र सहोदामिह त हुवेम। जिनेष्ठा उग्रः सहंसे तुरायं॥१८॥

मन्द्र ओजिष्ठो बहुलाभिमानः। अवर्धन्निन्द्रं म्रुतंश्चिदत्रं। माता यद्वीरं द्धनृद्धनिष्ठा। क्रंस्यावों मरुतः स्वधाऽऽसीत्। यन्मामेक र स्मर्धत्ताहिहत्ये। अह इ ह्यंग्रस्तंविषस्तुविष्मान्। विश्वंस्य शत्रोरनंमं वध्सेः। वृत्रस्यं त्वा श्वसथा दीषंमाणाः। विश्वं देवा अंजहुर्ये सखायः। म्रुद्धिरिन्द्र सुख्यं ते अस्तु॥१९॥

अथेमा विश्वाः पृतंना जयासि। वधीं वृत्रं मंरुत इन्द्रियेणं। स्वेन भामेन तिवृषो बंभूवान्। अहमेता मनेवे विश्वश्चंन्द्राः। सुगा अपश्चंकर् वर्ज्ञंबाहुः। स यो वृषा वृष्णियेभिः समोकाः। महो दिवः पृथिव्याश्चं सम्राट्। सतीनसंत्वा हव्यो भरेषु। मरुत्वां नो भवत्विन्द्रं ऊती। इन्द्रो वृत्रमंतरद्वृत्रतूर्ये॥२०॥ अनाधृष्यो मघवा शूर इन्द्रंः। अन्वेनं विशो अमदन्त पूर्वीः। अय राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। स एव वीरः स उं वीर्यावान्। स एंकराजो जगंतः पर्स्पाः। यदा वृत्रमतंरच्छूर इन्द्रंः। अथांभवद्दमिताभिक्रंतूनाम्। इन्द्रो युज्ञं वर्धयंन्विश्ववेदाः। पुरोडाशंस्य जुषता हिवर्नः। वृत्रं तीत्वा दान्वं वर्ष्रंबाहुः॥२१॥

इन्द्रस्तरंस्वानिभगतिहोग्रः। हिरंण्यवाशीरिष्यः सुंवर्षाः। तस्यं वयः सुंमृतौ यज्ञियंस्य। अपि भद्रे सौंमन्से स्याम। हिरंण्यवर्णो अभयं कृणोतु। अभिमातिहेन्द्रः पृतंनासु जिष्णुः। स नः शर्म त्रिवरूथं वि यःसत्। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। इन्द्रः स्तुहि विज्ञिण्ड् स्तोमंपृष्ठम्। पुरोडाशंस्य जुषताः हुविर्नः॥२३॥ ह्त्वाऽभिमांतीः पृतंनाः सहंस्वान्। अथाभंयं कृणुहि विश्वतों नः। स्तुहि शूरं वृज्जिणमप्रंतीत्तम्। अभिमातिहनं पुरुहूतमिन्द्रम्। य एक इच्छुतपंतिर्जनंषु। तस्मा इन्द्रांय ह्विरा जुंहोत। इन्द्रों देवानांमिधपाः पुरोहितः। दिशां पतिरभवद्वाजिनीवान्। अभिमातिहा तिविषस्तुविष्मान्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण र र्यिन्दांत्॥२४॥

य इमे द्यावांपृथिवी मंहित्वा। बलेनाह ईहदिभमातिहेन्द्रंः। स नों हुविः प्रतिं गृभ्णातु रातयें। देवानां देवो निंधिपा नों अव्यात्। अनंवस्ते रथं वृष्णे यत्तें। इन्द्रंस्य नु वीर्याण्यहुन्नहिम्। इन्द्रों यातोऽवंसितस्य राजां। शमंस्य च शृङ्गिणो वर्ज्ञंबाहुः। सेदु राजां क्षेति चर्षणीनाम्। अरान्न नेमिः परि ता बंभूव॥२५॥

अभि सिध्मो अंजिगादस्य शत्रून्। वितिग्मेनं वृष्भेणा पुरोभेत्। सं वर्ज्रेणासृजद्वृत्रमिन्द्रंः। प्र स्वां मृतिमंतिरुच्छाशंदानः। विष्णुं देवं वर्रुणमूतये भगम्। मेदंसा देवा वृपयां यजध्वम्। ता नो यज्ञमागंतं विश्वधंना। प्रजावंदस्मे द्रविणेह धंत्तम्। मेदंसा देवा वृपयां यजध्वम्। विष्णुं च देवं वर्रुणं च रातिम्॥२६॥

ता नो अमीवा अप बार्धमानौ। इमं युज्ञं जुषमाणावुपेतम्। विष्णूवरुणा युवमंध्वरायं नः। विशे जनाय महि शर्म यच्छतम्। दीर्घप्रयञ्ज्यू हुविषां वृधाना। ज्योतिषा-ऽरांतीर्दहत्नन्तमा १सि। ययोरोजंसा स्कभिता रजा १सि। वीर्येभिर्वीरतंमा शविष्ठा। याऽपत्ये ते अप्रंतीत्ता सहोभिः। विष्णूं अगुन्वरुणा पूर्वहूंतौ॥२७॥

विष्णूंवरुणाविभशस्तिपावाँम्। देवा यंजन्त ह्विषां घृतेनं। अपामीवा संभत र रक्षसंश्च। अथांधत्तं यजंमानाय शं योः। अर्होमुचां वृष्मा सुप्रतूंतीं। देवानां देवतंमा शिचेष्ठा। विष्णूंवरुणा प्रतिहर्यतन्नः। इदं नरा प्रयंतमूतये ह्विः। मही नु द्यावांपृथिवी इह ज्येष्ठें। रुचा भंवता र शुचयंद्भिर्कैः॥२८॥

यथ्सीं वरिष्ठे बृह्ती विमिन्वन्। नृवद्योक्षा पंप्रथानेभिरेवैंः। प्रपूर्वजे पितरा नव्यंसीभिः। गीर्भिः कृणुष्व १ सदंने ऋतस्यं। आ नौ द्यावापृथिवी दैव्येन। जनेन यातं मिहे वां वर्रूथम्। स इथ्स्वपा भुवंनेष्वास। य इमे द्यावापृथिवी ज्जानं। उर्वी गंभीरे रजंसी सुमेकैं। अव १ शोरः शच्या समैरत्॥ २९॥

भूिषे द्वे अचंरन्ती चर्रन्तम्। पृद्वन्तं गर्भम्पदीदधाते। नित्यं न सूनुं पित्रोरुपस्थै। तं पिपृत र रोदसी सत्यवाचम्। इदं द्यावापृथिवी सत्यमंस्तु। पितुर्मात्यिदिहोपं ब्रुवे वाम्। भूतं देवानांमवमे अवोभिः। विद्यामेषं वृजनं जीरदांनुम्। उवीं पृथ्वी बंहुले दूरे अन्ते। उपं ब्रुवे नमंसा युज्ञे अस्मिन्। दर्धाते ये सुभगं सुप्रतूर्ती। द्यावा रक्षंतं पृथिवी नो अभ्वात्।

या जाता ओषंध्योऽति विश्वाः परिष्ठाः। या ओषंधयः सोमंराज्ञीरश्वावृती सोमवृतीम्। ओषंधीरितिं मातरोऽन्या वो अन्यामंवतु॥३०॥

हुविनों दाद्भभूव रातिं पूर्वहूंतावुकँरैरदुस्मिन्पश्चं च॥————————[४]

शुचिं नु स्तोम् श्र्व्यद्वृत्तम्। उभा वांमिन्द्राग्नी प्र चंर्षणिभ्यः। आ वृत्तहणा गीर्भिर्विप्रः। ब्रह्मणस्पते त्वम्स्य यन्ता। सूक्तस्यं बोधि तनयं च जिन्व। विश्वं तद्भद्रं यद्वन्तिं देवाः। बृहद्वंदेम विदथें सुवीराः। स ईं स्त्येभिः सर्खिभिः शुचद्भिः। गोधायसं विधन्सैरंतर्दत्। ब्रह्मणस्पतिवृषिभिर्वराहैः॥३१॥

घर्मस्वेदेभिद्रविणं व्यानट्। ब्रह्मण्स्पतेरभवद्यथावृशम्। सत्यो मृन्युर्मिह् कर्मा करिष्यतः। यो गा उदाज्ञथ्स दिवे वि चाभजत्। मृहीवं रीतिः शवंसा सर्त्पृथंक्। इन्धानो अग्निं वंनवद्वनुष्यतः। कृतब्रंह्मा शूशुवद्रातहंच्य इत्। जातेनं जातमित्सृत्प्र सृर्सते। यं यं युजं कृणुते ब्रह्मण्स्पतिः। ब्रह्मणस्पते सुयमंस्य विश्वहाँ॥३२॥

रायः स्यांम रथ्यो विवंस्वतः। वीरेषुं वीरा उपंपृिङ्गि नस्त्वम्। यदीशांनो ब्रह्मणा वेषिं मे हवम्। स इज्जनेन स विशा स जन्मना। स पुत्रैर्वाजं भरते धना नृभिः। देवानां यः पितरंमा विवासित। श्रद्धामना ह्विषा ब्रह्मणस्पतिम्। यास्ते पूषन्नावो अन्तः। शुक्रं ते अन्यत्पूषेमा आशाः। प्रपंथे

# प्थामंजनिष्ट पूषा॥३३॥

प्रपंथे दिवः प्रपंथे पृथिव्याः। उमे अभि प्रियतंमे स्थस्थैं। आ च परां च चरित प्रजानन्। पूषा सुबन्धंर्दिव आ पृथिव्याः। इडस्पितम्घवां दस्मवंर्चाः। तं देवासो अदंदः सूर्यायैं। कामेन कृतं त्वस्कृ स्वश्रम्ं। अजाऽश्वः पशुपा वाजंबस्त्यः। धियं जिन्वो विश्वे भुवंने अपितः। अष्ट्रां पूषा शिथिरामुद्धरीवृजत्॥३४॥

स्श्रक्षाणो भुवंना देव ईयते। शुची वो ह्व्या मंरुतः शुचींनाम्। शुचिर्ं हिनोम्यध्वर शुचिंभ्यः। ऋतेनं सत्यमृत्सापं आयन्। शुचिंजन्मानः शुचंयः पावकाः। प्रचित्रमकं गृंणते तुरायं। मारुंताय स्वतंवसे भरध्वम्। ये सहार्ंस् सहंसा सहंन्ते। रेजंते अग्ने पृथिवी मुखेभ्यः। अरुसेष्वा मंरुतः खादयों वः॥३५॥

वक्षंः सुरुक्ता उपं शिश्रियाणाः। वि विद्युतो न वृष्टिभीं रुचानाः। अनुं स्वधामायुंधैर्यच्छंमानाः। या वः शर्मं शशमानाय सन्ति। त्रिधातूंनि दाशुषं यच्छताधि। अस्मभ्यं तानिं मरुतो वियंन्त। र्यिं नो धत्त वृषणः सुवीरम्ं। इमे तुरं मुरुतो रामयन्ति। इमे सहः सहंस् आ नमन्ति। इमे शर्संवनुष्यतो नि पान्ति॥३६॥

गुरुद्वेषो अरंरुषे दधन्ति। अरा इवेदचंरमा अहंव। प्रप्रं

जायन्ते अर्कवा महोभिः। पृश्वैः पुत्रा उपमासो रभिष्ठाः। स्वयां मृत्या मृरुतः सं मिमिक्षः। अनुं ते दायि मृह इंन्द्रियायं। सृत्रा ते विश्वमनुं वृत्रहत्यै। अनुं क्षत्रमनु सहो यजत्र। इन्द्रं देवेभिरनुं ते नृषह्यै। य इन्द्रं शुष्मो मघवन्ते अस्ति॥३७॥

शिक्षा सर्खिभ्यः पुरुहूत नृभ्यः। त्व हि टुढा मंघवन्विचेताः। अपांवृधि परिवृतिं न राधः। इन्द्रो राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। अधिक्षमि विषुंरूपं यदस्ति। ततो ददातु दाशुषे वसूनि। चोद्द्राध उपस्तुतश्चिद्वांक्। तमुष्टुहि यो अभिभूत्योजाः। वन्वन्नवांतः पुरुहूत इन्द्रः। अषांढमुग्र हिमानमाभिः॥३८॥

गीर्भिर्वर्ध वृष्मं चंर्षणीनाम्। स्थूरस्यं रायो बृंह्तो य ईशैं। तम् ष्टवाम विदथेष्विन्द्रम्। यो वायुना जयंति गोमंतीष्। प्र धृष्णुया नंयति वस्यो अच्छं। आ ते शुष्मो वृष्म एतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तौत्। आ विश्वतो अभिसमैल्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युम्न सुवर्वदे ह्यस्मे॥३९॥

व्याहैंविंश्वहांऽजिनष्ट पूषोद्वरीवृज्ञत्खादयों वः पान्त्यस्त्याभिर्नवं च॥————[ ५]

आ देवो यांतु सिवता सुरत्नः। अन्तिरिक्षप्रा वहंमानो अश्वैः। हस्ते दर्धानो नर्या पुरूणि। निवेशयं च प्रसुवं च भूमं। अभीवृंतं कृशंनैर्विश्वरूपम्। हिरंण्यशम्यं यज्ततो बृहन्तम्। आस्थाद्रथर् सिवता चित्रभानुः। कृष्णा रजार्सि तिवेषीं दर्धानः। सर्घा नो देवः संविता सुवायं। आ

# सांविषद्वसुंपितवर्वसूंनि॥४०॥

विश्रयंमाणो अमंतिमुरूचीम्। मूर्तभोजंनमधंरासतेन। विजनां ज्छावाः शिंतिपादों अख्यन्। रथ् हरंण्यप्रउगं वहंन्तः। शश्वद्दिशंः सवितुर्दैव्यंस्य। उपस्थे विश्वा भुवंनानि तस्थः। वि सुंपूर्णो अन्तरिक्षाण्यख्यत्। गुभीरवेपा असुंरः सुनीथः। क्वेदानी सूर्यः कश्चिकेत। कृतमान्द्या स्रिमर्स्या तंतान॥४१॥

भगं धियं वाजयंन्तः पुरेन्धिम्। नराशश्सो ग्रास्पतिनीं अव्यात्। आ ये वामस्यं सङ्ग्थे रंयीणाम्। प्रिया देवस्यं सिवतः स्यांम। आ नो विश्वे अस्क्रांगमन्तु देवाः। मित्रो अर्यमा वरुणः सजोषाः। भुवन् यथां नो विश्वे वृधासः। करैन्थ्सुषाहां विथुरं न शवंः। शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु। शश् सरंस्वती सह धीभिरंस्तु॥४२॥

शर्मिषाचः शर्मु रातिषाचः। शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः। ये संवितः सत्यसंवस्य विश्वें। मित्रस्यं व्रते वर्रुणस्य देवाः। ते सौभंगं वीरवद्गोमदप्रः। दधांतन् द्रविंणं चित्रमस्मे। अग्ने याहि दूत्यं वारिषेण्यः। देवाः अच्छां ब्रह्मकृतां गणेनं। सर्रस्वतीं मुरुतों अश्विनापः। यक्षि देवानंब्रधेयांय विश्वान्॥४३॥

द्यौः पिंतुः पृथिवि मात्रध्रुंक्। अग्नै भ्रातर्वसवो मृडतां नः। विश्वं आदित्या अदिते सजोषौः। अस्मभ्य शर्म बहुलं वि यंन्ता विश्वें देवाः शृणुतेम॰ हवंं मे। ये अन्तरिक्षे य उप द्यवि ष्ठा ये अग्निजिह्वा उत वा यजंत्राः। आसद्यास्मिन्बर्हिषिं मादयध्वम्। आ वांं मित्रावरुणा हृव्यजुंष्टिम्। नमंसा देवाववंसाऽऽववृत्याम्॥४४॥

अस्माकं ब्रह्म पृतंनासु सह्या अस्माकम्। वृष्टिर्द्व्या सुंपारा। युवं वस्त्राणि पीवसा वंसाथे। युवोरिन्छंद्रम् मन्तंवो हु सर्गाः। अवांतिरत्मनृंतानि विश्वाः। ऋतेनं मित्रावरुणा सचेथे। तथ्सु वां मित्रावरुणा महित्वम्। ईमा तस्थुषीरहंभिर्दुदुह्ने। विश्वाः पिन्वथ् स्वसंरस्य धेनाः। अनुं वामेकः प्विरा वंवर्ति॥४५॥

यद्व १ हिष्ठन्नाति विदे सुदान्। अच्छिंद्र १ शर्म भुवंनस्य गोपा। ततों नो मित्रावरुणाववीष्टम्। सिषांसन्तो जीगिवा १ संः स्याम। आ नो मित्रावरुणा ह्व्यदांतिम्। घृतैर्गव्यूंतिमुक्षत्मिडांभिः। प्रतिं वामत्र वर्मा जनांय। पृणीतमुद्रो दिव्यस्य चारौः। प्र बाहवां सिसृतं जीवसे नः। आ नो गव्यूंतिमुक्षतं घृतेनं॥ ४६॥

आ नो जने श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इमा रुद्रायं स्थिरधंन्वने गिरः। क्षिप्रेषंवे देवायं स्वधाम्ने अषांढाय सहंमानाय मीढुषे तिग्मायंधाय भरता शृणोतंन। त्वादंत्तेभी रुद्र शन्तंमेभिः। शृत हिमां अशीय भेषुजेभिः। व्यस्मद्वेषो वित्ररं व्यश्हेः। व्यमीवाङ्श्वातयस्वा विषूचीः॥४७॥

अर्हंन्बिभर्षि मा नंस्तोके। आ ते पितर्मरुता समुम्रेतु। मा नः सूर्यस्य स्न्हशो युयोथाः। अभि नो वीरो अर्वति क्षमेत। प्रजायमिह रुद्र प्रजाभिः। एवा बंभ्रो वृषभ चेकितान। यथां देव न हंणी्षे न हश्सी। हावनश्रूनीं रुद्रेह बोधि। बृहद्वंदेम विद्थे सुवीराः। परिंणो रुद्रस्यं हेतिः स्तुहि श्रुतम्। मीढुंष्ट्रमार्हंन्बिभर्षि। त्वमंग्ने रुद्र आ वो राजानम्॥४८॥ वस्ति वतानस् विश्वां ववति पुतेन विष्णे श्रुतके वं॥———[६]

सूर्यो देवीमुषस् रोचंमानामर्यः। न योषांमभ्येति पृश्चात्। यत्रा नरो देवयन्तो युगानि। वितन्वते प्रति भद्रायं भद्रम्। भद्रा अश्वां हुरितः सूर्यंस्य। चित्रा एदंग्वा अनुमाद्यांसः। नमस्यन्तो दिव आ पृष्ठमंस्थुः। परि द्यावांपृथिवी यन्ति सद्यः। तथ्सूर्यस्य देवत्वं तन्मंहित्वम्। मध्या कर्तोविंतंत्र् सञ्जंभार॥४९॥

यदेदयंक्त हरितंः सधस्थांत्। आद्रात्री वासंस्तन्ते सिमस्मैं। तन्मित्रस्य वर्रुणस्याभिचक्षें। सूर्यो रूपं कृंणुते द्योरुपस्थें। अनुन्तमृन्यद्रुशंदस्य पाजंः। कृष्णमृन्यद्धरितः सं भरिन्त। अद्या देवा उदिता सूर्यस्य। निर॰हंसः पिपृतान्निरंवद्यात्। तन्नों मिन्नो वर्रुणो मामहन्ताम्। अदितिः सिन्धुंः पृथिवी उत द्यौः॥५०॥

दिवो रुका उरुचक्षा उदेति। दूरे अंर्थस्तरणिर्श्राजंमानः। नूनं जनाः सूर्येण प्रसूताः। आयन्नर्थानि कृणवन्नपार्शसे। शं नो भव चक्षंसा शं नो अहाँ। शं भानुना शर हिमा शं घृणेनं। यथा शम्समे शमसंदुरोणे। तथ्सूर्य द्रविणं धेहि चित्रम्। चित्रं देवानामुदंगादनीकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः॥५१॥

आप्रा द्यावांपृथिवी अन्तिरिक्षम्। सूर्यं आत्मा जगंतस्त्स्थुषंश्च। त्वष्टा दध्तन्नंस्तुरीपम्। त्वष्टां वीरं पिशङ्गंरूपः। दश्मन्त्वष्टुंर्जनयन्त् गर्भम्। अतंन्द्रासो युवतयो बिभंत्रम्। तिग्मानींक्ड् स्वयंशसं जनेषु। विरोचंमानं परिषीन्नयन्ति। आविष्ट्यों वर्धते चारुरास्। जिह्मानांमूर्ध्वस्वयंशा उपस्थैं॥५२॥

उभे त्वष्टुंर्बिभ्यतुर्जायंमानात्। प्रतीची सि्॰्हं प्रति-जोषयेते। मित्रो जनान्त्र स मित्र। अयं मित्रो नंमस्यंः सुशेवंः। राजां सुक्षत्रो अंजिनष्ट वेधाः। तस्यं वय॰ सुमृतौ युज्ञियंस्य। अपि भुद्रे सौमनुसे स्यांम। अनुमीवास् इडंया मदंन्तः। मित्रज्मंवो वरिमन्ना पृथिव्याः। आदित्यस्यं वृतम्पुक्ष्यन्तंः॥५३॥

वयं मित्रस्यं सुमृतौ स्यांम। मित्रं न ई॰ शिम्या गोषुं गृव्यवंत्। स्वाधियों विदथें अपस्वजीजनन्। अरेजयता॰ रोदंसी पाजंसा गिरा। प्रतिं प्रियं यंजतं जनुषामवंः। महा॰ आंदित्यो नर्मसोप्सद्यः। यात्यज्ञंनो गृण्ते सुशेवंः। तस्मां एतत्पन्यंतमाय जुष्टम्। अग्नौ मित्रायं ह्विरा जुंहोत। आ वार् रथो रोदंसी बद्धधानः॥५४॥

हिर्ण्ययो वृषंभिर्यात्वश्वैः। घृतवंतिनः प्विभीरुचानः। इषां वोढा नृपतिर्वाजिनीवान्। स पंप्रथानो अभि पश्च भूमं। त्रिवन्धुरो मन्साऽऽयांतु युक्तः। विशो येन् गच्छंथो देवयन्तीः। कुत्रां चिद्यामंमिश्वना दर्धाना। स्वश्वां यशसा-ऽऽयांतम्वांक्। दस्रां निधिं मधुमन्तं पिबाथः। वि वार् रथों वध्वां यादंमानः॥५५॥

अन्तान्दिवो बांधते वर्तनिभ्याम्। युवोः श्रियं परि योषांवृणीत। सूरों दृहिता परितिक्सयायाम्। यद्देवयन्तमवंथः शर्चीभिः। परिष्रुष्ट् सवां मनावां वयोगाम्। यो हुस्यवार्ष्ट्र रथिरावस्तं उस्राः। रथो युजानः परियातिं वर्तिः। तेनं नः शं योरुषसो व्युष्टौ। न्यंश्विना वहतं युज्ञे अस्मिन्। युवं भुज्युमवंविद्ध्र्ष्ट्र समुद्रे॥५६॥

उदूंहथुरणंसो अस्रिंधानैः। प्तित्रिभिरश्रमैरंव्यथिभिः। दुर्सनांभिरिश्वना पारयंन्ता। अग्नीषोमा यो अद्य वाँम्। इदं वर्चः सप्यतिं। तस्मै धत्तर सुवीर्यम्। गवां पोष्ड् स्विथयम्। यो अग्नीषोमां ह्विषां सप्यति। देवद्रीचा मनंसा यो घृतेनं। तस्यं व्रतर रक्षतं पातमरहंसः॥५७॥ विशे जनांय मिह् शर्म यच्छतम्। अग्नीषोमा य आहुंतिम्। यो वां दाशाँखिविष्कृंतिम्। स प्रजयां सुवीर्यम्। विश्वमायुर्व्यश्ववत्। अग्नीषोमा चेति तद्वीर्यं वाम्। यदमुंष्णीतमवसं पणिङ्गोः। अवांतिरतं प्रथंयस्य शेषंः। अविंन्दतं ज्योतिरेकं बहुभ्यंः। अग्नीषोमाविमः सु मेऽग्नीषोमा हविषः प्रस्थितस्य॥५८॥

जुभार् बौरुभेरुपस्थं उपुक्ष्यन्तों बद्वधानो बुध्वां यादमानः समुद्रेऽ॰हंमुः प्रस्थितस्य॥————[ ७ ]

अहमंस्मि प्रथम्जा ऋतस्यं। पूर्वं देवेभ्यां अमृतंस्य नाभिः। यो मा ददांति स इदेव माऽऽवाः। अहमन्नमन्नं-मदन्तंमिद्मा। पूर्वम्म्रेरिपं दहृत्यन्नम्। यृत्तौ हांसाते अहमुत्तरेषुं। व्यात्तंमस्य पृशवः सुजम्भम्। पश्यंन्ति धीराः प्रचरित् पाकाः। जहांम्यन्यन्न जंहाम्यन्यम्। अहमन्नं वशमिचरामि॥५९॥

स्मानमर्थं पर्यमि भुञ्जत्। को मामन्नं मनुष्यों दयेत। परांके अन्नं निहिंतं लोक एतत्। विश्वैदिंवैः पितृभिंगूंप्तमन्नम्। यद्द्यते लुप्यते यत्पंरोप्यतें। शृतत्मी सा तनूर्मे बभूव। महान्तौं चरू संकृद्दुग्धेनं पप्रौ। दिवंं च पृश्चिं पृथिवीं चं साकम्। तथ्मम्पिबंन्तो न मिनन्ति वेधसंः। नैतद्भयो भवंति नो कनीयः॥६०॥

अर्न्न प्राणमन्नमपानमांहुः। अर्न्न मृत्युं तम् जीवातुंमाहुः।

अन्नं ब्रह्माणों ज्ञरसं वदन्ति। अन्नमाहुः प्रजनंनं प्रजानांम्। मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः। सत्यं ब्रंवीमि वध इथ्स तस्यं। नार्यमणुं पुष्यंति नो सर्खायम्। केवंलाघो भवति केवलादी। अहं मेघः स्तनयन्वर्षंन्नस्मि। मामंदन्त्यहमंदयन्यान्॥६१॥

अह सद्मृतों भवामि। मदांदित्या अधि सर्वे तपन्ति। देवीं वार्चमजनयन्त् यद्वाग्वदंन्ती। अनुन्तामन्तादधि निर्मितां महीम्। यस्यां देवा अंदधुर्भीजंनानि। एकांक्षरां द्विपदा षदंदां च। वार्चं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वार्चं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वार्चं वेवा उपं जीवन्ति विश्वं। वार्चं गन्ध्वाः प्शवों मनुष्याः। वार्चीमा विश्वा भुवंनान्यर्पिता॥६२॥

सा नो हवं जुषतामिन्द्रंपत्नी। वागृक्षरं प्रथम्जा ऋतस्यं। वेदानां माताऽमृतंस्य नाभिः। सा नो जुषाणोपं यज्ञमागाँत्। अवंन्ती देवी सुहवां मे अस्तु। यामृषंयो मन्त्रकृतों मनीषिणः। अन्वैच्छं देवास्तपंसा श्रमेण। तान्देवीं वाच र् ह्विषां यजामहे। सा नो दधातु सुकृतस्यं लोके। चृत्वारि वाक्परिमिता पदानिं॥६३॥

तानि विदुर्बाह्मणा ये मंनीषिणंः। गुहा त्रीणि निहिंता नेङ्गंयन्ति। तुरीयं वाचो मंनुष्यां वदन्ति। श्रद्धयाऽग्निः समिध्यते। श्रद्धयां विन्दते ह्विः। श्रद्धां भगंस्य मूर्धनिं। वचसा वेदयामसि। प्रियः श्रंद्धे ददंतः। प्रियः श्रंद्धे

# दिदांसतः। प्रियं भोजेषु यज्वंसु॥६४॥

इदं मं उदितं कृषि। यथां देवा असुरेषु। श्रद्धामुग्रेषुं चित्रेरे। एवं भोजेषु यज्वंसु। अस्माकंमुदितं कृषि। श्रद्धां देवा यजमानाः। वायुगोपा उपांसते। श्रद्धाः हंद्य्यंया-ऽऽकूत्या। श्रद्धयां हूयते हविः। श्रद्धां प्रातर्हंवामहे॥६५॥

श्रुद्धां मध्यन्दिनं परि। श्रुद्धाः सूर्यस्य निम्नुचि। श्रद्धे श्रद्धांपयेह मा। श्रुद्धा देवानिधं वस्ते। श्रुद्धा विश्वमिदं जगंत्। श्रुद्धां कामस्य मातरम्। हिवषां वर्धयामिस। ब्रह्मं जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात्। वि सीमृतः सुरुचो वेन आंवः। स बुिध्रयां उप मा अस्य विष्ठाः॥६६॥

स्तश्च योनिमसंतश्च विवंः। पिता विराजांमृष्भो रंयीणाम्। अन्तरिक्षं विश्वरूप् आविवेश। तमकैर्भ्यंचिन्त वृथ्सम्। ब्रह्म सन्तं ब्रह्मणा वृधयंन्तः। ब्रह्मं देवानंजनयत्। ब्रह्म विश्वमिदं जगत्। ब्रह्मणः क्षत्रं निर्मितम्। ब्रह्मं ब्राह्मण आत्मना। अन्तरंस्मित्रिमे लोकाः॥६७॥

अन्तर्विश्वंमिदं जगंत्। ब्रह्मैव भूतानां ज्येष्ठम्। तेन् कोऽर्हित् स्पर्धितुम्। ब्रह्मेन्देवास्त्रयंस्त्रिश्शत्। ब्रह्मेन्निन्द्रप्रजापती। ब्रह्मेन् ह् विश्वां भूतानि। नावीवान्तः स्माहिता। चतस्त्र आशाः प्रचरन्त्वग्नयः। इमं नो यज्ञं नयतु प्रजानन्। घृतं पिन्वंन्नजर्शं सुवीरम्॥६८॥ ब्रह्मं स्मिद्धंवत्याहुंतीनाम्। आ गावों अग्मन्नुत भ्द्रमंत्रन्। सीदंन्तु गोष्ठे रणयंन्त्वस्मे। प्रजावंतीः पुरुरूपां इह स्युः। इन्द्रांय पूर्वीरुषसो दुहानाः। इन्द्रो यज्वंने पृण्ते चं शिक्षति। उपेद्दंदाति न स्वं मुंषायति। भूयोभूयो र्यिमिदंस्य वर्धयन्। अभिन्ने खिल्ले नि दंधाति देवयुम्। न ता नंशन्ति न ता अर्वा॥६९॥

गावो भगो गाव इन्द्रों मे अच्छात्। गावः सोमंस्य प्रथमस्यं भृक्षः। इमा या गावः सर्जनास् इन्द्रः। इच्छामीद्धृदा मनसा चिदिन्द्रम्। यूयं गांवो मेदयथा कृशं चित्। अश्लीलं चित्कृणुथा सुप्रतीकम्। भृद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचः। बृहद्वो वयं उच्यते सभासुं। प्रजावंतोः सूयवंस रिशन्तीः। शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबन्तीः। मा वः स्तेन ईशत माऽघशर्सः। परि वो हेती रुद्रस्यं वृञ्च्यात्। उपेदमुंपपर्चनम्। आसु गोषूपंपृच्यताम्। उपंर्षभस्य रेतंसि। उपेन्द्र तवं वीर्ये॥७०॥ चर्णम् क्रीग्रेऽन्यातर्पंत प्रवान् व्यवंस हवामहे विद्या लोकः सुवीर्म्मण् प्रवं प्रवान् [८]

ता सूँर्याचन्द्रमसां विश्वभृत्तंमा महत्। तेजो वसुंमद्राजतो दिवि। सामात्माना चरतः सामचारिणां। ययोंर्वृतं न ममे जातुं देवयोंः। उभावन्तौ परि यात् अर्म्यां। दिवो न र्ष्मी इस्तंनुतो व्यंर्ण्वे। उभा भुंवन्ती भुवंना क्विकंत्। सूर्या न चन्द्रा चंरतो हुतामंती। पतीं द्युमिद्वंश्वविदां उभा दिवः। सूर्या उभा चन्द्रमंसा विचक्षणा॥७१॥

विश्ववारा वरिवोभा वरेण्या। ता नोंऽवतं मित्मन्ता मिहंव्रता। विश्ववपंरी प्रतरंणा तर्न्ता। सुवर्विदां दृशये भूरिरश्मी। सूर्या हि चन्द्रा वस्ं त्वेषदंर्शता। मनस्विनोभानं चरतोनु सन्दिवम्। अस्य श्रवो नद्यः सप्त विश्वति। द्यावा क्षामां पृथिवी दंर्शतं वपुः। अस्म सूर्याचन्द्रमसांऽभिचक्षे। श्रद्धेकिमेन्द्र चरतो विचर्तुरम्॥७२॥

पूर्वाप्रं चंरतो माययैतौ। शिशू क्रीडंन्तौ परिं यातो अध्वरम्। विश्वांन्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टें। ऋतूनन्यो विदधंज्ञायते पुनंः। हिरंण्यवर्णाः शुचंयः पावका यासाः राजां। यासां देवाः शिवेनं मा चक्षुंषा पश्यत। आपों भुद्रा आदित्पंश्यामि। नासंदासीन्नो सदांसीन्तदानींम्। नासीद्रजो नो व्योमा पुरो यत्। किमावंरीवः कुह कस्य शर्मन्ं॥७३॥

अम्भः किर्मासीद्गहेनं गभीरम्। न मृत्युर्मृतं तर्हि न। रात्रिया अहं आसीत्प्रकेतः। आनीदवातः स्वधया तदेकम्। तस्माँ द्धान्यं न पुरः किश्चनासं। तमं आसीत्तमंसा गूढमग्रे प्रकेतम्। स्लिलः सर्वमा इदम्। तुच्छेनाभ्विपिहितं यदासीत्। तमंस्तन्महिना जांयतैकम्। कामस्तदग्रे समंवर्ततािधं॥७४॥

मनंसो रेतंः प्रथमं यदासींत्। स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। तिर्श्वीनो वितंतो र्श्मिरंषाम्। अधः स्विदासी(३)दुपरि स्वदासी(३)त्। रेतोधा आंसन्मिह्मानं आसन्। स्वधा अवस्तात्प्रयंतिः प्रस्तात्। को अद्धा वेंद्र क इह प्र वोचत्। कुत् आजांता कुतं इयं विसृष्टिः। अविग्देवा अस्य विसर्जनाय॥७५॥

अथा को वेद यतं आब्भूवं। इयं विसृष्टिर्यतं आब्भूवं। यदिं वा द्धे यदिं वा न। यो अस्याध्यंक्षः पर्मे व्योमन्। सो अङ्ग वेद यदिं वा न वेदं। किङ्स्विद्धनङ्क उ स वृक्ष आंसीत्। यतो द्यावांपृथिवी निष्टतृक्षुः। मनीषिणो मनसा पृच्छतेदुतत्। यद्ध्यतिष्टद्भुवंनानि धारयन्। ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्॥ ७६॥

यतो द्यावांपृथिवी निष्ठतृक्षुः। मनींषिणो मनसा विब्रंवीमि वः। ब्रह्माध्यतिष्ठद्भुवनानि धारयन्। प्रातर्ग्निं प्रातरिन्द्र रे हवामहे। प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरिश्वनां। प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिम्। प्रातः सोमंमुत रुद्र हुवेम। प्रातर्जितं भगमुग्र हुवेम। व्यं पुत्रमिदत्यों विधर्ता। आधिश्चद्यं मन्यमानस्तुरिश्चेत्॥७७॥

राजां चिद्यं भगं भृक्षीत्याहं। भग् प्रणेतुर्भग् सत्यंराधः। भगेमां धियमुदंव ददंत्रः। भग् प्रणो जनय गोभिरश्वैः। भग् प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। उतेदानीं भगंवन्तः स्याम। उत प्रपित्व उत मध्ये अह्राम्। उतोदिता मघवन्थ्सूर्यस्य। व्यं देवाना र सुमृतौ स्याम। भगं एव भगंवार अस्तु देवाः॥७८॥

तेनं वयं भगवन्तः स्याम। तं त्वां भगु सर्व इञ्जोहवीमि। स

नों भग पुर पुता भंवेह। समध्वरायोषसों नमन्त। द्धिकावेंव शुचंये पदायं। अर्वाचीनं वंसुविदं भगं नः। रथंमिवाश्वां वाजिन आवंहन्तु। अश्वांवतीर्गोमतीर्न उषासंः। वीरवंतीः सदंमुच्छन्तु भृद्राः। घृतं दुहांना विश्वतः प्रपीनाः। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥७९॥

विच्रुक्षणा विंचर्तुर शर्मुत्रिये विसर्जनाय ब्रह्म बनुं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्तुरिश्चिद्देवाः प्रपीना एकं च॥———[९] पीवौँत्रान्ते शुक्रासः सोमों धेनुमिन्द्रस्तरंस्वाञ्छुचिमा देवो यांतु स्यौं देवीमहर्मिस्म ता सूँर्याचन्द्रमसा नवं॥९॥ पीवौँत्रामग्ने त्वं पारयानाधृष्यः शुचिं नु विश्रयंमाणो दिवो रुक्मोऽत्त्रं प्राणमत्रन्ता सूँर्याचन्द्रमसा नवंसप्ततिः॥७९॥ पीवौँत्रां यूयं पात स्वुस्तिभिः सर्वा नः॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥ अष्टकम् ३॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अग्निर्नः पातु कृत्तिकाः। नक्षेत्रं देविमिन्द्रियम्। इदमांसां विचक्षणम्। ह्विरासं जुंहोतन। यस्य भान्तिं र्ष्मयो यस्यं केतवः। यस्येमा विश्वा भुवनानि सर्वाः। स कृत्तिंकाभिर्मिसंवसानः। अग्निर्नो देवः सुंविते दंधातु। प्रजापंते रोहिणी वेतु पत्नीः। विश्वरूपा बृह्ती चित्रभानः॥१॥

सा नो यज्ञस्यं सुविते दंधातु। यथा जीवेम श्ररदः सवीराः। रोहिणी देव्युदंगात्पुरस्तात्। विश्वां रूपाणि प्रतिमोदंमाना। प्रजापंति १ ह्विषां वर्धयंन्ती। प्रिया देवानामुपंयातु यज्ञम्। सोमो राजां मृगशीर्षेण आगन्। शिवं नक्षेत्रं प्रियमंस्य धामं। आप्यायंमानो बहुधा जनेषु। रेतः प्रजां यजंमाने दधातु॥२॥

यत्ते नक्षेत्रं मृगशीर्षमस्ति। प्रियः राजन् प्रियतंमं प्रियाणांम्। तस्मै ते सोम ह्विषां विधेम। शं नं एधि द्विपदे शं चतुंष्पदे। आईयां रुद्रः प्रथंमा न एति। श्रेष्ठों देवानां पतिरिष्ठियानांम्। नक्षेत्रमस्य ह्विषां विधेम। मा नः प्रजाः रीरिष्नमोत वीरान्। हेती रुद्रस्य परि णो वृणक्तु। आईरा नक्षेत्रं जुषताः हिवर्नः॥३॥

प्रमुश्रमांनौ दुरितानि विश्वां। अपाघश र सन्नुदतामरांतिम्।

पुनंनों देव्यदितिः स्पृणोतु। पुनंवसू नः पुन्रेतां यज्ञम्। पुनंनों देवा अभियंन्तु सर्वें। पुनंः पुनर्वो ह्विषां यजामः। एवा न देव्यदितिरन्वा। विश्वंस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। पुनंवसू ह्विषां वर्धयंन्ती। प्रियं देवानामप्येतु पार्थः॥४॥

बृह्स्पतिः प्रथमं जायंमानः। तिष्यं नक्षंत्रम्भि सम्बंभूव। श्रेष्ठो देवानां पृतेनासु जिष्णुः। दिशोऽनु सर्वा अभयं नो अस्तु। तिष्यः पुरस्तांदुत मध्यतो नः। बृह्स्पतिर्नः परि पातु पश्चात्। बाधेतां द्वेषो अभयं कृणुताम्। सुवीर्यस्य पत्तयः स्याम। इद स्पेभ्यो ह्विरेस्तु जुष्टम्। आश्रेषा येषांमनुयन्ति चेतः॥५॥

ये अन्तरिक्षं पृथिवीं क्षियन्ति। ते नेः सूपीसो हवमागिमिष्ठाः। ये रोचने सूर्यस्यापि सूपीः। ये दिवं देवीमनुं स्अरेन्ति। येषांमाश्रेषा अनुयन्ति कामम्। तेभ्यः सूर्पेभ्यो मध्मञ्जहोमि। उपहूताः पितरो ये मुघासुं। मनोजवसः सुकृतः सुकृत्याः। ते नो नक्षेत्रे हवमागिमिष्ठाः। स्वधाभिर्यज्ञं प्रयंतं जुषन्ताम्॥६॥

ये अंग्निद्ग्धा येऽनंग्निदग्धाः। येऽमुं लोकं पितरंः क्षियन्ति। याङ्श्चं विद्य याः उं च न प्रविद्य। मघासुं यज्ञः सुकृतं जुषन्ताम्। गवां पितः फल्गुंनीनामिस् त्वम्। तदर्यमन्वरुणमित्र चारुं। तं त्वां वयः संनितारः सनीनाम्। जीवा जीवन्तमुप संविशेम। येनेमा विश्वा भुवंनानि सञ्जिता। यस्यं देवा अनु सं यन्ति चेतः॥७॥

अर्यमा राजाऽजर्स्तुविष्मान्। फल्गुंनीनामृष्भो रोरवीति। श्रेष्ठों देवानां भगवो भगासि। तत्त्वां विदुः फल्गुंनी्स्तस्यं वित्तात्। अस्मभ्यं क्षत्रमृजर्रं सुवीर्यम्। गोमदर्श्ववदुप सन्नुदेह। भगों ह दाता भग इत्प्रंदाता। भगों देवीः फल्गुंनी्रा विवेश। भगस्येत्तं प्रंस्वं गंमेम। यत्रं देवैः संधमादं मदेम॥८॥

आयांतु देवः संवितोपंयातु। हिर्ण्ययंन सुवृता रथेन। वहुन् हस्तर् सुभगं विद्यनापंसम्। प्रयच्छंन्तं पपुंरिं पुण्यमच्छं। हस्तः प्रयंच्छत्वमृतं वसीयः। दक्षिणेन प्रति-गृभ्णीम एनत्। दातारंम् संविता विदेय। यो नो हस्तांय प्रसुवाति यज्ञम्। त्वष्टा नक्षंत्रम्भ्येति चित्राम्। सुभ र संसं युवति रोचंमानाम्॥९॥

निवेशयंत्रमृतान्मर्त्या ईश्च। रूपाणि पि श्वन् भुवंनानि विश्वा। तत्रस्त्वष्टा तदुं चित्रा विचंष्टाम्। तत्रक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तत्रः प्रजां वीरवंती स् सनोतु। गोभिनीं अश्वेः समनक्तु यज्ञम्। वायुर्नक्षंत्रमभ्येति निष्ट्याम्। तिग्मर्श्वं वृष्भो रोरुवाणः। समीरयन् भुवंना मात्रिश्वा। अप् द्वेषा से नुदतामरांतीः॥१०॥

तन्नों वायुस्तदु निष्ट्यां शृणोतु। तन्नक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तन्नों देवासो अनुंजानन्तु कामम्। यथा तरेम दुरितानि विश्वां। दूरम्समच्छत्रं वो यन्तु भीताः। तदिन्द्राग्नी कृणतां तद्विशांखे। तन्नों देवा अनुमदन्तु यज्ञम्। पृश्चात् पुरस्तादभंयं नो अस्तु। नक्षंत्राणामधिपत्नी विशांखे। श्रेष्ठांविन्द्राग्नी भुवंनस्य गोपौ॥११॥

विषूंचः शत्रूंनप् बाधंमानौ। अप् क्षुधं नुदतामरांतिम्। पूर्णा पृश्चादुत पूर्णा पुरस्तात्। उन्मध्यतः पौर्णमासी जिंगाय। तस्यां देवा अधि संवसंन्तः। उत्तमे नाकं इह मांदयन्ताम्। पृथ्वी सुवर्चा युवृतिः सजोषाः। पौर्णमास्युदंगाच्छोभंमाना। आप्याययंन्ती दुरितानि विश्वाः। उरुं दुहां यजंमानाय यज्ञम्॥१२॥

चित्रभांनुर्यजमाने दधातु हविर्नुः पाथुश्चेतों जुपन्ताश्चेतों मदेमु रोचमानामरांतीर्गोपौ युज्ञम्॥————[१]

ऋखास्मं ह्व्यैर्नमंसोप्सद्यं। मित्रं देवं मित्र्धेयं नो अस्तु। अनूराधान् ह्विषां वर्धयन्तः। शतं जीवेम श्ररदः सवीराः। चित्रं नक्षेत्रमुदंगात्पुरस्तात्। अनूराधास् इति यद्वदंन्ति। तिम्त्रि एति पृथिभिदेवयानैः। हिर्ण्ययैर्वितंतर्न्तिरक्षे। इन्द्रौ ज्येष्ठामन् नक्षेत्रमेति। यस्मिन्वृत्रं वृत्रुतूर्ये तृतारं॥१३॥

तस्मिन्वयम्मृतं दुहांनाः। क्षुधं तरेम् दुरितिं दुरिष्टिम्। पुरन्दरायं वृष्भायं धृष्णवें। अषांढाय सहंमानाय मीढुषें। इन्द्राय ज्येष्ठा मधुमृद्दुहांना। उरुं कृणोतु यजमानाय लोकम्। मूलं प्रजां वीरवंतीं विदेय। परांच्येतु निर्ऋतिः पराचा। गोभिर्नक्षंत्रं पृषुभिः समंक्तम्। अहंभूयाद्यजमानाय

## मह्यम्ं॥१४॥

अहंनों अद्य सुंवित दंधातु। मूलं नक्षंत्रमिति यद्वदंन्ति। परांचीं वाचा निर्ऋतिं नुदामि। शिवं प्रजाये शिवमंस्तु मह्मम्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। यासांमषाढा अनुयन्ति कामम्। ता न आपः शङ् स्योना भंवन्तु। याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैशन्तीरुत प्रांसचीर्याः॥१५॥

यासांमषाढा मधुं भृक्षयंन्ति। ता न आपः शङ् स्योना भंवन्तु। तन्नो विश्वे उपं शृण्वन्तु देवाः। तदंषाढा अभिसंयन्तु यज्ञम्। तन्नक्षंत्रं प्रथतां पृशुभ्यः। कृषिर्वृष्टिर्यजंमानाय कल्पताम्। शुभ्राः कृन्यां युवृतयः सुपेशंसः। कृर्मृकृतः सुकृतों वीर्यावतीः। विश्वान् देवान् ह्विषां वर्धयंन्तीः। अषाढाः काम्मुपं यान्तु युज्ञम्॥१६॥

यस्मिन् ब्रह्माऽभ्यजंयथ्सर्वमेतत्। अमुं चं लोकमिदमूं च सर्वम्। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विजित्यं। श्रियं दधात्वहंणीय-मानम्। उभौ लोकौ ब्रह्मणा सञ्जितेमौ। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विचंष्टाम्। तस्मिन्वयं पृतंनाः सञ्जयेम। तन्नो देवासो अनुंजानन्तु कामम्। शृण्वन्ति श्रोणाममृतंस्य गोपाम्। पुण्यांमस्या उपशृणोमि वाचम्॥१७॥

महीं देवीं विष्णुंपत्नीमजूर्याम्। प्रतीचींमेना हिवषां

यजामः। त्रेधा विष्णुंरुरुगायो विचंक्रमे। मृहीं दिवं पृथिवीम्न्तिरक्षम्। तच्छ्रोणैतिश्रवं इच्छमाना। पुण्य श्रोकं यजमानाय कृण्वती। अष्टौ देवा वसंवः सोम्यासंः। चतंस्रो देवीर्जराः श्रविष्ठाः। ते यज्ञं पान्तु रजसः प्रस्तात्। संवथ्सरीणममृत स्वस्ति॥१८॥

युज्ञं नेः पान्तु वसंवः पुरस्तांत्। दक्षिणतोंऽभियंन्तु श्रविष्ठाः। पुण्यं नक्षंत्रम्भि संविशाम। मा
नो अर्रातिर्घशृष्साऽगन्ं। क्षत्रस्य राजा वर्रुणोऽधिराजः।
नक्षंत्राणा श्रातिभेष्वविसेष्ठः। तौ देवेभ्यः कृणुतो दीर्घमायुः।
श्रात सहस्रां भेषजानि धत्तः। युज्ञं नो राजा वर्रुण
उपयात्। तन्नो विश्वे अभि संयंन्तु देवाः॥१९॥

तन्नो नक्षंत्र श्वतिभेषग्जुषाणम्। दीर्घमायुः प्रति-रद्भेषजानि। अज एकपादुदंगात्पुरस्तांत्। विश्वां भूतानि प्रति मोदंमानः। तस्यं देवाः प्रंस्वं यंन्ति सर्वे। प्रोष्ठपदासों अमृतंस्य गोपाः। विभ्राजंमानः समिधान उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहृदगुन्द्याम्। तर सूर्यं देवम्जमेकंपादम्। प्रोष्ठपदासो अनुयन्ति सर्वे॥२०॥

अहिंर्बुध्नियः प्रथंमान एति। श्रेष्ठों देवानांमुत मानुंषाणाम्। तं ब्राँह्मणाः सोम्पाः सोम्यासंः। प्रोष्ठपदासो अभि रंक्षन्ति सर्वै। चुत्वार् एकंमुभि कर्म देवाः। प्रोष्ठपदास् इति यान् वदंन्ति। ते बुधियं परिषद्य १ स्तुवन्तः। अहि १ रक्षन्ति नमंसोपसद्यं। पूषा रेवत्यन्वेति पन्थांम्। पुष्टिपतीं पशुपा वार्जवस्त्यौ॥२१॥

ड्मानि ह्व्या प्रयंता जुषाणा। सुगैर्नो यानैरुपयातां यज्ञम्। क्षुद्रान् पृशून् रंक्षतु रेवती नः। गावो नो अश्वाः अन्वेतु पूषा। अन्नः रक्षंन्तौ बहुधा विरूपम्। वाजः सन्तां यजंमानाय यज्ञम्। तद्श्विनांवश्वयुजोपंयाताम्। शुभुङ्गिष्ठौ सुयमेभिरश्वैः। स्वं नक्षंत्रः ह्विषा यजंन्तौ। मध्वा सम्पृंकौ यजुंषा समंक्तौ॥२२॥

यौ देवानां भिषजौं हव्यवाहौ। विश्वंस्य दूताव्मृतंस्य गोपौ। तौ नक्षंत्रं जुजुषाणोपंयाताम्। नमोऽश्विभ्यां कृणुमोऽश्वयुग्भ्याम्। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। तद्यमो राजा भगवान् विचंष्टाम्। लोकस्य राजां महतो महान् हि। सुगं नः पन्थामभंयं कृणोतु। यस्मिन्नक्षंत्रे यम एति राजां। यस्मिन्नेनम्भ्यिषश्चन्त देवाः। तदंस्य चित्र हिवषां यजाम। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। निवेशंनी यत्तं देवा अदंधः॥२३॥

तृतार् मह्यं प्रामुचीर्या याँन्तु युज्ञं वाचई स्वस्ति देवा अनुयन्ति सर्वे वाजंबस्त्यौ समंक्तौ देवास्त्रीणिं च॥ 🍳 🛚

नवोनवो भवति जायंमानो यमांदित्या अर्शुमांप्याययंन्ति। ये विरूपे समनसा संव्ययंन्ती। समानं तन्तुं परितातना तैं। विभू प्रभू अनुभू विश्वतों हुवे। ते नो नक्षेत्रे हवमागंमेतम्। व्यं देवी ब्रह्मणा संविदानाः। सुरत्नांसो देववीतिं दर्धानाः। अहोरात्रे ह्विषां वर्धयन्तः। अतिं पाप्मान्मतिं मुक्त्या गमेम। प्रत्युवदृश्यायती॥२४॥

व्युच्छन्तीं दृहिता दिवः। अपो मही वृंणुत् चक्षुंषा। तमो ज्योतिंष्कृणोति सूनरीं। उदुस्रियाः सचते सूर्यः। सचां उद्यन्नक्षंत्रमर्चिमत्। तवेदुंषो व्युषि सूर्यस्य च। सं भक्तेनं गमेमहि। तन्नो नक्षंत्रमर्चिमत्। भानुमक्तेजं उचरंत्। उपयुज्ञमिहागंमत्॥२५॥

प्र नक्षंत्राय देवायं। इन्द्रायेन्दु रे हवामहे। स नंः सिवता सुंवथ्मिनम्। पृष्टिदां वीरवंत्तमम्। उदुत्यं चित्रम्। अदितिर्न उरुष्यतु महीमूषु मातरम्। इदं विष्णुः प्रतिद्वष्णुः। अग्निर्मूर्धा भुवंः। अनुनोऽद्यानुंमित्रिरिन्वदंनुमते त्वम्। हृव्यवाह् र् स्विष्टम्॥२६॥

आयुत्यंगमृष्टिचंष्टम्॥———[ ३

अग्निर्वा अंकामयत। अन्नादो देवाना इस्यामिति। स एतम् ग्रये कृत्तिकाभ्यः पुरोडाशम् ष्टाकपालं निरंवपत्। ततो वै सौंऽन्नादो देवानां मभवत्। अग्निर्वे देवानां मन्नादः। यथां ह् वा अग्निर्देवानां मन्नादः। एव इह् वा एष मंनुष्यांणां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा कृत्तिकाभ्यः स्वाहाँ। अम्बाये स्वाहां दुलाये स्वाहाँ। नित्त्ये स्वाहाऽभ्रयंन्त्ये स्वाहां। मेघयंन्त्ये स्वाहां

# वर्षयंन्त्ये स्वाहाँ। चुपुणीकांये स्वाहेतिं॥२७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्। तासा रे रोहिणीम्भ्यंध्यायत्। सोंऽकामयत। उप मा वंर्तेत। समेंनया गच्छेयेतिं। स एतं प्रजापंतये रोहिण्ये च्रं निरंवपत्। ततो वै सा तमुपावंर्तत। समेंनया गच्छत। उप ह वा एनं प्रियमावंर्तते। सं प्रियेणं गच्छते। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उंचैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहां रोहिण्ये स्वाहां। रोचंमानाये स्वाहां प्रजाभ्यः स्वाहेतिं॥२८॥

सोमो वा अंकामयत। ओषंधीना र गुज्यम्भिजंयेयमितिं। स एत र सोमांय मृगशीर्षायं श्यामाकं च्रं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स ओषंधीना र गुज्यम्भ्यंजयत्। समानाना र हु वै गुज्यम्भिजंयति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सोमांय स्वाहां मृगशीर्षाय स्वाहां। इन्वकाभ्यः स्वाहौषंधीभ्यः स्वाहां। गुज्याय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥२९॥

रुद्रो वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामिति। स एतः रुद्रायाऽऽद्रिये प्रैय्यंङ्गवं चुरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो व स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् ह व भंवति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। रुद्राय स्वाहाऽऽद्रिये स्वाहां। पिन्वंमानाये स्वाहां पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥३०॥

ऋक्षा वा इयमंलोमकांऽऽसीत्। साऽकांमयत। ओषंधीभिवंनस्पतिंभिः प्रजाययेवेतिं। सैतमदिंत्ये पुनंवंसुभ्यां चरुं निरंवपत्। ततो वा इयमोषंधीभिवंनस्पतिंभिः प्राजांयत। प्रजांयते ह् वै प्रजयां पृश्भिः। य पुतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अदित्ये स्वाहा पुनंवंसुभ्याम्। स्वाहा भूँत्ये स्वाहा प्रजांत्ये स्वाहेतिं॥३१॥

बृह्स्पतिर्वा अंकामयत। ब्रह्मवर्च्सी स्यामिति। स एतं बृह्स्पतिये तिष्यांय नैवारं चरुं पर्यासे निरंवपत्। ततो वै स ब्रह्मवर्च्स्यंभवत्। ब्रह्मवर्च्सी हु वै भवति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहां तिष्यांय स्वाहां। ब्रह्मवर्च्साय स्वाहेतिं॥३२॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवाः सर्पेभ्यं आश्रेषाभ्य आज्यं कर्म्मं निरंवपन्। तानेताभिरेव देवतांभिरुपानयन्। एताभिर्ह् वे देवतांभिर्द्धिषन्तं भ्रातृंव्यमुपंनयित। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सर्पेभ्यः स्वाहांऽऽश्रेषाभ्यः स्वाहां। दन्दशूकेंभ्यः स्वाहेतिं॥३३॥

पितरो वा अंकामयन्त। पितृलोक ऋंध्रयामेति। त एतं पितृभ्यों मघाभ्यः पुरोडाश्र षद्भंपालं निरंवपन्। ततो वे ते पितृलोक आध्रुंबन्। पितृलोके ह् वा ऋंध्रोति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पितृभ्यः स्वाहां मघाभ्यः। स्वाहांऽनघाभ्यः स्वाहांऽगदाभ्यः। स्वाहां-

ऽरुन्धतीभ्यः स्वाहेतिं॥३४॥

अर्यमा वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामितिं। स एतमंर्यम्णे फल्गुंनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वै भंवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अर्यम्णे स्वाहा फल्गुंनीभ्याः स्वाहतिं॥३५॥

भगो वा अंकामयत। भगी श्रेष्ठी देवानाईस्यामिति। स एतं भगाय फल्गुंनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स भगी श्रेष्ठी देवानांमभवत्। भगी हु वै श्रेष्ठी संमानानां भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। भगाय स्वाहा फल्गुंनीभ्याङ् स्वाहां। श्रेष्ठ्यांय स्वाहेति॥३६॥

स्विता वा अंकामयत। श्रन्में देवा दधीरन्। स्विता स्यामिति। स पृत सिवित्रे हस्तांय पुरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपदाशूनां व्रीहीणाम्। ततो वै तस्मै श्रद्देवा अदंधत। स्विताऽभंवत्। श्रद्धवा अंस्मै मनुष्यां दधते। स्विता संमानानां भवति। य पृतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। स्वित्रे स्वाहा हस्तांय। स्वाहां ददते स्वाहां पृण्ते। स्वाहां प्रयच्छंते स्वाहां प्रतिगृभ्णते स्वाहेति॥३७॥

त्वष्टा वा अंकामयत। चित्रं प्रजां विन्देयेतिं। स एतं त्वष्ट्रे चित्रायें पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै स चित्रं प्रजामंविन्दता चित्रः हु वै प्रजां विन्दते। य एतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। त्वष्ट्रे स्वाहां चित्रायै स्वाहां। चैत्राय स्वाहां प्रजायै स्वाहेतिं॥३८॥

वायुर्वा अंकामयत। काम्चारंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमितिं। स एतद्वायवे निष्ट्यांये गृष्ट्ये दुग्धं पयो निरंवपत्। ततो वै स काम्चारंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। काम्चारं ह् वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वायवे स्वाहा निष्ट्यांये स्वाहां। काम्चारांय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥३९॥

इन्द्राग्नी वा अंकामयेताम्। श्रेष्ठ्यं देवानांम्भिजंयेवेतिं। तावेतिमेन्द्राग्निभ्यां विशांखाभ्यां पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपताम्। ततो वै तौ श्रेष्ठ्यं देवानांम्भ्यंजयताम्। श्रेष्ठ्यं हु वै संमानानांम्भि जंयति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्राग्निभ्याः स्वाहा विशांखाभ्याः स्वाहां। श्रेष्ठ्यांय स्वाहाऽभिजित्ये स्वाहेतिं॥४०॥

अथैतत्पौर्णमास्या आज्यं निर्वपति। कामो वै पौर्णमासी। काम आज्यम्। कामेनेव काम् समर्धयति। क्षिप्रमेन् स्सकाम् उपनमित। येन् कामेन् यजेते। सोऽत्रं जुहोति। पौर्णमास्ये स्वाहा कामाय स्वाहाऽऽगत्ये स्वाहेति॥४१॥ अधिः पर्थवर प्रजापितः पोर्डण् सोम् एकांदश रुबो दश्क्षकांदश् बहुस्पतिर्दशं देवासुग नवं पितर् एकांदशार्यमा भगे दशं दश सिवत चतुर्दश् लष्टां वायुरिन्त्राभी दशं द्शार्थेततौर्णमास्या अष्टो पर्थवरा॥———[४]

मित्रो वा अंकामयत। मित्रधेयंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमिति। स एतं मित्रायांनूराधेभ्यंश्चरुं निर्ग्वपत्। ततो वै स मित्रधेयंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। मित्रधेय १ ह् वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। मित्राय स्वाहांऽनूराधेभ्यः स्वाहाँ। मित्रधेयांय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥४२॥

इन्द्रो वा अंकामयत। ज्येष्ठ्यं देवानांम्भिजंयेय्मिति। स एतिमन्द्रांय ज्येष्ठायें पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपन्महाव्रीहीणाम्। ततो वै स ज्येष्ठ्यं देवानांम्भ्यंजयत्। ज्येष्ठ्यं हु वै संमानानांम्भिजंयति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्रांय स्वाहाँ ज्येष्ठायै स्वाहाँ। ज्येष्ठ्यांय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥४३॥

प्रजापंतिर्वा अंकामयत। मूलं प्रजां विंन्देयेतिं। स एतं प्रजापंतये मूलांय चुरुं निरंवपत्। ततो वै स मूलं प्रजामविन्दत। मूलर्ं हु वै प्रजां विंन्दते। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहा मूलांय स्वाहां। प्रजाये स्वाहेतिं॥४४॥

आपो वा अंकामयन्त। समुद्रं कार्मम्भिजंयेमेति। ता पृतमुद्धोऽषाढाभ्यंश्चरुं निरंवपन्। ततो वै ताः संमुद्रं कार्मम्भ्यंजयन्। समुद्र॰ हु वै कार्मम्भिजंयति। य पृतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अद्धाः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। समुद्राय स्वाहा कामांय स्वाहां। अभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥४५॥

विश्वे वै देवा अंकामयन्त। अनुपुज्य्यं जंयेमेतिं। त एतं विश्वेभ्यो देवेभ्योऽषाढाभ्यंश्चरुं निरंवपन्। ततो वै ते-ऽनपज्य्यमंज्यन्। अनुपुज्य्यः हु वै जंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। अनुपुज्य्याय स्वाहा जित्यै स्वाहेतिं॥४६॥

ब्रह्म वा अंकामयत। ब्रह्मलोकम्भिजंयेय्मितिं। तदेतं ब्रह्मणेऽभिजितें च्रुं निरंवपत्। ततो वै तद्ग्रेह्मलोकम्भ्यंजयत्। ब्रह्मलोक॰ हु वा अभिजंयित। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। ब्रह्मणे स्वाहांऽभिजिते स्वाहां। ब्रह्मलोकाय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥४७॥

विष्णुर्वा अंकामयत। पुण्युङ् श्लोक १ शृण्वीय। न मां पापी कीर्तिरागंच्छेदिति। स एतं विष्णंवे श्रोणायै पुरोडाशं त्रिकपालं निरंवपत्। ततो वे स पुण्युङ् श्लोकंमशृणुत। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छत्। पुण्य १ हु वे श्लोक १ शृणुते। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहाँ श्लोणायै स्वाहाँ। श्लोकांय स्वाहाँ श्लाय स्वाहेतिं॥४८॥

वसंवो वा अंकामयन्त। अग्रं देवतांनां परीयामेति। त एतं वसुभ्यः श्रविष्ठाभ्यः पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपन्। ततो वै तेऽग्रं देवतांनां पर्यायन्। अग्रं ह् वै संमानानां पर्येति। य एतेनं ह्विषा यज्ञंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वसुभ्यः स्वाहा श्रविष्ठाभ्यः स्वाहाँ। अग्रांय स्वाहा परींत्यै स्वाहेति॥४९॥

इन्द्रो वा अंकामयत। दृढोऽशिंथिलः स्यामितिं। स एतं वर्रुणाय श्वतिभेषजे भेषजेभ्यः पुरोडाशं दर्शकपालं निर्रवपत्कृष्णानां व्रीहीणाम्। ततो वे स दृढोऽशिंथिलो-ऽभवत्। दृढो हु वा अशिंथिलो भवति। य एतेनं हृविषा यज्ञते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वर्रुणाय स्वाहां श्वतिभेषजे स्वाहां। भेषजेभ्यः स्वाहेतिं॥५०॥

अजो वा एकंपादकामयत। तेजस्वी ब्रह्मवर्च्सी स्यामिति। स एतम्जायैकंपदे प्रोष्ठपदेभ्यंश्चरं निरंवपत्। ततो वै स तेजस्वी ब्रह्मवर्चस्यंभवत्। तेजस्वी ह् वै ब्रह्मवर्च्सी भवति। य एतेनं ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अजायैकंपदे स्वाहाँ प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहाँ। तेजंसे स्वाहाँ ब्रह्मवर्च्साय स्वाहेति॥५१॥

अहिर्वे बुधियोऽकामयत। इमां प्रतिष्ठां विन्देयेति। स एतमहंये बुधियाय प्रोष्ठप्देभ्यः पुरोडाशं भूमिकपालं निरंवपत्। ततो वै स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। इमा॰ ह वै प्रंतिष्ठां विन्दते। य प्तेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अहंये बुध्नियांय स्वाहां प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठाये स्वाहेतिं॥५२॥

पूषा वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामितिं। स एतं पूष्णे रेवत्यैं चुरुं निरंवपत्। ततो वे स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् ह् वे भंवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पूष्णे स्वाहां रेवत्यै स्वाहां। पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥५३॥

अश्विनौ वा अंकामयेताम्। श्रोत्रस्विनावबंधिरौ स्यावेतिं। तावेतमृश्विभ्यांमश्वयुग्भ्यां पुरोडाशं द्विकपालं निरंवपताम्। ततो वे तौ श्रोत्रस्विनावबंधिरावभवताम्। श्रोत्रस्वी हु वा अबंधिरो भवति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अश्विभ्याङ् स्वाहांऽश्वयुग्भ्याङ् स्वाहां। श्रोत्रांय स्वाहा श्रुत्ये स्वाहेतिं॥५४॥

यमो वा अंकामयत। पितृणा र राज्यम्भिजंयेयमिति। स एतं यमायांप्भरंणीभ्यश्चरं निरंपवत्। ततो वै स पिंतृणा र राज्यम्भ्यंजयत्। समानाना र हु वै राज्यम्भि जंयति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। यमाय स्वाहांऽप्भरंणीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥५५॥

अथैतदंमावास्यांया आज्यं निर्वपति। कामो वा अमावास्यां। काम आज्यम्। कामेनैव कामु समर्धयति। क्षिप्रमेन् सकाम् उपनमित। येन् कामेन् यजिते। सोऽत्रे जुहोति। अमावास्याये स्वाहा कामाय स्वाहाऽऽगत्ये स्वाहेति॥५६॥

चन्द्रमा वा अंकामयत। अहोरात्रानंधमासान्मासांनृतून्थ्सं-वथ्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य स्र सलोकतांमाप्नयामिति। स एतं चन्द्रमंसे प्रतीदृष्ट्यांये पुरोडाशं पश्चंदशकपालं निरंवपत्। ततो वै सोंऽहोरात्रानंधमासान्मासांनृतून्थ्यंवथ्सर-मास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतांमाप्नोत्। अहोरात्रान् ह वा अंधमासान्मासांनृतून्थ्यंवथ्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एतेनं हिवषा यज्ञंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। चन्द्रमंसे स्वाहाँ प्रतीदृष्ट्यांये स्वाहाँ। अहोरात्रेभ्यः स्वाहाँऽर्धमासेभ्यः स्वाहाँ। मासेभ्यः स्वाहर्तुभ्यः स्वाहाँ। संवथ्सराय स्वाहेति॥५७॥

अहोरात्रे वा अंकामयेताम्। अत्यंहोरात्रे मुंच्येविह।
न नांवहोरात्रे आंप्रुयातामिति। ते एतमंहोरात्राभ्यां च्रुं
निरंवपताम्। द्वयानां व्रीहीणाम्। शुक्कानां च कृष्णानां च।
स्वात्योर्दुग्धे। श्वेतायं च कृष्णायं च। ततो व ते अत्यंहोरात्रे
अंमुच्येते। नैनं अहोरात्रे आंप्रुताम्। अति ह वा अंहोरात्रे
मुंच्यते। नैनंमहोरात्रे आंप्रुतः। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं
चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अह्रे स्वाहा रात्रियै स्वाहां।

## अतिमुक्त्यै स्वाहेतिं॥५८॥

उषा वा अंकामयत। प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगां स्यामितिं। सैतमुषसं चुरुं निरंवपत्। ततो वे सा प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगांऽभवत्। प्रियो हु वे संमानाना र सुभगों भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। उषसे स्वाहा व्यंष्ट्ये स्वाहां। व्यूष्ट्ये स्वाहां व्युच्छन्त्ये स्वाहां। व्यंष्टाये स्वाहेतिं॥५९॥

अथैतस्मै नक्षंत्राय चुरुं निर्वपिति। यथा त्वं देवानामिसं। एवमहं मंनुष्याणां भूयासमिति। यथां ह वा एतद्देवानाम्। एव॰ ह वा एष मंनुष्याणां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। नक्षंत्राय स्वाहोदेष्यते स्वाहाँ। उद्यते स्वाहोदिताय स्वाहाँ। हरंसे स्वाहा भरंसे स्वाहाँ। भ्राजंसे स्वाहा तेजंसे स्वाहाँ। तपंसे स्वाहाँ ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेति॥६०॥

सूर्यो वा अंकामयत। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा स्यामिति। स एत एत एत्रं सूर्याय नक्षंत्रेभ्यश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा ८ मंवत्। प्रतिष्ठा हु वै संमानानां भवति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सूर्याय स्वाहा नक्षंत्रेभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठाये स्वाहेति॥६१॥

अथैतमदित्यै चुरुं निर्वपति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव

प्रथमः प्रश्नः 311

प्रतिं तिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। अदिंत्यै स्वाहाँ प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६२॥

अथैतं विष्णंवे च्रुं निर्वपति। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञ एवान्तृतः प्रतिं तिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहां यज्ञाय स्वाहां। प्रतिष्ठाये स्वाहेतिं॥६३॥

चन्द्रमाः पश्चेदशाहोरात्रे स्प्तदंशोषा एकोद्शाधेतस्मै नक्षंत्राय त्रयोदश् सूर्यो दशाधेतमिदेत्ये पश्चाधेत विष्णंवे पद्रश्मप्त (स्विताऽऽशूनां व्रीहीणामिन्द्री महाव्रीहीणामिन्द्रीः कृष्णानां व्रीहीणामंहोरात्रे द्वयानां व्रीहीणाम्। पितरः पद्धपाल॰ सविता द्वादेशकपालमिन्द्राक्षी एकादशकपालमिन्द्र एकादशकपालमिन्द्रो दर्शकपालं विष्णुंश्विकपालमिन्द्राक्षी एकादशकपालमिन्द्र एकादशकपालमिन्द्रो दर्शकपालं विष्णुंश्विकपालमिन्द्राक्षी एकादशकपालमिन्द्र एकादशकपालमिन्द्रो दर्शकपालं विष्णुंश्विकपालमिक्द्रमें कृद्रो दृहस्पतिः पर्यसि वादः पर्यः सोमों वाद्युरिन्द्राक्षी मित्र इन्द्र आपो ब्रह्मं यमोऽभिजित्यै त्वष्टा प्रजापितः प्रजाये पौर्णमास्या अंमावास्याया अगेत्ये विश्वे जित्या अश्विनो श्रुत्या ब्रह्म तदेतं विष्णुः स एतं वाद्यः स एतदापस्ताः। पितरो विश्वे वसंवोऽकामयन्त् मेति त एतत्रिरंवपन्। आपोऽकामयन्त् मेति ता एतित्रिरंवपन्। इन्द्राक्षी अश्विनांवकामयेतां वेति तावेतित्रिरंवपताम्। अत्राग्ते वा अकामयेतामिति ते एतत्रिरंवपताम्। अन्यत्रांकामयतेति स एतित्ररंवपत्। इन्द्राक्षी श्रेष्ठ्यमिन्द्रो च्येष्ट्रामिन्द्रो इढः। अहिः स्योऽदित्ये विष्णंव प्रतिष्ठार्ये। सोमों युमः संमानानांम्। अग्निनी रिरिषद्नयत्रं रीरिषः॥)॥

अप्तिर्न ऋध्यास्म् नवीनवोऽग्निर्मित्रश्चन्द्रमाः पद्॥॥ अग्निर्नुस्तत्रौ वायुरिहेर्बुभ्रियं ऋक्षा वा इयमथैतत्यौर्णमास्या अजो वा एकपाथ्सूर्यस्त्रिपष्टिः॥६३॥ अग्निर्नः पातु प्रतिष्ठायै स्वाहेति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयत्र्या-ऽहंरत्। तस्यं पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पूर्णोऽभवत्। तत्पूर्णस्यं पर्णत्वम्। ब्रह्म वै पूर्णः। यत्पंर्णशाखयां वृथ्सानंपाकरोति। ब्रह्मणैवैनानपाकरोति। गायत्रो वै पूर्णः। गायत्राः पृशवंः॥१॥

तस्मात्रीणित्रीणि पूर्णस्यं पलाशानि। त्रिपदां गायत्री। यत्पंणशाखया गाः प्राप्यंति। स्वयैवैनां देवतंया प्राप्यंति। यं कामयेतापृशः स्यादितिं। अपूर्णान्तस्मै शुष्कांग्रामाहंरेत्। अपृशुरेव भंवति। यं कामयेत पशुमान्थस्यादितिं। बहुपूर्णान्तस्मै बहुशाखामाहंरेत्। पृशुमन्तंमेवेनं करोति॥२॥

यत्प्राचीमा हरैंत्। देवलोकम्भि जंयेत्। यदुदीचीं मनुष्यलोकम्। प्राचीमुदीचीमा हंरति। उभयौर्लोकयोर्भि-जित्यै। इषे त्वोर्जे त्वेत्यांह। इषमेवोर्जं यर्जमाने दधाति। वायवः स्थेत्यांह। वायुर्वा अन्तरिक्षस्याध्यंक्षाः। अन्तरिक्षदेवत्याः खलु वै पृशवः॥३॥

वायवं एवैनान्परिं ददाति। प्र वा एंनानेतदा कंरोति। यदाहे। वायवः स्थेत्युंपायवः स्थेत्यांह। यजंमानायैव पृशूनुपं ह्वयते। देवो वंः सिवता प्रापंयत्वित्यांह प्रसूत्यै। श्रेष्ठंतमाय कर्मण इत्यांह। युज्ञो हि श्रेष्ठंतम् कर्म। तस्मांदेवमांह।

## आप्यांयध्वमघ्रिया देवभागमित्यांह॥४॥

वृथ्सेभ्यंश्च वा एताः पुरा मनुष्येभ्यश्चाप्यांयन्त। देवेभ्यं एवेना इन्द्रायाप्यांययति। ऊर्जस्वतीः पर्यस्वतीरित्यांह। ऊर्ज् हि पर्यः सम्भरंन्ति। प्रजावंतीरनमीवा अयक्ष्मा इत्यांह प्रजांत्ये। मा वंः स्तेन ईशत् माऽघशः स् इत्यांह गुत्यैं। रुद्रस्यं हेतिः परिं वो वृण्क्तित्यांह। रुद्रादेवेनांस्रायते। ध्रुवा अस्मिन्गोपंतौ स्यात बह्वीरित्यांह। ध्रुवा एवास्मिन्बह्वीः करोति॥५॥

यजंमानस्य पृश्न्पाहीत्यांह। पृश्न्नां गोंपीथायं। तस्माँथ्सायं पृशव् उपसमावंतन्ते। अनंधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव् निदंधाति। उपरीव् हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ठ्ये॥६॥

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इत्यंश्वप्र्श्वमादंते प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह यत्यैं। यो वा ओषंधीः पर्वशो वेदं। नैनाः स हिनस्ति। प्रजापंतिर्वा ओषंधीः पर्वशो वेद। स एना न हिनस्ति। अश्वपृश्वा बर्हिरच्छैति। प्राजापत्यो वा अश्वंः सयोनित्वायं॥७॥

ओषंधीनामहि ५ंसायै। यज्ञस्यं घोषद्सीत्यांह। यजंमान

पुव र्यिं दंधाति। प्रत्युंष्ट्र रक्षः प्रत्युंष्टा अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। प्रेयमंगाद्धिषणां ब्र्हिरच्छेत्यांह। विद्या वै धिषणां। विद्ययैवैनदच्छैंति। मनुंना कृता स्वधया वित्ष्टेत्यांह। मानुवी हि पर्शुं स्वधाकृता॥८॥

त आवंहिन्त क्वयंः पुरस्तादित्यांह। शुश्रुवारसो वै क्वयंः। यज्ञः पुरस्तांत्। मुख्त एव यज्ञमा रंभते। अथो यदेतदुक्ता यतः कृतंश्चा हरंति। तत्प्राच्यां एव दिशो भंवित। देवेभ्यो जुष्टंमिह ब्र्हिरासद इत्यांह। ब्र्हिषः समृद्धै। कर्मणोऽनंपराधाय। देवानां परिषूतम्सीत्यांह॥९॥

यद्वा इदं किं चं। तद्देवानां परिषूतम्। अथो यथा वस्यंसे प्रतिप्रोच्याहेदं करिष्यामीतिं। एवमेव तदंध्वर्युर्देवेभ्यंः प्रतिप्रोच्यं बुर्हिर्दाति। आत्मनोऽहिर्ंसायै। यावंतः स्तम्बान्पंरिदिशेत्। यत्तेषांमुच्छिड्ष्यात्। अति तद्यज्ञस्यं रेचयेत्। एकई स्तम्बं परिदिशेत्। तर सर्वं दायात्॥१०॥

युज्ञस्यानंतिरेकाय। वर्षवृंद्धम्सीत्यांह। वर्षवृंद्धा वा ओषंधयः। देवंबर्हिरित्यांह। देवेभ्यं एवैनंत्करोति। मा त्वा-ऽन्वङ्गा तिर्यगित्याहाहि रंसायै। पर्वं ते राध्यासमित्याहध्यैं। आच्छेत्ता ते मा रिषमित्यांह। नास्याऽऽत्मनो मीयते। य एवं वेदं॥११॥

देवंबर्हिः शृतवंल्शुं विरोहेत्यांह। प्रजा वै बुर्हिः।

प्रजानां प्रजनंनाय। सहस्रंवल्शा वि वय रहेमेत्यांह। आमेवेतामा शांस्ते। पृथिव्याः सम्पृचंः पाहीत्यांह प्रतिष्ठित्ये। अयुंङ्गायुङ्गान्मुष्टीं लुंनोति। मिथुनत्वाय प्रजांत्ये। सुसम्भृतां त्वा सम्भंरामीत्यांह। ब्रह्मंणैवेनथ्सम्भंरति॥१२॥

अदित्यै रास्नाऽसीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवेन्द्रास्नां करोति। इन्द्राण्ये सन्नहंनुमित्यांह। इन्द्राणी वा अग्ने देवतांना समंनह्यत। साऽऽभ्रांत। ऋद्धे सन्नह्यति। प्रजा वे ब्र्हिः। प्रजानामपंरावापाय। तस्माथ्स्नावंसन्तताः प्रजा जांयन्ते॥१३॥

पूषा तें ग्रन्थिं ग्रंश्नात्वत्यांह। पृष्टिमेव यर्जमाने दधाति। स ते मास्थादित्याहाहि रसायै। पृश्चात्प्राञ्चमुपंगूहति। पृश्चाद्वै प्राचीन् रेतों धीयते। पृश्चादेवास्में प्राचीन् रेतों दधाति। इन्द्रंस्य त्वा बाहुभ्यामुद्यंच्छ् इत्यांह। इन्द्रियमेव यर्जमाने दधाति। बृह्स्पतेंर्मूर्भा हंग्मीत्यांह। ब्रह्म वे देवानां बृहस्पतिं:॥१४॥

ब्रह्मंणैवैनंद्धरित। उर्वन्तिरिक्षमिन्वहीत्यांह् गत्यैं। देवङ्गमम्सीत्यांह। देवानेवैनंद्रमयित। अनेधः सादयित। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव नि दंधाति। उपरीव हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समंध्ये॥१५॥ पूर्वेद्युरिध्माब्र्हिः करोति। यज्ञमेवारभ्यं गृहीत्वोपंवसति। प्रजापंतिर्यज्ञमंसृजत। तस्योखे अस्त्रश्सेताम्। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यथ्मांन्नाय्योखे भवंतः। यज्ञस्यैव तदुखे उपंदधात्यप्रंस्रश्साय। शुन्धंध्वं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां एवैनांनि शुन्धति। मात्रिश्वंनो घुर्मोऽसीत्यांह॥१६॥

अन्तरिक्षं वै मांत्रिश्वंनो घर्मः। एषां लोकानां विधृत्यै। द्यौरंसि पृथिव्यंसीत्यांह। दिवश्च ह्येषा पृथिव्याश्च सम्भृंता। यदुखा। तस्मादेवमांह। विश्वधाया असि पर्मेण धाम्नेत्यांह। वृष्टिवै विश्वधायाः। वृष्टिमेवावं रुन्धे। दृश्हंस्व मा ह्वारित्यांह धृत्यै॥१७॥

वसूनां प्वित्रम्सीत्यांह। प्राणा वै वसंवः। तेषां वा एतद्भागधेयम्। यत्पवित्रम्। तेभ्यं एवैनंत्करोति। शृतधार् सहस्रधारमित्यांह। प्राणेष्वेवायुर्दधाति सर्वत्वायं। त्रिवृत्पंलाशशाखायां दर्भमयं भवति। त्रिवृद्वै प्राणः। त्रिवृतंमेव प्राणं मध्यतो यजमाने दधाति॥१८॥

सौम्यः पूर्णः संयोनित्वायं। साक्षात्पवित्रं दुर्भाः। प्राख्सायमधिनि दंधाति। तत्प्राणापानयों रूपम्। तिर्यक्प्रातः। तद्दर्शस्य रूपम्। दार्श्यक्ष ह्यंतदहंः। अत्रं वै चन्द्रमाः। अत्रं प्राणाः। उभयंमेवोपैत्यजांमित्वाय॥१९॥

तस्माद्य स्वतः पवते। हुतः स्तोको हुतो द्रफ्स

इत्यांह् प्रतिंष्ठित्यै। ह्विषोऽस्कंन्दाय। न हि हुत इ स्वाहांकृत इ स्कन्दंति। दिवि नाको नामाग्निः। तस्यं विप्रुषो भागधेयम्। अग्नयं बृह्ते नाकायेत्यांह। नाकंमेवाग्निं भागधेयेन समर्धयति। स्वाहा द्यावांपृथिवीभ्यामित्यांह। द्यावांपृथिव्योरेवैनत्प्रतिष्ठापयति॥२०॥

प्वित्रंवत्यानंयित। अपां चैवौषंधीनां च रस्र् सःस्ंजिति। अथो ओषंधीष्वेव प्शून्प्रतिष्ठापयित। अन्वारभ्य वाचं यच्छति। यज्ञस्य धृत्यै। धारयंत्रास्ते। धारयन्त इव हि दुहन्तिं। कामंधुक्ष इत्याहाऽऽतृतीयंस्यै। त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकान् यर्जमानो दुहे॥२१॥

अमूमिति नामं गृह्णाति। भुद्रमेवासां कर्मा विष्कंरोति। सा विश्वायुः सा विश्वव्यंचाः सा विश्वक्रमेंत्यांह। इयं वै विश्वायुः। अन्तरिक्षं विश्वव्यंचाः। असौ विश्वकंर्मा। इमानेवेताभिर्लोकान् यंथापूर्वं दुंहे। अथो यथां प्रदात्रे पुण्यंमाशास्ते। एवमेवेनां एतदुपंस्तौति। तस्मात्प्रादादित्युत्रीय वन्दंमाना उपस्तुवन्तंः पृशून्दुं-हन्ति॥२२॥

बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यों ह्विरिति वाचं विसृंजते। यथादेवतमेव प्रसौति। दैव्यंस्य च मानुषस्यं च व्यावृंत्यै। त्रिराह। त्रिषंत्या हि देवाः। अवांचं यमोऽनंन्वार्भ्योत्तंराः। अपंरिमितमेवार्व रुन्थे। न दांरुपात्रेणं दुह्यात्। अग्निवद्वै दारुपात्रम्। यद्दारुपात्रेणं दुह्यात्॥२३॥

यातयाँम्ना ह्विषां यजेत। अथो खल्वांहुः। पुरोडाशंमुखानि वै ह्वी॰िषं। नेत इंतः पुरोडाशर्॰ ह्विषो यामोऽस्तीतिं। काममेव दांरुपात्रेणं दुह्यात्। शूद्र एव न दुंह्यात्। असंतो वा एष सम्भूतः। यच्छूद्रः। अहंविरेव तदित्यांहुः। यच्छूद्रो दोग्धीतिं॥२४॥

अग्निहोत्रमेव न दुंह्याच्छूद्रः। तद्धि नोत्पुनन्तिं। यदा खलु वै प्वित्रमृत्येतिं। अथ् तद्धविरितिं। सम्पृंच्यध्वमृतावरीरित्यांह। अपां चैवौषंधीनां च रस् स् सर् सृंजिति। तस्मांद्पां चौषंधीनां च रस्मुपंजीवामः। मृन्द्रा धनस्य सात्य इत्यांह। पुष्टिंमेव यजमाने दधाति। सोमेन त्वातंनुच्मीन्द्रांय दधीत्यांह॥२५॥

सोमं मेवैनंत्करोति। यो वै सोमं भक्षयित्वा। संवथ्सरश् सोमं न पिबंति। पुनुर्भक्ष्यौऽस्य सोमपीथो भंवति। सोमः खलु वै सान्नाय्यम्। य एवं विद्वान्थ्सान्नाय्यं पिबंति। अपुनुर्भक्ष्यौऽस्य सोमपीथो भंवति। न मृन्मयेनापि दध्यात्। यन्मृन्मयेनापिद्ध्यात्। पितृदेवत्य इं स्यात्॥२६॥

अयस्पात्रेणं वा दारुपात्रेण वाऽपिं दधाति। तिष्कं सदेवम्। उद्न्वद्भवति। आपो वै रक्षोष्ट्रीः। रक्षंसामपहत्यै। अदंस्तमसि विष्णंवे त्वेत्यांह। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञायैवैन्ददंस्तं करोति। विष्णों हुव्य रक्षंस्वेत्यांहु गृप्त्यै। अनंधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव निदंधाति। उपरीव हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्ये॥२७॥

असीत्यांहु भृत्ये यर्जमाने दधात्यर्जामित्वाय स्थापयति दुहे दुहन्ति दुह्याद्दोग्धीति दधीत्यांह स्याथ्सादयति पश्चं च॥**ि ३** ]

कर्मणे वां देवेभ्यः शकेयमित्यांह् शत्त्वौं। यज्ञस्य वै सन्तंतिमन् प्रजाः प्रवो यजंमानस्य सन्तांयन्ते। यज्ञस्य विच्छित्तिमन् प्रजाः प्रवो यजंमानस्य विच्छिंद्यन्ते। यज्ञस्य सन्तंतिरिस यज्ञस्यं त्वा सन्तंत्यै स्तृणामि सन्तंत्यै त्वा यज्ञस्येत्याहंवनीयाथ्सं तंनोति। यजंमानस्य प्रजाये पशूना १ सन्तंत्यै। अपः प्रणंयति। श्रद्धा वा आपंः। श्रद्धामेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणंयति। यज्ञो वा आपंः॥२८॥

युज्ञमेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणंयति। वज्रो वा आपः। वज्रंमेव भ्रातृंव्येभ्यः प्रहृत्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणंयति। आपो वै रक्षोष्णीः। रक्षंसामपहत्ये। अपः प्रणंयति। आपो वै देवानां प्रियं धामं। देवानांमेव प्रियं धामं प्रणीय प्रचंरति॥२९॥

अपः प्रणंयति। आपो वै सर्वा देवताः। देवतां एवाऽऽरभ्यं प्रणीय प्रचरित। वेषाय त्वेत्यांह। वेषाय ह्येनदादत्ते। प्रत्युष्ट्र रक्षः प्रत्युष्टा अरातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्ये। धूरसीत्यांह। एष वै धुर्योऽग्निः। तं यदनुंपस्पृश्यातीयात्॥३०॥

अध्वर्यं च यजमानं च प्रदेहेत्। उपस्पृश्यात्येति।

अध्वयीश्च यर्जमानस्य चाप्रदाहाय। धूर्व तं योंस्मान्धूर्वति तं धूर्व यं वयं धूर्वाम् इत्यांह। द्वौ वाव पुरुषो। यं चैव धूर्वति। यश्चेनं धूर्वति। तावुभौ शुचाऽप्यति। त्वं देवानांमसि सिस्नेतमं पप्रितमं जुष्टतमं विह्नेतमं देवहूर्तम्मित्यांह। यथायुजुरेवैतत्॥३१॥

अहुंतमिस हिव्धानिमित्याहानांत्र्ये। द १ हंस्व मा ह्यारित्यांह धृत्यें। मित्रस्यं त्वा चक्षुंषा प्रेक्ष इत्यांह मित्रत्वायं। मा भेमा संविंक्था मा त्वां हि १ सिष्मित्याहाहि १ सायै। यद्वे किं च वातो नाभि वातिं। तथ्सर्वं वरुणदेवत्यम्। उरु वातायेत्यांह। अवांरुणमेवेनंत्करोति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंसुव इत्यांह प्रसूत्ये। अश्विनोंर्बाहुभ्यामित्यांह॥३२॥

अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह् यत्यैं। अग्नये जुष्टं निर्वपामीत्यांह। अग्नयं पुवेनां जुष्टं निर्वपिति। त्रिर्यज्ञंषा। त्रयं इमे लोकाः। पुषां लोकानामास्यै। तूष्णीं चंतुर्थम्। अपिरिमितमेवावं रुन्थे। स पुवमेवानुंपूर्व १ ह्वी १ षि निर्वपिति॥ ३३॥

ड्दं देवानांमिदम् नः सहेत्यांह् व्यावृंत्यै। स्फात्यै त्वा नारात्या इत्यांह् गृत्यैं। तमंसीव वा एषोंऽन्तश्चंरति। यः पंरीणहिं। सुवंरिभ वि ख्यंषं वैश्वान्रं ज्योतिरित्यांह। सुवंरेवाभि वि पंश्यति वैश्वान्रं ज्योतिंः। द्यावांपृथिवी हुविषिं गृहीत उदंवेपेताम्। दृश्हंन्तान्दुर्या द्यावांपृथिव्योरित्यांह।
गृहाणां द्यावांपृथिव्योर्धृत्यैं। उर्वन्तिरिक्षमिन्वहीत्यांह गत्यैं।
अदित्यास्त्वोपस्थे सादयामीत्यांह। इ्यं वा अदितिः। अस्या
पृवैनंदुपस्थे सादयति। अग्ने ह्व्यश्रेरिक्षस्वेत्यांह गृत्यैं॥३४॥
पृवैनंदुपस्थे सादयति। अग्ने ह्व्यश्रेरिक्ष विवंपत् गत्ये मुत्वारि मा—[४]

इन्द्रों वृत्रमंहन्। सोंऽपः। अभ्यंम्रियत। तासां यन्मेध्यं यिज्ञय् सदेवमासींत्। तदपोदंक्रामत्। ते दुर्भा अभवन्। यद्भैर्प उंत्पुनातिं। या एव मेध्यां यिज्ञयाः सदेवा आपः। ताभिरवेना उत्पुनाति। द्वाभ्यामृत्पुनाति॥३५॥

द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्यै। देवो वंः सिव्तोत्पंनात्वित्यांह। सिव्तृप्रंसूत पुवैना उत्पंनाति। अच्छिंद्रेण प्वित्रेणेत्यांह। असौ वा आदित्योऽच्छिंद्रं प्वित्रम्ं। तेनैवैना उत्पंनाति। वसोः सूर्यस्य रिश्मिभिरित्यांह। प्राणा वा आपंः। प्राणा वर्सवः। प्राणा रश्मयंः॥३६॥

प्राणेरेव प्राणान्थ्सं पृणिक्ति। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंसूतं मे कर्मासदिति। सवितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गायित्रिया त्रिष्णमृद्धत्वायं। आपो देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्यांह। रूपमेवासामेतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। अग्रं इमं यज्ञं नंयताग्रं यज्ञपंतिमित्यांह। अग्रं एव यज्ञं नंयन्ति। अग्रं यज्ञपंतिम्॥३७॥

युष्मानिन्द्रों ऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रं मवृणीध्वं वृत्रतूर्य

इत्याह। वृत्र हं हिन्ष्यित्तिन्द्र आपों वव्रे। आपो हेन्द्रं विव्रेरे। संज्ञामेवासामेतथ्सामानं व्याचंष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्याह। तेनाऽऽपः प्रोक्षिताः। अग्नये वो जुष्टं प्रोक्षाम्युग्नीषोमाभ्यामित्याह। यथादेवतमेवैनान्प्रोक्षंति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥३८॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। शुन्धंध्वं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां एवेनांनि शुन्धित। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। अवंधूत्र रक्षोऽवंधूता अर्रातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वगुसीत्यांह। इयं वा अदिंतिः॥३९॥

अस्या एवैन्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वित्यांह् प्रतिष्ठित्ये। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवृमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चः पृशवो मेध्मुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्पुजा मृगं ग्राहुंकाः। यज्ञो देवेभ्यो निलायत। कृष्णों रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विर्ध्यवहन्तिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। हविषोऽस्कंन्दाय॥४०॥

अधिषवंणमिस वानस्पृत्यमित्यांह। अधिषवंण-मेवैनत्करोति। प्रति त्वाऽदित्यास्त्वग्वेत्त्वित्यांह सयत्वायं। अग्नेस्त्नूरसीत्यांह। अग्नेर्वा एषा तुनूः। यदोषंधयः। वाचो विसर्जनमित्यांह। यदा हि प्रजा ओषंधीनाम् श्वन्तिं। अथ वाचं विसृंजन्ते। देववीतये त्वा गृह्णामीत्यांह॥४१॥ देवतांभिरेवैन्थ्समंधयति। अद्रिरिस वानस्पृत्य इत्यांह। ग्रावाणमेवैनंत्करोति। स इदं देवेभ्यों ह्व्य॰ सुशिमं शिम्ष्वेत्यांह् शान्त्यैं। हिविष्कृदेहीत्यांह। य एव देवाना॰ हिव्ष्कृतंः। तान् ह्वंयति। त्रिह्वंयति। त्रिषंत्या हि देवाः। इषुमावदोर्जुमावदेत्यांह॥४२॥

इषमेवोर्जं यजंमाने दधाति। द्युमद्वंदत वय संङ्घातं जेष्मेत्यांह् भ्रातृंव्याभिभूत्ये। मनोः श्रद्धादेवस्य यजंमानस्या-सुर्घ्री वाक्। यृज्ञायुधेषु प्रविष्टाऽऽसीत्। तेऽसुर्ग् यावंन्तो यज्ञायुधानांमुद्वदंतामुपाश्रण्वन्। ते पर्राभवन्। तस्माथ्स्वानां मध्येऽवसायं यजेत। यावंन्तोऽस्य भ्रातृंव्या यज्ञायुधानां-मुद्वदंतामुपशृण्वन्ति। ते पर्रा भवन्ति। उच्चेः समाहंन्त् वा आंह् विजित्यै॥४३॥

वृङ्क एषामिन्द्रियं वीर्यम्। श्रेष्ठं एषां भवति। वर्षवृद्धमस् प्रतिं त्वा वर्षवृद्धं वेत्वित्यांह। वर्षवृद्धा वा ओषंधयः। वर्षवृद्धा इषीकाः समृद्धौ। यज्ञ रक्षाङ्स्यनु प्राविंशन्। तान्यस्रा पशुभ्यों निरवांदयन्त। तुषैरोषंधीभ्यः। परांपूत्र रक्षः परांपूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥४४॥

रक्षंसां भागों ऽसीत्यांह। तुषैरेव रक्षा रेसि निरवंदयते। अप उपंस्पृशति मेध्यत्वायं। वायुर्वो विविनक्तित्यांह। पवित्रं वै वायुः। पुनात्येवैनान्ं। अन्तरिक्षादिव वा एते प्रस्कंन्दन्ति। ये शूर्पात्। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिंगृह्णात्वित्यांह प्रतिष्ठित्यै। ह्विषोऽस्केन्दाय। त्रिष्फ्लीकेर्त्वा आह। त्र्यावृद्धि यज्ञः। अथो मेध्यत्वायं॥४५॥ व्यन्त्यमं नवन्त्यमं वृज्ञपति वृज्ञोऽदितिरस्केन्दाय गृह्णमीत्यांह वृदेत्यांहु विजित्या अपहत्या अस्केन्दाय

अवंधूत्र रक्षोऽवंधूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वग्सीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैन्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वत्यांह प्रतिंष्ठित्यै। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चः पृशवो मेध्मुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्पुजा मृगं ग्राहुंकाः। युज्ञो देवेभ्यो निलायत॥४६॥

कृष्णों रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विरंधिपिनष्टिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। ह्विषोऽस्केन्दाय। द्यावांपृथिवी सहास्तांम्। ते शंम्यामात्रमेकमहूर्वेता श्रम्यामात्रमेकमहंः। दिवः स्कम्भिनिरंसि प्रति त्वाऽदित्यास्त्वग्वेत्वित्यांह। द्यावांपृथिव्योवीत्यें। धिषणांऽसि पर्वत्या प्रतिं त्वा दिवः स्कम्भनिर्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योविधृंत्ये॥४७॥

धिषणांऽसि पार्वतेयी प्रतिं त्वा पर्वतिर्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योर्धृत्यैं। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रंस्व इत्यांह् प्रसूत्ये। अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह् यत्त्यैं। अधिवपामीत्यांह। यथादेवतमेवेनानिधं वपति। धान्यंमिस धिनुहि देवानित्यांह। पुतस्य यजुंषो वीर्येण॥४८॥ यावदेकां देवतां कामयंते यावदेकां। तावदाहुंतिः प्रथते। न हि तदस्तिं। यत्तावंदेव स्यात्। यावंज्जुहोतिं। प्राणायं त्वाऽपानाय त्वेत्यांह। प्राणानेव यजंमाने दधाति। दीर्घामनु प्रसितिमायुंषे धामित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। अन्तरिक्षादिव वा एतानि प्रस्केन्दन्ति। यानि दृषदंः। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिंगृह्णात्वित्यांह प्रतिंष्ठित्यै। ह्विषोऽस्केन्दाय। असंवपन्ती पिश्षाणूनि कुरुतादित्यांह मेध्यत्वायं॥४९॥

निलायत् विधृत्यै वीर्येण स्कन्दन्ति चुत्वारिं च॥—————[६]

धृष्टिंरसि ब्रह्मं युच्छेत्यांह् धृत्यैं। अपाँग्नेऽग्निमामादं जिह् निष्क्रव्याद रेस्था देवयर्जं वहेत्यांह। य एवाऽऽमात्क्रव्यात्। तमंपहत्यं। मेध्येऽग्नौ कृपाल्मुपंदधाति। निर्दंग्धर् रक्षो निर्दंग्धा अरांतय इत्यांह। रक्षा र्स्येव निर्देहति। अग्निवत्युपंदधाति। अस्मिन्नेव लोके ज्योतिर्धत्ते। अङ्गार्मिधं वर्तयति॥५०॥

अन्तरिक्ष एव ज्योतिर्धत्ते। आदित्यमेवामुष्मिं हो के ज्योतिर्धते। ज्योतिष्मन्तोऽस्मा इमे लोका भवन्ति। य एवं वेदं। ध्रुवमंसि पृथिवीं दृश्हेत्यांह। पृथिवीमेवैतेनं दृश्हित। धर्त्रमंस्यन्तरिक्षं दृश्हेत्यांह। अन्तरिक्षमेवैतेनं दृश्हित। धरुणंमसि दिवं दृश्हेत्यांह। दिवंमेवैतेनं दृश्हित॥५१॥

धर्मासि दिशों दुर्हेत्यांह। दिशं पुवैतेनं दरहित।

इमानेवैतैर्लोकान्हर्म्हति। हर्म्नतेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पशुभिः। य एवं वेदं। त्रीण्यग्नें कपालान्यपंदधाति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामार्त्यै। एकमग्नें कपालमुपं दधाति। एकं वा अग्नें कपालं पुरुषस्य सम्भवंति॥५२॥

अथ द्वे। अथ त्रीणिं। अथं चत्वारिं। अथाष्टौ। तस्मांदृष्टा-कंपालं पुरुषस्य शिरंः। यदेवं कृपालांन्युपदधांति। यज्ञो वै प्रजापितः। यज्ञमेव प्रजापित् सङ्स्कंरोति। आत्मानंमेव तथ्सङ्स्कंरोति। त॰ सङ्स्कृतमात्मानम्॥५३॥

अमुष्मिँ ह्योकेऽनु परैति। यद्ष्टावृंपदधांति। गायत्रिया तथ्सम्मितम्। यन्नवं। त्रिवृता तत्। यद्दशं। विराजा तत्। यदेकांदश। त्रिष्टुभा तत्। यद्वादंश॥५४॥

जगंत्या तत्। छन्दंः सम्मितानि स उपदर्धत्कपालांनि। इमाँ ह्यो कानंनुपूर्वं दिशो विधृत्यै दृ १ हित। अथा ऽऽयुंः प्राणान्यजां पृशून् यजंमाने दधाति। स्जातानंस्मा अभितो बहुलान्करोति। चितः स्थेत्यांह। यथायजुरे वैतत्। भृगूंणामङ्गिरसां तपंसा तप्यध्वमित्यांह। देवतांनामे वैनांनि तपंसा तपति। तानि ततः सङ्स्थिते। यानि घर्मे कपालान्युपचिन्वन्तिं वेधस् इति चतुंष्पदय्चां वि मुंश्चिति। चतुंष्पदः पृश्चंः। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति॥५५॥ वर्त्तृष्टादः पृश्चंः। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति॥५५॥ वर्त्तृष्टि विवर्तेवेतनं दरहित स्थवित तर सहस्कृतमालानं हादंश् सहस्थिते श्रीणं वा [७]

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इत्यांह् प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्ताम्। पूष्णो हस्ताभ्यामित्यांह् यत्यै। सं वंपामीत्यांह। यथादेवतमेवेनांनि संवंपति। समापो अद्भिरंग्मत् समोषंधयो रसेनेत्यांह। आपो वा ओषंधीर्जिन्वन्ति। ओषंधयोऽपो जिन्वन्ति। अन्या वा एतासांमन्या जिन्वन्ति॥५६॥

तस्मदिवमांह। स॰ रेवतीर्जगंतीभिर्मध्रंमतीर्मध्रंमतीभिः सृज्यध्वमित्यांह। आपो वै रेवतीः। पृशवो जगंतीः। ओषंधयो मध्रंमतीः। आप ओषंधीः पृश्न्। तानेवास्मां एक्धा स्॰सृज्यं। मध्रंमतः करोति। अद्भः परि प्रजांताः स्थ समद्भः पृंच्यध्वमितिं पूर्याप्लांवयति। यथा सुवृष्ट इमामंनुविसृत्यं॥५७॥

आप् ओषंधीर्म्हयंन्ति। ताहगेव तत्। जनंयत्ये त्वा संयौमीत्यांह। प्रजा एवेतेनं दाधार। अग्नयें त्वाऽग्नीषोमांभ्यामित्यांह् व्यावृत्त्ये। मुखस्य शिरो-ऽसीत्यांह। युज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्पुंरोडाशंः। तस्मादेवमांह॥५८॥

घर्मोऽसि विश्वायुरित्यांह। विश्वंमेवायुर्यजंमाने दधाति। उरु प्रंथस्वोरु तें यज्ञपंतिः प्रथतामित्यांह। यजंमानमेव प्रजयां पृश्निः प्रथयति। त्वचं गृह्णीष्वेत्यांह। सर्वमेवैन्र् सर्तनुं करोति। अथाऽऽप आनीय परिमार्ष्टि। मार्स एव तत्त्वचं दधाति। तस्मौत्त्वचा मार्सं छन्नम्। घर्मो वा एषो-ऽशौन्तः॥५९॥ अर्धमासें ऽर्धमासे प्रवृंज्यते। यत्पुंरोडाशः। स ईंश्वरो यजमान श्रुचा प्रदहः। पर्यग्नि करोति। पृशुमेवेनंमकः। शान्त्या अप्रदाहाय। त्रिः पर्यग्नि करोति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो रक्षंसामपंहत्यै। अन्तरित् रक्षोऽन्तरिता अरातय इत्याह॥६०॥

रक्षंसाम्नतर्हित्यै। पुरोडाशं वा अधिश्रित्र रक्षा इंस्य-जिघा स्म। दिवि नाको नामाग्नी रक्षोहा। स एवास्माद्रक्षा इस्यपाहन्। देवस्त्वां सिवता श्रंपयत्वित्याह। स्वितृप्रंसूत एवैन इं श्रपयति। वर्षिष्ठे अधि नाक् इत्याह। रक्षंसामपहत्यै। अग्निस्तं तुनुवं माऽतिंधागित्याहा-ऽनंतिदाहाय। अग्ने हव्य इंस्वस्वत्यांह गुप्त्यै॥६१॥

अविंदहन्तः श्रपयतित् वाचं विसृंजते। यज्ञमेव ह्वी इष्यंभिव्याहृत्य प्रतंनुते। पुरोरुचमविंदाहाय शृत्यें करोति। मुस्तिष्को वै पुरोडाशः। तं यन्नाभि वासर्यंत्। आविर्मस्तिष्केः स्यात्। अभिवांसयित। तस्माद्गुहां मस्तिष्केः। भरमनाऽभिवांसयित। तस्मान्मा इसेनास्थिं छन्नम्॥६२॥

वेदेनाभिवांसयति। तस्मात्केशैः शिरंश्छुन्नम्। अखंलिति-भावुको भवति। य एवं वेदं। पृशोर्वे प्रतिमा पुरोडार्शः। स नायजुष्कंमभिवास्यः। वृथेव स्यात्। ईश्वरा यजंमानस्य पृशवः प्रमेतोः। सं ब्रह्मणा पृच्यस्वेत्यांह। प्राणा वै ब्रह्मं॥६३॥ प्राणाः प्रावंः। प्राणेरेव प्रान्थ्सम्पृणिक्ति। न प्रमायुंका भवन्ति। यजंमानो वै पुंरोडाशंः। प्रजा प्रावः पुरीषम्। यदेवमंभिवासयंति। यजंमानमेव प्रजयां प्राुभिः समर्धयति। देवा वै ह्विर्भृत्वाऽब्रुंवन्। कस्मिन्निदं म्रंक्ष्यामह् इतिं। सौऽग्निरंब्रवीत्॥६४॥

मियं तुनूः सं निधंध्वम्। अहं वस्तं जनियष्यामि। यस्मिन्मुक्ष्यध्व इति। ते देवा अग्नौ तुनूः सन्त्रंदधत। तस्मादाहुः। अग्निः सर्वा देवता इति। सोऽङ्गारेणाऽऽपः। अभ्यंपातयत्। ततं एकतोऽजायत। स द्वितीयंमुभ्यं-पातयत्॥६५॥

ततौ द्वितोऽजायत। स तृतीयंम्भ्यंपातयत्। ततिस्त्रितो-ऽजायत। यद्द्योऽजायन्त। तदाप्यानांमाप्यत्वम्। यदात्मभ्योऽजायन्त। तदात्म्यानांमात्म्यत्वम्। ते देवा आप्येष्वंमृजत। आप्या अंमृजत् सूर्यांभ्युदिते। सूर्यांभ्युदितः सूर्याभिनिम्रुक्ते॥६६॥

सूर्याभिनिमुक्तः कुन्खिनि। कुन्खी श्यावदंति। श्यावदंत्रग्रदिधिषौ। अग्रदिधिषुः परिवित्ते। परिवित्तो वीर्हणि। वीर्हा ब्रह्महणि। तद्वंह्महणुं नात्यच्यवत। अन्तर्वेदि निन्यत्यवंरुद्धै। उल्मुकेनाभि गृह्णाति शृत्त्वायं। शृतकामा इव हि देवाः॥६७॥ अन्य जिन्त्यन विमुखेनमाहाशांन आहु गुर्थं कुत्रं ब्रह्मांब्रवीह्नित्यंमुन्यंपातपृथ्सूर्यांभिनिमुक्ते देवाः॥—[८]

अन्या जिन्नत्यत् विमृत्येवमाहाशान्त आह् गृत्यं छुत्रं ब्रह्माँबवीह्नित्यंम्य्यंगतय्थ्यूर्याभिनिम्नके देवाः॥——[८] देवस्यं त्वा सवितुः प्रसव इति स्फामादंत्ते प्रसूत्ये।

अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांहु यत्यैं। आदंद इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्यांह। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। सहस्रंभृष्टिः शततेंजा इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। वायुरंसि तिग्मतेंजा इत्यांह। तेजो वे वायुः॥६८॥ तेजं एवास्मिन्दधाति। विषाद्वे नामांसुर आसीत्। सोऽबिभेत्। यज्ञेनं मा देवा अभिभंविष्यन्तीतिं। स पृंथिवीम्भ्यंवमीत्। सा मेध्याऽभंवत्। अथो यदिन्द्रों वृत्रमहन्। तस्य लोहितं पृथिवीमन् व्यंधावत्। सा मेध्याऽभंवत्। पृथिवि देवयजनीत्यांह॥६९॥

मेध्यांमेवेनां देवयजंनीं करोति। ओषंध्यास्ते मूलं मा हिर्श्सिष्मित्यांह। ओषंधीनामहिर्श्सायै। ब्रजं गंच्छ गोस्थानमित्यांह। छन्दार्शसे वे ब्रजो गोस्थानंः। छन्दार्श्स्येवास्में ब्रजं गोस्थानं करोति। वर्षंतु ते द्यौरित्यांह। वृष्टिर्वे द्यौः। वृष्टिंमेवावं रुन्थे। ब्रधान देव सवितः पर्मस्यां परावतीत्यांह॥७०॥

द्वौ वाव पुरुषो। यं चैव द्वेष्टिं। यश्चैनं द्वेष्टिं। तावुभो बंध्नाति पर्मस्यां परावितं शतेन पाशैंः। योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मस्तमतो मा मौगित्याहानिं मुक्त्ये। अररुर्वे नामां सुर आंसीत्। स पृथिव्यामुपं मुप्तोऽशयत्। तं देवा अपंहतो-ऽररुंः पृथिव्या इतिं पृथिव्या अपांच्नन्। भ्रातृं व्यो वा अररुंः। अपंहतोऽरर्रुः पृथिव्या इति यदाहं॥७१॥

भ्रातृंव्यमेव पृथिव्या अपहिन्ता तेऽमन्यन्त। दिवं वा अयमितः पतिष्यतीति। तम्ररुंस्ते दिवं माऽस्कानिति दिवः पर्यंबाधन्त। भ्रातृंव्यो वा अरुं। अरुंस्ते दिवं मा स्कानिति यदाहं। भ्रातृंव्यमेव दिवः परिंबाधते। स्तम्बयजुरहंरति। पृथिव्या एव भ्रातृंव्यमपहिन्ति। द्वितीय हरित॥७२॥

अन्तरिक्षादेवैन्मपंहन्ति। तृतीय हरित। दिव एवैन्मपंहन्ति। तृष्णीं चंतुर्थ हरिति। अपंरिमितादेवैन्मपं-हन्ति। असुंराणां वा इयमग्रं आसीत्। यावदासींनः परापश्यंति। तावंद्देवानांम्। ते देवा अंब्रुवन्। अस्त्वेव नोऽस्यामपीतिं॥ ७३॥

क्यंत्रो दास्यथेतिं। यावंथ्स्वयं पंरिगृह्णीथेतिं। ते वसंवस्त्वेतिं दक्षिणतः पर्यगृह्णन्। रुद्रास्त्वेतिं पश्चात्। आदित्यास्त्वेत्यंत्तर्तः। तैंऽग्निना प्राञ्चोंऽजयन्। वसुंभिदिक्षिणा। रुद्रैः प्रत्यर्ञ्यः। आदित्येरुदंश्चः। यस्यैवं विदुषो वेदिं परिगृह्णन्तिं॥७४॥

भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंच्यो भवति। देवस्यं सिवृतुः स्व इत्यांह् प्रसूँत्यै। कर्म कृण्वन्ति वेधस् इत्यांह। इषित श् हि कर्म क्रियतें। पृथिच्ये मेध्यं चामेध्यं च व्युदंक्रामताम्। प्राचीनंमुदीचीनं मेध्यम्। प्रतीचीनं दक्षिणाऽमेध्यम्। प्राचीमुदीचीं प्रवृणां करोति। मेध्यामेवैनां देवयर्जनीं करोति॥७५॥

प्राश्चौ वेद्य सावुन्नयित। आहुवनीयंस्य परिंगृहीत्यै। प्रतीची श्रोणीं। गार्हपत्यस्य परिंगृहीत्यै। अथो मिथुनत्वायं। उद्धन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। उद्धन्ति। तस्मादोषंधयः परांभवन्ति॥७६॥

मूलं छिनति। भ्रातृंव्यस्यैव मूलं छिनति। मूलं वा अंतितिष्ठद्रक्षा्र्स्यनूत्पिपते। यद्धस्तेन छिन्द्यात्। कुनुखिनीः प्रजाः स्युः। स्फोनं छिनति। वज्रो वै स्फाः। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षा्र्स्यपंहन्ति। पितृदेवत्याऽतिंखाता। इयंतीं खनति॥७७॥

प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताम्। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां चतुरङ्गुलेऽन्वंविन्दन्। तस्माँचतुरङ्गुलं खेयाँ। चतुरङ्गुलं खंनति। चतुरङ्गुले ह्योषंधयः प्रतितिष्ठंन्ति। आ प्रंतिष्ठायैं खनति। यजमानमेव प्रंतिष्ठां गमयति। दक्षिणतो वर्षीयसीं करोति। देवयजनस्यैव रूपमंकः॥७८॥

पुरीषवतीं करोति। प्रजा वै पृशवः पुरीषम्। प्रजयैवैनं पृशिमः पुरीषवन्तं करोति। उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। पृतावती वै पृथिवी। यावती वेदिः। तस्यां पृतावत एव भ्रातृंव्यं निर्भज्यं। आत्मन् उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। ऋतमंस्यृतसदंनमस्यृतश्रीरसीत्यांह। यथायजुरेवैतत्॥७९॥

कूरिमंव वा एतत्कंरोति। यद्वेदिं क्रोति। धा असि स्वधा असीतिं योयुप्यते शान्त्यैं। उर्वी चासि वस्वीं चासीत्यांह। उर्वीमेवेनां वस्वीं करोति। पुरा कूरस्यं विसूपों विरिफ्शिन्नित्यांह मेध्यत्वायं। उदादायं पृथिवीं जीरदांनुर्यामेरंयं चन्द्रमंसि स्वधाभिरित्यांह। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदंपहत्यं। मेध्यां देवयजंनीं कृत्वा॥८०॥

यद्दश्चन्द्रमंसि मेध्यम्। तद्स्यामेरयित। तां धीरांसो अनुदृश्यं यजन्त् इत्याहानुंख्यात्यै। प्रोक्षंणीरा सांदय। इध्माबर्हिरुपंसादय। स्रुवं च स्रुचंश्च सम्मृंड्डि। पत्नी क् सन्नंह्य। आज्येंनोदेहीत्यांहानुपूर्वतांयै। प्रोक्षंणीरा सांदयित। आपो वै रंक्षोष्नीः॥८१॥

रक्षंसामपंहत्ये। स्फास्य वर्त्मं स्थादयति। युज्ञस्य सन्तंत्ये। उवाच हासितो दैवलः। एतावतीर्वा अमुष्मिल्लोक आपं आसन्। यावंतीः प्रोक्षंणीरितिं। तस्माद्धहीरासाद्याः। स्फामुदस्यन्। यं द्विष्यात्तं ध्यायेत्। शुचैवैनंमपंयति॥८२॥ व वायुर्गह परावतीत्याहाहं द्वितीयरं हर्र्तीति परिगृह्वन्ति देवयजेनी करोति भवनि खनत्यकरेतत्कृत्वा रक्षेष्णीर्थवत॥——[९]

वज्रो वै स्फाः। यद्नवश्चं धारयेत्। वज्जैऽध्वर्युः क्षंण्वीत। पुरस्तौत्तिर्यश्चं धारयति। वज्रो वै स्फाः। वज्रेणैव यज्ञस्यं दक्षिणतो रक्षाङ्स्यपंहन्ति। अग्निभ्यां प्राचंश्च प्रतीचंश्च। स्फोनोदींचश्चाध्राचंश्च। स्फोन् वा एष वज्रेणास्यै पाप्मानं भ्रातृंव्यमपहत्यं। उत्करेऽधि प्रवृंश्चति॥८३॥

यथोपधार्यं वृश्चन्त्येवम्। हस्ताववं नेनिक्ते। आत्मानंमेव पंवयते। स्फ्यं प्रक्षांलयति मेध्यत्वायं। अथो पाप्मनं एव भ्रातृंव्यस्य न्युङ्गं छिनित्ति। इध्माबुर्हिरुपंसादयति युक्त्यै। यज्ञस्यं मिथुन्त्वायं। अथो पुरोरुचंमेवैतां दंधाति। उत्तरस्य कर्मणोऽनुंख्यात्यै। न पुरस्तांत्प्रत्यगुपंसादयेत्॥८४॥

यत्पुरस्तौत्प्रत्यगुंपसादयैत्। अन्यत्रांऽऽहुतिप्थादिध्मं प्रतिंपादयेत्। प्रजा वै बर्हिः। अपंराध्रयाद्वर्हिषां प्रजानां प्रजनंनम्। पृश्चात्प्रागुपंसादयित। आहुतिपथेनेध्मं प्रतिं-पादयित। सम्प्रत्येव बर्हिषां प्रजानां प्रजनंनम्पैति। दक्षिणिम्ध्मम्। उत्तरं बर्हिः। आत्मा वा इध्मः। प्रजा बर्हिः। प्रजा ह्यांत्मन् उत्तरितरा तीर्थे। ततो मेधंमुपनीयं। यथादेवतमेवैनत्प्रतिंष्ठापयित। प्रतिं तिष्ठति प्रजयां पृश्मिर्यर्जमानः॥८५॥

तृतीयंस्यां देवस्यांश्वपुर्शुं यो वै पूँवेंद्युः कर्मणे वामिन्द्रों वृत्रमंहुन्थ्सोंऽपोऽवंधूत् धृष्टिंदेंवस्येत्यांहु सं वंपामि देवस्य स्फामा देंदे वज्रो वै स्फाो दशं॥१०॥ तृतीयंस्यां युज्ञस्यानंतिरेकाय पृवित्रंवत्यध्वुर्युं चांधि्षवंणमस्युन्तिरिक्ष एव रक्षंसामुन्तर्हित्ये द्वौ वाव पुरुंषो यददश्चन्द्रमंसि मेथ्यं पञ्चाशीतिः॥८५॥ तृतीयंस्यां यजमानः॥

## हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

प्रत्युष्ट्र रक्षः प्रत्युष्टा अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अग्नेर्वस्तेजिष्ठेन तेजंसा निष्टंपामीत्यांह मेध्यत्वायं। स्रुचः सम्मौष्टिं। स्रुवमग्रें। पुमार्ंसमेवाभ्यः सङ्श्यंति मिथुन्त्वायं। अथं जुहूम्। अथोप्भृतम्। अथं ध्रुवाम्। असौ वै जुहूः॥१॥

अन्तरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। इमे वै लोकाः स्रुचेः। वृष्टिः सम्मार्जनानि। वृष्टिवां इमाँ लोकानं नुपूर्वं केल्पयति। ते ततः क्रुप्ताः समेधन्ते। समेधन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पृश्मिः। य एवं वेदे। यदि कामयेत् वर्षुकः पूर्जन्यः स्यादिति। अग्रतः सम्मृज्यात्॥२॥

वृष्टिमेव नि यंच्छति। अवाचीनांग्रा हि वृष्टिः। यदिं कामयेतावंर्षुकः स्यादितिं। मूलतः सम्मृंज्यात्। वृष्टिंमेवोद्यंच्छति। तदु वा आंहुः। अग्रत एवोपरिंष्टाथ्सम्मृं-ज्यात्। मूलतोऽधस्तांत्। तदंनुपूर्वं कंल्पते। वर्षुंको भवतीतिं॥३॥

प्राचींमभ्याकारम्। अग्रैरन्तर्तः। एविमव् ह्यन्नम्ह्यते। अथो अग्राद्वा ओषंधीनामूर्जं प्रजा उपंजीवन्ति। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धे। अधस्तात्प्रतीचीम्। दण्डम्त्तम्तः। मूलेन् मूलं प्रतिष्ठित्ये। तस्मादर्त्नो प्राञ्च्यपरिष्टाल्लोमानि। प्रत्यश्चधस्तात्॥४॥ सुग्ध्येषा। प्राणो वै स्रुवः। जुहूर्दक्षिणो हस्तः। उपभृथ्सव्यः। आत्मा ध्रुवा। अन्नर् सम्मार्जनानि। मुख्तो वै प्राणोऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नं प्रविश्यं। बाह्यतस्तन्वर् शुभयति। तस्माध्स्रुवमेवाग्रे सम्माधि। मुख्तो हि प्राणो-ऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नमाविश्वति। तौ प्राणापानो। अव्यर्धकः प्राणापानाभ्यां भवति। य पृवं वेदं॥५॥ बुह्मंज्याद्व्वति प्रत्यक्ष्प्रस्तानाष्ट्रं पर्व वा—[१]

दिवः शिल्पमवंततम्। पृथिव्याः कुकुभिं श्रितम्। तेनं वयः सहस्रंवल्शेन। सपत्रं नाशयामसि स्वाहेतिं स्रुख्सम्मार्जनान्यग्रौ प्र हंरति। आपो वै दर्भाः। रूपमेवैषांमेतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। अनुष्टुभूर्चा। आनुष्टुभः प्रजापंतिः। प्राजापत्यो वेदः। वेदस्याग्रः स्रुख्सम्मार्जनानि॥६॥

स्वेनैवैनांनि छन्दंसा। स्वयां देवतंया समर्धयति। अथो ऋग्वाव योषां। दुर्भो वृषां। तन्मिथुनम्। मिथुनम्वास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। प्रजायते प्रजयां पृशुभिर्यजमानः। तान्येके वृथैवापांस्यन्ति। तत्तथा न कार्यम्। आरंब्यस्य यज्ञियंस्य कर्मणः सविंदोहः॥७॥

यद्येनानि पृशवोऽिभ् तिष्ठेयुः। न तत्पृशुभ्यः कम्। अद्भिर्मौर्जियित्वोत्करे न्यंस्येत्। यद्वै युज्ञियंस्य कर्मणो्- ऽन्यत्राऽऽहुंतीभ्यः सन्तिष्ठंते। उत्करो वाव तस्यं प्रतिष्ठा। एता हि तस्मैं प्रतिष्ठां देवाः समभंरन्। यद्द्भिर्मार्जयंति। तेनं शान्तम्। यदुंत्करे न्यस्यति। प्रतिष्ठामेवैनांनि तद्गंमयति॥८॥

प्रतिं तिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजंमानः। अथौं स्तम्बस्य वा पृतद्रूपम्। यथ्स्रुंख्सम्मार्जनानि। स्तम्बशो वा ओषंधयः। तासां जरत्कक्षे पृशवो न रंमन्ते। अप्रियो ह्येषां जरत्कक्षः। यावंदप्रियो ह वै जंरत्कक्षः पंशूनाम्। तावंदप्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्यन्यत्राग्नेर्दधंति। नृवदाव्यांसु वा ओषंधीषु पृशवो रमन्ते॥९॥

नृवदावो ह्येषां प्रियः। यावंत्प्रियो हु वै नंवदावः पंशूनाम्। तावंत्प्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्युग्नौ प्रहरंन्ति। तस्मादेतान्युग्नावेव प्रहरेत्। यृत्रस्मिन्थ्सम्मृज्यात्। पृशूनां धृत्यैं। यो भूतानामधिपतिः। रुद्रस्तंन्तिचरो वृषां। पृशूनस्माकं मा हि सीः। पृतदंस्तु हुतं तव स्वाहेत्यंग्निस्मार्जनान्युग्नौ प्रहर्रति। पृषा वा पृतेषां योनिः। पृषा प्रतिष्ठा। स्वामेवैनांनि योनिम्। स्वां प्रतिष्ठां गंमयति। प्रति तिष्ठति प्रजयां पशुभिर्यजमानः॥१०॥

वेदस्याग्रर्थं सुख्सुम्मार्जनानि विदोहो गंमयति पुशर्वो रमन्ते हि॰सीः षद चं॥————[२]

अयंज्ञो वा एषः। योऽपुत्तीकेः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्यन्वास्ते। युज्ञमेवाकेः। प्रजानां प्रजननाय। यत्तिष्ठन्ती सुन्नह्येत। प्रियं ज्ञाति १ रुन्ध्यात्। आसीना सन्नह्यते। आसीना ह्येषा वीर्यं कुरोति॥११॥

यत्पश्चात्प्राच्यन्वासीत। अनयां समदंन्दधीत। देवानां पित्निया समदंन्दधीत। देशाँदक्षिणत उदीच्यन्वाँस्ते। आत्मनों गोपीथायं। आशासांना सौमन्सिमत्यांह। मेध्यांमेवेनां केवंलीं कृत्वा। आशिषा समर्धयिति। अग्नेरनुं- व्रता भूत्वा सन्नंह्ये सुकृताय किनत्यांह। एतद्वे पित्नंये व्रतोपनयंनम्॥१२॥

तेनैवैनां व्रतम्पंनयति। तस्मांदाहुः। यश्चैवं वेद् यश्च न। योर्ऋमेव युंते। यम्नवास्तें। तस्यामुष्मिं ह्योके भंवतीति योर्ऋण। यद्योक्रम्। स योगः। यदास्तें। स क्षेमः॥१३॥

योगक्षेमस्य क्रुप्त्यै। युक्तं क्रियाता आशीः कामें युज्याता इतिं। आशिषः समृद्धे। ग्रन्थिं ग्रंशाति। आशिषं एवास्यां परिं गृह्णाति। पुमान् वै ग्रन्थिः। स्त्री पत्नीं। तन्मिथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे करोति प्रजनंनाय। प्र जांयते प्रजयां पश्मिर्यजमानः॥१४॥

अथों अर्धो वा एष आत्मनंः। यत्पर्नीं। यज्ञस्य धृत्या अर्शिथिलं भावाय। सुप्रजसंस्त्वा वयर सुपर्नीरुपं सेदिमेत्यांह। यज्ञमेव तन्मिथुनीकंरोति। ऊनेऽतिरिक्तं धीयाता इति प्रजात्यै। महीनां पयोऽस्योषंधीनार् रस् इत्याह। रूपमेवास्यैतन्महिमानं व्याचेष्टे। तस्य तेऽक्षीयमाणस्य निर्वपामि देवयुज्याया इत्याह। आ-मेवैतामा शांस्ते॥१५॥

करोतिं व्रतोपनर्यनं क्षेमो यर्जमानः शास्ते॥\_\_\_\_\_\_

์ ฮ โ

घृतं च वै मध्रं च प्रजापंतिरासीत्। यतो मध्यांसीत्। ततः प्रजा अंसृजत। तस्मान्मध्रंषि प्रजनंनिमवास्ति। तस्मान्मध्रंषा न प्रचंरन्ति। यातयांम् हि। आज्येन् प्रचंरन्ति। यज्ञो वा आज्यम्। यज्ञेनेव यज्ञं प्रचंरन्त्ययांतयामत्वाय। पत्र्यवेक्षते॥१६॥

मिथुन्त्वाय प्रजांत्यै। यद्वै पत्नीं यज्ञस्यं करोतिं। मिथुनं तत्। अथो पत्निया एवेष यज्ञस्यांन्वारम्भोऽनंवच्छित्त्यै। अमेध्यं वा एतत्करोति। यत्पत्य्वेक्षते। गार्हंपत्येऽधिं श्रयति मेध्यत्वायं। आह्वनीयंमभ्युद्रवित। यज्ञस्य सन्तंत्यै। तेजोऽस् तेजोऽन् प्रेहीत्यांह॥१७॥

तेजो वा अग्निः। तेज आज्यम्। तेजंसैव तेजः समर्धयति। अग्निस्ते तेजो मा विनैदित्याहाहि स्मायै। स्फास्य वर्त्मंन्थ्सादयति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अग्नेर्जिह्वाऽसिं सुभूर्देवानामित्यांह। यथायजुरेवैतत्। धाम्नेधाम्ने देवेभ्यो यजुंषेयजुषे भ्वेत्यांह। आम्वेतामा शांस्ते॥१८॥

तद्वा अर्तः प्वित्राभ्यामेवोत्प्रंनाति। यजंमानो वा आज्यम्। प्राणापानौ प्वित्रे। यजंमान एव प्राणापानौ दंधाति। पुन्राहारम्। एविमेव हि प्राणापानौ स्थरंतः। शुक्रमंसि ज्योतिरिस् तेजोऽसीत्याह। रूपमेवास्यैतन्महिमानं व्याचंष्टे। त्रिर्यज्ञंषा। त्रयं इमे लोकाः॥१९॥

पुषां लोकानामार्स्यै। त्रिः। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वार्य। अथाऽऽज्यंवतीभ्यामपः। रूपमेवासांमेतद्वर्णं दधाति। अपि वा उताऽऽहुंः। यथां हु वै योषां सुवर्ण्ष्ट्रं हिरंण्यं पेश्नलं बिभ्रंती रूपाण्यास्तें। एवमेता एतर्हीतिं। आपो वै सर्वां देवताः॥२०॥

पुषा हि विश्वेषां देवानां तुनः। यदाज्यम्। तत्रोभयोंमीमा स्मा। जामि स्यात्। यद्यजुषाऽऽज्यं यज्ञेषाऽप उत्पृनीयात्। छन्दंसाऽप उत्पृनात्यजामित्वाय। अथो मिथुनत्वायं। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंसूतं मे कर्मासदितिं। सवितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गांयत्रिया त्रिष्णमृद्धत्वायं। अद्भिरेवौषंधीः सं नंयति। ओषंधीभिः पृशून्। पृशुभिर्यजमानम्। शुक्रं त्वां शुक्रायां ज्योतिंस्त्वा ज्योतिंष्यर्चिस्त्वाऽर्चिषीत्यांह सर्वत्वायं। पर्याप्या अनंन्तरायाय॥२१॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स एतमिन्द्र आज्यंस्याव-काशमंपश्यत्। तेनावैक्षता ततो देवा अभवन्। पराऽसुंराः। य एवं विद्वानाज्यंम्वेक्षंते। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदाज्येनान्यानि ह्वी इष्यंभिघारयंति॥२२॥

अथ् केनाऽऽज्यमिति। सृत्येनेति ब्रूयात्। चक्षुर्वे सृत्यम्। सृत्येनैवैनंद्भि घारयति। ईश्वरो वा एषौऽन्यो भवितोः। यश्चक्षुषाऽऽज्यंम्वेक्षंते। निमील्यावैक्षेत। दाधारात्मश्चक्षुंः। अभ्याज्यं घारयति। आज्यं गृह्णाति॥२३॥

छन्दा रेस् वा आज्यम्। छन्दा रंस्येव प्रीणाति। चतुर्जुह्वां गृंह्वाति। चतुंष्पादः पृशवंः। पृश्न्वेवावं रुन्धे। अष्टावृंप्भृतिं। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रः प्राणः। प्राणमेव पृश्वं दधाति। चतुर्भुवायाम्॥२४॥

चतुंष्पादः प्शवंः। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति। यज्ञमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। चतुर्जुह्वां गृह्णन्भयो गृह्णीयात्। अष्टावुंपभृतिं गृह्णन्कनीयः। यजंमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। गौर्वे स्रुचंः। चतुर्जुह्वां गृह्णाति। तस्माचतुंष्पदी॥२५॥

अष्टावंपभृतिं। तस्मांद्ष्टाशंफा। चतुर्ध्रुवायांम्। तस्मा्चतुंः स्तना। गामेव तथ्स इस्कंरोति। साऽस्मै स इस्कृतेषमूर्जं दुहे। यञ्जुह्वां गृह्वातिं। प्रयाजेभ्यस्तत्। यदंपभृतिं। प्रयाजानूयाजेभ्यस्तत्। सर्वस्मै वा एतद्यज्ञायं गृह्यते।

## यद्भुवायामाज्यम्॥२६॥

अभिघारयंति गृह्णाति ध्रुवायां चतुंष्पदी प्रयाजानूयाजेभ्यस्तद्वे चं॥————[५]

आपों देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्यांह। रूपमेवासांमेतन्मंहि-मानं व्याचेष्टे। अग्रं इमं यज्ञं नयताग्रं यज्ञपंतिमित्यांह। अग्रं एव यज्ञं नयन्ति। अग्रं यज्ञपंतिम्। युष्मानिन्द्रो-ऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रंमवृणीध्वं वृत्रतूर्य इत्यांह। वृत्र हं हिन्ष्यित्रन्द्र आपों वव्रे। आपो हेन्द्रं विव्ररे। संज्ञामेवासांमेतथ्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्यांह॥२७॥

तेनाऽऽपः प्रोक्षिताः। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। स वनस्पतीन्प्राविशत्। कृष्णो ऽस्याखरेष्ठो ऽग्नये त्वा स्वाहेत्याह। अग्नयं पृवैनं जुष्टं करोति। अथो अग्नेरेव मेधमवे रुन्धे। वेदिरसि ब्रहिषे त्वा स्वाहेत्याह। प्रजा व ब्रहिः। पृथिवी वेदिः॥२८॥

प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयित। बर्हिरेसि सुग्भ्यस्त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा वै बर्हिः। यजंमानः स्रुचंः। यजंमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयित। दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वेतिं बर्हिरासाद्य प्रोक्षंति। पृभ्य पृवैनं ह्योकेभ्यः प्रोक्षंति। अथ ततः सह स्रुचा पुरस्तांत्प्रत्यश्चं ग्रन्थं प्रत्युक्षिति। प्रजा वै बर्हिः। यथा स्त्ये काल आपंः पुरस्ताद्यन्ति॥२९॥

ताहगेव तत्। स्वधा पितृभ्य इत्याह। स्वधाकारो हि

पितृणाम्। ऊर्म् व बर्हिषद्ध्य इति दक्षिणायै श्रोणेरोत्तंरस्यै निनयति सन्तंत्यै। मासा वै पितरो बर्हिषदंः। मासानेव प्रीणाति। मासा वा ओषंधीर्वर्धयंन्ति। मासाः पचन्ति समृद्धै। अनंतिस्कन्दन् ह पूर्जन्यो वर्षित। यत्रैतदेवं क्रियते॥३०॥

ऊर्जा पृथिवीं गंच्छुतेत्यांह। पृथिव्यामेवोर्जं दधाति। तस्मांत्पृथिव्या ऊर्जा भुंञ्जते। ग्रुन्थिं वि स्रश्ंसयति। प्रजनयत्येव तत्। ऊर्ध्वं प्राञ्चमुद्भूढं प्रत्यश्चमा यंच्छति। तस्मांत्प्राचीन्श्रेतों धीयते। प्रतीचीः प्रजा जायन्ते। विष्णोः स्तूपोऽसीत्याह। युज्ञो वै विष्णुं:॥३१॥

यज्ञस्य धृत्यै। पुरस्तांत्प्रस्तरं गृह्णाति। मुख्यंमेवेनं करोति। इयंन्तं गृह्णाति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। यज्ञप्रुषा सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। पृतावृद्वे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥३२॥

अपंरिमितं गृह्णाति। अपंरिमित्स्यावंरुख्यै। तस्मिन्य्वित्रे अपि सृजति। यजमानो वै प्रंस्त्ररः। प्राणापानौ प्वित्रे। यजमान एव प्राणापानौ दंधाति। ऊर्णामदसं त्वा स्तृणामीत्यांह। यथायजुरेवैतत्। स्वास्स्थं देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं एवैनंथ्स्वास्स्थं करोति॥३३॥

ब्र्हिः स्तृंणाति। प्रजा वै ब्र्हिः। पृथिवी वेदिः। प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। अनंतिदृश्त्रः स्तृणाति। प्रजयैवैनं पृशुभिरनंतिदृश्ञं करोति। धारयंन्प्रस्तरं पंरिधीन्परिं दधाति। यजमानो वै प्रंस्तरः। यजमान एव तथ्स्वयं पंरिधीन्परिं दधाति। गुन्धुर्वोऽसि विश्वावंसुरित्यांह॥३४॥

विश्वंमेवायुर्यजंमाने दधाति। इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण् इत्यांह। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। मित्रावरुणौ त्वोत्तर्तः परिधत्तामित्यांह। प्राणापानौ मित्रावरुणौ। प्राणापानावेवास्मिन्दधाति। सूर्यंस्त्वा पुरस्तांत् पात्वित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। कस्यांश्चिद्भिशंस्त्या इत्यांह। अपंरिमितादेवेनंं पाति॥३५॥

वीतिहाँत्रं त्वा कव इत्यांह। अग्निमेव होत्रेण् समर्धयति। चुमन्त्रः समिधीमहीत्यांह समिद्धै। अग्ने बृहन्तंमध्वर इत्यांह वृद्धैं। विशो यन्ने स्थ इत्यांह। विशां यत्यैं। उदीचीनाँग्ने नि दंधाति प्रतिष्ठित्ये। वसूनाः रुद्राणांमादित्यानाः सदिस सीदेत्यांह। देवतांनामेव सदेने प्रस्तुरः सादयति। जुहूरंसि घृताची नाम्नेत्यांह॥३६॥

असौ वै जुहूः। अन्तरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। तासामेतदेव प्रियं नामं। यद्घृताचीतिं। यद्घृताचीत्याहं। प्रियेणैवैना नाम्नां सादयति। एता अंसदन्थ्सुकृतस्यं लोक इत्याह। सत्यं वै सुंकृतस्यं लोकः। सत्य एवैनाः सुकृतस्यं लोके सांदयति। ता विष्णो पाहीत्यांह। यज्ञो वै विष्णुः। यज्ञस्य धृत्यैं। पाहि यज्ञं पाहि यज्ञपंतिं पाहि

मां यंज्ञनियमित्यांह। युज्ञाय यजमानायाऽऽत्मनें। तेभ्यं एवाऽऽशिषमाशास्तेऽनांत्यं॥३७॥

 $\frac{1}{2}$   $\frac{1}{2}$  स्थेत्यांह पृथिवी वेदिर्यन्ति क्रियते वीणुंर्वीर्यसम्मितं करोत्याह पाति नाम्नेत्यांह लोके सांदयति पद चं॥-[ $\xi$ ]

अग्निना वै होत्रां। देवा असुंरान्भ्यंभवन्। अग्नयं सिम्ध्यमानायानुंब्रूहीत्यांह् भ्रातृंव्याऽभिभूत्ये। एकंवि॰शति-मिध्मदारूणिं भवन्ति। एकवि॰शो वै पुरुषः। पुरुषस्याऽऽस्यें। पश्चंदशेध्मदारूण्यभ्या दंधाति। पश्चंदश् वा अर्धमासस्य रात्रंयः। अर्धमास्यशः संवथ्सर आप्यते। त्रीन्पंरिधीन्परिं दधाति॥३८॥

ऊर्ध्वे स्मिधावा दंधाति। अन्याजेभ्यंः स्मिध्मितं शिनष्टि। षद्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनोपं वाजयित। प्राजापत्यो वै वेदः। प्राजापत्यः प्राणः। यजमान आहवनीयंः। यजमान एव प्राणं दंधाति॥३९॥

त्रिरुपं वाजयित। त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। वेदेनोपयत्यं स्रुवेणं प्राजापत्यमांघारमा घारयित। यज्ञो वै प्रजापितः। यज्ञमेव प्रजापितं मुख्त आरंभते। अथौं प्रजापितः सर्वा देवताः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। अग्निमंग्नीत्रिस्निः सं मृड्ढीत्याह। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥४०॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। परिधीन्थ्सं माँर्ष्टि। पुनात्येवैनान्। त्रिस्त्रिः सं माँर्ष्टि। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथो मेध्यत्वाये। अथो एते वै देवाश्वाः। देवाश्वानेव तथ्सं माँर्ष्टि। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्ये। आसीनोऽन्यमांघारमा घांरयति॥४१॥ तिष्ठं नृत्यम्। यथा ऽनों वा रथं वा यु आत्। एवमे व तद्ध्वर्युर्यज्ञं युनिक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्याभ्यूँढ्यै। वहन्त्येनं ग्राम्याः पृशवंः। य एवं वेदं। भुवंनमिस् वि प्रथस्वेत्याह। यज्ञो वे भुवंनम्। यज्ञ एव यज्ञमानं प्रजयां पृशुभिः प्रथयति। अग्ने यष्टंरिदं नम इत्याह॥४२॥

अग्निर्वे देवानां यष्टां। य एव देवानां यष्टां। तस्मां एव नमंस्करोति। जुह्वेह्यग्निस्त्वां ह्वयति देवयुज्याया उपंभृदेहिं देवस्त्वां सिवता ह्वंयति देवयुज्याया इत्याह। आग्नेयी वै जुहूः। सावित्र्युंपभृत्। ताभ्यांमेवैने प्रसूत आदंत्ते। अग्नांविष्णू मा वामवं ऋमिष्मित्यांह। अग्निः पुरस्तांत्। विष्णुंर्यज्ञः पश्चात्॥४३॥

ताभ्यांमेव प्रंतिप्रोच्यात्या ऋांमित। विजिंहाथां मा मा सन्तांष्ठामित्याहाहि रेसायै। लोकं में लोककृतौ कृणुतमित्यांह। आमेवैतामा शांस्ते। विष्णोः स्थानंमसीत्यांह। यज्ञो वै विष्णुंः। पृतत्खलु वै देवानामपंराजितमायतंनम्। यद्यज्ञः। देवानांमेवापंराजित आयतंने तिष्ठति। इत इन्द्रों अकृणोद्वीर्याणीत्यांह॥४४॥

इन्द्रियमेव यर्जमाने दधाति। समारभ्योर्ध्वो अध्वरो दिविस्पृश्मित्यांह् वृद्धौं। आघारमांघार्यमांणमनुं समारभ्यं। एतस्मिन्काले देवाः सुंवर्गं लोकमांयन्। साक्षादेव यर्जमानः सुवर्गं लोकमेति। अथो समृद्धेनैव यज्ञेन यर्जमानः सुवर्गं लोकमेति। अहुंतो युज्ञो युज्ञपंतेरित्याहानांत्र्यै। इन्द्रांवान्थ्स्वाहेत्यांह। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। बृहद्भा इत्यांह॥४५॥

सुवर्गो वै लोको बृहद्भाः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेछ्ये। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। प्राण आंघारः। यथ्म इंस्पर्शयेत्। भ्रातृंव्येऽस्य प्राणं दंध्यात्। अस इंस्पर्शयत्रत्या क्रांमति। यजमान एव प्राणं दंधाति। पाहि मांऽग्ने दुश्चंरितादा मा सुचंरिते भुजेत्यांह॥४६॥

अग्निर्वाव प्वित्रम्। वृज्ञिनमनृतं दुश्चंरितम्। ऋजुक्रमं स्त्य स्चंरितम्। अग्निरेवैनं वृज्ञिनादनृताद्दश्चंरितात्पाति। ऋजुक्रमें सत्ये सुचंरिते भजति। तस्मादेवमा शास्ते। आत्मनों गोपीथायं। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यदांघारः। आत्मा ध्रुवा॥४७॥

आघारमाघार्य ध्रुवा समंनक्ति। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रति दधाति। द्विः समंनक्ति। द्वौ हि प्राणापानौ। तदांहुः। त्रिरेव समंभ्यात्। त्रिधांतु हि शिर् इतिं। शिरं इवैतद्यज्ञस्यं। अथो त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। मुखस्य शिरोऽसि सभ्योतिषा ज्योतिरङ्कामित्यांह। ज्योतिरेवास्मां उपरिष्टाद्दधाति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै॥४८॥ प्राप्ति प्राणं देशि है युक्ते प्रारंपि नम् इत्यांह प्रश्राद्वीगिष्टा प्राप्ति । प्रविद्याति । सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै॥४८॥

धिष्णिया वा एते न्युंप्यन्ते। यद्ग्रह्मा। यद्भोतां। यदंध्वर्युः।

यद्ग्रीत्। यद्यजंमानः। तान् यदंन्तरेयात्। यजंमानस्य प्राणान्थ्सङ्कर्षेत्। प्रमायुंकः स्यात्। पुरोडाशंमप्गृह्य सञ्चरत्यध्वर्युः॥४९॥

यजंमानायैव तल्लोक शिर्षिति। नास्यं प्राणान्थ्स ह्रंर्षिति। न प्रमायंको भवति। पुरस्तांत प्रत्यङ्कासीनः। इडांया इडामा दंधाति। हस्त्या होत्रें। प्शवो वा इडां। पृशवः पुरुषः। पृशुष्वेव पृशून्प्रतिष्ठापयति। इडांयै वा एषा प्रजांतिः॥५०॥

तां प्रजांतिं यजंमानोऽनु प्र जांयते। द्विर्ङ्गुलांवनिक्ति पर्वणोः। द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्यै। स्कृदुपं स्तृणाति। द्विरा दंधाति। स्कृद्भि घांरयति। चृतुः सम्पद्यते। चृत्वारि वै पृशोः प्रतिष्ठानांनि। यावांनेव पृशुः। तमुपंह्वयते॥५१॥

मुखंमिव प्रत्युपंह्वयेत। सम्मुखानेव प्शूनुपं ह्वयते। पृशवो वा इडाँ। तस्माथ्साऽन्वारभ्याँ। अध्वर्युणां च यजंमानेन च। उपंहूतः पशुमानंसानीत्यांह। उप ह्येनो ह्वयंते होताँ। इडांये देवतांनामुपहुवे। उपंहूतः पशुमान्भंवति। य पृवं वेदं॥५२॥

यां वै हस्त्यामिडांमादधांति। वाचः सा भांगधेयम्। याम्पृं व्यते। प्राणानाः सा। वाचं चैव प्राणाः श्चावं रुन्धे। अथ वा पृतर्ह्युपंहूतायामिडांयाम्। पुरोडाशंस्यैव बंहि्षदों मीमा सा। यजंमानं देवा अंब्रुवन्। ह्विर्नो निर्व्पेतिं। नाहमंभागो निर्वपस्यामीत्यं ब्रवीत्॥ ५३॥

न मयांऽभागयाऽनुंबक्ष्यथेति वागंब्रवीत्। नाहमंभागा पुरोनुवाक्यां भविष्यामीतिं पुरोनुवाक्यां। नाहमंभागा याज्यां भविष्यामीतिं याज्यां। न मयांऽभागेन वर्षद्वरिष्यथेतिं वषद्वारः। यद्यंजमानभागं निधायं पुरोडाशं बर्हिषदं करोतिं। तानेव तद्धागिनंः करोति। चतुर्धा करोति। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतिं तिष्ठति। बर्हिषदंं करोति॥५४॥

यजंमानो वै पुरोडाशंः। प्रजा बर्हिः। यजंमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयति। तस्मादस्थ्राऽन्याः प्रजाः प्रतितिष्ठंन्ति। मार्सेनान्याः। अथो खल्वांहुः। दक्षिणा वा एता हंविर्यज्ञस्यांन्तर्वेद्यवं रुध्यन्ते। यत्पुरोडाशं बर्हिषदं करोतीतिं। चतुर्धा कंरोति। चत्वारो ह्यंते हंविर्यज्ञस्यर्त्विजंः॥५५॥

ब्रह्मा होताँ ऽध्वर्युर्ग्नीत्। तम्भि मृंशेत्। इदं ब्रह्मणंः। इदः होतुंः। इदमध्वर्योः। इदम्ग्नीध् इतिं। यथैवादः सौम्येँ ऽध्वरे। आदेशंमृत्विग्भ्यो दक्षिणा नीयन्तें। ताद्दगेव तत्। अग्नीधें प्रथमाया दंधाति॥५६॥

अग्निम्ंखा ह्यृद्धिः। अग्निम्ंखामेवर्धिः यजंमान ऋभ्नोति। सकृदुंपस्तीर्य द्विरादधंत्। उपस्तीर्य द्विर्भि घांरयति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रींणाति। वेदेनं ब्रह्मणे ब्रह्मभागं परिंहरति। प्राजापत्यो वै वेदः। प्राजापत्यो ब्रह्मा॥५७॥ स्विता यज्ञस्य प्रसूँत्यै। अथ कार्मम्न्येनं। ततो होत्रैं। मध्यं वा एतद्यज्ञस्यं। यद्धोताँ। मध्यत एव यज्ञं प्रीणाति। अथाध्वर्यवैं। प्रतिष्ठा वा एषा यज्ञस्यं। यद्ध्वर्युः। तस्माद्धविर्यज्ञस्यैतामेवाऽऽवृतमन्॥५८॥

अन्या दक्षिणा नीयन्ते। युज्ञस्य प्रतिष्ठित्यै। अग्निमंग्नीध्मकृथ्संकृथ्सं मृङ्ढीत्यांह। परांङिव ह्यंतर्हिं युज्ञः। इषिता दैव्या होतार इत्यांह। इषित १ हि कर्म क्रियतें। भृद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूहीत्यांह। आमेवेतामा शांस्ते। स्वृगा दैव्या होतृभ्य इत्यांह। युज्ञमेव तथ्स्वृगा करोति। स्वस्तिर्मानुषभ्य इत्यांह। युज्ञमेव तथ्स्वृगा करोति। स्वस्तिर्मानुषभ्य इत्यांह। आमेवेतामा शांस्ते। शं योर्ब्रूहीत्यांह। शंयुमेव बार्हस्पत्यं भागधेयेन समर्धयति॥५९॥

चुर्त्वप्रवृश्च प्रजातिह्वये विद्यांवविद्यह्वयं करोत्वुविज्ञां व्याति ब्रह्माऽनुकरोति च्लारि चा [८]

अथ स्रुचांवनुष्टुग्भ्यां वाजंवतीभ्यां व्यूहित। प्रतिष्ठा वा अंनुष्टुक्। अत्रं वाजः प्रतिष्ठित्यै। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। प्राचीं जुहूमूहिति। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। प्रतीचींमुप्भृतम्। जिन्छ्यमांणानेव प्रतिनुदते। सिवर्षूच एवापोह्यं स्पलान् यजंमानः। अस्मिँ होके प्रतिं तिष्ठति॥६०॥

द्वाभ्यांम्। द्विप्रंतिष्ठो हि। वसुंभ्यस्त्वा रुद्रेभ्यंस्त्वा-ऽऽदित्येभ्यस्त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। स्रुक्षु प्रस्तरमंनक्ति। इमे वै लोकाः स्रुचंः। यजंमानः प्रस्तरः। यजंमानमेव तेजंसाऽनक्ति। त्रेधाऽनंक्ति। त्रयं इमे लोकाः॥६१॥

पृभ्य पृवैनं लोकभ्योऽनिक्तः। अभिपूर्वमंनिकः। अभिपूर्वमेव यजमानं तेजंसाऽनिक्तः। अक्तः रिहाणा इत्याहः। तेजो वा आज्यम्। यजमानः प्रस्तरः। यजमानमेव तेजंसाऽनिकः। वियन्तु वयु इत्याहः। वयं पृवैनं कृत्वाः। सुवृगं लोकं गंमयति॥६२॥

प्रजां योनिं मा निर्मृक्षमित्यांह। प्रजायें गोपीथायं। आप्यांयन्तामाप ओषंधय इत्यांह। आपं एवौषंधीरा प्यांययति। मुरुतां पृषंतयः स्थेत्यांह। मुरुतो वै वृष्ट्यां ईशते। वृष्टिंमेवावं रुन्धे। दिवंं गच्छु ततों नो वृष्टिमेर्येत्यांह। वृष्टिवें द्यौः। वृष्टिंमेवावं रुन्धे॥६३॥

यावृद्वा अध्वर्युः प्रस्तरं प्रहरंति। तावंदस्यायुंर्मीयते। आयुष्पा अंग्रेऽस्यायुंर्मे पाहीत्यांह। आयुंरेवाऽऽत्मन्धंते। यावृद्वा अध्वर्युः प्रस्तरं प्रहरंति। तावंदस्य चक्षुंर्मीयते। चृक्षुष्पा अंग्रेऽसि चक्षुंर्मे पाहीत्यांह। चक्षुंरेवाऽऽत्मन्धंते। ध्रुवाऽसीत्यांह् प्रतिष्ठित्यै। यं परि्षिं पूर्यधंत्था इत्यांह॥६४॥

यथायज्ञरेवैतत्। अग्ने देव पणिभिवीयमाण इत्याह। अग्नयं एवेनं जुष्टं करोति। तन्तं एतमनु जोषं भरामीत्यांह। सजातानेवास्मा अनुंकान्करोति। नेदेष त्वदंपचेतयांता इत्याहानुंख्यात्ये। यज्ञस्य पाथ उप समितमित्यांह। भूमानंमेवोपैति। परिधीन्त्र हंरति। यज्ञस्य समिष्ट्ये॥६५॥ सुचौ सं प्रस्नांवयित। यदेव तत्रं क्रूरम्। तत्तेनं शमयित। जुह्णामुंपभृतम्। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। यजमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। सङ्स्रावभागाः स्थेत्यांह। वसंवो वै रुद्रा आंदित्याः सङ्स्रावभागाः। तेषां तद्भागधेयम्॥६६॥

तानेव तेनं प्रीणाति। वैश्वदेव्यर्चा। एते हि विश्वं देवाः। त्रिष्टुग्भवति। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। अग्नेर्वामपंत्रगृहस्य सदंसि सादयामीत्यांह। इयं वा अग्निरपंत्रगृहः। अस्या एवैने सदंने सादयति। सुम्नायं सुम्निनी सुम्ने मां धत्तमित्यांह॥६७॥

प्रजा वै प्शवंः सुम्नम्। प्रजामेव पृश्नात्मन्धेत्ते। धुरि धुर्यौ पात्मित्यांह। जायापत्योर्गोपीथायं। अग्नेंऽदब्धायोऽशीततनो इत्यांह। यथायजुरेवैतत्। पाहि माऽद्य दिवः पाहि प्रसित्ये पाहि दुरिष्ट्यै पाहि दुंरद्मन्यै पाहि दुर्श्वरितादित्यांह। आमेवेतामा शाँस्ते। अविषन्नः पितुं कृणु सुषदा योनिङ् स्वाहेतींध्मसंवृश्चनान्यन्वाहार्यपचनेऽभ्याधायं फलीकरणहोमं जुंहोति। अतिंरिक्तानि वा इंध्मसं वृश्चनानि॥६८॥

अतिरिक्ताः फलीकरंणाः। अतिरिक्तमाज्योच्छेषणम्। अतिरिक्त पुवातिरिक्तं दधाति। अथो अतिरिक्तेनैवातिरिक्त-माुह्वाऽवं रुन्धे। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां वेदेनान्वंविन्दन्। वेदेन् वेदिं विविदुः पृथिवीम्। सा पंप्रथे पृथिवी पार्थिवानि।

लभते यर्जमानः॥

गर्भं बिभर्ति भुवंनेष्वन्तः। ततो यज्ञो जांयते विश्वदानि्रितिं पुरस्तांथस्तम्बयुजुषों वेदेन् वेदिष् सम्मार्ष्ध्रनुंवित्त्यै॥६९॥

अथो यद्वेदश्च वेदिश्च भवंतः। मिथुन्त्वाय प्रजांत्यै। प्रजापंतेर्वा एतानि श्मश्रूणि। यद्वेदः। पित्रंया उपस्थ आस्यंति। मिथुनमेव कंरोति। विन्दते प्रजाम्। वेद होता-ऽऽहंवनीयाध्स्तृणन्नेति। यज्ञमेव तथ्सं तंनोत्योत्तंरस्मादर्ध-मासात्। त सन्तंतुमुत्तंरेऽर्धमास आलंभते॥७०॥

तं कालेकांल आगंते यजते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। स त्वा अध्वर्युः स्यात्। यो यतो यज्ञं प्रयुङ्के। तदेनं प्रतिष्ठापयतीति। वाताद्वा अध्वर्युर्य्ज्ञं प्रयुङ्के। देवां गातुविदो गातुं वित्वा गातुमितेत्याह। यतं एव यज्ञं प्रयुङ्के। तदेनं प्रतिष्ठापयति। प्रति तिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजमानः॥७१॥

तिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजमानः॥७१॥

तिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजमानः॥७१॥

यो वा अयंथादेवतं युज्ञम्ंपूचरंति। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यो यंथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृश्च्यते। वसीयान्भवति। वारुणो वै पाशंः। इमं विष्यामि वर्रुणस्य पाश्मित्यांह। वरुणपाशादेवेनां मुश्चति। स्वितृप्रंसूतो यथादेवतम्॥७२॥

न देवताँभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति। धातुश्च योनौं सुकृतस्यं लोक इत्यांह। अग्निर्वे धाता। पुण्यं कर्म सुकृतस्यं लोकः। अग्निरेवैनां धाता। पुण्ये कर्मणि सुकृतस्यं लोके दंधाति। स्योनं में सह पत्यां करोमीत्यांह। आत्मनश्च यजमानस्य चानांत्ये सन्त्वायं। समायुंषा सं प्रजयेत्यांह॥७३॥

आमेवैतामा शाँस्ते पूर्णपात्रे। अन्ततोऽनुष्टुभाँ। चतुंष्पद्वा पृतच्छन्दः प्रतिष्ठितं पित्रिये पूर्णपात्रे भविति। अस्मिँ ह्योके प्रति तिष्ठानीति। अस्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। अथो वाग्वा अनुष्टुक्। वाङ्किथुनम्। आपो रेतः प्रजननम्। पृतस्माद्वे मिथुनाद्विद्योतंमानः स्तुनयंन्वर्षित। रेतः सिश्चन्॥७४॥

प्रजाः प्रजनयन्। यद्वै यज्ञस्य ब्रह्मणा युज्यतें। ब्रह्मणा वै तस्यं विमोकः। अद्भिः शान्तिः। विमुक्तं वा एतर्हि योक्रं ब्रह्मणा। आदायेन्त्पत्नी स्हाप उपंगृह्णीते शान्त्यै। अञ्जलौ पूर्णपात्रमा नंयति। रेतं एवास्यां प्रजां दंधाति। प्रजया हि मनुष्यः पूर्णः। मुखं वि मृष्टे। अव्भृथस्यैव रूपं कृत्वोत्तिष्ठति॥७५॥

मुबितुग्रम् तो यथादेवतं प्रजयेत्याह सिअन्मृष्ट एकं च॥————[१०]

प्रिवेषो वा एष वनस्पतीनाम्। यदुंपवेषः। य एवं वेदं। विन्दतें परिवेष्टारम्। तमुंत्करे। यं देवा मंनुष्येषु। उपवेषमधारयन्। ये अस्मदर्प चेतसः। तानस्मभ्यमिहा कुरु। उपवेषोपं विष्टि नः॥७६॥

प्रजां पृष्टिमथो धनम्। द्विपदो नृश्चतुंष्पदः। ध्रुवाननंप-गान्कुर्विति पुरस्तांत्प्रत्यश्चमुपं गूहति। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चंः शूद्रा अवंस्यन्ति। स्थ्विम्त उपंगूहति। अप्रंतिवादिन एवैनांन्कुरुते। धृष्टिर्वा उपवेषः। शुचर्तो वज्रो ब्रह्मंणा सःशितः। योपंवेषे शुक्। साऽमुमृंच्छतु यं द्विष्म इतिं॥७७॥

अथाँस्मै नाम् गृह्य प्रहंरित। निर्मुन्नंद ओकंसः। सपत्नो यः पृंतन्यितं। निर्बाध्येन हिविषां। इन्द्रं एणं परांशरीत्। इहि तिस्रः पंरावतः। इहि पश्च जना अति। इहि तिस्रोऽति रोचनायावत्। सूर्यो असंदिवि। पुरमान्त्वां परावतम्॥७८॥

इन्द्रों नयतु वृत्रहा। यतो न पुन्रायंसि। शृश्वतीभ्यः समाभ्य इतिं। त्रिवृद्वा एष वज्रो ब्रह्मणा सश्शितः। शुचैवैनं विध्वा। एभ्यो लोकेभ्यो निर्णुद्यं। वज्रेण ब्रह्मणा स्तृणुते। हृतोऽसाववंधिष्मामुमित्यांहु स्तृत्यैं। यं द्विष्यात्तं ध्यांयेत्। शुचैवैनंमर्पयति॥७९॥

प्रत्युष्टं दिवः शिल्पुमयंज्ञो घृतं चं देवासुराः स एतिमन्द्र आपों देवीरिग्नेना धिष्णिया अथ सुचौ यो वा अयथादेवतं परिवेषो वा एकादश॥११॥ प्रत्युष्टमयंज्ञ एषा हि विश्वेषां देवानांमूर्जा पृथिवीमथो रक्षंसान्तां प्रजातिं द्वाभ्यां तं कालेकांले नवंसप्ततिः॥७९॥ प्रत्युष्टमर्पयति॥

### हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥चतुर्थः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

ब्रह्मणे ब्राह्मणमालंभते। क्षत्रायं राज्न्यम्। मुरुद्धो वैश्यम्। तपंसे शूद्रम्। तमसे तस्करम्। नारंकाय वीर्हणम्। पाप्मने क्रीबम्। आक्रयायांयोगूम्। कामांय पुङ्श्वलूम्। अतिंकुष्टाय मागुधम्॥१॥

गीतायं सूतम्। नृत्तायं शैलूषम्। धर्माय सभाचरम्। नुर्मायं रेभम्। निर्रष्ठायै भीमुलम्। हसाय कारिम्। आनुन्दायं स्रीषुखम्। प्रमुदं कुमारीपुत्रम्। मेधाये रथकारम्। धैर्याय तक्षाणम्॥२॥

श्रमांय कौलालम्। मायायै कार्मारम्। रूपायं मणिकारम्। शुभे वपम्। शर्व्याया इषुकारम्। हेत्यै धंन्वकारम्। कर्मणे ज्याकारम्। दिष्टायं रञ्जसर्गम्। मृत्यवे मृग्युम्। अन्तंकाय श्वनितम्॥३॥

स्न्थये जारम्। ग्रेहायोपपतिम्। निर्ऋत्ये परिवित्तम्। आर्त्ये परिविविदानम्। अराध्ये दिधिषूपतिम्। पवित्राय भिषजम्। प्रज्ञानाय नक्षत्रदर्शम्। निष्कृत्ये पेशस्कारीम्। बलायोपदाम्। वर्णायानूरुधम्॥४॥

न्दीभ्यंः पौञ्जिष्टम्। ऋक्षीकाँभ्यो नैषांदम्। पुरुषव्याघ्रायं दुर्मदम्। प्रयुद्ध उन्मंत्तम्। गुन्धर्वापसुराभ्यो व्रात्यम्। सुप्देव- जनेभ्योऽप्रंतिपदम्। अवेभ्यः कित्वम्। इर्यतांया अकिंतवम्। पिशाचेभ्यो बिदलकारम्। यातुधानेभ्यः कण्टककारम्॥५॥

उथ्मादेभ्यः कुज्जम्। प्रमुदे वामनम्। द्वाभ्यः स्रामम्। स्वप्नायान्थम्। अधमीय बधिरम्। संज्ञानाय स्मरकारीम्। प्रकामोद्यायोपसदम्। आशिक्षायै प्रश्जिनम्। उपशिक्षायां अभिप्रश्जिनम्। मर्यादांयै प्रश्जविवाकम्॥६॥

ऋत्यैं स्तेनहंदयम्। वैरंहत्याय पिशुंनम्। विवित्त्यै क्षुत्तारम्। औपंद्रष्टाय सङ्ग्रहीतारम्। बलायानुचरम्। भूम्ने पंरिष्कुन्दम्। प्रियायं प्रियवादिनम्। अरिष्ट्या अश्वसादम्। मेधांय वासः पल्पूलीम्। प्रकामायं रजयित्रीम्॥७॥

भायै दार्वाह् रम्। प्रभायां आग्नेन्थम्। नाकंस्य पृष्ठायांभि-षेक्तारम्। ब्रथ्नस्यं विष्ठपाय पात्रनिर्णेगम्। देवलोकायं पेशितारम्। मनुष्यलोकायं प्रकरितारम्। सर्वेभ्यो लोकेभ्यं उपसेक्तारम्। अवंत्ये वधायोपमन्थितारम्। सुवर्गायं लोकायं भागदुघम्। वर्षिष्ठाय नाकाय परिवेष्टारम्॥८॥

अर्मैभ्यो हस्तिपम्। ज्वायाँश्वपम्। पुष्टौ गोपालम्। तेजंसेऽजपालम्। वीर्यायाविपालम्। इरायै कीनाशम्। कीलालाय सुराकारम्। भद्रायं गृहुपम्। श्रेयंसे वित्त्रधम्। अध्यक्षायानुक्षत्तारम्॥९॥

मुन्यवेऽयस्तापम्। क्रोधांय निसुरम्। शोकांयाभिसुरम्।

उत्कृ्लुविकूलाभ्यां त्रिस्थिनम्। योगांय योक्तारम्। क्षेमांय विमोक्तारम्। वर्पुषे मानस्कृतम्। शीलांयाञ्जनीकारम्। निर्ऋत्ये कोशकारीम्। यमायासूम्॥१०॥

युम्यै यम्सूम्। अर्थर्वभ्योऽवंतोकाम्। स्वथ्सरायं पर्यारिणीम्। परिवथ्सरायाविजाताम्। इदावथ्सरायांप-स्कद्वरीम्। इद्वथ्सरायातीत्वरीम्। वथ्सराय विजर्जराम्। संवथ्सराय पर्तिक्रीम्। वनाय वन्पम्। अन्यतोरण्याय दावपम्॥११॥

सरौँभ्यो धैवरम्। वेशंन्ताभ्यो दाशम्ँ। उपस्थावंरीभ्यो बैन्दम्ँ। नुङ्गुलाभ्यः शौष्कलम्। पार्याय कैवर्तम्। अवार्याय मार्गारम्। तीर्थेभ्यं आन्दम्। विषंमेभ्यो मैनालम्। स्वनैँभ्यः पर्णकम्। गुहाँभ्यः किरांतम्। सानुभयो जम्भकम्। पर्वतेभ्यः किम्पूरुषम्॥१२॥

प्रतिश्रुत्कांया ऋतुलम्। घोषांय भृषम्। अन्तांय बहुवादिनम्। अनुन्ताय मूकम्। महंसे वीणावादम्। क्रोशांय तूणव्ध्मम्। आकृन्दायं दुन्दुभ्याघातम्। अवरस्परायं शङ्खध्मम्। ऋभुभ्योजिनसन्धायम्। साध्येभ्यंश्चर्म्मणम्॥१३॥

बीभ्थ्सार्ये पौल्क्सम्। भूत्यें जागर्णम्। अभूँत्ये स्वपनम्। तुलार्ये वाणिजम्। वर्णाय हिरण्यकारम्। विश्वेभ्यो देवेभ्यः सिध्मलम्। पृश्चाद्दोषायं ग्लावम्। ऋत्यें जनवादिनम्। व्यृद्धा अपगल्भम्। स्र्शरायं

### प्रच्छिदम्ं॥१४॥

हसाय पुङ्श्वलूमा लंभते। वीणावादं गणंकं गीतायं। यादंसे शाबुल्याम्। नुर्मायं भद्रवृतीम्। तूण्वध्मं ग्रांमुण्यं पाणिसङ्घातं नृत्तायं। मोदांयानुक्रोशंकम्। आन्नदायं तलवम्॥१५॥

अक्षराजायं कित्वम्। कृतायं सभाविनम्ं। त्रेतांया आदि-नवद्र्शम्। द्वाप्रायं बिहः सदम्। कलंये सभास्थाणुम्। दुष्कृतायं चरकांचार्यम्। अध्वंने ब्रह्मचारिणम्ं। पिशाचेभ्यंः सैल्गम्। पिपासायैं गोव्यच्छम्। निर्ऋत्ये गोघातम्। क्षुधे गोविकर्तम्। क्षुतृष्णाभ्यान्तम्। यो गां विकृन्तंन्तं मार्सं भिक्षंमाण उपतिष्ठंते॥१६॥

भूम्यै पीठसर्पिणमा लेभते। अग्नयेऽर्स्सलम्। वायवे चाण्डालम्। अन्तरिक्षाय वर्शनर्तिनम्। दिवे खंलतिम्। सूर्याय हर्यक्षम्। चन्द्रमंसे मिर्मिरम्। नक्षेत्रेभ्यः किलासम्। अहे शुक्रं पिङ्गलम्। रात्रियै कृष्णं पिङ्गाक्षम्॥१७॥

वाचे पुरुषमा लेभते। प्राणमंपानं व्यानमुंदानः संमानं तान् वायवें। सूर्याय चक्षुरा लेभते। मनश्चन्द्रमंसे। दिग्भ्यः श्रोत्रम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१८॥

अथैतानरूपेभ्य आर्लभते। अतिहस्वमितदीर्घम्। अतिकृश्मत्यर्भसलम्। अतिशुक्रुमितिकृष्णम्। अतिश्रक्षणु-मितिलोमशम्। अतिकिरिटमितिदन्तुरम्। अतिमिर्मिर्मिति-

# मेमिषम्। आशायैं जामिम्। प्रतीक्षायैं कुमारीम्॥१९॥

ब्रह्मणे गीताय् श्रमाय सुन्धये नुदीभ्यं उथ्सादेभ्य ऋत्ये भाया अर्मेभ्यो मुन्यवे युम्यें दर्शदश् सराँभ्यो द्वादंश प्रतिश्रुत्काये वीभृथ्साये दर्शदश् हसाय सुप्ताक्षंगुजाय त्रयोदश् भूम्ये दर्श वाचे षडथु नवेकान्नविर्श्शतिः॥१९॥ ब्रह्मणे युम्ये नवंदश॥१९॥ ब्रह्मणे कुमारीम्॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥पञ्चमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

स्त्यं प्रपेद्ये। ऋतं प्रपेद्ये। अमृतं प्रपेद्ये। प्रजापेतेः प्रियां तनुवमनातां प्रपेद्ये। इदम्हं पेश्चद्येन् वर्जेण। द्विषन्तं भ्रातृंव्यमवं क्रामामि। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। भूर्भुवः सुवंः। हिम्॥१॥

सुत्यं दर्श**।**——[१]

प्र वो वाजां अभिद्यंवः। ह्विष्मंन्तो घृताच्यां। देवाञ्जिंगाति सम्भयः। अग्न आयांहि वीतयें। गृणानो ह्व्यदांतये। नि होतां सिथ्स ब्रहिषिं। तं त्वां समिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामिस। बृहच्छोंचा यविष्ठ्य। स नंः पृथुः श्रवाय्यम्॥२॥

अच्छां देव विवासिस। बृहदंग्ने सुवीर्यम्। ईडेन्यों नमस्यंस्तिरः। तमार्श्स दर्शतः। सम्ग्निरिध्यते वृषां। वृषों अग्निः समिध्यते। अश्वो न देववाहेनः। तर ह्विष्मंन्त ईडते। वृषंणं त्वा वृयं वृषन्ं। वृषांणुः समिधीमहि॥३॥

अग्ने दीर्घतं बृहत्। अग्निं दूतं वृंणीमहे। होतांरं विश्ववंदसम्। अस्य यज्ञस्यं सुऋतुम्। समिध्यमांनो अध्वरे। अग्निः पांवक ईड्यः। शोचिष्केशस्तमीमहे। समिद्धो अग्न आहुत। देवान् यंक्षि स्वध्वर। त्व॰ हि हंव्यवाडसिं। आ जुंहोत दुवस्यतं। अग्निं प्रयत्यंध्वरे। वृणीध्व॰ हंव्यवाहंनम्। त्वं वरुण उत मित्रो अंग्ने। त्वां वर्धन्ति मृतिभिर्वसिष्ठाः। त्वे वस् सुषण्नानि सन्तु। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥४॥ अवार्यामधीमुहासि सुष्त चं॥———[२]

अग्नें महा असि ब्राह्मण भारत। असावसौँ। देवेद्धो मन्विद्धः। ऋषिष्ठतो विप्रांनुमदितः। कृविश्वस्तो ब्रह्मंस शितो घृताहंवनः। प्रणीर्यज्ञानाम्। र्थीरध्वराणाम्। अतूर्तो होता। तूर्णिर्हव्यवाट्। आस्पात्रं जुहूर्देवानाम्॥५॥

चुम्सो देवपानंः। अराश् इंवाग्ने नेमिर्देवाश्स्त्वं परिभूरिसे। आ वंह देवान् यजंमानाय। अग्निमंग्न आवंह। सोम्मावंह। अग्निमावंह। प्रजापितिमावंह। अग्नीषोमावावंह। इन्द्राग्नी आवंह। इन्द्रमावंह। महेन्द्रमावंह। देवाश् आंज्यपाश् आवंह। अग्निश् होत्रायाऽऽवंह। स्वं महिमान्मावंह। आ चौग्ने देवान् वहं। सुयजां च यज जातवेदः॥६॥

अग्निर्होता वेत्वग्निः। होत्रं वैत्तु प्रावित्रम्। स्मो व्यम्। साधु ते यजमान देवता। घृतवंतीमध्वर्यो सुचमास्यंस्व। देवायुवं विश्ववाराम्। ईडांमहै देवा ईडेन्यान्। नुमस्यामं नमस्यान्। यजांम युज्ञियान्॥७॥

পুয়িर्होता नवं॥—\_\_\_\_[ ১

स्मिधों अग्न आज्यंस्य वियन्तु। तनूनपांदग्न आज्यंस्य वेतु। इडो अंग्न आज्यंस्य वियन्तु। ब्र्हिरंग्न आज्यंस्य वेतु। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहा सोमम्। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहाँ प्रजापंतिम्। स्वाहाऽग्नीषोमौ। स्वाहैन्द्राग्नी। स्वाहेन्द्रम्॥ स्वाहां महेन्द्रम्। स्वाहां देवाः आंज्यपान्। स्वाहाऽग्निः होत्राञ्जंषाणाः। अग्न आज्यंस्य वियन्तु॥८॥

अग्निर्वृत्राणि जङ्घनत्। द्रविणस्युर्विप्न्ययां। सिमिद्धः शुक्र आहुंतः। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। त्व सोमासि सत्पंतिः। त्व राजोत वृंत्रहा। त्वं भद्रो असि कर्तुः। जुषाणः सोम् आज्यंस्य ह्विषो वेतु। अग्निः प्रत्नेन जन्मंना। शुम्भांनस्त्नुव् स्वाम्। क्विविप्रेण वावृधे। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। सोमं गीर्भिष्टां व्यम्। वर्धयांमो वचोविदंः। सुमृडीको न आविंश। जुषाणः सोम् आज्यंस्य हिवषों वेतु॥९॥

अग्निर्मूर्धा दिवः कुकुत्। पतिः पृथिव्या अयम्। अपार रेतार्रस जिन्वति। भुवो यज्ञस्य रजंसश्च नेता। यत्रां नियुद्धिः सचंसे शिवाभिः। दिवि मूर्धानं दिधेषे सुवर्षाम्। जिह्वामंग्ने चकृषे हव्यवाहम्। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जहुमस्तं नो अस्तु॥१०॥

वय स्याम् पत्यो रयीणाम्। स वेद पुत्रः पितर् समातरम्। स सूनुर्भृवथ्स भुवत्पुनर्मघः। स द्यामौर्णोदन्तरिक्ष स स सुवंः। स विश्वा भुवो अभव्थ्स आभवत्। अग्नीषोमा सर्वेदसा। सहूती वनत्ङ्गिरंः। सन्देवत्रा बंभूवथुः। युवमेतानि दिवि रोचनानि। अग्निश्चं सोम् सर्ऋतू अधत्तम्॥११॥

युव सिन्धू रे रिमशंस्तेरवद्यात्। अग्नीषोमावम् अतं गृभीतान्। इन्द्रांग्नी रोचना दिवः। पिर् वाजेषु भूषथः। तद्वांश्वेति प्रवीर्यम्। श्र्ञथंद्वृत्रमुत संनोति वाजम्। इन्द्रायो अग्नी सहुरी सपूर्यात्। इर्ज्यन्तां वस्व्यंस्य भूरैः। सहंस्तमा सहंसा वाजयन्तां। एन्द्रं सानसि रियम्॥१२॥

स्जित्वांन सदासहम्। वर्षिष्ठमूतये भर। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रूनं। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरंस्तु। इन्द्रा भंर दक्षिणेना वसूंनि। पितः सिन्धूंनामिस रेवतींनाम्। महा इन्द्रो य ओजंसा। पूर्जन्यो वृष्टिमा इंव। स्तोमैंर्व्थसस्यं वावृधे। महा इन्द्रो नृवदाचंर्षणिप्राः॥१३॥

उत द्विबर्हां अमिनः सहोभिः। अस्मद्रियंग्वावृधे वीर्याय। उरुः पृथुः सुकृंतः कुर्तृभिंभूत्। पिप्रीहि देवार उशतो यंविष्ठ। विद्वार ऋतूरर्ऋतुपते यजेह। ये दैव्यां ऋत्विज्सतेभिंरग्ने। त्वर होतॄंणामस्यायंजिष्ठः। अग्निर्श् स्विष्टकृतम्। अयांडग्निरग्नेः प्रिया धामांनि। अयाद्थ्सोमंस्य प्रिया धामांनि॥१४॥

अयांड्ग्नेः प्रिया धामांनि। अयांद्वजापंतेः प्रिया धामांनि। अयांड्ग्नीषोमंयोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्राग्नियोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्रंस्य प्रिया धामांनि। अयांण्महेन्द्रस्यं प्रिया धामांनि। अयांड्वेवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्रभेर्होतुंः प्रिया धामानि। यक्ष्रथ्स्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता १ हिवः। अग्रे यदद्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्व१ हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। हव्या वंह यविष्ठ या ते अद्या१५॥

 $\underline{f u}$  अस्त्व्धत्त्र् रुपिं चंर्षणिप्राः सोर्मस्य प्रिया धामानीषः षद्वं॥m u

उपंहूत रथन्तर सह पृथिव्या। उपं मा रथन्तर सह पृथिव्या ह्वंयताम्। उपंहूतं वामदेव्य सहान्तिरिक्षेण। उपं मा वामदेव्य सहान्तिरिक्षेण ह्वयताम्। उपंहूतं बृहथ्सह दिवा। उपं मा बृहथ्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्रौः। उपं मा सप्त होत्रौ ह्वयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षंभा। उपं मा धेनुः सहर्षंभा ह्वयताम्॥१६॥

उपंहूतो भृक्षः सर्खां। उपं मा भृक्षः सर्खां ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। उपो अस्मा इडां ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। मान्वी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृत्मुपंहृतम्॥१७॥

दैव्यां अध्वर्यव उपहूताः। उपहूता मनुष्याः। य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंतिं वर्धान्। उपहूते द्यावापृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपुंत्रे। उपहूतोऽयं यज्ञमानः। उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपहूतः। भूयंसि हिव्ष्करण उपहूतः। दिव्ये धामुन्नुपहूतः। इदं में देवा हिवर्जुषन्तामिति

तस्मिन्नुपंहूतः। विश्वंमस्य प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य प्रियस्योपंहूत्स्योपंहूतः॥१८॥

देवं ब्र्हिः। व्सुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो नराशः संः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मन्द्रः कविः। सत्यमंन्मायजी होतां। होतुंरहोतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयांट। याः अपिप्रेः। ये ते होत्रे अमंध्सत। ताः संसनुषीः होत्रांन्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वसुवनं वसुधेयंस्य नमोवाके वीहिं॥१९॥

अपिंप्रेः पर्श्वं च॥\_\_\_\_\_\_[९]

इदं द्यांवापृथिवी भुद्रमंभूत्। आध्मं सूक्तवाकम्। उत नंमोवाकम्। ऋध्यास्मं सूक्तोच्यंमग्ने। त्व स् सूक्तवागंसि। उपंश्रितो दिवः पृथिव्योः। ओमंन्वती तेऽस्मिन् युज्ञे यंजमान् द्यावांपृथिवी स्ताम्। शृङ्गये जीरदान्। अत्रंस्रू अप्रंवेदे। उरुगंव्यूती अभयं कृतौं॥२०॥

वृष्टिद्यांवा रीत्यांपा। शम्भवौं मयोभवौं। ऊर्जस्वती च् पर्यस्वती च। सूप्चरणा चं स्वधिचरणा चं। तयोराविदिं। अग्निरिद॰ ह्विरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोऽकृत। सोमं इद॰ह्विरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अग्निरिद॰ ह्विरंजुषत॥२१॥ अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। प्रजापंतिरिदश् ह्विरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। अग्नीषोमांविदश् ह्विरंजुषेताम्। अवींवृधेतां महो ज्यायोंऽक्राताम्। इन्द्राग्नी इदश् ह्विरंजुषेताम्। अवींवृधेतां महो ज्यायोंऽक्राताम्। इन्द्रं इदश् ह्विरंजुषता अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। महेन्द्र इदश् ह्विरंजुषत॥२२॥

अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। देवा आंज्यपा आज्यंमजुषन्त। अवीवृधन्त महो ज्यायोऽकृत। अग्निरहोत्रेणेद १ ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अस्यामृध्द्धोत्रांयान्देवङ्गमायांम्। आशांस्तेऽयं यजंमानोऽसौ। आयुरा शांस्ते। सुप्रजास्त्वमा शांस्ते। स्जात्वनस्यामा शांस्ते॥२३॥

उत्तरान्देवयुज्यामा शाँस्ते। भूयों हिव्ष्करंणमा शाँस्ते। दिव्यं धामा शाँस्ते। विश्वं प्रियमा शाँस्ते। यद्नेनं हिवषाऽऽशाँस्ते। तदंश्यात्तदंध्यात्। तदंस्मै देवा रांसन्ताम्। तद्ग्निर्देवो देवेभ्यो वनंते। व्यम्ग्नेर्मानुंषाः। इष्टं चं वीतं चं। उभे चं नो द्यावांपृथिवी अश्हंसस्पाताम्। इह गतिंवामस्येदं चं। नमों देवेभ्यंः॥२४॥

अुभुयुं कृतांवकृताृष्ठिरिद॰ हुविरंजुषत महेन्द्र हुद॰ हुविरंजुषत सजातवनस्यामा शाँस्ते वीतं च त्रीणिं च॥[१०]

तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीं स्वस्तिरस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नों अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे॥२५॥

आप्यांयस्व सन्तैं। इह त्वष्टांरमग्रियं तन्नंस्तुरीपम्ं। देवानां पत्नीरुश्तीरंवन्तु नः। प्रावंन्तु नस्तुजये वाजंसातये। याः पार्थिवासो या अपामिषं व्रते। ता नों देवीः सुहवाः शर्म यच्छत। उत ग्ना वियन्तु देवपंत्नीः। इन्द्राण्यंग्नाय्यश्विनी राट्। आ रोदंसी वरुणानी शृंणोतु। वियन्तुं देवीर्य ऋतुर्जनीनाम्॥२६॥

अग्निर्होतां गृहपंतिः स राजां। विश्वां वेद् जिनमा जातवेदाः। देवानांमुत यो मर्त्यानाम्। यिजेष्ठः स प्र यंजतामृतावां। वयम् त्वा गृहपते जनांनाम्। अग्ने अकेर्म समिधां बृहन्तम्। अस्थूरि णो गार्हंपत्यानि सन्तु। तिग्मेनं न्स्तेजंसा सर्शिंशाधि॥२७॥

\_\_\_\_\_\_[१२]

उपहूत रथन्तर सह पृथिव्या। उप मा रथन्तर सह पृथिव्या ह्वंयताम्। उपहूतं वामदेव्य सहान्तिरिक्षेण। उप मा वामदेव्य सहान्तिरिक्षेण ह्वयताम्। उपहूतं बृहथ्सह दिवा। उप मा बृहथ्सह दिवा ह्वंयताम्। उपहूताः सप्त होत्रौः। उप मा सप्त होत्रौ ह्वयन्ताम्। उपहूता धेनुः सहर्षभा। उप मा धेनुः सहर्षभा ह्वयताम्॥२८॥

उपंहूतो भृक्षः सर्खां। उपं मा भृक्षः सर्खां ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। उपो अस्मा १ इडां ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडाँ। मानुवी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृतुमुपंहृतम्॥२९॥

दैव्यां अध्वर्यव उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः।
य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंत्रीं वर्धान्। उपंहूते
द्यावांपृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपुंत्रे। उपंहूतेयं
यजंमाना। इन्द्राणीवांऽविध्वा। अदितिरिव सुपुत्रा।
उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपंहूता। भूयंसि हिवष्करंण उपंहूता।
दिव्ये धामृत्रुपंहूता। इदं में देवा ह्विर्जुषन्तामिति
तस्मिन्नुपंहूता। विश्वंमस्याः प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य
प्रियस्योपंहृतस्योपंहृता॥३०॥

### हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥षष्ठमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

अञ्जन्ति त्वामंध्वरे देवयन्तंः। वनस्पते मधुना दैव्येन। यदूर्ध्वस्तिष्ठाद्रविणेह धंतात्। यद्वा क्षयो मातुरस्या उपस्थै। उच्छ्रंयस्व वनस्पते। वर्ष्मंन्पृथिव्या अधि। सुमिती मीयमानः। वर्चोधा यज्ञवाहसे। समिद्धस्य श्रयंमाणः पुरस्तात्। ब्रह्मं वन्वानो अजर ५ सुवीरम्॥१॥

आरे अस्मदमंतिं बार्धमानः। उच्छ्रंयस्व मह्ते सौभंगाय। ऊर्ध्व ऊ षु णं ऊतयें। तिष्ठां देवो न संविता। ऊर्ध्वो वार्जस्य सनिता यदिक्षिभिः। वाघिद्विर्विह्वयांमहे। ऊर्ध्वो नेः पाह्य १ हंसो नि केतुनां। विश्व १ सम्त्रिणं दह। कुधी ने ऊर्ध्वां च रथांय जीवसें। विदा देवेषुं नो दुवंः॥२॥

जातो जांयते सुदिन्त्वे अह्राँम्। सम्पर्य आ विदथे वर्धमानः। पुनन्ति धीरां अपसों मनीषा। देवया विप्र उदिंयर्ति वाचम्ं। युवां सुवासाः परिवीत् आगांत्। स उ श्रेयांन्भवित् जायंमानः। तं धीरांसः क्वय् उन्नंयन्ति। स्वाधियो मनंसा देवयन्तः। पृथुपाजा अमर्त्यः। घृतिनिर्ण्ष्स्वाहुतः। अग्निर्य्ज्ञस्यं हव्यवाद। त॰ स्वाधों यतः स्नुंचः। इत्था धिया यज्ञवंन्तः। आचं कुर्ग्निमूतयें। त्वं वर्रण उत मित्रो अग्ने। त्वां वंधन्ति मृतिभिर्वसिष्ठाः। त्वे वसुं सुषण्नानि सन्तु। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥३॥

होतां यक्षद्ग्निः स्मिधां सुष्मिधा सिमंद्धं नाभां पृथिव्याः संङ्ग्थे वामस्यं। वर्ष्मन्दिव इडस्पदे वेत्वाऽऽ-ज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्तनूनपांतमिदेतेर्गर्मं भुवंनस्य गोपाम्। मध्वाद्य देवो देवेभ्यो देवयानांन्प्यो अनक्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्तराशः सं नृशस्त्रं नृशः प्रणेत्रम्। गोभिर्वृपावान्थ्र्याद्वीरेः शक्तीवान्नथैः प्रथम्या वा हिरंण्येश्चन्द्री वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्गिमिड ईडितो देवो देवह्तिमवतु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वग्निमिड इंडितो देवो देवह्तिमवतु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वर्गिनिड होतां यक्षद्वर्गिः सुष्टरीमोणंम्रदा अस्मिन् यज्ञे वि च प्र चं प्रथताः स्वास्थः देवेभ्यः। एमेनद्द्य वसंवो रुद्रा आदित्याः संदन्तु प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं॥४॥

होतां यक्षद्द्रं ऋष्वाः कंवष्यो कोषधावनीरुदातांभीर्जिहेतां विपक्षोंभिः श्रयन्ताम्। सुप्रायणा अस्मिन् यज्ञे विश्रयन्तामृतावृधों वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदुषासानक्तां बृह्ती सुपेशंसा नृशः पितिभ्यो योनिं कृण्वाने। स्र्रूस्मयंमाने इन्द्रंण देवैरेदं ब्रुहिः सींदतां वीतामाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्देव्या होतांरा मन्द्रा पोतांरा क्वी प्रचेतसा। स्विष्टम्द्यान्यः कंरिद्षा स्वंभिगूर्तम्न्य ऊर्जा सत्वसेमं यज्ञं दिवि देवेषुं धत्तां

वीतामाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीर्पसांम्पस्तंमा अच्छिंद्रम् द्वेतर्यं देवीर्देवमपो वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षत्त्वष्टांर्मिचेष्टुमपांक रतोधां विश्रंवसं यशोधाम्। पुरुरूपमकांमकर्शन रपोषः पोषः स्याथ्सुवीरो वीरैर्वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षद्वनस्पतिंमुपावंस्रक्षद्धियो जोष्टार श्रश्मन्त्ररंः। स्वदाथ्स्वधितिर्ऋतुथाद्य देवो देवेभ्यो ह्व्यावाङ्वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षद्भिश्च स्वाहाऽऽज्यंस्य स्वाहा मेदंसः स्वाहां स्तोकानाः स्वाहां स्वाहां कृतीनाः स्वाहां ह्व्यस्तृतिनाम्। स्वाहां देवा औज्यपान्थ्स्वाहाऽग्नि ह्व्यसूत्तीनाम्। स्वाहां देवा आंज्यपान्थ्स्वाहाऽग्नि ह्व्यसूत्तिनाम्। स्वाहां देवा वियन्तु होत्र्यंजं॥५॥

प्रियमित्रस्यास्य वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं सुवीर्यं वियन्तु होत्यंजं प्रवाहं व (अग्रिनतृत्वावृत्वर्याः संमृत्रिनिङ

सिमिद्धो अद्य मनुषो दुरोणे। देवो देवान् यंजिसि जातवेदः। आ च वहं मित्रमहिश्चिकित्वान्। त्वं दूतः कृविरेसि प्रचेताः। तनूनपात्पथ ऋतस्य यानान्। मध्यां सम्अन्थ्स्वंदया सुजिह्व। मन्मांनि धीभिरुत यज्ञमृन्धन्। देवत्रा चं कृणुह्यध्वरं नंः। नराशश्संस्य महिमानंमेषाम्। उपं स्तोषाम यज्ञतस्यं युज्ञैः॥६॥

ते सुऋतंवः शुचंयो धियन्थाः। स्वदंन्तु देवा उभयांनि हृव्या। आजुह्वांन् ईड्यो वन्द्यंश्च। आयाँह्यग्ने वसुंभिः सुजोषाः। त्वं देवानांमसि यह्व होताः। स एनान् यक्षीषितो यजीयान्। प्राचीनं बुर्हिः प्रदिशां पृथिव्याः। वस्तोरस्या वृंज्यते अग्रे अह्रांम्। व्युं प्रथते वित्रं वरीयः। देवेभ्यो अदितये स्योनम्॥७॥

व्यचंस्वतीरुर्विया विश्रंयन्ताम्। पतिंभ्यो न जनंयः शुम्भंमानाः। देवींर्द्वारो बृहतीर्विश्वमिन्वाः। देवेभ्यो भवथ सुप्रायणाः। आसुष्वयंन्ती यज्तते उपांके। उषासानक्तां सदतां नि योनौं। दिव्ये योषंणे बृह्ती सुंरुक्मे। अधि श्रियर् शुक्रपिशं दर्धाने। दैव्या होतारा प्रथमा सुवाचौ। मिमाना यज्ञं मनुषो यज्ञंध्यै॥८॥

प्रचोदयंन्ता विदर्थेषु कारू। प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशां दिशन्तां। आ नो यज्ञं भारती तूयमेतु। इडां मनुष्वदिह चेतयंन्ती। तिस्रो देवीर्बर्हिरेद स्योनम्। सरस्वती स्वपंसः सदन्तु। य इमे द्यावांपृथिवी जिनित्री। रूपैरिपर्श्यद्भवंनानि विश्वां। तमद्य होतिरिषितो यजीयान्। देवं त्वष्टांरिमह यक्षि विद्वान्॥९॥

उपावंसृज्तमन्यां सम्अन्। देवानां पाथं ऋतुथा ह्वी १ षिं। वनस्पतिः शिमता देवो अग्निः। स्वदंन्तु ह्व्यं मधुना घृतेनं। सद्यो जातो व्यंमिमीत यज्ञम्। अग्निर्देवानांमभवत्पुरोगाः। अस्य होतुः प्रदिश्यृतस्यं वाचि। स्वाहांकृत १ ह्विरंदन्तु देवाः॥१०॥

अग्निर्होतां नो अध्वरे। वाजी सन्परिणीयते। देवो देवेषुं यज्ञियः। परित्रिविष्ट्यंध्वरम्। यात्यग्नी र्थीरिव। आ देवेषु प्रयो दर्धत्। परि वाजंपतिः कविः। अग्निर्ह्व्यान्यंक्रमीत्। दधद्रत्नांनि दाशुषे॥११॥

अभिरहोतां नो नर्व॥————[४]

अजैंद्गिः। असंनुद्वाजित्रि। देवो देवेभ्यों हृव्यावाँट्। प्राञ्जोभिर्हिन्वानः। धेर्नाभिः कल्पमानः। यज्ञस्यायुः प्रतिरन्। उप प्रेष्यं होतः। हृव्या देवेभ्यः॥१२॥

दैव्याः शमितार उत मंनुष्या आरंभध्वम्। उपंनयत् मेध्या दुरंः। आशासांना मेधंपतिभ्यां मेधम्। प्रास्मां अग्निं भंरत। स्तृणीत बर्हिः। अन्वेनं माता मंन्यताम्। अनुं पिता। अनु भ्राता सर्गर्भ्यः। अनु सखा सयूँथ्यः। उदीचीनार् अस्य पदो निधंत्तात्॥१३॥

सूर्यं चक्षुंर्गमयतात्। वातं प्राणम्नववंसृजतात्। दिशः श्रोत्रम्। अन्तरिक्षमसुम्। पृथिवी शरीरम्। एकधाऽस्य त्वचमाच्छ्यंतात्। पुरा नाभ्यां अपिशसों वपामुत्खिंदतात्। अन्तरेवोष्माणं वारयतात्। श्येनमंस्य वक्षः कृणुतात्। प्रशसों बाहू॥१४॥

शुला दोषणीं। कृश्यपेवा १ साँ। अच्छिंद्रे श्रोणीं। कृवषोरू स्रेकपंर्णाष्ठीवन्तां। षड्वि १ शतिरस्य वङ्कंयः। ता अनुष्ठ्योच्यांवयतात्। गात्रं गात्रम्स्यानूनं कृणुतात्। ऊव्ध्यगोहं पार्थिवं खनतात्। अस्ना रक्षः स॰सृजतात्। वृनिष्ठमंस्य मा रांविष्ट॥१५॥

उर्रूकं मन्यंमानाः। नेद्वंस्तोके तनये। रवितारवेच्छमितारः। अधिंगो शमीध्वम्। सुशमि शमीध्वम्। शुमीध्वमंधिगो। अधिंगुश्चापांपश्च। उभौ देवाना श्रे शमितारौँ। ताविमं पृश्र् श्रेपयतां प्रविद्वा श्सौँ। यथांयथाऽस्य श्रपंणन्तथांतथा॥१६॥ ध्लाह्य स्वांत्या (६)

जुषस्वं स्प्रथंस्तमम्। वचों देवपसंरस्तमम्। ह्व्या जुह्वांन आसिनं। इमं नों यज्ञम्मृतेषु धेहि। इमा ह्व्या जांतवेदो जुषस्व। स्तोकानांमग्ने मेदंसो घृतस्यं। होतः प्राशांन प्रथमो निषद्यं। घृतवंन्तः पावक ते। स्तोकाः श्लोतन्ति मेदंसः। स्वधंमं देववींतये॥१७॥

श्रेष्ठं नो धेहि वार्यम्। तुभ्य इस्तोका घृतश्चतं। अग्ने विप्राय सन्त्य। ऋषिः श्रेष्ठः सिमध्यसे। यज्ञस्यं प्राविता भंव। तुभ्य श्रेश्वोतन्त्यिप्रगो शचीवः। स्तोकासो अग्ने मेदंसो घृतस्यं। कविश्वस्तो बृंह्ता भानुनागाः। ह्व्या जुंषस्व मेधिर। ओजिंष्ठन्ते मध्यतो मेद् उद्गृंतम्। प्र ते वयं दंदामहे। श्लोतंन्ति ते वसो स्तोका अधित्वचि। प्रति तान्देवशोविंहि॥१८॥ विवास अवित्वा वान्देवशोविंहि॥१८॥

आवृंत्रहणा वृत्रहिभः शुष्मैः। इन्द्रं यातन्नमोभिरग्ने अवीक्।

युव राधों भिरकं वेभिरिन्द्र। अग्ने अस्मे भंवतमुत्तमे भिः। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागंस्य वृपाया मेदंसः। जुषेता रहिवः। होत्रर्यजं। विह्यख्यन्मनंसा वस्यं इच्छन्। इन्द्रांग्नी ज्ञास उत वां सजातान्॥१९॥

नान्या युवत्प्रमंतिरस्ति मह्यम्। स वां धियं वाज्यन्तीमतक्षम्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। पुरोडाशंस्य जुषेता हिवः। होत्र्यजं। त्वामीडते अजिरं दूत्यांय। हिविष्मंन्तः सद्मिन्मानुंषासः। यस्यं देवैरासंदो बर्हिरंग्ने। अहाँन्यस्मे सुदिनां भवन्तु। होतां यक्षदिग्नम्। पुरोडाशंस्य जुषता हिवः। होत्र्यजं॥२०॥

गीमिर्विप्रः प्रमितिमिच्छमानः। ईट्टे र्यि यशसं पूर्वभाजम्। इन्द्रामी वृत्रहणा सुवजा। प्र णो नव्येभिस्तिरतं देष्णैः। माच्छेदा र्श्मी १रिति नार्धमानाः। पितृणा शक्तीरनु-यच्छेमानाः। इन्द्राम्निभ्यां कं वृष्णो मदन्ति। ताह्यद्री धिषणांया उपस्थे। अग्निश संदीतिश सुदर्शं गृणन्तः। नमस्यामस्त्वेड्यं जातवेदः। त्वां दूतमंरतिश हंव्यवाहम्। देवा अंकृण्वत्रमृतंस्य नाभिम्॥२१॥

त्वः ह्यंग्ने प्रथमो म्नोताँ। अस्या धियो अभंवो दस्महोताँ। त्वः सीं वृषन्नकृणोर्दृष्टरीत्। सहो विश्वंस्मै सहंसे सहंध्ये। अधा होता न्यंसीदो यजीयान्। इडस्पद इषयन्नीड्यः सन्। तं त्वा नरंः प्रथमं देवयन्तंः। महो राये चितयंन्तो अनुंग्मन्। वृतेव यन्तं बहुभिर्वस्व्यैः। त्वे र्यिं जांगृवा स्सो अनुंग्मन्॥२२॥

रुशंन्तमृग्निं देर्शतं बृहन्तम्। वृपावंन्तं विश्वहां दीदिवाश्सम्। पृदं देवस्य नर्मसा वियन्तः। श्रृवस्यवः श्रवं आपृत्रमृंक्तम्। नामानि चिद्दिधिरे यृज्ञियांनि। भृद्रायां ते रणयन्त सन्दंष्टो। त्वां वर्धन्ति क्षित्तयः पृथिव्याम्। त्वश्रायं उभयांसो जनांनाम्। त्वं त्राता तरणे चेत्योंऽभूः। पिता माता सदिमन्मानुंषाणाम्॥२३॥

सप्र्येण्यः स प्रियो विक्ष्वंग्निः। होतां मृन्द्रो निषंसादा यजीयान्। तं त्वां वयं दम् आ दीदिवा सम्मै। उपंज्ञुबाधो नमंसा सदेम। तं त्वां वय सुधियो नव्यंमग्ने। सुम्नायवं ईमहे देवयन्तः। त्वं विशो अनयो दीद्यानः। दिवो अंग्ने बृह्ता रोचनेनं। विशां कृविं विश्पति शर्श्वतीनाम्। नितोशंनं वृष्मं चर्षणीनाम्॥२४॥

प्रेतीषणि मिषयंन्तं पावकम्। राजंन्तमृग्निं यंज्तरः रंयीणाम्। सो अंग्न ईजे शश्मे च मर्तः। यस्त आनंदथ्समिधां ह्व्यदांतिम्। य आहुंतिं परि वेदा नमोंभिः। विश्वेथ्सवामा दंधते त्वोतः। अस्मा उं ते मिहं मृहे विंधेम। नमोंभिरग्ने सुमिधोत हव्यैः। वेदींसूनो सहसो गीर्भिरुक्थैः।

### आ ते भद्राया 🕹 सुमतौ यंतेम॥२५॥

आ यस्ततन्थ रोदंसी विभासा। श्रवोभिश्च श्रवस्यंस्तरुतः। बृहद्भिवांजैः स्थविरेभिर्स्मे। रेवद्भिरग्ने वितरं वि भांहि। नृवद्धंसो सदमिद्धेंह्यस्मे। भूरितोकाय तनयाय पृश्वः। पूर्वीरिषों बृहतीरारे अंघाः। अस्मे भृद्रा सौंश्रवसानि सन्तु। पुरूण्यंग्ने पुरुधा त्वाया। वसूनि राजन्वसुतांते अश्याम्। पुरूणि हि त्वे पुरुवार सन्ति। अग्ने वसु विधृते राजनित्वे॥२६॥ ज्युवारसो अनुस्मात्वणाश्वरपणीन योगायादे वं॥———[१०]

आभेरत शक्षितं वज्रबाहू। अस्मा ईन्द्राग्नी अवत श्र्मींभिः। इमे नु ते र्श्मयः सूर्यस्य। येभिः सिपृत्वं पितरों न् आयन्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागंस्य ह्विष् आत्तांम्द्य। मध्यतो मेद् उद्धृतम्। पुरा द्वेषौभ्यः। पुरा पौरुषेय्या गृभः। घस्तौन्नूनम्॥२७॥

घासे अंज्ञाणां यवंसप्रथमानाम्। सुमत्क्षंराणाः शतरुंद्रि-याणाम्। अग्निष्वात्तानां पीवोपवसनानाम्। पार्श्वतः श्रोणितः शितामृत उथ्साद्तः। अङ्गादङ्गादवंत्तानाम्। करंत एवेन्द्राग्नी। जुषेताः हिवः। होत्र्यजं। देवेभ्यों वनस्पते ह्वीः षिं। हिरंण्यपणं प्रदिवंस्ते अर्थम्॥२८॥

प्रदक्षिणिद्रंशनयां निययं। ऋतस्यं विक्ष पृथिभी रिजेष्ठेः। होतां यक्षद्वनस्पितंमिभिहि। पिष्टतंमया रिभेष्ठया रशनयाधित। यत्रैन्द्राग्नियोश्छागंस्य हुविषंः प्रिया धार्मानि। यत्र वनस्पतेः प्रिया पाथा रसि। यत्रं देवानांमाज्यपानां प्रिया धार्मानि। यत्राग्नेर्होतुः प्रिया धार्मानि। तत्रैतं प्रस्तुत्येवोपस्तुत्ये वोपावस्त्रक्षत्। रभीया समिव कृत्वी॥२९॥

करंदेवं देवो वनस्पतिः। जुषता हिवः। होत्र्यजी पिप्रीहि देवा उश्तो यविष्ठ। विद्वा ऋतू र ऋतू पते यजेह। ये दैव्यां ऋत्विज् स्तेभिरग्ने। त्व होतृंणामस्यायंजिष्ठः। होतां यक्षद्ग्नि स्विष्टकृतम्। अयांड्ग्निरिन्द्राग्नियोश्छागंस्य हिवषंः प्रिया धामांनि। अयाङ्गनस्पतेः प्रिया पाथा सि। अयाङ्ग्विवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेरहोतुः प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेरहोतुः प्रिया धामांनि। यक्ष्यस्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता हिवः। होत्र्यंजं॥३०॥

उपों हु यद्विदर्थं वाजिनो गूः। गीर्भिर्विप्राः प्रमितिमिच्छमानाः। अर्वन्तो न काष्ठान्नक्षेमाणाः। इन्द्राग्नी जोहुंवतो नर्स्ते। वनस्पते रश्नयांऽभिधायं। पिष्टतंमया वयुनांनि विद्वान्। वहं देवत्रा दिधिषो ह्वी १षिं। प्र चंदातारंम्मृतेषु वोचः। अग्नि इस्विष्टकृतम्। अयांडग्निरिन्द्राग्नियोश्छागंस्य ह्विषंः प्रिया धामांनि॥३१॥

अयाङ्बन्स्पतेः प्रिया पाथा १सि। अयाङ्वेवानांमाज्यपानां

प्रिया धार्मानि। यक्षंदुग्नेर्होतुंः प्रिया धार्मानि। यक्ष्य्स्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता १ हिवः। अग्ने यद्द्य विशो अध्वरस्य होतः। पार्वक शोचे वेष्ट्वं हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। हव्या वंह यविष्ठ या ते अद्य॥३२॥

धार्मानि भूरेकं च॥ [१२]

देवं बर्हिः सुंदेवं देवैः स्याथ्सुवीरं वीरैर्वस्तौर्वृज्येताक्तोः प्रभियेतात्यन्यात्राया बर्हिष्मंतो मदेम वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यर्ज। देवीर्द्वारंः सङ्घाते विङ्वीर्यामंञ्छिथिरा ध्रुवा देवहूंतौ वथ्स ईमेनास्तरुंण आमिंमीयात्कुमारो वा नवंजातो मैना अर्वा रेणुकंकाटः पृणंग्वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवी उषासानक्ताऽद्यास्मिन् यज्ञे प्रंयत्यंह्वेतामपिं नूनं दैवीविंशः प्रायांसिष्टार् सुप्रींते सुधित वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्ट्री वसुंधिती ययोर्न्या-ऽघाद्वेषा ५सि युयवदान्यावं क्षुद्वसु वार्याणि यजंमानाय वसुवने वसुधेयस्य वीतां यर्ज। देवी ऊर्जाह्ती इषमूर्जमन्यावंक्षथ्सग्धिः सपीतिमन्या नवेन दयमानाः स्यामं पुराणेन् नवं तामूर्जमूर्जाहुंती ऊर्जयमाने अधातां वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्ज। देवा दैव्या होतांरा नेष्टांरा पोतांरा हताघंश सावाभरद्वंसू वसुवनें

वसुधेयंस्य वीतां यर्ज। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीरिडा सरंस्वती भारती द्यां भारत्यादित्यैरंस्पृक्षथ्सरंस्वतीम १ रुद्रैर्यज्ञमांवीदिहैवेडंया वसुंमत्या सधमादं मदेम वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराश १ संस्निशीर्षा षंडक्षः शतमिदंन १शितिपृष्ठा आदंधति सहस्रंमीं प्रवंहन्ति मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हंतो बृहस्पतिः स्तोत्रमश्विना-ऽऽध्वंर्यवं वसुवनं वसुधेयस्यं वेतु यर्जा। देवो वनस्पतिर्वर्षप्रांवा घृतनिर्णिग्द्यामग्रेणास्पृक्षदान्तरिक्षं मध्येनाप्राः पृथिवीमुपंरेणाद १ ही द्वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं ब्रहिर्वारितीनां निधेधांऽसि प्रच्यंतीनामप्रं-च्युतन्निकाम्धरेणं पुरुस्पार्हं यशस्वदेना बुर्हिषाऽन्या बर्ही इष्यिभ ष्यांम वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्ज। देवो अग्निः स्विष्टुकृथ्सुद्रविणा मन्द्रः कविः सत्यमन्माऽऽयजी होता होतुंर्होतुरायंजीयानमे यान्देवानयाङ्या अपिंप्रेर्ये तें होत्रे अमंध्सत तार संसनुषीर होत्रां देवङ्गमान्दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेम इस्विष्टकृ चाग्ने होता ऽभूवंसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि यर्ज॥३३॥

देवं ब्र्हिः। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु। देवीर्द्वारः। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु। देवी उषासानक्ताः। वसुवने वसुधेयंस्य वीताम्। देवी जोष्ट्रीः। वसुवने वसुधेयंस्य वीताम्। देवी

## ऊर्जाहुंती। वृसुवने वसुधेयस्यं वीताम्॥३४॥

देवा दैव्या होतांरा। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु। देवो नराश्र संः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो वनस्पतिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो वनस्पतिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवं बर्हिवीरितीनाम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु॥३५॥

देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मृन्द्रः कृविः। सृत्यमन्मायजी होता। होतुंर्होतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयाँट्। या अपिप्रेः। ये ते होत्रे अमेथ्सत। ता श् संसुनुषी शहोत्रान्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहिं॥३६॥

वीतां वेत्वभूरेकं च॥=

[88]-

अग्निम्द्य होतांरमवृणीतायं यजंमानः पर्चन्यक्तीः पर्चन्युरोडाशं बृध्नन्निन्द्राग्निभ्यां छाग्रं सूपस्था अद्य देवो वन्स्पतिरभवदिन्द्राग्निभ्यां छाग्रेनाघंस्तान्तं मेदस्तः प्रतिपचताग्रंभीष्टामवींवृधेतां पुरोडाशेंन त्वामद्यर्षं आर्षेय ऋषीणां नपादवृणीतायं यजंमानो बहुभ्य आ सङ्गंतेभ्य एष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इति ता या देवा देवदानान्यदुस्तान्यंस्मा आ च शास्वा चं गुरस्वेषितश्चं होत्रसीं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकायं सूका

पष्ठमः प्रश्नः 383

## ब्रूंहि॥३७॥

अञ्चन्ति होतां यक्ष्यध्सिमिद्धो अद्याग्निरजेद्दैच्यां जुपस्वा वृंत्रहणा गीःपिस्त्वः ह्याभंरतमुपींह् यद्देवं बुर्हिः सुदेवं देवं बुर्हिर्ग्निम्य पर्श्वदशाश्या अञ्चन्त्यग्निरहोतां नो गींपिरुपीं हु यद्विदर्थं बाजिनीः सप्तित्रिरशत्॥३७॥ अञ्चन्तिं स्काबृंहि॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥सप्तमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

सर्वान् वा एषों ऽग्नौ कामान्प्रवेशयति। यों ऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैति। सयदिनेष्ट्वा प्रयायात्। अकांमप्रीता एनं कामा नानुप्रयायुः। अतेजा अवीर्यः स्यात्। स जुंहुयात्। तुभ्यं ता अङ्गिरस्तम। विश्वाः सुिक्षतयः पृथंक्। अग्ने कामांय येमिर् इति। कामांनेवास्मिन्दधाति॥१॥

कामंप्रीता एनं कामा अनु प्रयाँन्ति। तेज्ञस्वी वीर्यावान्भवति। सन्तंतिर्वा एषा यज्ञस्यं। यौंऽग्रीनंन्वाधायं व्रतमुपैतिं। स यदुद्वायंति। विच्छिंत्तिरेवास्य सा। तं प्रार्श्वमुद्धृत्यं। मन्सोपंतिष्ठेत। मनो वै प्रजापंतिः। प्राजापत्यो यज्ञः॥२॥

मनंसैव युज्ञ सं तंनोति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजा-पंतिः। भूतिंमेवोपैति। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यस्याऽऽहिंताग्नेर्ग्निरंपक्षायंति। यावच्छम्यंया प्रविध्येत्। यदि तावंदपक्षायेत्। तस सम्भरेत्। इदं त् एकं प्र उं त् एकम्॥३॥

तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशंनस्तनुवै चारुरेधि। प्रिये देवानां पर्मे जनित्र इति। ब्रह्मणैवैन् सम्भरित। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यदि परस्तरामंपक्षायेत। अनुप्रयायावंस्येत्। सो एव ततः प्रायंश्चित्तः। ओषंधीवा

एतस्यं पृश्न्ययः प्रविंशति। यस्यं ह्विषे वृथ्सा अपार्कृता धर्यन्ति॥४॥

तान् यद्दुह्यात्। यातयामा ह्विषां यजेत। यन्न दुह्यात्। यज्ञपुरुरुन्तरियात्। वायव्यां यवागूं निर्वपेत्। वायुर्वे पयंसः प्रदापयिता। स पुवास्मे पयः प्रदापयति। पयो वा ओषंधयः। पयः पयः। पयंसेवास्मे पयोऽवं रुन्धे॥५॥

अथोत्तंरस्मे ह्विषे वृथ्सान्पार्कुर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। अन्यत्रान् वा एष देवान्भांगुधेयेन् व्यर्धयति। ये यर्जमानस्य सायं गृहमा गर्च्छन्ति। यस्यं सायं दुग्धः ह्विरार्तिमार्च्छतिं। इन्द्रांय ब्रीहीन्निरुप्योपं वसेत्। पयो वा ओषंधयः। पयं एवाऽऽरभ्यं गृहीत्वोपं वसति। यत्प्रातः स्यात्। तच्छृतं कुर्यात्॥६॥

अथेतंर ऐन्द्रः पुंरोडाशः स्यात्। इन्द्रिये एवास्मैं समीचीं दधाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पयंः। पयंसैवास्मै पयो-ऽवं रुन्थे। अथोत्तंरस्मै ह्विषं वृथ्सान्पाकुर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। उभयान् वा एष देवान्भांगुधेयेन् व्यर्धयति। ये यजंमानस्य सायं चं प्रातश्चं गृहमा गच्छंन्ति। यस्योभयर् ह्विरार्तिमार्च्छतिं॥७॥

ऐन्द्रं पश्चेशरावमोद्नं निर्वपेत्। अग्निं देवतानां प्रथमं यंजेत्। अग्निमुंखा एव देवताः प्रीणाति। अग्निं वा अन्वन्या देवताः। इन्द्रमन्वन्याः। ता एवोभर्याः प्रीणाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पर्यः। पर्यसैवास्मै पयोऽवं रुन्धे। अथोत्तरस्मै हुविषे वृथ्सानुपार्कुर्यात्॥८॥

सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अर्धो वा एतस्यं यज्ञस्यं मीयते। यस्य व्रत्येऽह्न्यल्यंनालम्भुका भवंति। तामंपुरुध्यं यजेत। सर्वेणेव यज्ञेनं यजते। तामिष्ट्वोपं ह्वयेत। अमूहमंस्मि। सा त्वम्। द्यौर्हम्। पृथिवी त्वम्। सामाहम्। ऋक्तम्। तावेहि सम्भवाव। सह रेतों दधावहै। पुर्से पुत्राय वेत्तंवै। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्यायिति। अर्ध एवैनामुपं ह्वयते। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥९॥

यद्विष्यंण्णेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनायतने निनयेत्। अनायतनः स्यात्। प्राजापृत्ययूर्चा वंल्मीकवृपायामवं नयेत्। प्राजापृत्यो वै वृल्मीकः। युज्ञः प्रजापंतिः। प्रजापंतावेव युज्ञं प्रतिष्ठापयति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजापंतिः॥१०॥

भूतिंमेवोपैति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनेर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्कीटावंपन्नेन जुहुयात्। अप्रजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनयेत्। अनायतनः स्यात्। मध्यमेनं पूर्णेनं द्यावापृथिव्यय्चाऽन्तः परिधि निनयेत्। द्यावापृथिव्यय्वाऽन्तः परिधि निनयेत्। द्यावापृथिव्योर्वेन्त्प्रतिष्ठापयति॥११॥

तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनेर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यदवेवृष्टेन जुहुयात्। अपंरूपमस्याऽऽत्मञ्जायेत। किलासो वास्यादंर्श्वसो वा। यत्प्रत्येयात्। यृज्ञं विच्छिन्द्यात्। स जुहुयात्। मित्रो जनौन्कल्पयति प्रजानन्॥१२॥

मित्रो दांधार पृथिवीमुत द्याम्। मित्रः कृष्टीरिनंमिषाऽभि चंष्टे। स्त्यायं हृव्यं घृतवंज्जहोतेतिं। मित्रेणैवैनंत्कल्पयति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंरहोत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पूर्वंस्यामाहुंत्या हृतायामुत्तराऽऽहुंतिः स्कन्देंत्। द्विपाद्भिः पश्मिर्यजंमानो व्यृध्येत। यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥१३॥

चतुष्पाद्भिः पृशुभिर्यजमानो व्यृध्येत। यत्र वेत्थं वनस्पते देवानां गुह्या नामानि। तत्रं ह्व्यानिं गाम्येतिं वानस्पत्ययुर्चा स्मिधंमाधायं। तूष्णीमेव पुनर्जुहुयात्। वनस्पतिनेव यज्ञस्यातां चानांतां चाऽऽहुंती वि दांधार। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनरहोत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गारः स्कन्देंत्। अध्वर्यवे च यजमानाय चाक इं स्यात्॥१४॥

यदंक्षिणा। ब्रह्मणे च यजंमानाय चाकई स्यात्। यत्प्रत्यक्। होत्रे च पत्नियै च यजंमानाय चाकई स्यात्। यदुदङ्कं। अग्नीधे च पृशुभ्यश्च यजंमानाय चाकई स्यात्। यदंभिजुहुयात्। रुद्रौऽस्य पृशून्यातुंकः स्यात्।

# यन्नाभिजुहुयात्। अशाँन्तः प्रह्नियेत॥१५॥

स्रुवस्य बुध्नेनाभिनिदेध्यात्। मा तंमो मा यज्ञस्तंमन्मा यजंमानस्तमत्। नमंस्ते अस्त्वायते। नमो रुद्र परायते। नमो यत्रं निषीदंसि। अमुं मा हिर्सीर्मुं मा हिर्सीरिति येन स्कन्देंत्। तं प्रहंरेत्। सहस्रंशृङ्गो वृष्भो जातवेंदाः। स्तोमंपृष्ठो घृतवांन्थ्सुप्रतींकः। मा नो हासीन्मेत्थितो नेत्त्वा जहांम। गोपोषं नो वीरपोषं चं यच्छेति। ब्रह्मंणैवैनं प्र हंरति। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥१६॥

वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणध्यते। यस्याऽऽहिंताग्ने-रिग्नर्मध्यमानो न जायंते। यत्रान्यं पश्येत्। ततं आहृत्यं होत्व्यम्। अग्नावेवास्यांग्निहोत्र हुतं भेवति। यद्यन्यन्न विन्देत्। अजाया होत्व्यम्। आग्नेयी वा एषा। यद्जा। अग्नावेवास्यांग्निहोत्र हुतं भेवति॥१७॥

अजस्य तु नाश्नीयात्। यद्जस्याँश्नीयात्। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामंद्यात्। तस्मांद्जस्य नाश्यम्ं। यद्यजान्न विन्देत्। ब्राह्मणस्य दक्षिणे हस्ते होत्व्यम्। एष वा अग्निवैश्वानरः। यद्ग्राह्मणः। अग्नावेवास्याँग्निहोत्र हुतं भेवति॥१८॥

ब्राह्मणं तु वंसत्यै नापं रुन्ध्यात्। यद्ग्रौह्मणं वंसत्या

अंपरुन्ध्यात्। यस्मिन्नेवाग्नावाहंतिं जुहुयात्। तं भांग्धेयेन् व्यर्धयेत्। तस्माँ द्वाह्मणो वंस्त्ये नाप्रध्यः। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। दुर्भस्तम्बे होत्व्यम्। अग्निवान् वै दर्भस्तम्बः। अग्नावेवास्याँग्निहोत्र हुतं भवति। दुर्भा इस्तु नाध्यांसीत॥१९॥

यद्दर्भान्ध्यासीत। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामध्यांसीत। तस्माँद्दर्भा नाध्यांसित्व्याः। यदि दर्भान्न विन्देत्। अपसु होत्व्यम्। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांस्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भवति। आप्स्तु न परिचक्षीत। यदापः परिचक्षीत॥२०॥

यामेवापस्वाहुंतिं जुहुयात्। तां परिचक्षीत। तस्मादापो न परिचक्ष्याः। मेध्यां च वा एतस्यांमेध्या चं तनुवौ सर् सृज्येते। यस्याऽऽहिंताग्नेर्न्यैर्ग्निभिर्ग्नयः सर्मुज्यन्तै। अग्नये विविचये पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निवंपेत्। मेध्यां चैवास्यांमेध्यां चं तनुवौ व्यावंत्यति। अग्नये व्रतपंतये पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निवंपेत्। अग्निमेव व्रतपंतिक्ष् स्वेनं भागधेयेनोपं धावति। स एवैनं व्रतमा लम्भयति॥२१॥

गर्भ्ड् स्रवंन्तमग्दमंकः। अग्निरिन्द्रस्त्वष्टा बृह्स्पतिः। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतत्। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैः। रेतो वा पृतद्वाजिनमाहिताग्नेः। यदंग्निहोत्रम्। तद्यथ्सवैत्।

रेतों ऽस्य वार्जिन इसवेत्। गर्भ इसवेन्तमगुदमंकुरित्यांह। रेतं एवास्मिन्वार्जिनं दधाति॥२२॥

अग्निरित्यांह। अग्निर्वे रंतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। इन्द्र इत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। त्वष्टेत्यांह। त्वष्टा वै पंशूनां मिंथुनाना र्रं रूपकृत्। रूपमेव पृशुषुं दधाति। बृह्स्पितिरित्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पितिः। ब्रह्मणैवास्मैं प्रजाः प्र जंनयित। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतदित्यांह। अस्यामेवैन्त्प्रतिष्ठापयित। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचेरित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥२३॥

याः पुरस्तांत्प्रस्रवंन्ति। उपरिष्टाध्सर्वतंश्च याः। ताभी रश्मिपंवित्राभिः। श्रृद्धां यज्ञमा रंभे। देवां गातुविदः। गातुं यज्ञायं विन्दत। मनंस्स्पतिना देवेनं। वातांद्यज्ञः प्र युज्यताम्। तृतीयंस्यै दिवः। गायत्रिया सोम् आर्भृतः॥२४॥

सोमपीथाय सन्नियतुम्। वर्कलमन्तिरमा देदे। आपो देवीः शुद्धाः स्थे। इमा पात्राणि शुन्धत। उपातुङ्क्यांय देवानांम्। पूर्णवल्कमुत शुन्धत। पयो गृहेषु पयो अघ्नियासुं। पयो वथ्सेषु पय इन्द्रांय ह्विषे ध्रियस्व। गायत्री पंर्णवल्कनं। पयः सोमं करोत्विमम्॥२५॥

अभिं गृह्णामि सुरथं यो मयोभूः। य उद्यन्तमारोहित् सूर्यमहैं। आदित्यं ज्योतिषां ज्योतिरुत्तमम्। श्वो यज्ञाये रमतां देवताँभ्यः। वसूँत्रुद्रानांदित्यान्। इन्द्रेण सह देवताः। ताः पूर्वः परिं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयाः। इमामूर्जः पश्चदशीं ये प्रविष्टाः। तान्देवान्परिं गृह्णामि पूर्वः॥२६॥

अग्निर्हं व्यवाडिह ताना वंहतु। पौर्णमास हिविरेदमें षां मिये। आमावास्य हिविरेदमें षां मिये। अन्तराऽग्नी पृशवंः। देवस् सदमा गंमन्। तान्पूर्वः पिरं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। इह प्रजा विश्वसंत्रपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। ताः पूर्वः पिरं गृह्णामि॥२७॥

स्व आयतंने मनीषयाँ। इह पृशवों विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। तान्पूर्वः परिं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयाँ। अयं पिंतृणाम्ग्निः। अवांह्वव्या पितृभ्य आ। तं पूर्वः परिं गृह्णामि। अविषन्नः पितुं करत्। अजंस्रं त्वा॰ संभापालाः॥२८॥

विज्यभांगुर् सिन्धताम्। अग्ने दीदांय मे सभ्य। विजित्यै श्रदः श्तम्। अन्नमावस्थीयम्। अभि हंराणि श्रदः श्तम्। आवस्थे श्रियं मन्नम्। अहिर्बुप्नियो नि यंच्छत्। इदमहम्ग्निज्येष्ठभ्यः। वस्भयो युज्ञं प्रब्रंवीमि। इदमहमिन्द्रंज्येष्ठभ्यः॥२९॥

रुद्रेभ्यों युज्ञं प्र ब्रंबीमि। इदमहं वर्रुणज्येष्ठेभ्यः। आदित्येभ्यों युज्ञं प्र ब्रंबीमि। पर्यस्वतीरोषंधयः। पर्यस्वद्वीरुधां पर्यः। अपां पर्यसो यत्पर्यः। तेन् मामिन्द्र स॰ सृंज। अग्ने व्रतपते व्रृतं चरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। वायों व्रतपत् आदित्य व्रतपते॥३०॥

वृतानां व्रतपते वृतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। इमां प्राचीमुदीचीम्। इष्मूर्जमिभ सङ्स्कृताम्। बहुपूर्णामशृष्काग्राम्। हरामि पशुपामहम्। यत्कृष्णों रूपं कृत्वा। प्राविश्वस्त्वं वनस्पतीन्। तत्स्त्वामेकविश्शित्धा। सम्भेरामि सुसम्भृतां॥३१॥

त्रीन्पंरिधी इस्तिस्रः स्मिधंः। यज्ञायुंरनुसश्चरान्। उपवेषं मेक्षणं धृष्टिम्। सं भेरामि सुसम्भृता। या जाता ओषंधयः। देवेभ्यंस्त्रियुगं पुरा। तासां पर्व राध्यासम्। परिस्तरमाहरन्। अपां मेध्यं यज्ञियम्। सदेव शिवमंस्तु मे॥३२॥

आच्छ्रेत्ता वो मा रिषम्। जीवांनि श्ररदेः श्तम्। अपंरिमितानां परिमिताः। सन्नेह्ये सुकृताय कम्। एनो मा निगांङ्कतमच्चनाहम्। पुनंशृत्थायं बहुला भवन्तु। सकृदाच्छिन्नं बर्हिरूणांमृदु। स्योनं पितृभ्यंस्त्वा भराम्यहम्। अस्मिन्थ्सीदन्तु मे पितरंः सोम्याः। पितामहाः प्रपितामहाश्चानुगैः सह॥३३॥

त्रिवृत्पंलाशे दर्भः। इयाँन्प्रादेशसंम्मितः। यज्ञे पवित्रं पोतृंतमम्। पयों हृव्यं कंरोतु मे। इमौ प्रांणापानौ। यज्ञस्याङ्गांनि सर्वृशः। आप्याययंन्तौ सर्श्वरताम्। पवित्रे हव्यशोधने। प्वित्रें स्थो वैष्ण्वी। वायुर्वां मनंसा पुनातु॥३४॥

अयं प्राणश्चापानश्चं। यजमान्मपि गच्छताम्। यज्ञे ह्यभूतां पोतारौ। पवित्रे हव्यशोधने। त्वया वेदिं विविद्ः पृथिवीम्। त्वयां यज्ञो जांयते विश्वदानिः। अच्छिद्रं यज्ञमन्वेषि विद्वान्। त्वया होता सं तनोत्यर्धमासान्। त्रयस्त्रिष्शोऽसि तन्तूनाम्। प्वित्रेण सहागंहि॥३५॥

शिवय र चुंरिभ्धानीं। अघ्नियामुपं सेवताम्। अप्रेस्न स्साय यज्ञस्यं। उखे उपदधाम्यहम्। पृशुभिः सन्नीतं बिभृताम्। इन्द्रांय शृतं दिधं। उपवेषोऽसि यज्ञायं। त्वां परिवेषमधारयन्। इन्द्रांय हिवः कृण्वन्तः। शिवः शृग्मो भंवासि नः॥३६॥

अमृंन्मयन्देवपात्रम्। यज्ञस्याऽऽयुंषि प्र युंज्यताम्। तिरः पिवत्रमितनिताः। आपो धारय मातिगः। देवेनं सिवत्रोत्पूताः। वसोः सूर्यस्य रिश्मिभिः। गां दोहपिवत्रे रज्जुम्। सर्वा पात्राणि शुन्धत। एता आ चंरिन्त् मधुमद्दुहानाः। प्रजावंतीर्य्शसो विश्वरूपाः॥३७॥

बह्वीर्भवंन्तीरुप्जायंमानाः। इह व इन्द्रों रमयतु गावः। पूषा स्थं। अयुक्ष्मा वंः प्रजया सः सृंजािम। रायस्पोषंण बहुलाभवंन्तीः। ऊर्जं पयः पिन्वंमाना घृतं चं। जीवो जीवंन्तीरुपंवः सदेयम्। द्यौश्चेमं यज्ञं पृंथिवी च सन्दुंहाताम्। धाता सोमेन सह वातेन वायुः। यजमानाय

## द्रविणं दधातु॥३८॥

उथ्सं दुहन्ति कुलशं चतुंर्बिलम्। इडाँ देवीं मधुंमती १ सुवर्विदम्। तदिन्द्राग्नी जिन्वत १ सूनृतांवत्। तद्यजंमान-ममृतत्वे देधातु। कामधुक्षः प्र णौं ब्रूहि। इन्द्रांय ह्विरिन्द्रियम्। अमूं यस्याँ देवानाम्। मनुष्याणां पयो हितम्। बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यः। हुव्यमा प्यांयतां पुनः॥३९॥

वृथ्सेभ्यो मनुष्येभ्यः। पुनुर्दोहायं कल्पताम्। यज्ञस्य सन्तं-तिरिस। यज्ञस्यं त्वा सन्तंतिमनु सं तंनोमि। अदंस्तमिस् विष्णंवे त्वा। यज्ञायापि दधाम्यहम्। अद्भिरिक्तेन पात्रेण। याः पूताः परिशेरते। अयं पयः सोमं कृत्वा। स्वां योनिमिपं गच्छतु॥४०॥

पूर्णवल्कः प्वित्रम्। सौम्यः सोमाद्धि निर्मितः। इमौ पूर्णं चं दर्भं चं। देवाना र हव्यशोधंनौ। प्रात्वेषायं गोपाय। विष्णों ह्व्यश् हि रक्षंसि। उभावग्नी उपस्तृण्ते। देवता उपवसन्तु मे। अहं ग्राम्यानुपं वसामि। मह्यं गोपंतये पृशून्॥४१॥ अत्रं इमं गृह्हाम् पूर्वः परिगृह्हामि सभापाला इन्द्रंज्येष्टेन्यु आदित्य वतपते सुस्मुत्तां मे सह प्नात गहि ने विश्वरूपा दथातु पुनर्गच्छतु पृश्वन् (याः पुरस्तादिमामुर्जमिह प्रजा इह पृश्वोऽयं पितृणामुक्षिः।)॥—[४]

देवां देवेषु पराँक्रमध्वम्। प्रथंमा द्वितीयेषु। द्वितीयास्तृतीयेषु। त्रिरेकादशा इह मांऽवत। इद॰ शंकेयं यदिदं करोमिं। आत्मा करोत्वात्मनें। इदं करिष्ये भेषजम्। इदं में विश्वभेषजा। अश्विना प्रावंतं युवम्। इदमुह॰ सेनांया अभीत्वंर्ये॥४२॥ मुख्मपोहामि। सूर्यं ज्योतिर्वि भांहि। मृह्त इंन्द्रियायं। आ प्यायतां घृतयोनिः। अग्निर्ह्व्याऽनुं मन्यताम्। खमंङ्क्ष् त्वचमङ्क्षा सुरूपं त्वां वसुविदम्। पृशूनां तेजसा। अग्नये जुष्टमिभ घारयामि। स्योनं ते सदेनं करोमि॥४३॥

घृतस्य धारंया सुशेवं कल्पयामि। तस्मिन्थ्सीदामृते प्रतिं तिष्ठ। ब्रीहीणां मेध सुमन्स्यमानः। आर्द्रः प्रथस्नुर्भुवंनस्य गोपाः। शृत उथ्स्नांति जनिता मंतीनाम्। यस्तं आत्मा पशुषु प्रविष्ठः। देवानां विष्ठामनु यो वितस्थे। आत्मन्वान्थ्सोम घृतवान् हि भूत्वा। देवान्गंच्छ सुवंर्विन्द यजंमानाय मह्मम्। इरा भूतिः पृथिव्ये रसो मोत्क्रंमीत्॥४४॥

देवाः पितरः पितंरो देवाः। योऽहमंस्मि स सन् यंजे। यस्यांस्मि न तम्नतरेमि। स्वं मं इष्टइ स्वं दत्तम्। स्वं पूर्तइ स्वइ श्रान्तम्। स्वइ हुतम्। तस्यं मेऽग्निरुपद्रष्टा। वायुरुपश्चोता। आदित्योऽनुख्याता। द्योः पिता॥४५॥

पृथिवी माता। प्रजापंतिर्बन्धुः। य एवास्मि स सन् यंजे। मा भेमी संविंक्था मा त्वां हिश्सिषम्। मा ते तेजोऽपं क्रमीत्। भरतमुद्धरेमनुंषिश्च। अवदानांनि ते प्रत्यवदास्यामि। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। यदंवदानांनि तेऽवद्यन्। विलोमाकांर्षमात्मनंः॥४६॥

आज्येन प्रत्यंनज्म्येनत्। तत्त् आ प्यांयतां पुनः।

अज्यांयो यवमात्रात्। आव्याधात्कृत्यतामिदम्। मा रूरुपाम यज्ञस्यं। शुद्ध स्वष्टिमिद हिवः। मनुना दृष्टां घृतपंदीम्। मित्रावरुणसमीरिताम्। दक्षिणार्धादसंम्भिन्दन्। अवंद्याम्येकतोमुंखाम्॥४७॥

इडें भागं जुंषस्व नः। जिन्व गा जिन्वार्वतः। तस्याँस्ते भक्षिवाणः स्याम। सर्वात्मानः सर्वगंणाः। ब्रध्न पिन्वंस्व। ददंतो मे मा क्षांयि। कुर्वतो मे मोपंदसत्। दिशां क्रुप्तिंरसि। दिशों मे कल्पन्ताम्। कल्पंन्तां मे दिशः॥४८॥

देवींश्च मानुंषिश्च। अहोरात्रे में कल्पेताम्। अर्धमासा में कल्पन्ताम्। मासां मे कल्पन्ताम्। ऋतवों मे कल्पन्ताम्। सुंवथ्सरो में कल्पताम्। क्रृप्तिरिस् कल्पंतां मे। आशांनां त्वाऽऽशापालेभ्यः। चतुर्भ्यों अमृतेंभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः॥४९॥

विधेमं ह्विषां व्यम्। भजंतां भागी भागम्। मा भागोऽभंक्ता निरंभागं भंजामः। अपस्पिन्व। ओषंधीर्जिन्व। द्विपात्पांहि। चतुंष्पादव। दिवो वृष्टिमेरंय। ब्राह्मणानांमिद॰ ह्विः॥५०॥

सोम्याना रे सोमपीथिनांम्। निर्भक्तो ब्राह्मणः। नेहा ब्राह्मणस्यास्ति। समंङ्कां ब्रह्महर्ष्ट्विषां घृतेनं। समादित्यैर्वसृभिः सं मुरुद्भिः। समिन्द्रेण विश्वेभिर्देविभिरङ्काम्। दिव्यं नभो गच्छतु यथ्स्वाहां। इन्द्राणीवांविधवा भूयासम्। अदितिरिव सुपुत्रा। अस्थूरि त्वां गार्हपत्य॥५१॥

उपनिषंदे सुप्रजास्त्वायं। सं पत्नी पत्यां सुकृतेनं गच्छताम्। यज्ञस्यं युक्तौ धुर्यावभूताम्। सञ्जानानौ विजंहतामरांतीः। दिवि ज्योतिरजरमा रंभेताम्। दशंते तनुवो यज्ञ यज्ञियाः। ताः प्रीणातु यजंमानो घृतेनं। नारिष्ठयोः प्रिशिष्मीडंमानः। देवानां दैव्येऽपि यजंमानोऽमृतोऽभूत्। यं वां देवा अंकल्पयन्॥५२॥

ऊर्जी भाग श्रांतऋतू। एतद्वां तेनं प्रीणानि। तेनं तृप्यतम हहो। अहं देवाना रे सुकृतांमस्मि लोके। ममेदिम्ष्टं न मिथुर्भवाति। अहं नारिष्ठावनं यजामि विद्वान्। यदाँभ्यामिन्द्रो अद्धाद्भाग्धेयम्। अदारसृद्भवत देवसोम। अस्मिन् यज्ञे मंरुतो मृडता नः। मा नो विदद्भिभामो अशंस्तिः॥५३॥

मा नो विदद्वृजना द्वेष्या या। ऋष्मं वाजिनं वयम्। पूर्णमांसं यजामहे। स नो दोहता स्पूर्वीर्यम्। रायस्पोष स्सह्स्रिणम्। प्राणायं सुराधंसे। पूर्णमांसाय स्वाहां। अमावास्यां सुभगां सुशेवां। धेनुरिव भूयं आप्यायंमाना। सा नो दोहता स्पूर्वीर्यम्। रायस्पोष सहस्रिणम्। अपानायं सुराधंसे। अमावास्यांये स्वाहां। अभि स्तृंणीहि परि धेहि वेदिम्। जामिं मा हि सीरमुया शयांना। होतृषदंना हरिताः सुवर्णाः। निष्का इमे यजंमानस्य

#### ब्रध्ने॥५४॥

परिस्तृणीत् परिधत्ताग्निम्। परिहितोऽग्निर्यजंमानं भुनक्तु। अपा रस् ओषंधीना र सुवर्णः। निष्का इमे यजंमानस्य सन्तु कामदुर्घाः। अमुत्रामुष्मिं ह्लोके। भूपंते भुवंनपते। महतो भूतस्यं पते। ब्रह्माणं त्वा वृणीमहे। अहं भूपंतिरहं भुवंनपतिः। अहं महतो भूतस्य पतिः॥५५॥

देवनं सिवता प्रसूत् आर्त्विज्यं करिष्यामि। देवं सिवतरेतं त्वां वृणते। बृह्स्पित्ं दैव्यं ब्रह्माणम्। तदहं मनसे प्र ब्रंवीमि। मनों गायत्रिये। गायत्री त्रिष्टुभें। त्रिष्टुब्बगंत्ये। जगंत्यनुष्टुभें। अनुष्टुक्पुङ्को। पुङ्किः प्रजापंतये॥५६॥

प्रजापंतिर्विश्वेंभ्यो देवभ्यः। विश्वे देवा बृह्स्पतंये। बृह्स्पतिब्रह्मणे। ब्रह्म भूर्भवः सुवः। बृह्स्पतिर्देवानां ब्रह्मा। अहं मन्ष्याणाम्। बृहंस्पते यृज्ञं गोपाय। इदं तस्मै हुम्यं करोमि। यो वो देवाश्चरंति ब्रह्मचर्यम्। मेधावी दिक्षु मनसा तप्स्वी॥५७॥

अन्तर्दूतश्चरित मानुषीषु। चतुः शिखण्डा युव्तिः सुपेशाः। घृतप्रतीका भुवनस्य मध्ये। मुर्मुज्यमाना मह्ते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजमानाय कामान्। भूमिर्भूत्वा महिमानं पुपोष। ततो देवी वर्धयते पयार्स्स। युज्ञियां युज्ञं वि च यन्ति शं चं। ओषंधीरापं इह शक्करिश्च। यो मां हृदा मनंसा यश्चं वाचा॥५८॥

यो ब्रह्मणा कर्मणा द्वेष्टिं देवाः। यः श्रुतेन् हृदयेनेष्णता चे। तस्यैन्द्र वर्न्नेण शिरंश्छिनिद्याः। ऊर्णामृद् प्रथमानः स्योनम्। देवेभ्यो जुष्ट्र सदंनाय ब्र्हिः। सुवर्गे लोके यर्जमान्र हि धेहि। मां नाकस्य पृष्ठे पंरमे व्योमन्। चतुः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रतीका व्युनानि वस्ते। साऽऽस्तीर्यमाणा मह्ते सौभंगाय॥५९॥

सा में धुक्ष्व यजंमानाय कामान्। शिवा चं मे शृग्मा चैधि। स्योना चं मे सुषदां चैधि। ऊर्जस्वती च मे पर्यस्वती चैधि। इष्मूर्जं मे पिन्वस्व। ब्रह्म तेजों मे पिन्वस्व। क्ष्रत्रमोजों मे पिन्वस्व। विश्ं पुष्टिं मे पिन्वस्व। आयुंर्त्राद्यं मे पिन्वस्व। प्रजां पुशून्में पिन्वस्व॥६०॥

अस्मिन् यज्ञ उप भूय इन्नु में। अविक्षोभाय परिधीं देधामि। धर्ता धरुणो धरीयान्। अग्निर्देषा सेस् निरितो नुंदाते। विच्छिनिद्यो विधृतीभ्या स्पलान्। जातान्त्रातृंच्यान् ये चं जिन्ष्यमाणाः। विशो यन्नाभ्यां विध्माम्येनान्। अहङ् स्वानांमुत्तमोऽसानि देवाः। विशो यन्ने नुदमाने अरांतिम्। विश्वं पाप्मानममंतिं दुर्मरायुम्॥६१॥

सीदंन्ती देवी सुंकृतस्यं लोके। धृतीं स्थो विधृती

स्वर्धृती। प्राणान्मयि धारयतम्। प्रजां मयि धारयतम्। पृशून्मयि धारयतम्। अयं प्रस्तुर उभयंस्य धृती। धृती प्रयाजानांमुतानूयाजानांम्। स दाधार समिधो विश्वरूपाः। तस्मिन्थ्सुचो अध्या सांदयामि। आ रोह पृथो जुंहु देवयानान्॥६२॥

यत्रर्षयः प्रथम्जा ये पुराणाः। हिरंण्यपक्षाऽजिरा सम्भृंताङ्गा। वहांसि मा सुकृतां यत्रं लोकाः। अवाहं बांध उपभृतां सपत्नान्। जातान्त्रातृंव्यान् ये चं जिन्ष्यमाणाः। दोहें यज्ञ सुद्धांमिव धेनुम्। अहमुत्तंरो भूयासम्। अधेरे मध्सपत्नाः। यो मां वाचा मनसा दुर्मरायुः। हृदाऽरांतीयादंभिदासंदग्ने॥६३॥

इदमंस्य चित्तमधंरं ध्रुवायाः। अहमुत्तंरो भूयासम्। अधंरे मथ्सपत्नाः। ऋषभोऽसि शाक्वरः। घृताचीनाः सूनुः। प्रियेण नाम्नां प्रिये सदंसि सीद। स्योनो में सीद सुषदंः पृथिव्याम्। प्रथंयि प्रजयां पृशुभिः सुवर्गे लोके। दिवि सीद पृथिव्याम्नतिरक्षे। अहमुत्तंरो भूयासम्॥६४॥

अधेरे मथ्मपत्नाः। इयः स्थाली घृतस्यं पूर्णा। अच्छिन्नपयाः श्वतधार् उथ्सः। मारुतेन शर्मणा दैव्येन। यज्ञोऽसि सर्वतः श्रितः। सर्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रयताम्। श्वतं में सन्त्वाशिषः। सहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः। प्रजापंतिरसि सर्वतः श्रितः॥६५॥ स्वतो मां भूतं भेविष्यच्छ्रेयताम्। श्वतं में सन्त्वाशिषेः। सहस्रं मे सन्तु सृनृताः। इरावतीः पशुमतीः। इदिमेन्द्रियम्मृतं वीर्यम्। अनेनेन्द्रांय पृशवोऽचिकिथ्सन्। तेनं देवा अवतोप माम्। इहेष्मूर्जं यशः सह ओजः सनेयम्। शृतं मिथे श्रयताम्। यत्पृंथिवीमचंर्त्तत्प्रविष्टम्॥६६॥

येनासिश्चह्रलमिन्द्रैं प्रजापितिः। इदं तच्छुकं मधुं वाजिनीवत्। येनोपिरेष्टादिधेनोन्महेन्द्रम्। दिध् मां धिनोत्। अयं वेदः पृथिवीमन्विविन्दत्। गुहां सतीं गहेने गह्वरेषु। स विन्दत् यर्जमानाय लोकम्। अच्छिदं यृज्ञं भूरिकर्मा करोत्। अयं यृज्ञः समसदद्धविष्मान्। ऋचा साम्ना यर्जुषा देवतांभिः॥६७॥

तेनं लोकान्थ्सूर्यंवतो जयेम। इन्द्रंस्य सख्यमंमृत्त्वमं-श्याम्। यो नः कनीय इह कामयाते। अस्मिन् युज्ञे यजमानाय मह्मम्। अप तिमन्द्राग्नी भुवनान्नुदेताम्। अहं प्रजां वीरवंतीं विदेय। अग्ने वाजजित्। वाजं त्वा सरिष्यन्तम्। वाजं जेष्यन्तम्। वाजिनं वाजजितम्॥६८॥

वाज्जित्यायै सं माँजिमी अग्निमंत्रादम्त्राद्यांय। उपंहूतो द्यौः पिता। उप मां द्यौः पिता ह्वंयताम्। अग्निराग्नींप्रात्। आयुंषे वर्चसे। जीवात्वै पुण्यांय। उपंहूता पृथिवी माता। उप मां माता पृंथिवी ह्वंयताम्। अग्निराग्नींप्रात्॥६९॥ आयुंषे वर्चसे। जीवात्वे पुण्यांय। मनो ज्योतिंर्जुषतामा-ज्यम्। विच्छिन्नं युज्ञ र सिम्मं दंधातु। बृह्स्पतिंस्तनुतािम्मं नंः। विश्वे देवा इह मांदयन्ताम्। यन्ते अग्न आवृश्वािमं। अहं वा क्षिपितश्चरन्। प्रजां च तस्य मूलं च। नीचैर्देवा नि वृश्वत॥७०॥

अग्ने यो नोंऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ट्याः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदः। यं चाऽऽहं द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वाङ्स्तानंग्ने सन्दंह। याङ्श्चाहं द्वेष्मि ये च माम्। अग्ने वाजजित्। वाजंं त्वा सस्वा॰सम्॥७१॥

वार्जं जिगिवा रसम्। वाजिनं वाज्जितम्। वाज्जित्यायै सम्मार्जिमं। अग्निमंत्रादम्त्राद्याय। वेदिंर्ब्र्हिः शृत र ह्विः। इध्मः परिधयः सुर्चः। आज्यं यज्ञ ऋचो यजुः। याज्याश्च वषद्वाराः। सं मे सन्नंतयो नमन्ताम्। इध्मस्त्रहंने हुते॥७२॥

दिवः खीलोऽवंततः। पृथिव्या अध्युत्थितः। तेनां सहस्रकाण्डेन। द्विषन्तर्रं शोचयामिस। द्विषन्मं बहु शोंचतु। ओषंधे मो अहर शुंचम्। यज्ञ नमंस्ते यज्ञ। नमो नमंश्च ते यज्ञ। शिवेनं मे सन्तिष्ठस्व। स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्व॥७३॥

सुभूतेनं मे सन्तिष्ठस्व। ब्रह्मवर्चसेनं मे सन्तिष्ठस्व। यज्ञस्यर्द्धिमनु सन्तिष्ठस्व। उपं ते यज्ञ नर्मः। उपं ते नर्मः। उपं ते नर्मः। त्रिष्फुलीक्रियमाणानाम्। यो न्युङ्गो अंवृशिष्यंते। रक्षंसां भागुधेयम्। आपुस्तत्प्र वंहतादितः॥७४॥

उलूखंले मुसंले यच शूपैं। आशिश्लेषं दृषि यत्कपालैं। अवप्रुषों विप्रुषः संयंजामि। विश्वे देवा ह्विरिदं जुंषन्ताम्। यज्ञे या विप्रुषः सन्तिं बह्बीः। अग्नौ ताः सर्वाः स्विष्टाः सुहुंता जुहोमि। उद्यन्नद्यमित्र महः। सपत्नौन्मे अनीनशः। दिवैनान् विद्युतां जिहा निम्नोचन्नधंरान्कृधि॥७५॥

उद्यन्नद्य वि नों भज। पिता पुत्रेभ्यो यथाँ। दीर्घायुत्वस्यं हेशिषे। तस्यं नो देहि सूर्य।

### ॥ हृद्रोगघ्न-मन्त्राः॥

उद्यन्नद्य मित्रमहः। आरोह्नन्नत्तरां दिवम्। हृद्रोगं ममे सूर्य। हृरिमाणं च नाशय। शुकेषु मे हरिमाणम्। रोपणाकांसु दध्मसि॥७६॥

अथों हारिद्रवेषुं मे। हुरिमाणुं नि देध्मसि। उदंगाद्यमादित्यः। विश्वेन सहसा सह। द्विषन्तुं ममं रन्धयन्। मो अहं द्विषतो रेधम्।

यो नः शपादशंपतः। यश्चं नः शपंतः शपात्। उषाश्च तस्मैं निमुक्नं। सर्वं पाप समूहताम्॥७७॥

यो नंः सपत्नो यो रणंः। मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किञ्चन। अवंसृष्टः परांपत। शूरो ब्रह्मंस॰शितः। गच्छाऽमित्रान्प्र विंश। मैषां कश्चनोच्छिंषः॥७८॥

पतिः प्रजापंतये तपुस्वी वाचा सौभंगाय पुशून्यें पिन्वस्व दुर्मगुयुं देवयानांनग्नेऽन्तरिक्षेऽहमुत्तंरो भूयासं प्रजापंतिरिस सुर्वतः श्रितः प्रविष्टं देवतांभिर्वाजुजितं पृथिवी ह्वंयतामुग्निराग्नीप्राद्वश्चत ससृवारसरं हृते स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्वेतः कृंधि दध्मस्यूहतामुष्टौ चं॥————[ह्

सक्षेदं पंश्य। विधंतिरिदं पंश्य। नाकेदं पंश्य। रमितः पिनंष्ठा। ऋतं वर्षिष्ठम्। अमृतायान्याहुः। सूर्यो विरेष्ठो अक्षिभिविभाति। अनु द्यावापृथिवी देवपुत्रे। दीक्षाऽसि तपंसो योनिः। तपोऽसि ब्रह्मणो योनिः॥७९॥

ब्रह्मांसि क्षत्रस्य योनिः। क्षत्रमंस्यृतस्य योनिः। ऋतमंसि भूरा रंभे। श्रद्धां मनंसा। दीक्षां तपंसा। विश्वंस्य भुवंनस्याधिपत्नीम्। सर्वे कामा यजमानस्य सन्तु। वातं प्राणं मनंसाऽन्वा रंभामहे। प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नो मृत्योस्रांयतां पात्व १ हंसः॥८०॥

ज्योग्जीवा ज्रामंशीमिह। इन्द्रं शाक्कर गायत्रीं प्रपंद्ये। तान्तें युनज्मि। इन्द्रं शाक्कर त्रिष्टुम्ं प्रपंद्ये। तान्तें युनज्मि। इन्द्रं शाक्कर् जर्गतीं प्रपंद्ये। तान्तें युनज्मि। इन्द्रं शाक्करानुष्टुभ्ं प्रपंद्ये। तान्तें युनज्मि। इन्द्रं शाक्कर पुङ्किः प्रपंद्ये॥८१॥

तान्ते युनज्मि। आऽहं दीक्षामंरुहमृतस्य पत्नीम्। गायत्रेण् छन्दंसा ब्रह्मणा च। ऋतः सत्येऽधायि। सत्यमृतेऽधायि। ऋतं चे मे सत्यं चांभूताम्। ज्योतिरभूवः सुवंरगमम्। सुव्गं लोकं नाकंस्य पृष्ठम्। ब्र्ध्नस्यं विष्टपंमगमम्। पृथिवी दीक्षा॥८२॥ तयाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। ययाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। अन्तिरिक्षं दीक्षा। तयां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। ययां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। द्यौर्दीक्षा। तयांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः। ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः॥८३॥

तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। दिशों दीक्षा। तयां चुन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। ययां चुन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। आपों दीक्षा। तया वर्रुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया वर्रुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। ओषंधयो दीक्षा॥८४॥

तया सोमो राजां दीक्षयां दीक्ष्यतः। यया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। वाग्दीक्षा। तयां प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। ययां प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। पृथिवी त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। अन्तरिक्षं त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। द्यौस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्॥८५॥

दिशंस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। आपंस्त्वा दीक्षंमाण-मनुं दीक्षन्ताम्। ओषंधयस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। वाक्ता दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। ऋचंस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। सामानि त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। यजूरंषि त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। अहंश्च रात्रिंश्च। कृषिश्च वृष्टिंश्च। त्विषिश्चापंचितिश्च॥८६॥ आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क्च सूनृतां च। तास्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। स्वे दक्षे दक्षंपितृह सींद। देवाना र सुम्नो महृते रणांय। स्वास्थ्यस्तनुवा संविंशस्व। पितेवैंधि सूनव आ सुशेवंः। शिवो मां शिवमा विंश। सृत्यं मं आत्मा। श्रृद्धा मेऽक्षिंतिः॥८७॥

तपों मे प्रतिष्ठा। स्वितृप्रंसूता मा दिशों दीक्षयन्तु। सत्यमंस्मि। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोककुञ्जातवेदः। आजुह्वांनः सुप्रतींकः पुरस्तांत्। अग्ने स्वां योनिमा सींद साध्या। अस्मिन्थ्स्थस्थे अध्युत्तंरस्मिन्॥८८॥

विश्वं देवा यजंमानश्च सीदत। एकंमिषे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। द्वे ऊर्जे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। त्रीणि व्रताय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। च्रत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। पश्चं पृशुभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। षड्रायस्पोषांय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। स्प्तप्त स्प्तभ्यो होत्राभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सखांयः स्प्तपंदा अभूम। सख्यं ते गमेयम्॥८९॥

स्ख्याते मा योषम्। स्ख्यान्मे मा योष्ठाः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते पृथिवी पार्दः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्तेऽन्तरिक्षं पार्दः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते द्यौः पार्दः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते दिशः पार्दः॥९०॥

पुरोरंजास्ते पश्चमः पादंः। सा न् इषुमूर्जं धुक्ष्व। तेर्ज

इन्द्रियम्। ब्रह्मवर्चसम्नाद्यम्। वि मिंमे त्वा पर्यस्वतीम्। देवानां धेनु सपुद्धामनंपस्फुरन्तीम्। इन्द्रः सोमं पिबतु। क्षेमो अस्तु नः। इमान्नंराः कृणुत् वेदिमेत्यं। वसुंमती स् रुद्रवंतीमादित्यवंतीम्॥९१॥

वर्ष्मन्दिवः। नाभां पृथिव्याः। यथाऽयं यजंमानो न रिष्येत्। देवस्यं सिवतुः स्वे। चतुः शिखण्डा युवितः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्ये। तस्यारं सुपूर्णाविध् यौ निविष्टौ। तयोदिवानामिधं भागधेयम्। अप जन्यं भयं नुंद। अपं चुकाणि वर्तय। गृहर सोमंस्य गच्छतम्। न वा उं वेतन्म्रियसे न रिष्यसि। देवार इदेषि पृथिभिः सुगेभिः। यत्र यन्तिं सुकृतो नापि दुष्कृतः। तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु॥९२॥

ब्रह्मणो योनिर२हंसः पुङ्किः प्रपंचे दीक्षा ययाऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितस्तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयाम्योपंधयो दीक्षा द्यौस्त्वा दीक्षमाणमन् दीक्षतामपंचितिश्वाक्षिति्रुत्तरस्मिन्गमेयुं दिशः पादं आदित्यवंतीं वर्तयु पश्चं च॥—————[ ७ ]

यदस्य पारे रजंसः। शुक्रं ज्योतिरजांयत। तन्नः पर्षदित द्विषंः। अग्ने वैश्वानर् स्वाहाँ। यस्माँद्भीषाऽवांशिष्ठाः। ततों नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वांभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीदुषें। यस्माँद्भीषा न्यषंदः। ततों नो अभयं कृधि॥९३॥

प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीढुषें। उदुंस्र तिष्ठ प्रति तिष्ठ मारिषः। मेमं युज्ञं यजमानं च रीरिषः। सुवर्गे लोके यजमान् हे हि धेहि। शन्नं एधि द्विपदे शं चतुंष्पदे। यस्मौद्भीषाऽवेपिष्ठाः पुलायिष्ठाः समज्ञौस्थाः। ततो नो अभेयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमो रुद्रायं मीदुषे॥९४॥

य इदमकंः। तस्मै नमंः। तस्मै स्वाहाँ। न वा उंवेतिन्त्रियसे। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। यज्ञस्य हि स्थ ऋत्वियौं। इन्द्रांग्री चेतंनस्य च। हुताहुतस्यं तृप्यतम्। अहंतस्य हुतस्यं च। हुतस्य चाहंतस्य च। अहंतस्य हुतस्यं च। इन्द्रांग्री अस्य सोमंस्य। वीतं पिंबतं जुषेथांम्। मा यजंमानं तमो विदत्। मर्त्विजो मो इमाः प्रजाः। मा यः सोमंमिमं पिबात्। स॰सृष्टमुभयं कृतम्॥९५॥

कृिं मीढुषेऽहुंतस्य च सप्त चं॥🗕

[2]

अनागसंस्त्वा वयम्। इन्द्रंण प्रेषिता उपं। वायुष्टं अस्त्वश्याभूः। मित्रस्ते अस्त्वश्याभूः। वर्रणस्ते अस्त्वश्याभूः। अपौङ्कया ऋतंस्य गर्भाः। भुवंनस्य गोपाः श्येनां अतिथयः। पर्वतानां ककुभः प्रयुतो नपातारः। वयुनेन्द्रई ह्वयत। घोषेणामीवाइश्चातयत॥९६॥

युक्ताः स्थ वहंत। देवा ग्रावांण इन्द्रिन्द्र इत्यंवादिषुः। एन्द्रंमचुच्यवुः पर्मस्याः परावतः। आऽस्माथ्स्थस्यात्। ओरोर्न्तिरक्षात्। आ सुंभूतमंसुषवुः। ब्रह्मवर्चसं म् आसुंषवुः। सम्रे रक्षाः स्यविषषुः। अपहतं ब्रह्मज्यस्यं। वाक्रं त्वा मनंश्च श्रीणीताम्॥९७॥

प्राणश्चं त्वाऽपानश्चं श्रीणीताम्। चक्षुंश्च त्वा श्रोत्रं च

श्रीणीताम्। दक्षंश्चत्वा बलं च श्रीणीताम्। ओजंश्च त्वा सहंश्च श्रीणीताम्। आयुंश्च त्वाऽज् रा चं श्रीणीताम्। आत्मा चं त्वा त्नूश्चं श्रीणीताम्। शृतोऽसि शृतं कृंतः। शृतायं त्वा शृतेभ्यंस्त्वा। यमिन्द्रंमाहुर्वरुणं यमाहुः। यं मित्रमाहुर्यमुं स्त्यमाहुः॥९८॥

यो देवानां देवतंमस्तपोजाः। तस्मैं त्वा तेभ्यंस्त्वा। मिय त्यदिन्द्रियं महत्। मिय दक्षो मिय ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो वि भातु मे। आकूत्या मनसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। तस्य दोहंमशीमहि॥९९॥

तस्यं सुम्नमंशीमिह। तस्यं भृक्षमंशीमिह। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यत्। मित्रो जनान्त्र स मित्र। यस्मान्न जातः परो अन्यो अस्ति। य आंविवेश भुवंनािन विश्वां। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। त्रीणि ज्योती १षि सचते स षोंडशी। एष ब्रह्मा य ऋत्वियः। इन्द्रो नामं श्रुतो गुणे॥१००॥

प्रते महे विदथे शश्सिष्ट्रहरीं। य ऋत्वियः प्रते वन्वे। वनुषो हर्यतं मदम्। इन्द्रो नामं घृतं नयः। हरिभिश्चारु सेचेते। श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु। हरिवर्पसङ्गिरेः। इन्द्राधिपतेऽधिपतिस्त्वं देवानांमिस। अधिपतिं माम्। आयुष्मन्तं वर्चस्वन्तं मनुष्येषु कुरु॥१०१॥

इन्द्रंश्च सम्राङ्वरुंणश्च राजां। तो ते भृक्षं चंऋतुरग्रं एतम्।

तयोरनुं भृक्षं भंक्षयामि। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यतु। प्रजा-पंतिर्विश्वकर्मा। तस्य मनों देवं युज्ञेनं राध्यासम्। अर्थेगा अस्य जंहितः। अवसानंपतेऽवसानं मे विन्द। नमों रुद्रायं वास्तोष्पतंये। आयंने विद्रवंणे॥१०२॥

उद्याने यत्परायंणे। आवर्तने विवर्तने। यो गोंपायित् त॰ हुंवे। यान्यंपामित्यान्यप्रंतीत्तान्यस्मिं। यमस्यं बिलना चर्रामि। इहैव सन्तः प्रति तद्यांतयामः। जीवा जीवेभ्यो नि हंराम एनत्। अनुणा अस्मिन्नंनुणाः परंस्मिन्। तृतीयें लोके अनृणाः स्यांम। ये देवयानां उत पितृयाणाः॥१०३॥

सर्वांन्पथो अंनृणा आक्षीयम। इदमूनु श्रेयों-ऽवसानमा गंन्म। शिवे नो द्यावांपृथिवी उभे इमे। गोम्द्धनंवदश्वंवदूर्जस्वत्। सुवीरां वीरेरनु सश्चरेम। अर्कः प्वित्र रजंसो विमानः। पुनातिं देवानां भुवंनानि विश्वां। द्यावांपृथिवी पर्यसा संविदाने। द्युतं दुंहाते अमृतं प्रपींने। प्वित्रम्कों रजंसो विमानः। पुनातिं देवानां भुवंनानि विश्वां। स्वज्योंतिर्यशों महत्। अशीमिहं गाधमुत प्रतिष्ठाम्॥१०४॥ भूवज्योंतिर्यशों महत्। अशीमिहं गाधमुत प्रतिष्ठाम्॥१०४॥

उदंस्ताम्फ्सीथ्सविता मित्रो अंर्यमा। सर्वानिप्तरांन-वधीद्युगेनं। बृहन्तं मामंकरद्वीरवंन्तम्। रथन्तरे श्रंयस्व स्वाहां पृथिव्याम्। वामदेव्ये श्रंयस्व स्वाहाऽन्तरिक्षे। बृह्ति श्रंयस्व स्वाहां दिवि। बृहता त्वोपंस्तभ्रोमि। आ त्वां ददे यशंसे वीर्याय च। अस्मास्विधिया यूयं देधाथेन्द्रियं पर्यः। यस्तै द्रफ्सो यस्तं उदुर्षः॥१०५॥

दैव्यः केतुर्विश्वं भुवंनमाविवेशं। स नः पाह्यरिष्ठ्ये स्वाहाँ। अनुं मा सर्वो यज्ञोऽयमेतु। विश्वे देवा मुरुतः सामार्कः। आप्रियुश्छन्दा रेसि निविदो यजूरेषि। अस्य पृथिव्ये यद्यज्ञियम्। प्रजापंतेर्वर्तिनमनुं वर्तस्व। अनुंवीरेरनुं राध्याम् गोभिः। अन्वश्वेरनु सर्वेरु पुष्टेः। अनुं प्रजया-ऽन्विन्द्रियेणं॥१०६॥

देवा नो यज्ञमृंजुधा नंयन्तु। प्रतिक्षत्रे प्रति तिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्वेषु प्रति तिष्ठामि गोषुं। प्रति प्रजायां प्रति तिष्ठामि भव्यें। विश्वंमन्याऽभि वावृधे। तद्न्यस्यामिधिश्रितम्। दिवे चं विश्वकर्मणे। पृथिव्ये चांकरं नमः। अस्कान्द्योः पृथिवीम्। अस्कानृष्भो युवागाः॥१०७॥

स्कन्नेमा विश्वा भुवना। स्कन्नो यज्ञः प्र जनयतु। अस्कानजनि प्राजनि। आ स्कन्नाञ्जायते वृषाँ। स्कन्नात्प्र जनिषीमिह। ये देवा येषांमिदं भागधेयं बभूवं। येषां प्रयाजा उतानूंयाजाः। इन्द्रंज्येष्ठेभ्यो वर्रुणराजभ्यः। अग्निहोतृभ्यो देवेभ्यः स्वाहाँ। उत त्या नो दिवां मृतिः॥१०८॥

अदितिरूत्या गंमत्। सा शन्तांची मयंस्करत्। अप स्निधंः। उत त्या दैव्यां भिषजां। शन्नंस्करतो अश्विनां। यूयातांमुस्मद्रपंः। अपु स्निधंः। शमुग्निरुग्निभिस्करत्।

## शन्नंस्तपतु सूर्यः। शं वातों वात्वर्पाः॥१०९॥

अप स्निधंः। तिदत्पदं न विचिकेत विद्वान्। यन्मृतः पुनंरप्येति जीवान्। त्रिवृद्यद्भुवंनस्य रथवृत्। जीवो गर्भो न मृतः स जीवात्। प्रत्यंस्मै पिपीषते। विश्वांनि विदुषे भर। अर्ङ्गमाय जग्मेवे। अपश्चाद्दघ्वने नरें। इन्दुरिन्दुमवांगात्। इन्दोरिन्द्रोऽपात्। तस्यं त इन्द्विन्द्रंपीतस्य मधुंमतः। उपंहृत्स्योपंहूतो भक्षयामि॥११०॥

उदुर्ष इंन्द्रियेण गा मृतिरंरूपा अंगात्रीणिं च॥———[१०]

ब्रह्मं प्रतिष्ठा मनंसो ब्रह्मं वाचः। ब्रह्मं युज्ञानार् हिवषामाज्यंस्य। अतिरिक्तं कर्मणो यचं हीनम्। युज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कुल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्। आश्रांवितमृत्याश्रांवितम्। वर्षद्वृतमृत्यनूँक्तं च युज्ञे। अतिरिक्तं कर्मणो यचं हीनम्। युज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कुल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्॥१११॥

यद्वो देवा अतिपादयांनि। वाचा चित्प्रयंतं देवहेर्डनम्। अरायो अस्मा अभिदुंच्छुनायतें। अन्यत्रास्मन्मं रुतस्तिन्निधेन्तन। ततं म् आपस्तदुं तायते पुनः। स्वादिष्ठा धीतिरुचथाय शस्यते। अय संमुद्र उत विश्वभेषजः। स्वाहांकृतस्य समुतृण्णुतर्भुवः। उद्वयं तमस्परि। उदुत्यं चित्रम्॥११२॥

इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने।

त्वमंग्ने अयासि प्रजांपते। इमं जीवेभ्यः परिधिं देधामि। मैषान्नुंगादपंरो अर्धमेतम्। शतं जीवन्तु शरदः पुरूचीः। तिरो मृत्युं देधतां पर्वतेन। इष्टेभ्यः स्वाहा वषडिनेष्टेभ्यः स्वाहां। भेषजं दुरिष्ठौ स्वाहा निष्कृत्यै स्वाहां। दौरांध्यै स्वाहा दैवींभ्यस्तुनूभ्यः स्वाहां॥११३॥

ऋखे स्वाहा समृंखे स्वाहाँ। यतं इन्द्र भयांमहे। ततों नो अभयं कृषि। मघंवञ्छ्गि तव तन्नं ऊतयें। वि द्विषो वि मृधों जिहि। स्वस्तिदा विशस्पतिः। वृत्रहा वि मृधों वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः। स्वस्तिदा अभयङ्करः। आभिर्गीर्भियंदतों न ऊनम्॥११४॥

आप्यायय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। अनौज्ञातं यदाज्ञांतम्। यज्ञस्यं क्रियते मिथुं। अग्रे तदंस्य कल्पय। त्व हि वेत्थं यथात्थम्। पुरुषसम्मितो यज्ञः। यज्ञः पुरुषसम्मितः। अग्रे तदंस्य कल्पय। त्व हि वेत्थं यथात्थम्। यत्पांकृत्रा मनसा दीनदंक्षा न। यज्ञस्यं मन्वते मर्तासः। अग्निष्टद्धोतौ कतुविद्विजानन्। यजिष्ठो देवा हित्यं यथात्थम्। यज्ञाति॥११५॥ देवाहितं कृत्यः स्वहितं पुरुषसम्मितोऽष्ठे तदंस्य कल्पय पत्रं वा——[११]

यद्देवा देव्हेडंनम्। देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्या-स्तस्मांन्मा मुश्चत। ऋतस्यर्तेन् मामुत। देवां जीवनकाम्या यत्। वाचाऽनृतमूदिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु। दुरिता यानिं चकुम। कुरोतु मामंनेनसम्॥११६॥

ऋतेनं द्यावापृथिवी। ऋतेन् त्वश् संरस्वति। ऋतान्मां मुञ्चताश्हंसः। यद्नयकृतमारिम। सृजात्शृश्सादुत वां जामिशृश्सात्। ज्यायंसः शश्सांदुत वा कनीयसः। अनांज्ञातं देवकृतं यदेनंः। तस्मात्त्वम्स्माञ्जातवेदो मुमुग्धि। यद्वाचा यन्मनंसा। बाहुभ्यांमूरुभ्यांमष्ठीवद्धांम्॥११७॥

शिश्जैर्यदर्नृतं चकुमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनेसः। यद्धस्ताभ्यां चकर् किल्बिषाणि। अक्षाणां वृग्नुम्पुजिन्नेमानः। दूरेप्श्या चे राष्ट्रभृचं। तान्यंपस्रसावनुदत्तामृणानि। अदींव्यन्नृणं यदहं चकारं। यद्वादांस्यन्थ्सञ्जगरा जनेभ्यः। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यन्मियं माता गर्भे स्ति॥११८॥

एनंश्चकार् यत्पता। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदां पिपेषं मातरं पितरम्। पुत्रः प्रमुंदितो धयन्। अहि स्ंसितौ पितरौ मया तत्। तदंग्ने अनृणो भंवामि। यदन्तिरक्षं पृथिवीमुत द्याम्। यन्मातरं पितरं वा जिहि स्मिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदाशसां निशसा यत्पंराशसां॥११९॥

यदेनश्चकृमा नूर्तनं यत्पुराणम्। अग्निर्मा तस्मादेनसः। अति कामामि दुरितं यदेनः। जहांमि रिप्रं पर्मे स्थस्थैं। यत्र यन्ति सुकृतो नापि दुष्कृतः। तमा रोहामि सुकृतां नु लोकम्। त्रिते देवा अमृजतैतदेनः। त्रित एतन्मनुष्येषु मामृजे। ततो मा यदि किश्चिदानुशे। अग्निर्मा तस्मादेनंसः॥१२०॥

गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु। दुरिता यानिं चकृम। करोतु मामनेनसम्। दिवि जाता अपसु जाताः। या जाता ओषंधीभ्यः। अथो या अंग्रिजा आपंः। ता नंः शुन्धन्तु शुन्धंनीः। यदापो नक्तंं दुरितं चरांम। यद्वा दिवा नूतंनं यत्पुंराणम्। हिरंण्यवर्णास्तत् उत्पुंनीत नः। इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्रे स त्वन्नों अग्रे। त्वमंग्रे अयासिं॥१२१॥

अर्-नेनसंमधीवद्यारं सृति पंराशसांऽऽन्शेंऽग्निर्मा तस्मादेनंसः पुनीत नुस्नीणिं च (यहँवा देवां ऋतेनं सजातशार्यसाद्यहाचा यद्धस्तांभ्यामदींव्यं यन्मियं माता यदां पिपेष यद्नतिरिक्षं यदाशसाऽतिं कामामि त्रिते देवा दिवि जाता अपस् जाता यदापं हुमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने त्वमंग्ने अयासिं। )॥————[१२]

यत्ते ग्राव्णां चिच्छिद्ः सोम राजन्। प्रियाण्यङ्गानि स्वधिता परूरंषि। तथ्सन्ध्यस्वाज्येनोत वंधियस्व। अनागसो अधिमध्सङ्क्षयेम। यत्ते ग्रावां बाहुच्युंतो अचुंच्यवः। नरो यत्ते दुदुहुर्दक्षिणेन। तत्त् आप्यांयतां तत्ते। निष्ट्यांयतां देव सोम। यत्ते त्वचं बिभिदुर्यच् योनिम्। यदास्थानात्प्रच्युंतो वेनंसि त्मनां॥१२२॥

त्वया तथ्सोम गुप्तमंस्तु नः। सा नः सुन्धासंत्पर्मे व्योमन्। अहाच्छरीरं पर्यसा सुमेत्यं। अन्योन्यो भवति वर्णो अस्य। तस्मिन्वयमुपंहूतास्तवं स्मः। आ नो भज् सदंसि विश्वरूपे। नृचक्षाः सोमं उत शुश्रुगंस्तु। मा नो वि हांसीद्विरं आवृणानः। अनांगास्तुनुवो वावृधानः। आ नो

रूपं वेहतु जायेमानः॥१२३॥

उपं क्षरिन्त जुह्नां घृतेनं। प्रियाण्यङ्गांनि तवं वर्धयंन्तीः। तस्मै ते सोम् नम् इद्वषंद्व। उपं मा राजन्थ्सुकृते ह्वंयस्व। सं प्राणापानाभ्या सम् चक्षुंषा त्वम्। सः श्रोत्रेण गच्छस्व सोम राजन्। यत्त् आस्थित शम् तत्तं अस्तु। जानीतान्नः सङ्गनेन पथीनाम्। एतं जानीतात्पर्मे व्योमन्। वृकाः सधस्था विद रूपमस्य॥१२४॥

यदागच्छौत्पथिभिर्देवयानैः। इष्टापूर्ते कृंणुतादाविरंस्मै। अरिष्टो राजन्नगदः परेहि। नमंस्ते अस्तु चक्षंसे रघूयते। नाकुमारोह सह यजंमानेन। सूर्यं गच्छतात्परमे व्योमन्। अभूँद्देवः संविता वन्द्योनु नंः। इदानीमह्रं उपवाच्यो नृभिः। वि यो रह्मा भर्जित मानवेभ्यः। श्रेष्टं नो अत्र द्रविणं यथा दर्धत्। उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादीध्याथामिह नंः सखाया। आदित्यानां प्रसितिरहेतिः। उग्रा श्तापाष्टा घविषा परि णो वृणक्तु। आप्यांयस्व सन्ते॥१२५॥

स्वा जार्यमानोऽस्य द्यत्यश्च वा [१३]

यिद्दिश्चे मनसा यर्च वाचा। यद्वा प्राणेश्चक्षुंषा यर्च श्रोत्रेण। यद्वेतसा मिथुनेनाप्यात्मनां। अन्द्यो लोका दंधिरे तेजं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीमिये तेजं इन्द्रियम्। यद्दचा साम्ना यर्जुषा। पुशूनां चर्मन् हविषां दिदीक्षे। यच्छन्दोभिरोषंधीभिर्वनस्पतौं। अन्द्यो लोका दंधिरे तेर्ज इन्द्रियम्॥१२६॥

शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीमीय तेजं इन्द्रियम्। येन् ब्रह्म येनं क्षुत्रम्। येनेंन्द्राग्नी प्रजा-पंतिः सोमो वरुणो येन राजां। विश्वे देवा ऋषयो येनं प्राणाः। अन्द्र्यो लोका दिधिरे तेजं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीमीय तेजं इन्द्रियम्। अपा पुष्पंमस्योषंधीना रूर्सः। सोमस्य प्रियं धामं॥१२७॥

अग्नेः प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीना १ रसंः। सोमस्य प्रियं धामं। इन्द्रंस्य प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीना १ रसंः। सोमस्य प्रियं धामं। विश्वेषां देवानां प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। वय १ सोम व्रते तवं। मनंस्तुनूषु पिप्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमहि॥१२८॥

देवेभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। सोम्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। कृव्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। देवांस इह मादयध्वम्। सोम्यांस इह मादयध्वम्। कव्यांस इह मादयध्वम्। अनंन्तिरताः पितरः सोम्याः सोमपीथात्। अपैतु मृत्युर्मृतं न आगन्। वैवस्वतो नो अभयं कृणोतु। पर्णं वनस्पतिरिव॥१२९॥

अभि नंः शीयता १ र्यिः। सर्चतां नः शचीपितः। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थांम्। यस्ते स्व इतरो देवयानांत्। चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नंः प्रजा १ रीरिषो मोत वीरान्। इदमूनु श्रेयोवसानमार्गन्म। यद्गोजिद्धनजिदंश्वजिद्यत्।

# पुर्णं वनस्पतेरिव। अभि नः शीयता रियः। सर्चतां नः शचीपतिः॥१३०॥

वनस्पतांबुद्धो लोका देधिरे तेजं इन्द्रियं धामांशीमहीवाभिनः शीयता रियरेकं च॥————[१४]

सर्वान् यद्विष्यंण्णेन् वि वै याः पुरस्ताद्वेवां देवेषु परिस्तृणीत् सक्षेदं यदस्य प्रारेऽनागस् उदस्ताम्पसीद्वहां प्रतिष्ठा यदेवा यत्ते ग्रावणा् यदिदीक्षे चतुर्दश्व॥१४॥
सर्वान्भूतिमेव यामेवापस्वाहृति व्रतानां पर्णवल्कः सोम्यानांमुस्मिन् युज्ञेऽग्ने यो नो ज्योग्जीवाः पुरोरंजाः प्रतेमहे ब्रह्मं प्रतिष्ठा गार्हपत्यिक्षिर्शादुत्तरशतम्॥१३०॥
सर्वाञ्क्षचीपतिः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥ अष्टमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

साङ्ग्रहण्येष्ठ्यां यजते। इमाञ्चनतार् सङ्गृह्णानीति। द्वादंशारत्नी रश्ना भंवति। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरमेवावं रुन्थे। मौञ्जी भंवति। ऊर्ग्वे मुञ्जाः। ऊर्ज-मेवावं रुन्थे। चित्रा नक्षंत्रं भवति। चित्रं वा एतत्कर्म॥१॥ यदंश्वमेधः समृंद्धौ। पुण्यंनाम देवयजंनमध्यवंस्यति। पुण्यांमेव तेनं कीर्तिम्भि जंयति। अपंदातीनृत्विजंः समावंहन्त्या सुंब्रह्मण्यायाः। सुवर्गस्यं लोकस्य समृंष्ठौ। केश्शमृश्रु वंपते। नखानि नि कृन्तते। दतो धांवते। स्नाति। अहंतं वासः परिधत्ते। पाप्मनोऽपहत्यै। वाचं यत्वोपं वसति। सुवर्गस्यं लोकस्य गृत्यै। रात्रिं जाग्रयंन्त आसते। सुवर्गस्यं लोकस्य समृष्ठौ॥२॥ सुवर्गस्यं लोकस्य समृष्ठौ॥२॥

चतुंष्टय्य आपों भवन्ति। चतुंः शफो वा अश्वंः प्राजापत्यः समृद्धौ। ता दिग्भ्यः समाभृंता भवन्ति। दिक्षु वा आपंः। अत्रं वा आपंः। अन्धो वा अत्रं जायते। यदेवान्धोऽत्रं जायंते। तदवं रुन्धे। तासुं ब्रह्मौदनं पंचति। रेतं एव तद्दंधाति॥३॥

चतुः शरावो भवति। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति। उभयतोर्क्कौ भंवतः। उभयतं पुवास्मिन्नुचं दधाति। उद्धरित शृतत्वायं। सूर्पिष्वान्भवति मेध्यत्वायं। चत्वारं आर्षेयाः प्राश्जन्ति। दिशामेव ज्योतिंषि जुहोति। चृत्वारि हिरंण्यानि ददाति। दिशामेव ज्योती इंष्यवं रुन्धे॥४॥

यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तस्मिन्नश्नान्युंनत्ति। प्रजापंतिर्वा ओंद्नः। रेत् आज्यम्। यदाज्ये रश्नान्युनत्ति। प्रजापंतिमेव रेतंसा समर्धयति। दुर्भमयी रश्ना भवति। बहु वा एष कुंच्रो मेध्यमुपंगच्छति। यदश्वः। प्वित्रं वै दुर्भाः॥५॥

यर्द्धभ्यीं रश्ना भवंति। पुनात्येवैनम्ं। पूतमेनं मध्यमा लेभते। अश्वस्य वा आलंब्यस्य मिह्मोदंक्रामत्। स महर्त्विजः प्राविंशत्। तन्महर्त्विजां महर्त्विक्तम्। यन्महर्त्विजः प्राश्वनितं। मृहिमानंमेवास्मिन्तद्दंधित। अश्वस्य वा आलंब्यस्य रेत् उदंक्रामत्। तथ्मुवर्ण्ष् हिरंण्यमभवत्। यथ्मुवर्ण्ष् हिरंण्यमभवत्। यथ्मुवर्ण्ष् हिरंण्यं ददांति। रेतं एव तद्दंधाति। ओद्दने दंदाति। रेतो वा ओद्दनः। रेतो हिरंण्यम्। रेतंसैवास्मिन्नेतो दधाति॥६॥

दुधाति रुन्धे दुर्भा अभवुष्यद चं॥———[२]

यो वै ब्रह्मंणे देवेभ्यः प्रजापंतयेऽप्रंतिप्रोच्याश्वं मेध्यं ब्रुप्ताति। आ देवताभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यः प्रतिप्रोच्यं। न देवताभ्य आवृश्च्यते। वसीयान्भवति। यदाहं। ब्रह्मन्नश्वं मेध्यं भन्थस्यामि देवेभ्यः प्रजापंतये तेनं राध्यासमितिं। ब्रह्म वै ब्रह्मा। ब्रह्मंण एव देवेभ्यः प्रजापंतये प्रतिप्रोच्याश्वं मेध्यं ब्रप्नाति॥७॥

न देवताँभ्य आ वृंश्च्यते। वसीयान्भवति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इति रश्नामादंत्ते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्याह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्यै। व्यृंद्धं वा एतद्यज्ञस्यं। यदंयज्ञष्केण क्रियतें। इमामंगृभ्णत्रश्नामृतस्ये-त्यिं वदित यजुंष्कृत्यै। यज्ञस्य समृंद्धौ॥८॥

तदांहुः। द्वादंशारती रश्ना कंर्त्व्या(३) त्रयोदशार्त्री(३)-रितिं। ऋष्भो वा एष ऋंतूनाम्। यथ्संवथ्सरः। तस्यं त्रयोदशो मासों विष्टपम्। ऋष्भ एष यज्ञानाम्। यदंश्वमेधः। यथा वा ऋष्भस्य विष्टपम्। एवमेतस्यं विष्टपम्। त्रयोदशमंरतिः रश्नायांमुपा दंधाति॥९॥

यथंर्षभस्यं विष्टपर्ं सङ्स्करोतिं। ताहगेव तत्। पूर्व आयुंषि विदर्थेषु कव्येत्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। तयां देवाः सुतमा बंभूवुरित्यांह। भूतिंमेवोपावंति। ऋतस्य सामन्थ्यरमारपन्तीत्यांह। सृत्यं वा ऋतम्। स्त्येनैवैनंमृतेनारंभते। अभिधा असीत्यांह॥१०॥

तस्मादश्वमेधयाजी सर्वाणि भूतान्यभि भंवति। भुवनम्सीत्यांह। भूमानंमेवोपैति। यन्ताऽसीत्यांह। यन्तारंमेवैनं करोति। धर्ताऽसीत्यांह। धर्तारंमेवैनं करोति। सौंऽग्निं वैश्वान्रमित्यांह। अग्नावेवैनं वैश्वान्रे जुंहोति। सप्रथसमित्यांह॥११॥

यः पितुरंनुजायाः पुत्रः। स पुरस्ताः त्रयति। यो मातुरंनुजायाः पुत्रः। स पृश्चान्नंयति। विष्वंश्चमेवास्मांत्पाप्मानं विवृंहतः। यो अर्वन्तं जिघारं सित् तम्भ्यंमीति वर्रण इति श्वानं चतुरक्षं प्रसौति। परो मर्तः पुरः श्वेति शुनश्चतुरक्षस्य प्रहंन्ति। श्वेव व पाप्मा भ्रातृंव्यः। पाप्मानंमेवास्य भ्रातृंव्यः हन्ति। सैभुकं मुसंलं भवति॥१३॥

कर्मकर्मेवास्में साधयति। पौड्श्रक्षेत्रयो हंन्ति। पुड्श्रक्वां वे देवाः शुचं न्यंदधः। शुचैवास्य शुचर्ं हन्ति। पाप्मा वा एतमींपस्तीत्यांहः। योंऽश्वमेधेन् यजंत इति। अश्वंस्याधस्पदमुपांस्यति। वृज्जी वा अश्वंः प्राजापृत्यः। वञ्जेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यमवंक्रामति। दक्षिणाऽपं प्रावयति॥१४॥ पाप्मानंमेवास्माच्छमंलमपं प्लावयति। ऐषीक उंदूहो भंवति। आयुर्वा इषीकाः। आयुरेवास्मिन्दधित। अमृतं वा इषीकाः। अमृतंमेवास्मिन्दधित। वेतस्शाखोपसम्बद्धा भवति। अपसुयोनिर्वा अश्वंः। अपसुजो वेतसः। स्वादेवैनं योनेर्निर्मिमीते। पुरस्तांत्प्रत्यश्चंमभ्युदूंहित। पुरस्तांदेवास्मिन्प्रतीच्यमृतं दधाति। अहं च त्वं चं वृत्रहित्रितिं ब्रह्मा यजमानस्य हस्तं गृह्णाति। ब्रह्मक्षत्रे एव सन्दंधाति। अभिक्रत्वेन्द्र भूरध्जमित्रत्यंध्वर्युर्यजमानं वाचयत्यभिजित्यै॥१५॥

भुवृति प्रावयिति मिमीते पश्चं च॥—————[४]

चत्वारं ऋत्विजः समृंक्षन्ति। आभ्य एवैनं चत्सृभ्यों दिग्भ्योऽभि समीरयन्ति। श्तेनं राजपुत्रैः सहाध्वर्युः। पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्टन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वेन् मेध्येनेष्ट्वा। अयश् राजां वृत्रं वध्यादिति। राज्यं वा अध्वर्युः। क्षृत्रश् राजपुत्रः। राज्येनैवास्मिन्क्षत्रं दंधाति। श्तेनांराजिभिरुग्रैः सह ब्रह्मा॥१६॥

दक्षिणत उद्द्विष्ठन्त्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्यंनेष्ट्वा। अय॰ राजांऽप्रतिधृष्योंऽस्त्वितं। बलं वे ब्रह्मा। बलंमराजोग्रः। बलंनेवास्मिन्बलं दधाति। श्तेनं सूतग्रामणिभिः सह होतां। पश्चात्प्राङ्गिष्ठन्त्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्यंनेष्ट्वा। अय॰ राजा-ऽस्यै विशः॥१७॥

बहुग्वे बंहुश्वायें बहुजाविकायें। बहुब्रीहियवायें बहुमाष-तिलायें। बहुहिरण्यायें बहुहस्तिकाये। बहुदासपूरुषायें रियमत्ये पृष्टिमत्ये। बहुरायस्पोषाये राजास्त्विति। भूमा वे होतां। भूमा सूतग्रामण्यः। भूम्नेवास्मिन्भूमानं दधाति। श्तेनं क्षत्तसङ्ग्रहीतृभिः सहोद्गाता। उत्तर्तो दंक्षिणा तिष्ठन्त्रोक्षंति॥१८॥

अनेनाश्वेन मेध्येनेष्ठा। अय राजा सर्वमायुरेत्विति। आयुर्वा उद्गाता। आयुंः क्षत्तसङ्ग्रहीतारंः। आयुंषैवास्मिन्नायुंदि-धाति। श्तरशंतं भवन्ति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। चृतुः श्ता भवन्ति। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति॥१९॥

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यन्निक्तमनांलब्धमुथ्मृजन्ति। यथ्स्तोक्यां अन्वाहं। सर्वहृतंमेवेनं करोत्यस्कंन्दाय। अस्कंन्न्र्ष्ट्र हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दंति। सहस्रमन्वांह। सहस्रंसिम्मतः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै॥२०॥

यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवं रुन्धीत। अपेरिमिता अन्वांह। अपेरिमितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्ये। स्तोक्यां जुहोति। या एव वर्ष्या आपंः। ता अवे रुन्धे। अस्यां जुंहोति। इयं वा अग्निवैश्वानरः॥२१॥ अस्यामेवैनाः प्रतिष्ठापयति। उवाचं ह प्रजापंतिः। स्तोक्यांसु वा अहमंश्वमेधः सङ्स्थांपयामि। तेन ततः सङ्स्थितेन चरामीतिं। अग्नये स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवैनं जुहोति। सोमांय स्वाहेत्यांह। सोमांयैवैनं जुहोति। सवित्र एवैनं स्वाहेत्यांह। सवित्र एवैनं जुहोति॥२२॥

सरंस्वत्ये स्वाहेत्यांह। सरंस्वत्या पृवैनं जुहोति। पूष्णे स्वाहेत्यांह। पूष्ण पृवैनं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहेत्यांह। बृह्स्पतंय पृवैनं जुहोति। अपां मोदांय स्वाहेत्यांह। अन्ध पृवैनं जुहोति। वायवे स्वाहेत्यांह। वायवं पृवैनं जुहोति॥२३॥

मित्राय स्वाहेत्यांह। मित्रायैवैनं जुहोति। वर्रणाय स्वाहेत्यांह। वर्रणायैवैनं जुहोति। एताभ्यं एवैनं देवताभ्यो जुहोति। दशंदश सम्पादं जुहोति। दशाँक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजेवात्राद्यमवं रुन्धे। प्र वा एषौं- उस्माल्लोकाच्यंवते। यः परांचीराहुंतीर्जुहोतिं। पुनंः पुनरभ्यावर्तं जुहोति। अस्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। एता ह वाव सौंऽश्वमेधस्य सङ्स्थितिमुवाचास्कन्दाय। अस्केन्न ह तित्। यद्यज्ञस्य सङ्स्थितस्य स्कन्दंति॥२४॥ अस्किन्न ह तित्। यद्यज्ञस्य सङ्स्थितस्य स्कन्दंति॥२४॥ असिनित वेश्वानः संवित्र एवेनं जहाति व्यवं प्रवेनं जहाति व्यवन पर वं॥——[६]

प्रजापंतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामीति पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्टन्प्रोक्षंति। प्रजापंतिर्वे देवानांमन्नादो वीर्यांवान्। अन्नाद्यंमेवास्मिन्वीर्यं दधाति। तस्मादर्श्वः पशूनामंत्रादो वीर्यावत्तमः। इन्द्राग्निभ्यां त्वेतिं दक्षिणतः। इन्द्राग्नी वै देवानामोजिष्ठौ बिलिष्ठौ। ओर्ज प्रवास्मिन्बलं दधाति। तस्मादर्श्वः पशूनामोजिष्ठो बिलिष्ठः। वायवे त्वेतिं पृश्चात्। वायवे देवानांमाशुः सारसारितंमः॥२५॥

ज्वमेवास्मिन्दधाति। तस्मादर्श्वः पशूनामाशः सारसारितंमः। विश्वेभ्यस्त्वा देवभ्य इत्यंत्तर्तः। विश्वे व देवा देवानां यशस्वितंमाः। यशं एवास्मिन्दधाति। तस्मादर्श्वः पशूनां यशस्वितंमः। देवभ्यस्त्वेत्यधस्तांत्। देवा व देवानामपंचिततमाः। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। तस्मादर्श्वः पशूनामपंचिततमः॥२६॥

सर्वेभ्यस्त्वा देवभ्य इत्युपिरष्टात्। सर्वे वै देवास्त्विषमन्तो हर्स्वनंः। त्विषिमेवास्मिन् हरो दधाति। तस्मादश्वः पशूनां त्विषिमान् हर्स्वितंमः। दिवे त्वाऽन्तिरक्षाय त्वा पृथिव्ये त्वेत्यांह। पृभ्य पृवैनं लोकभ्यः प्रोक्षंति। स्ते त्वाऽसंते त्वाऽज्ञ्यस्त्वौषधीभ्यस्त्वा विश्वम्यस्त्वा भूतेभ्य इत्यांह। तस्मादश्वमेधयाजिन् सर्वाणि भूतान्युपंजीवन्ति। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। यत्प्रांजापृत्योऽश्वंः। अथ कस्मादेनमन्याभ्यो देवताभ्योऽपि प्रोक्ष्तिति। अश्वे वै सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः। तं यद्विश्वभ्यस्त्वा भूतेभ्य इतिं

प्रोक्षतिं। देवतां एवास्मिन्नन्वा यांतयति। तस्मादश्वे सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः॥२७॥

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यत्प्रोक्षित्मनांलब्धमृथ्मृजन्ति। यदेश्वचिर्तानिं जुहोतिं। सर्वहृतंमेवेनं करोत्यस्केन्दाय। अस्केन्न् हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दंति। ईङ्काराय स्वाहेङ्कृताय स्वाहेत्यांह। एतानि वा अंश्वचिर्तानिं। चरितैरेवैन् समर्धयति॥२८॥

तदांहुः। अनांहुतयो वा अश्वचिर्तानि। नैता होत्व्यां इति। अथो खल्वांहुः। होत्व्यां एव। अत्र वावैवं विद्वानश्वमेधः सङ्स्थांपयति। यदश्वचिर्तानिं जुहोतिं। तस्माँद्धोत्व्यां इति। बृहिर्धा वा एनमेतदायतनाद्दधाति। भ्रातृंव्यमस्मै जनयति॥२९॥

यस्यांनायत्नें उन्यत्राग्नेराहुंतीर्जुहोतिं। सावित्रिया इष्ट्याः पुरस्तां थिस्वष्टकृतंः। आहुवनीयें उश्वचिर्तानिं जुहोति। आयतंन एवास्याऽऽहुंतीर्जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। तदांहुः। यज्ञमुखेयंज्ञमुखे होत्व्याः। यज्ञस्य क्रृष्ट्यें। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्या इतिं। अथो खल्वांहुः॥३०॥

यद्यंज्ञमुखेयंज्ञमुखे जुहुयात्। पृशुभिर्यजंमानं व्यर्धयेत्। अवं सुवर्गाल्लोकात्पंद्येत। पापीयान्थ्स्यादितिं। सुकृदेव होत्व्याः। न यजंमानं पृशुभिर्व्यर्धयति। अभि सुवर्गं लोकं जंयति। न पापीयान्भवति। अष्टाचंत्वारि श्वातमश्वरूपाणि जुहोति। अष्टाचंत्वारि श्वादक्षरा जगंती। जाग्तोऽश्वंः प्राजाप्त्यः समृंद्धे। एक्मितिरक्तं जुहोति। तस्मादेकंः प्रजास्वर्धुकः॥३१॥
अर्थवि जन्यवि खल्बाहर्जन्यो अणि वा [८]

विभूर्मात्रा प्रभूः पित्रेत्याह। इयं वै माता। असौ पिता। आभ्यामेवेनं परिददाति। अश्वीऽिस हयोऽसीत्याह। शास्त्येवेनमेतत्। तस्माँच्छिष्टाः प्रजा जांयन्ते। अत्यो-ऽसीत्याह। तस्मादश्वः सर्वान्यशूनत्येति। तस्मादश्वः सर्वेषां पशूनाः श्रेष्ठ्यं गच्छति॥३२॥

प्र यशः श्रेष्ठ्यंमाप्नोति। य एवं वेदं। नरोऽस्यर्वाऽसि सप्तिरिस वाज्यंसीत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। ययुर्नामासीत्यांह। एतद्वा अश्वंस्य प्रियं नांमधेयम्। प्रियेणैवैनं नामधेयेनाभि वंदति। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्ध्वयेते। मित्रमेव भंवतः॥३३॥

आदित्यानां पत्वाऽन्विहीत्यांह। आदित्यानेवेनं गमयित। अग्नये स्वाहा स्वाहेंन्द्राग्निभ्यामितिं पूर्वहोमां जुंहोति। पूर्व पृव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित। भूरंसि भुवे त्वा भव्याय त्वा भविष्यते त्वेत्युथ्मृंजित सर्वत्वायं। देवां आशापाला एतं देवेभ्योऽश्वं मेधांय प्रोक्षितं गोपायतेत्यांह। शृतं वे तत्प्यां राजपुत्रा देवा आंशापालाः। तेभ्यं पृवेनं परिं ददाति। ईश्वरो

वा अश्वः प्रमुंक्तः परां परावतं गन्तोः। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमंतिः स्वाहेतिं चतृषु पृथ्सु जुहोति॥३४॥

पुता वा अश्वंस्य बन्धंनम्। ताभिरेवैनं बध्नाति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनमा गंच्छति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनं न जहाति। राष्ट्रं वा अश्वमेधः। राष्ट्रे खलु वा एते व्यायंच्छन्ते। येऽश्वं मेध्य रक्षंन्ति। तेषां य उद्दं गच्छंन्ति। राष्ट्रादेव ते राष्ट्रं गंच्छन्ति। अथु य उद्दं न गच्छंन्ति॥३५॥

राष्ट्रादेव ते व्यविच्छिद्यन्ते। परा वा एष सिंच्यते। योऽबुलौऽश्वमेधेन यजेते। यदमित्रा अश्वं विन्देरन्। हुन्येतौस्य यज्ञः। चृतुः शृता रंक्षन्ति। यज्ञस्याघाताय। अथान्यमानीय प्रोक्षेयुः। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥३६॥ गुच्छति भुकुतः पृथ्य जीति न गच्छित् नवं च॥——[९]

प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं यजेयेति। स तपोऽतप्यत। तस्यं तेपानस्यं। सप्तात्मनों देवता उदंक्रामन्। सा दीक्षाऽभंवत्। स एतानिं वैश्वदेवान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स दीक्षामवांरुन्थ। यद्वैश्वदेवानिं जुहोतिं। दीक्षामेव तैर्यजंमानोऽवं रुन्थे॥३७॥

स्प्त जुंहोति। स्प्त हि ता देवतां उदक्रांमन्। अन्वहं जुंहोति। अन्वहम्ब दीक्षामवं रुन्धे। त्रीणिं वैश्वदेवानिं जुहोति। चुत्वायौद्भहुणानिं। स्प्त सम्पंद्यन्ते। स्प्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणैरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्धे॥३८॥

एकंवि श्वातिं वैश्वदेवानिं जुहोति। एकंवि श्वातिर्वे देवलोकाः। द्वादंश् मासाः पञ्चर्तवः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकवि श्वाः। एष सुंवर्गो लोकः। तद्दैव्यं क्षत्रम्। सा श्रीः। तद्वप्नस्यं विष्टपम्। तथ्स्वाराज्यमुच्यते॥३९॥

त्रिष्शतंमौद्गहुणानिं जुहोति। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। त्रेधा विभज्यं देवतां जुहोति। त्र्यांवृतो वै देवाः। त्र्यांवृत इमे लोकाः। एषां लोकानामास्ये। एषां लोकानां क्रुस्ये। अप वा एतस्मौत्प्राणाः न्नोमन्ति॥४०॥

यो दीक्षामंतिरेचयंति। सप्ताहं प्रचंरन्ति। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्थे। पूर्णाहुतिमुंत्तमां जुंहोति। सर्वं वै पूर्णाहुतिः। सर्वमेवाप्नोति। अथो इयं वै पूर्णाहुतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति॥४१॥

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। त॰ सृष्टं न किश्चनोदंयच्छत्। तं वैश्वदेवान्येवोदंयच्छन्। यद्वैश्वदेवानिं जुहोतिं। यज्ञस्योद्यंत्ये। स्वाहाऽऽधिमाधीताय स्वाहाँ। स्वाहा-ऽधीतं मनंसे स्वाहाँ। स्वाहा मनंः प्रजापंतये स्वाहाँ। काय स्वाहा कस्मै स्वाहां कत्मस्मै स्वाहेतिं प्राजापृत्ये मुख्ये

## भवतः। प्रजापंतिमुखाभिरेवैनं देवतांभिरुद्यंच्छते॥४२॥

अदित्ये स्वाहाऽदित्ये मृद्धैं स्वाहाऽदित्ये सुमृडीकाये स्वाहित्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवेनं प्रतिष्ठायोद्यंच्छते। सरंस्वत्ये स्वाहा सरंस्वत्ये वृहत्यैं स्वाहा सरंस्वत्ये पावकाये स्वाहेत्यांह। वाग्वे सरंस्वती। वाचैवेनमुद्यंच्छते। पूष्णे स्वाहां पूष्णे प्रप्थ्यांय स्वाहां पूष्णे न्रस्थिषाय स्वाहेत्यांह। पृश्ववो वे पूषा। पृश्विरेवेनमुद्यंच्छते। त्वष्टे स्वाहा त्वष्टे तुरीपांय स्वाहा त्वष्टे पुरुरूपांय स्वाहेत्यांह। त्वष्टा वे पंशूनां मिथुनाना रूपकृत्। रूपमेव पृश्वं द्याति। अथीं रूपरेवेनमुद्यंच्छते। विष्णंवे स्वाहा विष्णंवे निखुर्यपाय स्वाहा विष्णंवे निभूयपाय स्वाहेत्यांह। यज्ञो वे विष्णं। यज्ञायेवेनमुद्यंच्छते। पूर्णाहुतिमंत्तमां जुंहोति। प्रत्युत्तं क्रये सयत्वायं॥४३॥

युच्छुते पुरुरूपाय स्वाहेत्यांहाष्टो चं॥———[११]

सावित्रमृष्टाकंपालं प्रातिर्निवंपति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रं प्रांतः सवनम्। प्रातः सवनादेवेनं गायित्रयाश्छन्दसो-ऽिं निर्मिमीते। अथौ प्रातः सवनमेव तेनौऽऽप्रोति। गायत्रीं छन्दंः। सवित्रे प्रसवित्र एकादशकपालं मध्यन्दिने। एकादशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रेष्टुंभं माध्यं दिन् सवनम्। माध्यं दिनादेवेन् सवनात्रिष्टुभृश्छन्दसोऽिं निर्मिमीते॥४४॥ अथो माध्यं दिनमेव सर्वनं तेनाँऽऽप्नोति। त्रिष्ठुमं छन्दं। स्वित्र आंस्वित्रे द्वादंशकपालमपराह्ने। द्वादंशाक्षरा जगंती। जागंतं तृतीयसवनम्। तृतीयसवनमेव जगंत्याश्छन्दसोऽधि निर्मिमीते। अथो तृतीयसवनमेव तेनाँऽऽप्नोति। जगंतीं छन्दं। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परां परावतं गन्तौं। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमितः स्वाहेत चतंस्र आहुंतीर्जुहोति॥४५॥

चर्तस्रो दिशः। दिग्भिरेवैनं परिगृह्णाति। आश्वंत्थो वृजो भेवति। प्रजापंतिर्देवेभ्यो निलायत। अश्वो रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवथ्सरमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थो वृजो भवंति। स्व पृवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥४६॥ वृष्ट्मस्बन्त्सोऽपि निर्मित जहति वर्ष वा——[१२]

आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जांयतामित्यांह। ब्राह्मण एव ब्रह्मवर्च्सं दंधाति। तस्मौत्पुरा ब्रौह्मणो ब्रह्मवर्च्स्यंजायत। आऽस्मित्राष्ट्रे रांजन्यं इष्व्यः शूरों महार्थो जांयतामित्यांह। राजन्यं एव शौर्यं मंहिमानं दधाति। तस्मौत्पुरा रांजन्यं इष्व्यः शूरों महार्थोऽजायत। दोग्ध्रीं धेनुरित्यांह। धेन्वामेव पयो दधाति। तस्मौत्पुरा दोग्ध्रीं धेनुरंजायत। वोढांऽनङ्वानित्यांह॥४७॥

अनुडुह्येव वीर्यं दधाति। तस्मात्पुरा वोढांऽनुङ्वानंजायत। आशुः सिप्तिरित्यांह। अश्वं एव जवं दंधाति। तस्मात्पुरा- ऽऽशुरश्वोऽजायत। पुरेन्धिर्योषेत्यांह। योषित्येव रूपं देधाति। तस्माथ्स्री युवतिः प्रिया भावुंका। जिष्णू रेथेष्ठा इत्यांह। आ ह वै तत्रं जिष्णू रेथेष्ठा जांयते॥४८॥

यत्रैतनं यज्ञेन यजंन्ते। स्भेयो युवेत्यांह। यो वै पूर्ववयसी। स स्भेयो युवा। तस्माद्युवा पुमान्प्रियो भावंकः। आऽस्य यजंमानस्य वीरो जांयतामित्यांह। आ ह वै तत्र यजंमानस्य वीरो जांयतामित्यांह। आ ह वै तत्र यजंमानस्य वीरो जांयते। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। निकामेनिकामे नः पूर्जन्यो वर्षित्वत्यांह। निकामेनिकामे ह वै तत्रं पूर्जन्यो वर्षित। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। फुलिन्यों न ओषंधयः पच्यन्तामित्यांह। फुलिन्यों ह वै तत्रौषंधयः पच्यन्ते। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। योगक्षेमो नंः कल्पतामित्यांह। कल्पंते ह वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते॥४९॥
अनुक्षानित्यांह आयो वर्षा स्म वं॥—————[१३]

प्रजापंतिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिशत्। स आत्मन्नेश्वमेधमंधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यदेश्वमेधः। अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं एतानंत्रहोमान्प्रायंच्छत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स देवानंप्रीणात्। यदंत्रहोमां जुहोतिं॥५०॥

देवानेव तैर्यजंमानः प्रीणाति। आज्येंन जुहोति। अग्नेर्वा एतद्रूपम्। यदाज्यम्। यदाज्येंन जुहोतिं। अग्निमेव तत्प्रीणाति। मधुंना जुहोति। महत्यै वा एतद्देवतांयै रूपम्। यन्मधुं। यन्मधुंना जुहोति॥५१॥ मृह्तीमेव तद्देवतां प्रीणाति। तृण्डुलैर्जुहोति। वसूनां वा एतद्रूपम्। यत्तंण्डुलाः। यत्तंण्डुलैर्जुहोतिं। वसूनेव तत्प्रींणाति। पृथुंकैर्जुहोति। रुद्राणां वा एतद्रूपम्। यत्पृथुंकाः। यत्पृथुंकैर्जुहोतिं॥५२॥

रुद्रानेव तत्प्रींणाति। लाजैर्जुहोति। आदित्यानां वा एतद्रूपम्। यल्लाजाः। यल्लाजैर्जुहोतिं। आदित्यानेव तत्प्रींणाति। क्रम्बैंर्जुहोति। विश्वेषां वा एतद्देवानार्थं रूपम्। यत्क्रम्बाः। यत्क्रम्बैंर्जुहोति॥५३॥

विश्वांनेव तद्देवान्प्रींणाति। धानाभिंर्जुहोति। नक्षंत्राणां वा एतद्रूपम्। यद्धानाः। यद्धानाभिंर्जुहोतिं। नक्षंत्राण्येव तत्प्रींणाति। सक्तंभिर्जुहोति। प्रजापंतेर्वा एतद्रूपम्। यथ्सक्तंवः। यथ्सक्तंभिर्जुहोतिं॥५४॥

प्रजांपितमेव तत्प्रींणाति। मृसूस्यैंर्जुहोति। सर्वांसां वा एतद्देवतांना रूष्ट्रियम्। यन्मसूस्यांनि। यन्मसूस्यैंर्जुहोति। सर्वा एव तद्देवताः प्रीणाति। प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोति। प्रियङ्गां ह व नामैते। एतैर्वे देवा अश्वस्याङ्गांनि समंदधः। यत्प्रियङ्गृतण्डुलैर्जुहोति। अश्वंस्यैवाङ्गांनि सन्दंधाति। दशान्नांनि जुहोति। दशांक्षरा वि्राट्। विराद्दृध्स्रस्यान्नाद्यस्यावंरुद्धै॥५५॥

जुहोति मर्पुना जुहोति पृथुंकैर्जुहोतिं क्रम्बैंजुंहोति सक्तिभिर्जुहोतिं प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोतिं च्त्वारिं च (अन्नहोमानाऽऽज्येनाग्नेर्मध्नेना तण्डुलैः पृथुंकैर्ल्जुहोतिं क्रम्बैंजुंनािमः सक्तिभर्मस्स्यैः प्रियङ्गृतण्डुलैर्ज्ञान्नांनि द्वादंश। )॥—————[१४]

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। तर सृष्टर रक्षाइंस्यजिघारसन्। स पृतान्प्रजापंतिर्नक्तर होमानंपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स यज्ञाद्रक्षाङ्स्यपंहन्। यन्नंकर होमां जुहोति। यज्ञादेव तैर्यजमानो रक्षाङ्स्यपं हन्ति। आज्येन जुहोति। वज्रो वा आज्यम्। वज्रेणेव यज्ञाद्रक्षाङ्स्यपं हन्ति॥५६॥

आज्यंस्य प्रतिपदं करोति। प्राणो वा आज्यम्। मुख्त एवास्यं प्राणं दंधाति। अन्नहोमाञ्जंहोति। शरीरवदेवावं रुन्थे। व्यत्यासं जुहोति। उभयस्यावंरुद्धै। नक्तं जुहोति। रक्षंसामपहत्यै। आज्यंनान्ततो जुंहोति॥५७॥

प्राणो वा आज्यम्। उभयतं प्रवास्यं प्राणं दंधाति। पुरस्तां चोपरिष्टा च। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। द्वाभ्याः स्वाहेत्यांह। अमुष्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। उभयोरेव लोकयोः प्रतिं तिष्ठति। अस्मिःश्चामुष्मिःश्चा श्वाय स्वाहेत्यांह। श्वाययुर्वे पुरुषः श्वावीर्यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्धे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्धे। सर्वस्मै स्वाहेत्यांह। अपरिमितमेवावं रुन्धे॥५८॥

पुव युज्ञाद्रक्षाुङ्स्यपंहन्त्यन्ताते जुंहोति शताय स्वाहेत्यांह सप्त चं॥———[१५]

प्रजापंतिं वा एष ईंप्सतीत्यांहुः। योंऽश्वमे्धेन यजंत् इतिं। अथों आहुः। सर्वाणि भूतानीतिं। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। प्रजापंतिर्वा एकंः। तमेवाऽऽप्रोति। एकंस्मै स्वाहा द्वाभ्याः स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। अभिपूर्वमेव सुंवर्गं लोकमेति। एकोत्तरं जुंहोति॥५९॥

पुक्वदेव सुंवर्गं लोकमेति। सन्तंतं जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। श्वाय स्वाहेत्यांह। श्वायुर्वे पुरुषः श्वावीर्यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्थे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्थे। अयुतांय स्वाहां नियुतांय स्वाहां प्रयुतांय स्वाहेत्यांह॥६०॥

त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकानवं रुन्थे। अर्बुदाय स्वाहेत्याह। वाग्वा अर्बुदम्। वाचमेवावं रुन्थे। न्यंर्बुदाय स्वाहेत्याह। यो वै वाचो भूमा। तन्न्यंर्बुदम्। वाच एव भूमानमवं रुन्थे। समुद्राय स्वाहेत्याह॥६१॥

समुद्रमेवाऽऽप्नोति। मध्याय स्वाहेत्यांह। मध्यंमेवाऽऽप्नोति। अन्ताय स्वाहेत्यांह। अन्तमेवाऽऽप्नोति। प्रार्धाय स्वाहेत्यांह। प्रार्धमेवाऽऽप्नोति। उषसे स्वाहा व्यंष्ट्रये स्वाहेत्यांह। प्रार्थमेवाऽऽप्नोति। उषसे स्वाहा व्यंष्ट्रये स्वाहेत्यांह। रात्रिर्वा उषाः। अहर्व्यंष्टिः। अहोरात्रे एवावं रुन्थे। अथो अहोरात्रयोरेव प्रति तिष्ठति। ता यदुभयीर्दिवां वा नक्तं वा जुहुयात्। अहोरात्रे मोहयेत्। उषसे स्वाहा व्यंष्ट्रये स्वाहोदेष्यते स्वाहोद्यते स्वाहेत्यनंदिते जुहोति। उदिताय स्वाहां सुवर्गाय स्वाहां लोकाय स्वाहेत्युदिते जुहोति। अहोरात्रयोरव्यंतिमोहाय॥६२॥

विभूमात्रा प्रभूः पित्रेत्यंश्वनामानि जुहोति। उभयोरेवैनं लोकयौर्नामधेयं गमयति। आयंनाय स्वाहा प्रायंणाय स्वाहेत्यंद्वावाञ्चंहोति। सर्वमेवैन्मस्कंन्नः सुवर्गं लोकं गंमयति। अग्रये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वहोमाञ्चंहोति। पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमिते क्रामित। पृथिव्ये स्वाहा- उन्तिरक्षाय स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अग्रये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वदीक्षा जुंहोति। पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमिते क्रामित। पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमिते क्रामित। द्वी एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमिते क्रामित॥६३॥

पृथिव्यै स्वाहाऽन्तिरिक्षाय स्वाहेत्येकिविश्शिनीं दीक्षां जुंहोति। एकिविश्शितिर्वे देवलोकाः। द्वादेश मासाः पश्चर्तवः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकिविश्शः। एष सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्रो। भवो देवानां कर्मणेत्यृंतुदीक्षा जुंहोति। ऋतूनेवास्मे कल्पयति। अग्नये स्वाहां वायवे स्वाहेतिं जुहोत्यनंन्तिरत्यै॥६४॥

अर्वाङ्यज्ञः सङ्कांमृत्वित्याप्तींर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याप्त्रैं। भूतं भव्यं भिवष्यदिति पर्याप्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य पर्याप्त्रे। आ में गृहा भवन्त्वत्याभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याभूत्यै। अग्निना तपोऽन्वंभवदित्यंनुभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंभूत्यै। स्वाहाऽऽिधमाधीताय स्वाहेति समस्तानि वैश्वदेवानि जुहोति। समस्तमेव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित॥६५॥

दृद्धः स्वाह्य हर्नूभ्या्ड् स्वाहेत्यंङ्गहोमाञ्जंहोति। अङ्गंअङ्गे वै पुरुषस्य पाप्मोपंश्लिष्टः। अङ्गांदङ्गादेवैनं पाप्मनस्तेनं मुञ्जति। अञ्चेताय स्वाहां कृष्णाय स्वाहां श्वेताय स्वाहेत्यंश्वरूपाणि जुहोति। रूपेरेवैन्ड् समर्धयित। ओषंधीभ्यः स्वाह्य मूलेभ्यः स्वाहेत्यांषिधहोमाञ्जंहोति। द्वय्यो वा ओषंधयः। पुष्पेभ्योऽन्याः फलं गृह्णन्ति। मूलेभ्योऽन्याः। ता एवोभयीरवं रुन्धे॥६६॥

वनस्पतिभ्यः स्वाहेति वनस्पतिहोमाञ्जहोति। आर्ण्यस्या-न्नाद्यस्यावंरुद्धै। मेषस्त्वां पचतैरंवृत्वित्यपाँच्यानि जुहोति। प्राणा वै देवा अपाँच्याः। प्राणानेवावं रुन्धे। कूप्याँभ्यः स्वाहाऽद्धः स्वाहेत्यपा होमाँ ञ्जहोति। अपसु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अद्भो वा अन्नं जायते। यदेवाद्योऽन्नं जायते। तदवं रुन्धे॥६७॥

पूर्विदीक्षा जुहोति पूर्व एव द्विपन्तुं आतृंब्युमितिं कामृत्यनंन्तरित्यै कामित रुन्धे जायंतु एकं च॥——[१७]

अम्भार्शसे जुहोति। अयं वै लोकोऽम्भार्शसे। तस्य वस्वोऽधिपतयः। अग्निज्योतिः। यदम्भार्शसे जुहोति। इममेव लोकमवं रुन्थे। वसूनार्श्व सायुंज्यं गच्छति। अग्निं ज्योतिरवं रुन्थे। नभार्शसे जुहोति। अन्तरिक्षं वै नभार्शसे॥६८॥

तस्यं रुद्रा अधिपतयः। वायुर्ज्योतिः। यन्नभार्श्स

जुहोति। अन्तरिक्षमेवावं रुन्धे। रुद्राणा् सायुंज्यं गच्छति। वायुं ज्योतिरवं रुन्धे। महार्श्स जुहोति। असौ वै लोको महार्श्सा। तस्यांदित्या अधिपतयः। सूर्यो ज्योतिः॥६९॥

यन्महा १सि जुहोति। अमुमेव लोकमवं रुन्धे। आदित्याना १ सायुं ज्यं गच्छति। सूर्यं ज्योतिरवं रुन्धे। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायेति यूव्यानि जुहोति। अन्नाद्यस्यावरुद्धे। मृयोभूर्वातो अभि वांतूस्ना इति गृव्यानि जुहोति। पुशूनामवं रुद्धे। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहेति सन्ततिहोमाञ्जेहोति। सुवुर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्ये॥७०॥

सिताय स्वाहाऽसिताय स्वाहेति प्रमुक्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रमुक्ती। पृथिव्ये स्वाहाऽन्तरिक्षाय स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। दत्वते स्वाहाऽदन्तकांय स्वाहेति शरीरहोमाञ्जंहोति। पितृलोकमेव तैर्यर्जमानोऽवं रुन्थे। कस्त्वां युनक्ति स त्वां युनक्तिति परि्धीन् युनक्ति। इमे वे लोकाः परि्धयः। इमानेवास्में लोकान् युनक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्टिं॥७१॥

यः प्राणितो य आत्मदा इति महिमानौ जुहोति। सुवर्गो वै लोको महंः। सुवर्गमेव ताभ्यां लोकं यजमानोऽवं रुन्थे। आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जांयतामिति समस्तानि ब्रह्मवर्चसानि जुहोति। ब्रह्मवर्चसमेव तैर्यजमानोऽवं रुन्थे। जिन्न बीजमिति जुहोत्यनंन्तरित्यै। अग्नये समनमत्पृथिव्यै समनम्दितिं सन्नतिहोमाञ्जंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्नत्यै। भूताय स्वाहां भविष्यते स्वाहेतिं भूताभृव्यौ होमौ जुहोति। अयं वै लोको भूतम्॥७२॥

असौ भंविष्यत्। अनयोरेव लोकयोः प्रति तिष्ठति। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावरुद्धै। यदक्रेन्दः प्रथमं जायमान् इत्यंश्वस्तोमीयं जुहोति। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्य जित्यै। सर्वमेव तेनौऽऽप्रोति। सर्वं जयति। यौऽश्वमेधेन् यजंते॥७३॥

य उं चैनमेवं वेदं। युज्ञ रक्षा ईस्यजिघा रसन्। स एतान्प्रजापंतिर्नक्त रहोमानंप श्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स युज्ञाद्रक्षा इस्यपंहन्। यन्नक रहोमा अहोति। युज्ञादेव तैर्यजमानो रक्षा इस्यपंहन्ति। उषसे स्वाहा व्युष्टो स्वाहेत्यंन्त्रतो जुंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्री॥७४॥ व नमरिष् पूर्व ज्योवः प्रसं प्रसं प्रसं वर्षे प्रमं प

पुक्यूपो वैकाद्शिनीं वा। अन्येषां यज्ञानां यूपो भवन्ति। पुक्विश्शिन्यंश्वमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। बैल्वो वां खादिरो वां पालाशो वां। अन्येषां यज्ञकतूनां यूपो भवन्ति। राज्ञंदाल एकंविश्शत्यरिक्षिमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्य समेध्ये। नान्येषां पशूनां तेजन्या अवद्यन्ति। अवंद्यन्त्यश्वंस्य॥७५॥

पाप्मा वै तेंजुनी। पाप्मनोऽपंहत्यै। प्रुक्षुशाखायांमुन्येषां

पशूनामंवद्यन्ति। वेत्सशाखायामश्वस्य। अपसुयोनिर्वा अश्वः। अपसुजो वेत्सः। स्व एवास्य योनाववं द्यति। यूपेषु ग्राम्यान्पशून्नियुञ्जन्ति। आरोकेष्वारण्यान्धारयन्ति। पशूनां व्यावृत्त्यै। आ ग्राम्यान्पशूलँभेन्ते। प्रार्ण्यान्ध्सृंजन्ति। पाप्मनोऽपंहत्यै॥७६॥

अर्थस्य व्यावृंत्ये त्रीणि च॥——[१९]

राञ्जंदालमग्निष्ठं मिनोति। भ्रूणहृत्याया अपंहत्यै। पौतुंद्रवाव्भितों भवतः। पुण्यंस्य गुन्धस्यावंरुद्धौ। भ्रूणहृत्या-मेवास्मांदपहत्यं। पुण्यंन गुन्धेनोंभ्यतः परिं गृह्णाति। षड्वैल्वा भंवन्ति। ब्रह्मवर्चसस्यावंरुद्धौ। षद्धांदिराः। तेजसोऽवंरुद्धौ॥७७॥

षद्वांलाशाः। सोम्पीयस्यावंरुद्धै। एकंविश्शितः सम्पंद्यन्ते। एकंविश्शितिर्वे देवलोकाः। द्वादंश् मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकंविश्शः। एष सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्ये। शृतं पृश्वो भवन्ति॥७८॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। सर्वं वा अश्वमेध्याप्नोति। अपंरिमिता भवन्ति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धे। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मांध्यत्यात्। दक्षिणतोंऽन्येषां पशूनामंवद्यन्तिं। उत्तर्तोऽश्वस्येतिं। वारुणो वा अश्वः॥७९॥

पुषा वै वर्रुणस्य दिक्। स्वायांमेवास्यं दिश्यवंद्यति।

यदितंरेषां पशूनामंवद्यतिं। शृतदेवत्यं तेनावं रुन्धे। चितेंंऽग्नाविधं वैत्से कटेऽश्वं चिनोति। अपसुयोंनिर्वा अर्थः। अपसुजो वेत्सः। स्व एवेनं योनौ प्रतिष्ठापयति। पुरस्तांत्प्रत्यश्चं तूप्रं चिनोति। पृश्चात्प्राचीनं गोमृगम्॥८०॥

प्राणापानावेवास्मिन्थ्सम्यश्ची दधाति। अश्वं तूपरं गोमृगिमिति सर्वहृतं एताञ्चहोति। एषां लोकानामिभिजित्ये। आत्मनाऽभि जुंहोति। सात्मानमेवेन् सतंनुं करोति। सात्मानमेवेन् सतंनुं करोति। सात्माऽमुष्मिं लोके भवित। य एवं वेदं। अथो वसोरेव धारां तेनावं रुन्धे। इलुवर्दाय स्वाहां बिलवर्दाय स्वाहेत्यांह। संवथ्सरो वा इंलुवर्दः। परिवथ्सरो बंलिवर्दः। संवथ्सरा-देव परिवथ्सरादायुरवं रुन्धे। आयुरेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वमेधयाजी जरसां विस्नसामुं लोकमेति॥८१॥ क्षान्त्यक्षे भाग्नतिमिन्त्वर्देश्वलारि वा विस्नसामुं लोकमेति॥८१॥

पुक्रिवृष्शौँ ऽग्निर्भविति। पुक्रिवृष्शः स्तोमंः। एकं-विश्वशित्र्यूपौः। यथा वा अश्वां वर्षमा वा वृषाणः सङ्स्फुरेरन्। पुवमेव तथ्स्तोमाः सङ्स्फुरन्ते। यदेकिवृष्शाः। ते यथ्मंमृच्छेरन्। हुन्येतौस्य युज्ञः। द्वाद्वश पुवाग्निः स्यादित्यांहुः। द्वाद्वशः स्तोमंः॥८२॥

एकांदश् यूपाः। यद्वांदशौंऽग्निर्भवंति। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। यद्दश् यूपा भवंन्ति। दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। य एंकाद्शः। स्तनं एवास्यै सः॥८३॥

दुह एवैनां तेनं। तदांहुः। यद्वांदशौंऽग्निः स्यौद्वादशः स्तोम् एकांदश् यूपौः। यथा स्थूरिणा यायात्। तादक्तत्। एकविश्श एवाग्निः स्यादित्यांहुः। एकविश्शः स्तोमंः। एकविश्शित्यूपौः। यथा प्रष्टिभियाति। तादगेव तत्॥८४॥

देवा वा अंश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यदंश्वमेधेऽश्वेन मेध्येनोदंश्चो बहिष्पवमानः सर्पन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञात्यै। न वै मंनुष्यः सुवर्गं लोकमञ्जसा वेद। अश्वो वै सुंवर्गं लोकमञ्जसा वेद। यदुंद्रातोद्रायेत्। यथा क्षेत्रज्ञोऽन्येनं पृथा प्रतिपादयेत्। तादक्तत्॥८६॥

उद्गातारंमपरुध्यं। अश्वंमुद्गीथायं वृणीते। यथां क्षेत्रज्ञो-ऽञ्जंसा नयंति। एवमेवैनमर्श्वः सुवर्गं लोकमञ्जंसा नयति। पुच्छंमन्वा रंभन्ते। सुवर्गस्यं लोकस्य समध्ये। हिं करोति। सामैवाकः। हिं करोति। उद्गीथ पुवास्य सः॥८७॥

वडंबा उपं रुन्धन्ति। मिथुनुत्वाय प्रजाँत्यै। अथो यथोपगातारं उपगायंन्ति। ताहगेव तत्। उदंगासीदश्वो मेध्य इत्याह। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापंतिरुद्गीथः। उद्गीथमेवावं रुन्धे। अथों ऋख्सामयोरेव प्रतिं तिष्ठति। हिरंण्येनोपाकंरोति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेव मुंखतो दंधाति। यजंमाने च प्रजासुं च। अथो हिरंण्यज्योतिरेव यजमानः सुवर्गं लोकमेति॥८८॥
तथ्स उपार्करोति च्लारि च॥

-[२२]

पुरुषो वै युज्ञः। युज्ञः प्रजापंतिः। यदश्वे पुशून्नियुअन्ति। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। अर्थं तूप्रं गोंमृगम्। तानंग्रिष्ठ आर्लभते। सेनामुखमेव तथ्सङ्श्यंति। तस्माँद्राजमुखं भीष्मं भावुंकम्। आुग्नेयं कृष्णग्रीवं पुरस्तां हुलाटें। पूर्वाग्निमेव तं कुंरुते॥८९॥

तस्मौत्पूर्वाग्निं पुरस्तौथ्स्थापयन्ति। पौष्णम्नवश्चम्। अत्रं वै पूषा। तस्मौत्पूर्वाग्नावांहार्यमा हंरन्ति। ऐन्द्रापौष्णमुपरिष्टात्। पुन्द्रो वै राजन्योऽन्नं पूषा। अन्नाद्यंनैवैनंमुभ्यतः परि गृह्णाति। तस्मौद्राज्नन्यौऽन्नादो भावुंकः। आग्नेयौ कृष्णग्रीवौ बाहुवोः।

बाहुवोरेव वीर्यं धत्ते॥९०॥

अष्टमः प्रश्नः

तस्मौद्राज्ञन्यों बाहुब्लीभावुंकः। त्वाष्ट्रौ लोमशस्वथौ स्वथ्योः। स्वथ्योरेव वीर्यं धत्ते। तस्मौद्राज्ञन्यं ऊरुब्लीभावुंकः। शितिपृष्ठौ बांर्हस्पृत्यौ पृष्ठे। ब्रह्मवर्चसमेवोपरिष्टाद्धत्ते। अथों क्वचें एवेते अभितः पर्यूहते। तस्मौद्राज्ञन्यः सन्नद्धो वीर्यं करोति। धान्ने पृषोद्दरम्धस्तौत्। प्रतिष्ठामेवेतां कुरुते। अथों इयं वे धाता। अस्यामेव प्रति तिष्ठति। सौर्यं बलक्षं पुच्छैं। उथ्सेधमेव तं कुरुते। तस्मौद्धथ्मेधं भये प्रजा अभिस् श्रीयन्ति॥९१॥

साङ्ग्रहण्या चतुष्टय्यो यो वै यः पितुश्चत्वारो यथां निक्तं प्रजापंतये त्वा यथा प्रोक्षितं विभूरीह प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं प्रजापंतिनं किञ्चन सावित्रमा ब्रह्मन्युजापंतिर्देवेभ्यः प्रजापंती रक्षार्रसि प्रजापंतिमीपसित विभूरश्वनामान्यम्भार्श्स्येकयूपो राञ्चंदालमेकविश्शो देवाः पुरुषस्रयोविश्शतिः॥२३॥

साङ्गहुण्या तस्मादश्वमेधयाजी यत्परिमिता यद्यंज्ञमुखे यो दीक्षां देवानेव त्रयं इमे सितायं प्राणापानावेवास्मिन्तस्माँद्राजन्यं एकंनवितः॥९१॥

साङ्ग्रहुण्या सङ्श्रंयन्ति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥ नवमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। सौंऽस्माथ्सृष्टोऽपाँकामत्। तमंष्टाद्शिभिरनु प्रायुंङ्कः। तमाँप्रोत्। तमास्वाऽष्टांद्शिभिरवां-रुन्थ। यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तें। यज्ञमेव तैरास्वा यजंमानो-ऽवं रुन्थे। सुंव्थ्सरस्य वा एषा प्रतिमा। यदंष्टाद्शिनंः। द्वादंशु मासाः पञ्चर्तवंः॥१॥

संवथ्सरौंऽष्टाद्शः। यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तैं। संवथ्सरमेव तैरास्वा यजमानोऽवं रुन्धे। अग्निष्ठेंऽन्यान्पशून्पाकरोतिं। इतरेषु यूपेष्वष्टाद्शिनोऽजांमित्वाय। नवंनवालभ्यन्ते सवीर्यत्वायं। यदार्ण्यैः सर्स्थापर्यंत्। व्यवंस्येतां पितापुत्रो। व्यध्वानः क्रामेयुः। विदूरं ग्रामंयोर्ग्रामान्तौ स्याताम्॥२॥

ऋक्षीकाः पुरुषव्याघाः परिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरंण्येष्वाजायरन्। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदांर्ण्याः। यदांर्ण्येः सर्इस्थापयेत्। क्षिप्रे यजमानमरंण्यं मृत १ हरियुः। अरंण्यायतना ह्यांर्ण्याः पृशव् इति। यत्पशून्नालभेत। अनंवरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। यत्पर्यग्निकृतानुथ्सृजेत्॥३॥

यज्ञवेशसं कुंर्यात्। यत्पशूनालभंते। तेनैव पृशूनवं रुन्थे। यत्पर्यग्निकृतानुथ्सृजत्ययंज्ञवेशसाय। अवंरुद्धा अस्य पृशवो भवंन्ति। न यंज्ञवेशसं भवति। न यजमानुमरण्यं मृतः हंरन्ति। ग्राम्यैः सङ् स्थापयित। एते वै पृशवः क्षेमो नामं। सं पितापुत्राववंस्यतः। समध्वांनः क्रामन्ति। सम्नन्तिकं ग्रामयोग्रीमान्तौ भवतः। नक्षीकाः पुरुषव्याघ्राः पंरिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्कंरा अरंण्येष्वाजांयन्ते॥४॥

ऋतवंः स्यातामुथ्युजेथ्स्यंतुर्स्नाणिं च॥**\_\_\_\_\_\_[ १** ]

प्रजापंतिरकामयतोभौ लोकाववं रुन्धीयेतिं। स एता-नुभयांन्पशूनंपश्यत्। ग्राम्या इश्चांरण्या इश्चं। तानालंभतः। तैर्वे स उभौ लोकाववां रुन्धः। ग्राम्येरेव पृशुभिरिमं लोकमवां रुन्धः। आरण्येरमुम्। यद् ग्राम्यान्पशूनालभते। इममेव तैर्लोकमवं रुन्धे। यदांरण्यान्॥५॥

अमुं तैः। अनंवरुद्धो वा एतस्यं संवथ्सर इत्यांहुः। य इतइंतश्चातुर्मास्यानि संवथ्सरं प्रयुङ्क इति। एतावान् वै संवथ्सरः। यचांतुर्मास्यानि। यदेते चांतुर्मास्याः पृशवं आलुभ्यन्तै। प्रत्यक्षंमेव तैः संवथ्सरं यजमानोऽवं रुन्धे। वि वा एष प्रजयां पृशुभिर्ऋध्यते। यः संवथ्सरं प्रयुङ्के। संवथ्सरः सुवर्गो लोकः॥६॥

सुवर्गं तु लोकं नापंराध्नोति। प्रजा वै प्शवं एकाद्शिनीं। यदेत ऐकादिशनाः पृशवं आल्भ्यन्तें। साक्षादेव प्रजां पृश्न् यजमानोऽवं रुन्धे। प्रजापंतिर्विराजमसृजत। सा सृष्टाऽश्वंमेधं प्राविंशत्। तान्द्शिभिरनु प्रायंङ्कः। तामाप्रोत्। तामाप्ता दिशिभिरवांरुन्धा यद्दिशनं आल्भ्यन्ते॥७॥

विराजंमेव तैराह्वा यजंमानोऽवं रुन्थे। एकांदश द्शत् आर्लभ्यन्ते। एकांदशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रेष्टुंभाः पृशवंः। पृश्नेवावं रुन्थे। वैश्वदेवो वा अश्वंः। नानादेवत्याः पृशवं भवन्ति। अश्वंस्य सर्वत्वायं। नानांरूपा भवन्ति। तस्मान्नानांरूपाः पृशवंः। बहुरूपा भवन्ति। तस्मांद्वहरूपाः पृशवः समृंद्धौ॥८॥ अर्र्ण्यां होते अल्भ्यने नानांरूपाः पृशवे हे चं॥———[२]

अस्मै वै लोकायं ग्राम्याः पृशव आर्लभ्यन्ते। अमुष्मां आर्ण्याः। यद्ग्राम्यान्पशूनालभते। इममेव तैर्लोकमवं रुन्थे। यदार्ण्यान्। अमुं तैः। उभयान्पशूनालंभते। गाम्या ॥ श्वांर्ण्या ॥ श्वं श्वं। उभयान्पशूनालंभते। र्लभते॥ ९॥

ग्राम्या इश्वांरण्या इश्वं। उभयंस्यान्ना द्यस्यावं रुद्धै। उभयांन्यशूनालंभते। ग्राम्या इश्वांरण्या इश्वं। उभयेंषां पशूनामवं रुद्धै। त्रयंस्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामार्स्यै। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मांध्सत्यात्॥१०॥

अस्मिँ होते। यथ्संमानीभ्यों देवताभ्योऽन्यें ऽन्ये पृशवं आलुभ्यन्तें। अस्मिन्नेव तह्नोके कामान्दधाति। तस्माद्सिँ होके बहुवः कामाः। त्रयाणां त्रयाणाः सह वपा जुहोति। त्र्यावृतो व देवाः। त्र्यावृत हमे लोकाः। पृषां लोकानामात्र्यें। पृषां लोकानां कृत्यौं। पर्याग्नेकृतानार्ण्यानुथ्सृंजन्त्यहि ईसायै॥११॥

अवंरुद्धा उभयाँन्पुशूनालंभते सुत्यादहि ५सायै॥.

युअन्तिं ब्रध्नमित्यांह। असौ वा आंदित्यो ब्रध्नः। आदित्यमेवास्मै युनक्ति। अरुषमित्यांह। अग्निर्वा अरुषः। अग्निमेवास्मै युनक्ति। चरंन्तमित्यांह। वायुर्वे चरन्ं। वायुमेवास्मै युनक्ति। परितस्थुष इत्यांह॥१२॥

ड्मे वै लोकाः परितस्थुषः। इमानेवास्मै लोकान् युनिक्ति। रोचेन्ते रोचना दिवीत्यांह। नक्षंत्राणि वै रोचना दिवि। नक्षंत्राण्येवास्मै रोचयित। युअन्त्यंस्य काम्येत्यांह। कामानेवास्मै युनिक्त। हरी विपंक्षसेत्यांह। इमे वै हरी विपंक्षसा। इमे पुवास्मै युनिक्त॥१३॥

शोणां धृष्णू नृवाह्सेत्यांह। अहोरात्रे वै नृवाहंसा। अहोरात्रे एवास्में युनिक्त। एता एवास्में देवतां युनिक्त। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ट्ये। केतुं कृण्वन्नंकेतव इति ध्वजं प्रतिमुश्चति। यशं एवैन् र राज्ञां गमयति। जीमूर्तस्येव भवति प्रतीक्मित्यांह। यथायजुरेवैतत्। ये ते पन्थांनः सवितः पूर्व्यास् इत्यंध्वर्युर्यजमानं वाचयत्यभिजिंत्ये॥१४॥

परा वा एतस्यं युज्ञ एंति। यस्यं पृशुरुपार्कृतोऽन्यत्र् वेद्या एतिं। एतङ्स्तांतरेतेनं पृथा पुनुरश्वमावंतियासि न् इत्यांह। वायुर्वे स्तोतां। वायुमेवास्यं प्रस्तांद्वधात्यावृत्त्ये। यथा वे ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यदंस्योपाकृतस्य लोमांनि शीयंन्ते। यद्वालेषु काचानावयंन्ति। लोमांन्येवास्य तथ्सम्भंरन्ति॥१५॥ भूर्भुवः सुवृरितिं प्राजापृत्याभिरावयन्ति। प्राजापृत्यो वा अश्वः। स्वयैवैनं देवतया समर्धयन्ति। भूरिति महिषी। भुव इति वावाता। सुवृरितिं परिवृक्ती। एषां लोकानांमभिजिंत्ये। हिर्ण्ययाः काचा भवन्ति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। राष्ट्रमंश्वमेधः॥१६॥

ज्योतिंश्चैवास्मै राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। सहस्रं भवन्ति। सहस्रंसम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। अप वा एतस्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीः क्रांमन्ति। यौऽश्वमेधेन यजंते। वसंवस्त्वाऽअन्तु गायत्रेण छन्दसेति महिष्यभ्यंनक्ति। तेजो वा आज्यम्। तेजो गायत्री। तेजंसैवास्मै तेजोऽवं रुन्धे॥१७॥

रुद्रास्त्वां अन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्द्सेतिं वावातां। तेजो वा आज्यम्। इन्द्रियं त्रिष्टुप्। तेजंसैवास्मां इन्द्रियमवं रुन्धे। आदित्यास्त्वां ऽअन्तु जागंतेन् छन्द्सेतिं परिवृक्ती। तेजो वा आज्यम्। पृशवो जगंती। तेजंसैवास्में पृशूनवं रुन्धे। पत्नयो ऽभ्यं अन्ति। श्रिया वा पृतद्रूपम्॥१८॥

यत्पत्नयः। श्रियंमेवास्मिन्तद्दंधित। नास्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीरपं क्रामन्ति। लाजी(३)ञ्छाची(३)न् यशोममाँ(४) इत्यतिरिक्तमन्नमश्वायोपाहंरन्ति। प्रजामेवान्नादीं कुर्वते। पृतद्देवा अन्नमत्तैतदन्नमिद्धे प्रजापत् इत्याह। प्रजायांमेवान्नाद्यं दधते। यदि नावजिष्ठेत्। अग्निः पृशुरांसीदित्यवंष्ठापयेत्। अवं हैव जिंघ्रति। आक्रान्ं वाजी क्रमैरत्यंक्रमीद्वाजी द्यौस्तें पृष्ठं पृथिवी स्थस्थमित्यश्वमनुमन्नयते। एषां लोकानांमभिजित्यै। समिद्धो अञ्जन्कृदंरं मतीनामित्यश्वंस्याप्रियों भवन्ति सरूपत्वायं॥१९॥

परितुस्थुष् इत्यांहेमे एवास्मै युनक्त्वभिजित्यै भरन्त्यश्वमेधो रून्धे रूपश्चिप्रति त्रीणि च॥—————[४]

तेजंसा वा एष ब्रह्मवर्चसेन् व्यृंद्धते। योंऽश्वमेधेन् यजंते। होतां च ब्रह्मा चं ब्रह्मोद्यं वदतः। तेजंसा चैवैनं ब्रह्मवर्चसेनं च समर्धयतः। दक्षिणतो ब्रह्मा भंवति। दक्षिणत आंयतनो वै ब्रह्मा। बार्ह्स्पत्यो वै ब्रह्मा। ब्रह्मवर्चसमेवास्यं दक्षिणतो दंधाति। तस्माद्दक्षिणोऽधौं ब्रह्मवर्चसितंरः। उत्तर्तो होतां भवति॥२०॥

उत्तर्त आंयतनो वै होताँ। आग्नेयो वै होताँ। तेजो वा अग्निः। तेजं एवास्योंत्तरतो दंधाति। तस्मादुत्तरो- ऽर्धस्तेजस्वितंरः। यूपंमभितों वदतः। यजमानदेवत्यों वै यूपंः। यजमानमेव तेजंसा च ब्रह्मवर्चसेनं च समर्धयतः। कि स्वदासीत्पूर्वचित्तिरित्यांह। द्यौर्वे वृष्टिः पूर्वचित्तिः॥२१॥

दिवंमेव वृष्टिमवं रुन्धे। किः स्विदासीद्वृहद्वय् इत्याह। अश्वो वै बृहद्वयः। अश्वमेवावं रुन्धे। किः स्विदासीत्पिशङ्गिलेत्याह। रात्रिर्वे पिशङ्गिला। रात्रिमेवावं रुन्धे। किः स्विदासीत्पिलिप्पिलेत्याह। श्रीवे पिलिप्पिला। अन्नाद्यमेवावं रुन्धे॥२२॥ कः स्विदेकाकी चंरतीत्यांह। असौ वा आंदित्य एंकाकी चंरति। तेजं एवावं रुन्धे। क उंस्विज्ञायते पुन्रित्यांह। चन्द्रमा वै जांयते पुनंः। आयुरेवावं रुन्धे। किङ् स्विद्धिमस्यं भेषजमित्यांह। अग्निर्वे हिमस्यं भेषजम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। किङ् स्विदावपंनं महदित्यांह॥२३॥

अयं वै लोक आवर्पनं महत्। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। पृच्छामिं त्वा पर्मन्तं पृथिव्या इत्याह। वेदिवें परो-ऽन्तः पृथिव्याः। वेदिमेवावं रुन्धे। पृच्छामिं त्वा भुवंनस्य नाभिमित्याह। यज्ञो वै भुवंनस्य नाभिः। यज्ञमेवावं रुन्धे। पृच्छामिं त्वा वृष्णो अश्वंस्य रेत इत्याह। सोमो वै वृष्णो अश्वंस्य रेतः। सोम्पीथमेवावं रुन्धे। पृच्छामिं वाचः पर्मं व्योमेत्याह। ब्रह्म वै वाचः पर्मं व्योम। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे॥२४॥

होतां भवित वै वृष्टिंः पूर्विचित्तरुत्राद्यमेवावं रुन्धे मृहदित्यांहु सोमो वै वृष्णो अश्वस्य रेतंश्चत्वारिं च-[ $oldsymbol{arphi}$ ]

अप वा एतस्मौत्राणाः क्रांमन्ति। यौंऽश्वमेधेन् यजंते। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहेतिं संज्ञप्यमान् आहुंतीर्जुहोति। प्राणानेवास्मिन्दधाति। नास्मौत्राणा अपंकामन्ति। अवंन्तीः स्थावंन्तीस्त्वाऽवन्तु। प्रियं त्वाँ प्रियाणांम्। वर्षिष्ठमाप्यांनाम्। निधीनां त्वां निधिपति ह्वामहे वसो ममेत्यांह। अपैवास्मै तद्भुंवते॥२५॥

अथों धुवन्त्येवैनम्। अथो न्येवास्मैं ह्रुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। पुभ्य पुवैनं लोकेभ्यों धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अपु वा एतेभ्यंः प्राणाः क्रांमन्ति॥२६॥

ये युज्ञे धुवेनं तुन्वतें। नुवकृत्वः परियन्ति। नव् वै पुरुषे प्राणाः। प्राणानेवाऽऽत्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपेक्रामन्ति। अम्बे अम्बाल्यम्बिक् इति पत्नीमुदानयिति। अह्वंतैवैनाम्। सुभगे काम्पीलवासिनीत्याह। तपं एवैनामुपंनयित। सुव्गे लोके सम्प्रोण्वांथामित्यांह॥२७॥

सुवर्गमेवेनां लोकं गंमयति। आऽहमंजानि गर्भधमा त्वमंजाऽसि गर्भधमित्यांह। प्रजा वै प्रश्वो गर्भः। प्रजामेव प्रशूनात्मन्धंत्ते। देवा वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजांनात्। यथ्सूचीभिरसिप्थान्कल्पयंन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञात्यै। गायुत्री त्रिष्टुङ्गगुतीत्यांह॥२८॥

यथायज्ञरेवैतत्। त्रय्यः सूच्यों भवन्ति। अयस्मय्यों रज्जता हरिण्यः। अस्य वै लोकस्यं रूपमयस्मय्यः। अन्तरिक्षस्य रज्जताः। दिवो हरिण्यः। दिशो वा अयस्मय्यः। अवान्तरिद्धाः रंज्जताः। ऊर्ध्वा हरिण्यः। दिशे पृवास्मै कल्पयति। कस्त्वा छ्यति कस्त्वा विशास्तीत्याहाहि रंसाये॥२९॥

अप वा पुतस्माच्छ्री राष्ट्रं ऋामिति। यो ऽश्वमेधेन् यजंते। ऊर्ध्वामेनामुच्छ्रंयतादित्यांह। श्रीर्वे राष्ट्रमेश्वमेधः। श्रियंमेवास्मै राष्ट्रमूर्ध्वमुच्छ्रंयति। वेणुभारङ्गिराविवेत्याह। राष्ट्रं वै भारः। राष्ट्रमेवास्मै पर्यूहति। अथास्या मध्यंमेधतामित्याह। श्रीर्वे राष्ट्रस्य मध्यम्॥३०॥

श्रियंमेवावं रुन्थे। शीते वातं पुनन्निवेत्यांह। क्षेमो वै राष्ट्रस्यं शीतो वातंः। क्षेमंमेवावं रुन्थे। यद्धंरिणी यवमत्तीत्यांह। विड्वे हंरिणी। राष्ट्रं यवंः। विशं चैवास्मैं राष्ट्रं चं स्मीचीं दधाति। न पुष्टं पृशु मन्यत् इत्यांह। तस्माद्राजां पृशूत्र पृष्यंति॥३१॥

शूद्रा यदर्यजारा न पोषांय धनायतीत्यांह। तस्माँद्वेशीपुत्रं नाभिषिश्चन्ते। इयं यका शंकुन्तिकेत्यांह। विश्वे शंकुन्तिका। राष्ट्रमंश्वमेधः। विश्वं चैवास्मैं राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आहलुमिति सर्पतीत्याह। तस्माँद्राष्ट्राय विश्वंः सर्पन्ति। आहंतं गुभे पस इत्यांह। विश्वे गर्भः॥३२॥

राष्ट्रं पर्सः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्मौद्राष्ट्रं विश् घातुंकम्। माता चं ते पिता चं त इत्यांह। इयं वै माता। असौ पिता। आभ्यामेवैनं परिंददाति। अग्रं वृक्षस्यं रोहत् इत्यांह। श्रीवैं वृक्षस्याग्रम्। श्रियंमेवावं रुन्धे॥३३॥

प्रसृंलामीतिं ते पिता गुभे मुष्टिमंत १ सयदित्यांह। विश्वे गर्भः। राष्ट्रं मुष्टिः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माँद्राष्ट्रं विश्ं घातुंकम्। अप वा पुतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति। ये युज्ञे ऽपूतुं वदंन्ति। द्धिकाव्णों अकारिष्मितिं सुरिम्मतीमृचं वदन्ति। प्राणा वै सुर्भयः। प्राणानेवाऽऽत्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामन्ति। आपो हि ष्ठा मंयोभुव इत्यद्भिर्मार्जयन्ते। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांभिरेवाऽऽत्मानं पवयन्ते॥३४॥ प्रकृष्य प्रवि को क्यो क्यो क्यो व्याप्ति वा

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा प्रेणाऽनु प्राविशत्। ताभ्यः पुनः सम्भवितुं नाश्रंक्रोत्। सौंऽब्रवीत्। ऋध्रवदिथ्सः। यो मेतः पुनः सम्भरदिति। तं देवा अश्वमेधेनैव सम्भरन्। ततो वै त आध्रुंवन्। यौंऽश्वमेधेन् यजंते। प्रजापंतिमेव सम्भरत्यृध्नोति। पुरुषमालभते॥३५॥

वैराजो वै पुरुषः। विराजमिवार्लभते। अथो अत्रं वै विराट्। अन्नमेवार्व रुन्थे। अश्वमार्लभते। प्राजापत्यो वा अर्श्वः। प्रजापंतिमेवार्लभते। अथो श्रीर्वा एकंशफम्। श्रियमेवार्व रुन्थे। गामार्लभते॥३६॥

यज्ञो वै गौः। यज्ञमेवार्लभते। अथो अन्नं वै गौः। अन्नमेवार्वं रुन्थे। अजावी आर्लभते भूम्ने। अथो पृष्टिवें भूमा। पृष्टिंमेवार्वं रुन्थे। पर्यग्निकृतं पुरुषं चार्ण्या इश्लोध्सृंजन्त्यिह स्मायै। उभौ वा एतौ पृशू आर्लभ्येते। यश्लांवमो यश्लं पर्मः। तें उस्योभये यज्ञे बुद्धाः। अभीष्टां अभिप्रींताः। अभिजिंता अभिह्नंता भवन्ति। नैनं दृङ्क्ष्वंः पृशवो युज्ञे बुद्धाः। अभीष्टां अभिप्रींताः। अभिजिंता अभिर्ह्नंता भवन्ति। नैनं दृङ्क्ष्वंः पृशवो युज्ञे बुद्धाः। अभीष्टां अभिप्रींताः। अभिजिंता अभिह्नंता हिस्सन्ति। योंऽश्वमेधेन

## यजेते। य उं चैनमेवं वेदे॥३७॥

लुभुते गामालंभते पर्मोंऽष्टौ चं॥\_\_\_\_\_[८]

प्रथमेन वा एष स्तोमेन राध्वा। चतुष्टोमेनं कृतेनायांनामुत्तरेहन्। एकविश्शे प्रतिष्ठायां प्रति तिष्ठति। एकविश्शात्प्रतिष्ठायां ऋतूनन्वारोहित। ऋतवो वै पृष्ठानि। ऋतवेः संवथ्सरः। ऋतुष्वेव संवथ्सरे प्रतिष्ठायं। देवतां अभ्यारोहित। शक्षरयः पृष्ठं भेवन्त्यन्यदेन्यच्छन्देः। अन्येऽन्ये वा एते पृशव आलंभ्यन्ते॥३८॥

उतेवं ग्राम्याः। उतेवांरण्याः। अहंरेव रूपेण समर्धयति। अथो अह्नं एवेष बिलिर्ह्हियते। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदंजावयंश्वारण्याश्चं। एते वै सर्वे पृशवंः। यद्गव्या इतिं। गुव्यान्पृशूनुंत्तमेऽहुं नालभते॥३९॥

तेनैवोभयाँन्पृशूनवं रुन्थे। प्राजापुत्या भंवन्ति। अनंभि-जितस्याभिजित्ये। सौरीर्नवं श्वेता वृशा अनूबन्ध्यां भवन्ति। अन्तत एव ब्रह्मवर्चसमवं रुन्थे। सोमाय स्वराज्ञें ऽनोवाहावं नृङ्घाहावितिं द्वन्द्वनः पृशूनालंभते। अहोरात्राणां मुभिजित्ये। पृशुभिवां एष व्यृध्यते। यौं ऽश्वमेधेन् यजंते। छुगुलं कृत्मापं किकिदीविं विदीगयमितिं त्वाष्ट्रान्पृशूना लंभते। पृशुभिरेवाऽऽत्मान् समर्धयित। ऋतुभिर्वा एष व्यृध्यते। यौं ऽश्वमेधेन् यजंते। पिशङ्गास्त्रयों वासन्ता इत्यृंतुपृशूनालंभते। ऋतुभिरेवाऽऽत्मान् स्

समर्धयति। आ वा एष पृशुभ्यो वृश्च्यते। यौऽश्वमेधेन् यजेते। पर्यग्निकृता उथ्मृजन्त्यनावस्काय॥४०॥

कुभुके कुभुके व्यक्तम्भुक्तिकेशे वे॥

[९]

प्रजापंतिरकामयत महानंत्रादः स्यामिति। स एतावंश्वम्धे मंहिमानांवपश्यत्। तावंगृह्णीत। ततो वै स महानंत्रादों- ऽभवत्। यः कामयेत महानंत्रादः स्यामिति। स एतावंश्वम्धे मंहिमानौं गृह्णीत। महानेवात्रादो भंवति। यज्ञमानदेवत्यां वै वपा। राजां महिमा। यद्धपां मंहिम्रोभ्यतः परियजंति। यज्जमानमेव राज्येनोभ्यतः परिगृह्णाति। पुरस्तांथ्स्वाहाकारा वा अन्ये देवाः। उपरिष्टाथ्स्वाहाकारा अन्ये। ते वा एतेऽश्वं एव मेध्यं उभयेऽवंरुध्यन्ते। यद्धपां मंहिम्रोभ्यतः परियजंति। तानेवोभयांन्प्रीणाति॥४१॥

परियर्जिति षद्वं॥———[१०]

वैश्वदेवो वा अर्थः। तं यत्प्रांजापृत्यं कुर्यात्। या देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन व्यर्धयेत्। देवताभ्यः समदं दध्यात्। स्तेगान्दङ्ष्ट्राभ्यां मृण्डूकां जम्भ्येभिरिति। आज्यंमवदानं कृत्वा प्रंतिसङ्ख्यायमाहुंतीर्ज्ञहोति। या एव देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन समर्धयति। न देवताभ्यः समदं दधाति॥४२॥

चतुंर्दशैतानंनुवाकाञ्जंहोत्यनंन्तरित्यै। प्रयासाय स्वाहेतिं पश्चदशम्। पश्चंदश् वा अर्धमासस्य रात्रयः। अर्धमासुशः संवथ्सर औप्यते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। तेंऽब्रुवन्नग्नयंः स्विष्ट्कृतंः। अश्वंस्य मेध्यंस्य व्यमुंद्धारमुद्धंरामहै। अथैतान्भि भंवामेतिं। ते लोहिंत्मुदंहरन्त। ततों देवा अभंवन्॥४३॥

पराऽस्रेराः। यथ्स्विष्टकृद्धो लोहितं जुहोति भातृंव्याऽभिभूत्ये। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भातृंव्यो भवति। गोमृगकुण्ठेनं प्रथमामाहुंतिं जुहोति। पृशवो वै गोमृगः। रुद्रोंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव पृशूनन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः पृशूनभिमंन्यते॥४४॥

अश्वश्रफेनं द्वितीयामाहंतिं जहोति। प्रश्वो वा एकंशफम्। रुद्रोंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव प्रशूनन्तर्दधाति। अथो यत्रैषा-ऽऽहंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः प्रशूनिभमंन्यते। अयस्मयेन कमण्डलंना तृतीयांम्। आहंतिं जुहोत्यायास्यों वे प्रजाः। रुद्रोंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव प्रजा अन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः प्रजा अभिमंन्यते॥४५॥ व्याल्यन्वन्यते प्रजा अन्तर्दधाति हे वे ॥———[११]

अश्वंस्य वा आलंब्यस्य मेध् उदंक्रामत्। तदंश्वस्तोमीयं-मभवत्। यदंश्वस्तोमीयं जुहोतिं। समेधमेवैनमालंभते। आज्यंन जुहोति। मेधो वा आज्यम्। मेधौंऽश्वस्तोमीयम्। मेधेनैवास्मिन्मेधं दधाति। षद्गिरंशतं जुहोति। षद्गिरंशदक्षरा बृहती॥४६॥ बार्हताः पृशवंः। सा पंशूनां मात्रां। पृशूनेव मात्रंया समर्थयति। तायद्भ्यंसीर्वा कनीयसीर्वा जुहुयात्। पृशून्मात्रंया व्यर्धयेत्। षद्भिर्श्शतं जुहोति। षद्भिर्श्शदक्षरा बृह्ती। बार्हताः पृशवंः। सा पंशूनां मात्रां। पृशूनेव मात्रंया समर्थयति॥४७॥

अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। द्विपाद्वे पुरुषो द्विप्रतिष्ठः। तदेनं प्रतिष्ठया समर्धयति। तदांहः। अश्वस्तोमीयं पूर्व होत्व्याँ(३)न्द्विपदा(३) इति। अश्वो वा अश्वस्तोमीयम्। पुरुषो द्विपदाः। अश्वस्तोमीयर् हुत्वा द्विपदां जुहोति। तस्मांद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथों द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठापयति। द्विपदां हुत्वा। नान्यामुत्तंरामाहुंतिं जुहुयात्। यदन्यामुत्तंरामाहुंतिं जुहुयात्। यदन्यामुत्तंरामाहुंतिं जुहुयात्। प्रप्रतिष्ठायांश्च्यवेत। द्विपदां अन्ततो जुंहोति प्रतिष्ठित्ये॥४८॥

प्रजापंतिरश्वम्धमंसृजत। सौंऽस्माथ्सृष्टोऽपाँकामत्। तं यंज्ञकृतुभिरन्वैंच्छत्। तं यंज्ञकृतुभिर्नान्वंविन्दत्। तिमिष्टिंभिरन्वैंच्छत्। तिमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तिदष्टींनािमष्टि-त्वम्। यथ्संवथ्सरमिष्टिंभिर्यजंते। अश्वंमेव तदन्विंच्छति। सावित्रियों भवन्ति॥४९॥

ड्यं वै संविता। यो वा अस्यान्नश्यंति यो निलयंते। अस्यां वाव तं विन्दन्ति। न वा ड्रमां कश्चनेत्यांहुः। तिर्यङ्गोर्ध्वोत्येतुमर्ह्तीतिं। यथ्मांवित्रियो भवंन्ति। स्वितृ-प्रंसूत एवैनंमिच्छति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परां परावतं गन्तोः। यथ्मायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्य यत्यै धृत्यै॥५०॥

यत्प्रातिरिष्टिभिर्यजंते। अश्वमेव तदिन्वंच्छति। यथ्सायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्यैव यत्यै धृत्यैं। तस्मांथ्सायं प्रजाः क्षेम्यां भवन्ति। यत्प्रातिरिष्टिभिर्यजंते। अश्वंमेव तदिन्वंच्छति। तस्माद्दिवां नष्टेष एति। यत्प्रातिरिष्टिभिर्यजंते सायं धृतींर्जुहोतिं। अहोरात्राभ्यांमेवैनमन्वंच्छति। अथों अहोरात्राभ्यांमेवास्मै योगक्षेमं केल्पयति॥५१॥

अप वा एतस्माच्छ्री राष्ट्रं क्रांमिति। योंऽश्वमेधेन यजंते। ब्राह्मणौ वींणागाथिनौ गायतः। श्रिया वा एतद्रूपम्। यद्वीणाँ। श्रियमेवास्मिन्तद्धंत्तः। यदा खलु वै पुरुषः श्रियंमश्जुते। वीणाँऽस्मै वाद्यते। तदांहुः। यदुभौ ब्राह्मणौ गायेंताम्॥५२॥

प्रभ्रश्रुंकास्माच्छ्रीः स्यात्। न वै ब्राँह्मणे श्री रंमत् इति। ब्राह्मणाँ उन्यो गायेत्। राजन्याँ उन्यः। ब्रह्म वै ब्राँह्मणः। क्षत्रश्र राजन्यः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभ्यतः श्रीः परिंगृहीता भवति। तदांहुः। यदुभौ दिवा गायेताम्। अपाँस्माद्राष्ट्रं क्रांमेत्॥५३॥

न वै ब्राँह्मणे राष्ट्र॰ रंमत् इतिं। यदा खलु वै राजां कामयंते। अर्थं ब्राह्मणं जिंनाति। दिवाँ ब्राह्मणो गांयेत्। नक्त राजन्यः। ब्रह्मणो वै रूपमहः। क्षत्रस्य रात्रिः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभ्यतो राष्ट्रं परिगृहीतं भवति। इत्यंददा इत्यंयजथा इत्यंपच इति ब्राह्मणो गायेत्। इष्टापूर्तं वै ब्राह्मणस्यं॥५४॥

ड्ष्णपूर्तेनैवेन् स समर्धयित। इत्यंजिना इत्यंयुध्यथा इत्यमु संङ्गाममंहिन्निति राजन्यः। युद्धं व राजन्यंस्य। युद्धेनैवेन् स समर्धयित। अक्रृप्ता वा एतस्यत्व इत्यांहः। यौऽश्वमेधेन् यजंत इति। तिस्रौऽन्यो गायंति तिस्रौऽन्यः। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवेः। ऋतूनेवास्मै कल्पयतः। ताभ्या स् स्इस्थायाम्। अनोयुक्ते च शते च ददाति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रति तिष्ठति॥५५॥ ग्रावेताङ्गमेङ्गास्मस्य कल्पयतक्ष्वार च। [१४]

सर्वेषु वा एषु लोकेषुं मृत्यवोऽन्वायंत्ताः। तेभ्यो यदाहुंतीर्न जुंहुयात्। लोकेलोंक एनं मृत्युर्विन्देत्। मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। लोकाल्लोकादेव मृत्युमवंयजते। नैनंं लोकेलोंके मृत्युर्विन्दित। यदमुष्मै स्वाहाऽमुष्मै स्वाहेति जुह्वंथ्मश्रक्षीत। बहुं मृत्युम्मित्रं कुर्वीत। मृत्यवे स्वाहेत्येकंस्मा एवैकां जुहुयात्। एको वा अमुर्ष्मिलोंके मृत्युः॥५६॥

अ्शनया मृत्युरेव। तमेवामुष्मिं श्लोके ऽवंयजते। भ्रूणहृत्यायै

स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोति। भ्रूणहृत्यामेवावं यजते। तदांहुः। यद्भूणहृत्या पात्र्याऽथं। कस्मांद्यज्ञेऽपिं क्रियत् इतिं। अमृत्युर्वा अन्यो भ्रूणहृत्याया इत्यांहुः। भ्रूणहृत्या वाव मृत्युरितिं। यद्भूणहृत्यायै स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोतिं॥५७॥

मृत्युमेवाऽऽहुंत्या तर्पयित्वा पंरिपाणं कृत्वा। भ्रूण्घ्ने भेष्जं कंरोति। एता ह व मृण्डिभ औदन्यवः। भ्रूण्हृत्याये प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार। यो हास्यापि प्रजायां ब्राह्मण हिन्ते। सर्वस्मे तस्मे भेष्जं कंरोति। जुम्बकाय स्वाहेत्यंवभृथ उत्तमामाहुंतिं जुहोति। वर्रुणो व जुम्बकः। अन्तत एव वर्रुणमवंयजते। खुलुतेर्विक्तिधस्यं शुक्तस्यं पिङ्गाक्षस्यं मूर्धं जुहोति। एतद्वे वर्रुणस्य रूपम्। रूपेणेव वर्रुणमवंयजते॥५८॥

लोके मृत्युर्जुहोति मूर्धं जुहोति हे चं॥\_\_\_\_\_\_[१५]

वारुणो वा अर्थः। तं देवतंया व्यर्धयति। यत्प्रांजापृत्यं करोति। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायेत्यांह। वारुणो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयति। नमोऽश्वांय नमः प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयति। नमोऽधिपतय इत्यांह॥५९॥

धर्मो वा अधिपतिः। धर्ममेवावं रुन्धे। अधिपतिरुस्यधिपतिं

मा कुर्वधिपतिर्हं प्रजानां भूयासमित्यांह। अधिपतिमेवैन र समानानां करोति। मां धेहि मियं धेहीत्यांह। आशिषं-मेवैतामा शांस्ते। उपार्कृताय स्वाहेत्युपार्कृते जुहोति। आलंब्याय स्वाहेति नियुंक्ते जुहोति। हुताय स्वाहेतिं हुते जुंहोति। पृषां लोकानांम्भिजिंत्यै॥६०॥

प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यंश्च्यवते। योंऽश्वमेधेन यजंते। आग्नेयमैंन्द्राग्नमांश्विनम्। तान्पशूनालंभते प्रतिष्ठित्यै। यदांग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतां एवावं रुन्थे। ब्रह्म वा अग्निः। क्षुत्रमिन्द्रः। यदैन्द्राग्नो भवंति॥६१॥

ब्रह्मक्षत्रे प्वावं रुन्धे। यदाँश्विनो भवंति। आशिषामवंरुद्धे। त्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। पृष्वंव लोकेषु प्रति तिष्ठति। अग्नयेऽ रहोमुचेऽष्टाकंपाल इति दर्शहविषमिष्टिं निर्वंपति। दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। अग्नेर्मन्वे प्रथमस्य प्रचेतस् इतिं याज्यानुवाक्यां भवन्ति सर्वत्वायं॥६२॥

अधिपतय इत्यांहार्भिजित्या ऐन्द्राग्नो भवंति रुन्य एकं च॥\_\_\_\_\_\_[१६]

यद्यश्वमुप्तपंद्विन्देत्। आग्नेयमुष्टाकंपालं निर्वपेत्। सौम्यं चरुम्। सावित्रमुष्टाकंपालम्। यदाँग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतांभिरेवैनं भिषज्यति। यथ्सौम्यो भवंति। सोमो वा ओषंधीना् राजाः। याभ्यं पुवैनं विन्दति॥६३॥ ताभिरेवेनं भिषज्यति। यथ्सांवित्रो भवंति। स्वितृप्रंसूत प्वेनं भिषज्यति। प्रताभिरेवेनं देवतांभिर्भिषज्यति। अगदो हैव भवति। पौष्णं चरुं निर्वपेत्। यदि श्लोणः स्यात्। पूषा वै श्लौण्यंस्य भिषक्। स पुवेनं भिषज्यति। अश्लोणो हैव भवति॥६४॥

रौद्रं चुरुं निर्विपेत्। यदिं महुती देवतांऽभिमन्येत। एत्द्देवत्यों वा अश्वः। स्वयैवैनंं देवतंया भिषज्यति। अगदो हैव भवति। वैश्वानुरं द्वादशकपालं निर्विपेन्मृगाखरे यदि नाऽऽगच्छैत्। इयं वा अग्निवैश्वानुरः। इयमेवैनंमुर्चिभ्यां परिरोधमानंयति। आहैव सुत्यमहंर्गच्छति। यद्यंधीयात्॥६५॥

अग्नयेऽ रहोमुचेऽष्टाकंपालः। सौर्यं पर्यः। वायव्यं आज्यंभागः। यजंमानो वा अश्वंः। अरहंसा वा एष गृंहीतः। यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षितोऽध्येति। यद रहोमुचें निर्वपंति। अरहंस एव तेनं मुच्यते। यजंमानो वा अश्वंः। रतंसा वा एष व्यृध्यते॥६६॥

यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षिंतोऽध्येतिं। सौर्य रेतः। यथ्सौर्यं पयो भवंति। रेतंसैवैन् ससमंध्यति। यजंमानो वा अश्वः। गर्भैवा एष व्यृध्यते। यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षिंतोऽध्येतिं। वायव्यां गर्भाः। यद्वांयव्यं आज्यंभागो भवंति। गर्भेरेवैन् ससमंध्यति। अथो यस्यैषाऽश्वंमेधे प्रायंश्चित्तः क्रियतें।

### इष्ट्वा वसीयान्भवति॥६७॥

विन्दत्यश्लांणो हैव भंवत्यधीयाद्यंथते गर्भेरेवैन् स समर्धयति द्वे चं॥\_\_\_\_\_\_[१७]

तदांहुः। द्वादंश ब्रह्मौद्नान्थ्स इस्थिते निर्वपेत्। द्वाद्शिभिर्वे विषेति। यदिष्टिंभिर्वजेत। उपनामुंक एनं युज्ञः स्यात्। पापीया इस्तु स्यात्। आप्तानि वा एतस्य छन्दा स्मि। य ईजानः। तानि क एतावंदाशु पुनः प्रयुं जीतेति। सर्वा वै स इस्थिते यज्ञे वागांप्यते॥६८॥

साप्ता भंवति यातयाँम्नी। क्रूरीकृतेव हि भवत्यरुष्कृता। सा न पुनः प्रयुज्येत्यांहुः। द्वादंशैव ब्रंह्मौद्नान्थ्स इस्थिते निर्वपेत्। प्रजापंतिर्वा ओद्नः। यज्ञः प्रजापंतिः। उपनामुंक एनं यज्ञो भंवति। न पापीयान्भवति। द्वादंश भवन्ति। द्वादंशमासाः संवथ्सरः। संवथ्सर एव प्रति तिष्ठति॥६९॥ अप्यक्षे संवथ्सरः। संवथ्सरः। (१८)

पृष वै विभूनामं युज्ञः। सर्वर् हु वै तत्रं विभु भंवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यजंन्ते। एष वै प्रभूनामं युज्ञः। सर्वर् हु वै तत्रं प्रभु भंवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यजंन्ते। एष वा ऊर्जस्वान्नामं युज्ञः। सर्वर् हु वै तत्रोर्जस्वद्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यजंन्ते। एष वै पर्यस्वान्नामं युज्ञः॥७०॥

सर्वर्ष हु वै तत्र पर्यस्वद्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै विधृतो नामं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्र विधृतं भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै व्यावृत्तो नामं युज्ञः। सर्वर्ष ह् वै तत्र व्यावृंत्तं भवति। यत्रैतेनं यज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै प्रतिष्ठितो नामं युज्ञः। सर्वर्ं ह वै तत्र प्रतिष्ठितं भवति॥७१॥

यत्रैतनं यज्ञेन यजंन्ते। एष वै तेंज्ञस्वी नामं य्ज्ञः। सर्वरं ह् वै तत्रं तेज्ञस्वि भंवति। यत्रैतेनं य्ज्ञेन यजंन्ते। एष वै ब्रह्मवर्च्सी नामं य्ज्ञः। आ ह् वै तत्रं ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जांयते। यत्रैतेनं य्ज्ञेन यजंन्ते। एष वा अंतिव्याधी नामं य्ज्ञः। आ ह् वै तत्रं राज्ञन्योंऽतिव्याधी जांयते। यत्रैतेनं य्ज्ञेन यजंन्ते। एष वै दीर्घो नामं य्ज्ञः। दीर्घायुंषो ह् वै तत्रं मनुष्यां भवन्ति। यत्रैतेनं य्ज्ञेन यजंन्ते। एष वै क्रुप्तो नामं य्ज्ञः। कल्पंते ह् वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं य्ज्ञेन यजंन्ते॥७२॥

तार्प्येणाश्वर् संज्ञंपयन्ति। युज्ञो वै तार्प्यम्। युज्ञेनैवैन्र् समर्धयन्ति। यामेन् साम्ना प्रस्तोताऽनूपंतिष्ठते। यमुलोकमेवैनं गमयति। तार्प्ये चं कृत्यधीवासे चाश्वर् संज्ञंपयन्ति। एतद्वे पंशूनार रूपम्। रूपेणैव पृशूनवं रुन्थे। हिर्ण्यकृशिपु भंवति। तेज्सोऽवंरुद्धे॥७३॥

रुक्मो भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै। अश्वीं भवति। प्रजापंतेराह्यैं। अस्य वै लोकस्यं रूपं तार्प्यम्। अन्तरिक्षस्य कृत्यधीवासः। दिवो हिरण्यकशिपु। आदित्यस्यं रुक्मः। प्रजापंतेरश्वः। इममेव लोकं तार्प्यणाँऽऽप्नोति॥७४॥ अन्तरिक्षं कृत्यधीवासेनं। दिवरं हिरण्यकशिपुनां। आदित्यः रुक्मेणं। अश्वेनैव मेध्येन प्रजापंतेः सायुंज्यः सलोकतांमाप्नोति। एतासांमेव देवतांनाः सायुंज्यम्। सार्षिताः समानलोकतांमाप्नोति। योंऽश्वमेधेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥७५॥

आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकैंऽस्पर्धन्त। तेऽङ्गिरस आदित्येभ्यः। अमुमांदित्यमश्वई श्वेतं भूतं दक्षिणामनयन्। तेंंऽब्रुवन्। यन्नो नेष्ट। स वर्यो भूदितिं। तस्मादश्व<u>द्</u> सवर्येत्याह्वंयन्ति। तस्माँद्यज्ञे वरो दीयते। यत्प्रजापंतिरा-लुब्धोऽश्वोऽभंवत्। तस्मादश्वो नामं॥७६॥

यच्छ्वयदरुरासींत्। तस्मादर्वा नामं। यथ्सद्यो वाजांन्थ्समजंयत्। तस्माद्वाजी नामं। यदस्राणां लोकानादत्त। तस्मादादित्यो नामं। अग्निर्वा अंश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनम्। यदंश्वमेधेंऽग्नो चित्यं उत्तरवेदिम्रंपवपंति। योनिमन्तमेवैनंमायतंनवन्तं करोति॥७७॥

योनिमानायतंनवान्भवति। य एवं वेदं। प्राणापानौ वा एतौ देवानांम्। यदंकिश्वमेधौ। प्राणापानावेवावं रुन्धे। ओजो बलं वा एतौ देवानांम्। यदंकिश्वमेधौ। ओजो बलंमेवावं रुन्धे। अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योऽग्नेयोनिरायतंनम्। यदंश्वमेधेंऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिं चिनोतिं। तार्वर्काश्वमेधौ। अर्काश्वमेधावेवार्व रुन्धे। अथों अर्काश्वमेधयोरेव प्रतिं तिष्ठति॥७८॥

नामं करोति सूर्योऽग्नेयॉनिरायर्तनश्चलारि च॥————[२१]

प्रजापंतिं वै देवाः पितरम्। पृशुं भूतं मेधायाऽऽऽलंभन्त। तमालभ्योपावसन्। प्रातर्यष्टांस्मह् इति। एकं वा एतद्देवानामहंः। यथ्संवथ्सरः। तस्मादर्श्वः पुरस्तांथ्संवथ्सर आलंभ्यते। यत्प्रजापंतिरालुब्धोऽश्वोऽभंवत्। तस्मादर्श्वः। यथ्सद्यो मेधोऽभंवत्॥७९॥

तस्मादश्वम्धः। वेदुकोऽश्वमाशुं भविति। य एवं वेदी यहै तत्प्रजापित्रालुब्योऽश्वोऽभवत्। तस्मादश्वः प्रजापितः पशूनामनुरूपतमः। आऽस्यं पुत्रः प्रतिरूपो जायते। य एवं वेदी सर्वाणि भूतानि सम्भृत्याऽऽलभते। समेनं देवास्तेजंसे ब्रह्मवर्चसायं भरन्ति। यौऽश्वम्धेन यजंते॥८०॥

य उं चैनमेवं वेदं। एतद्वै तद्देवा एतान्देवतांम्। पृशुं भूतं मेधायाऽऽऽलंभन्त। यज्ञमेव। यज्ञेनं यज्ञमंयजन्त देवाः। कामप्रं यज्ञमंकुर्वत। तेऽमृतृत्वमंकामयन्त। तेऽमृतृत्वमंगच्छन्। योऽश्वमेधेन यज्ञंते। देवानांमेवायंनेनैति॥८१॥

प्राजापत्येनैव यज्ञेनं यजते काम्प्रेणं। अपुनर्मारमेव गंच्छति। एतस्य वै रूपेणं पुरस्तांत्प्राजापत्यमृष्मं तूंपरं बंहरूपमार्लभते। सर्वेभ्यः कामेभ्यः। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्य जित्यै। सर्वमेव तेनांऽऽप्रोति। सर्वं जयति। योंऽश्वमेधेन

### यजेते। य उं चैनमेवं वेदं॥८२॥

मेधोऽर्भवृद्यजंत एति वेदं॥————[२२]

यो वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमंनी वेदं। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। अहोरात्रे वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमंनी। यथ्मायं प्रांतर्जुहोति। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमं लोमं जुह्वति। यो वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य पदे वेदं। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य पदेपंदे जुहोति। दुर्शपूर्णमासौ वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य पदे॥८३॥

यद्दंशपूर्णमासौ यजंते। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य प्देपंदे जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वंस्य मेध्यंस्य प्देपंदे जुह्वति। यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य विवर्तनं वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनं विवर्तनं विवर्तनं विवर्तनं जुहोति। असौ वा आंदित्योऽश्वंः। स आंहवनीयमागंच्छति। तद्विवंति। यदंग्निहोत्रं जुहोति। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तनं जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वस्य मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तनं जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वस्य मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तनं जुहोति। जुह्वति॥८४॥

पुदे अग्निहोत्रं जुहोति त्रीणि च॥————[२३]

प्रजापंतिस्तमंष्टादशिभिः प्रजापंतिरकामयतोभावस्मै युअत्ति तेजसाऽपंप्राणा अपुश्रीरूध्वाँ प्रजापंतिः प्रेणाऽन् प्रथमेन प्रजापंतिरकामयत महान्वैश्वदेवो वा अश्वोऽश्वंस्य प्रजापंतिस्त यंज्ञकृतुभिरपृश्रीव्राँह्मणो सर्वेषु वाकृणो यद्यश्वन्तदांहुरेष वे विभूस्ताप्येणांदित्याः प्रजापंति पितर् यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य लेमंनी त्रयोविश्शितः॥२३॥ प्रजापंतिरिस्में ह्योक उत्तर्तः श्रियंमेव प्रजापंतिरकामयत महान्यत्यातः प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यः सर्वर् हु वै तत्र पर्यः स्वद्य उं चैनमेवं वेदं चुत्वार्यशीतिः॥८४॥ प्रजापंतिरश्वमेथं जुंह्वति॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥तैत्तिरीय आरण्यकम्॥

॥ प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः॥

ॐ भृद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गें स्तुष्टुवा १ संस्तृनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति न्स्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिंद्धातु॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृद्रं कर्णभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैंस्तुष्टुवारसंस्तृन्भिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। आपंमापामुपः सर्वाः। अस्मादस्मादितोऽमृतः॥१॥

अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्करिष्ट्या। वाय्वश्वां रिम्पित्यः। मरींच्यात्मानो अद्रुहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। मृहुसो महसः स्वः। देवीः पंर्जन्युसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत॥२॥

अपाश्चंिष्णम्पा रक्षंः। अपाश्चंिष्णम्पा रघमं। अपाँघामपं चावर्तिम्। अपंदेवीरितो हित। वर्ज्ञं देवीरजीता इश्च। भुवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप् ओषंधयः। सुमृडीका

## सरंस्वति। मा ते व्योम सुन्हिशी॥३॥

[ 8 ]

स्मृतिः प्रत्यक्षंमैतिह्यम्। अनुंमानश्चतुष्ट्यम्। एतैरादिंत्य-मण्डलम्। सर्वेरेव विधास्यते। सूर्यो मरीचिमादंत्ते। सर्वस्माद्भवंनाद्धि। तस्याः पाकविंशेषेण। स्मृतं काल-विशेषंणम्। नदीव प्रभंवात्काचित्। अक्षय्याध्स्यन्दते यथा॥४॥

तां नद्योऽभि संमायन्ति। सो्रुः सतीं न निवंति। एवं नानासंमुत्थानाः। कालाः संवथ्सर् श्रिताः। अणुशश्च मंहश्श्च। सर्वे समव्यत्रितम्। सतैः सूर्वेः संमाविष्टः। ऊरुः संत्र निवर्तते। अधिसंवथ्सरं विद्यात्। तदेवं लक्षणे॥५॥

अणुभिश्च महिद्धिश्च। समार्रूढः प्रदृश्यते। संवथ्सरः प्रत्यक्षेण। नाधिसंत्वः प्रदृश्यते। पटरो विक्लिधः पिङ्गः। पृतद्वंरुणलक्षणम्। यत्रैतंदुपृदृश्यते। सहस्रं तत्र नीयते। एक १ हि शिरो नाना मुखे। कृथ्स्नं तंदृतुलक्षणम्॥६॥

उभयतः सप्तेन्द्रियाणि। जिल्पितं त्वेव दिह्यंते। शुक्ककृष्णे संवंध्सर्स्य। दक्षिणवामयोः पार्श्वयोः। तस्यैषा भवंति। शुक्रं ते अन्यद्यंजतं ते अन्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वाहि माया अवंसि स्वधावः। भुद्राते पूषिन्निह रातिरस्त्विति। नात्र भुवंनम्। न पूषा। न पृशवंः। नाऽऽदित्यः संवध्सर एव प्रत्यक्षेण प्रियतंमं विद्यात्। एतद्वै संवध्सरस्य प्रियतंमः

रूपम्। योऽस्य महानर्थ उत्पथ्स्यमानो भ्वति। इदं पुण्यं कुरुष्वेति। तमाहरंणं दुद्यात्॥७॥

साकुआना र्स्ति स्प्रथमाहुरेक जम्। षडुं द्यमा ऋषंयो देवजा इति। तेषामिष्टानि विहितानि धाम् शः। स्थात्रे रेजन्ते विकृतानि रूप्शः। को नुं मर्या अमिथितः। सखा सखायमब्रवीत्। जहां को अस्मदीषते। यस्तित्या जं सिख्विवद् सखायम्। न तस्य वाच्यपि भागो अस्ति। यदी रेशणोत्यलक रेशणोति॥८॥

न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामितिं। ऋतुर्ऋतुना नुद्यमानः। विनेनादाभिधांवः। षष्टिश्च त्रिश्शंका वृल्गाः। शुक्लकृष्णौ च षाष्टिंकौ। साराग्वस्त्रेर्ज्ररदेक्षः। वसन्तो वसुंभिः सह। संवथ्सरस्यं सिवतुः। प्रैषकृत्प्रंथमः स्मृतः। अमूनादयंतेत्यन्यान्॥९॥

अमू इश्चं परिरक्षंतः। एता वाचः प्रंयुज्यन्ते। यत्रैतंदुपृदृश्यंते। एतदेव विजानीयात्। प्रमाणं कालपर्यये। विशेषणं तुं वक्ष्यामः। ऋतूनां तिन्नबोधंत। शुक्लवासां रुद्रगणः। ग्रीष्मेणांऽऽवर्तते संह। निजहंन् पृथिवी स् सर्वाम्॥१०॥

ज्योतिषाँ ऽप्रतिख्येनं सः। विश्वरूपाणिं वासाः स्ति। आदित्यानां निबोधंत। संवथ्सरीणं कर्मफलम्। वर्षाभिर्दंदता सह। अदुःखों दुःखचं क्षुरिव। तद्मां ऽऽपीत इव दश्यंते। शीतेनां व्यथंयित्रिव। रुरुदं क्ष इव दश्यंते। ह्रादयतें ज्वलंतश्चेव। शाम्यतंश्चास्य चक्षंषी। या वै प्रजा भ्रं इयुन्ते। संवथ्सरात्ता भ्रं इयुन्ते। याः प्रतितिष्ठन्ति। संवथ्सरे ताः प्रतितिष्ठन्ति। वर्षाभ्यं इत्यर्थः॥११॥

-[३]

अक्षिदुःखोत्थितस्यैव। विप्रसंत्रे क्नीनिके। आङ्के चार्ह्मणं नास्ति। ऋभूणां तित्रबोधंत। कनकाभानि वासार्ध्स। अहतांनि निबोधंत। अन्नमश्रीतं मृज्मीत। अहं वो जीवनप्रदः। एता वाचः प्रयुज्यन्ते। शुरद्यंत्रोपृदृश्यंते॥१२॥

अभिधून्वन्तोऽभिघ्नंन्त इव। वातवंन्तो म्रुह्नंणाः। अमुतो जेतुमिषुमुंखिम्व। सन्नद्धाः सह दंदशे ह। अपध्वस्तैर्वस्तिवंणैरिव। विशिखासंः कपूर्दिनः। अनुद्धस्य योथ्स्यंमान्स्य। नुद्धस्यंव लोहिंनी। हेमतश्चक्षंषी विद्यात्। अक्ष्णयोः क्षिपणोरिंव॥१३॥

दुर्भिक्षं देवंलोकेषु। मनूनांमुद्कं गृहे। एता वाचः प्रंवद्न्तीः। वैद्युतों यान्ति शैशिंरीः। ता अग्निः पवंमना अन्वैक्षत। इह जीविकामपंरिपश्यन्। तस्यैषा भवंति। इहेहंवः स्वतपसः। मरुंतः सूर्यत्वचः। शर्म सप्रथा आवृंणे॥१४॥

[8]

अतिताम्राणि वासा १सि। अष्टिवंजिशतिष्ठिं च। विश्वे देवा

विप्रंहर्न्ति। अग्निजिंह्वा असश्चंत। नैव देवों न मृर्त्यः। न राजा वंरुणो विभुः। नाग्निर्नेन्द्रो न पंवमानः। मातृक्कंचन् विद्यंते। दिव्यस्यैका धनुरार्विः। पृथिव्यामपरा श्रिता॥१५॥

तस्येन्द्रो विम्नेरूपेण। धनुज्यांमिछिनथ्स्वंयम्। तिदंन्द्रधनुं-रित्युज्यम्। अभवंणेषु चक्षंते। एतदेव शंयोबर्ह्स्पत्यस्य। एतद्रुंद्रस्य धनुः। रुद्रस्यं त्वेव धनुंरार्हिः। शिर् उत्पिपेष। स प्रवृग्योंऽभवत्। तस्माद्यः सप्रवृग्येणं युज्ञेन यजंते। रुद्रस्य स शिरः प्रतिंदधाति। नैन र्रं रुद्र आरुको भवति। य एवं वेदं॥१६॥

.[ ५]

अत्यूर्ध्वाक्षोऽतिरश्चात्। शिशिरः प्रदृश्यते। नैव रूपं नं वासार्सा। न चक्षुः प्रतिदृश्यते। अन्योन्यं तु नं हि इस्रातः। सृतस्तंद्देवलक्षणम्। लोहितोऽक्ष्णि शारशीर्ष्णिः। सूर्यस्योदयनं प्रति। त्वं करोषिं न्यञ्जलिकाम्। त्वं करोषि निजानुंकाम्॥१७॥

निजानुका में न्यञ्चलिका। अमी वाचमुपासंतामिति। तस्मै सर्व ऋतवों नम्न्ते। मर्यादाकरत्वात्प्रंपुरोधाम्। ब्राह्मणं आप्नोति। य एवं वेद। स खलु संवथ्सर एतैः सेनानीभिः सह। इन्द्राय सर्वान्कामानिभवहति। स द्रफ्सः। तस्यैषा भवंति॥१८॥

अवंद्रफ्सो अर्श्शुमतींमतिष्ठत्। इयानः कृष्णो दशिनेः सहस्रैः। आवर्तिमन्द्रः शच्या धर्मन्तम्। उपस्रुहि तं नृमणामर्थद्रामिति। एतयैवेन्द्रः सलावृंक्या सह। असुरान् परिवृश्चति। पृथिव्यु॰्शुमंती। ताम्नव्वंस्थितः संवथ्सरो दिवं चं। नैवं विदुषाऽऽचार्यान्तेवासिनो। अन्योन्यस्मै द्रुह्याताम्। यो द्रुह्यति। भ्रश्यते स्वर्गाल्लोकात्। इत्यृतुमंण्डलानि। सूर्यमण्डलान्याख्यायिकाः। अत ऊर्ध्व॰ संनिर्वचनाः॥१९॥

आरोगो भ्राजः पटरंः पत्ङ्गः। स्वर्णरो ज्योतिषीमान् विभासः। ते अस्मै सर्वे दिवमांतपुन्ति। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। कश्यंपोऽष्ट्रमः। स महामेरुं नं जहाति। तस्यैषा भवंति। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंतपुष्कलं चित्रभांनु। यस्मिन्थ्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्॥२०॥

तस्मिन् राजानमधिविश्रयेमिमृति। ते अस्मै सर्वे कश्यपाञ्चोतिर्लभृन्ते। तान्थ्योमः कश्यपादिधिनिर्धमित। भ्रस्ताकर्मकृदिवैवम्। प्राणो जीवानीन्द्रियंजीवानि। सप्त शीर्षण्याः प्राणाः। सूर्या इंत्याचार्याः। अपश्यमहमेतान्थ्यप्त सूर्यानिति। पश्रकर्णो वाथ्स्यायनः। सप्तकर्णश्च प्राक्षिः॥२१॥

आनुश्रविक एव नौ कश्यंप इति। उभौ वेद्यिते। न हि शेकुमिव महामेरं गुन्तुम्। अपश्यमहमेथ्सूर्यमण्डलं परिवर्तमानम्। गार्ग्यः प्राणत्रातः। गच्छन्त महामेरुम्। एकं चाजहतम्। भ्राजपटरपतंङ्गा निहने। तिष्ठन्नांतपन्ति। तस्मांदिह तिर्नितपाः॥२२॥ अमुत्रेतरे। तस्मांदिहातिष्रितपाः। तेषांमेषा भवंति। सप्त सूर्या दिवमनुप्रविष्टाः। तान्-वेतिं पृथिभिदंक्षिणावान्ं। ते अस्मै सर्वे घृतमांतप्नि। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। सप्तर्त्विजः सूर्या इंत्याचार्याः। तेषांमेषा भवंति। सप्त दिशो नानांसूर्याः॥२३॥

स्प्त होतांर ऋत्विजंः। देवा आदित्यां ये स्प्ता तेभिः सोमाभी रक्षंण इति। तदंण्याम्नायः। दिग्भाज ऋतूँन् करोति। एतंयैवावृता सहस्रसूर्यताया इति वैशम्पायनः। तस्यैषा भवंति। यद्यावं इन्द्र ते श्तर श्तं भूमीः। उतस्युः। नत्वां विज्ञन्थ्सहस्रूष् सूर्याः॥२४॥

अनु न जातमष्ट रोदंसी इति। नानालिङ्गत्वाहतूनां नानांसूर्यत्वम्। अष्टौ तु व्यवसिता इति। सूर्यमण्डलान्यष्टांत ऊर्ध्वम्। तेषांमेषा भवंति। चित्रं देवानामुदंगादनींकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुंषश्चेति॥२५॥

[e]-

क्वेदमभ्रं निविशते। क्वायरं संवथ्सरो मिथः। क्वाहः क्वेयं देव रात्री। क्व मासा ऋतवः श्रिताः। अर्धमासां मुहूर्ताः। निमेषास्त्रृंटिभिः सह। क्वेमा आपो निविशन्ते। यदीतों यान्ति सम्प्रंति। काला अफ्सु निविशन्ते। आपः सूर्ये समाहिताः॥२६॥ अभ्राण्यपः प्रंपद्यन्ते। विद्युथ्सूर्यं सुमाहिता। अनवर्णे इंमे भूमी। इयं चांऽसौ च रोदंसी। किङ्स्विदत्रान्तंरा भूतम्। येनेमे विधृते उभे। विष्णुनां विधृते भूमी। इति वंथ्सस्य वेदंना। इरावती धेनुमती हि भूतम्। सूयवसिनी मनुषे दशस्यै॥२७॥

व्यष्टभाद्रोदंसी विष्णंवेते। दाधर्थं पृथिवीम्भितां म्यूखैंः। किं तिद्वष्णोर्वलमाहुः। का दीप्तिः किं प्रायंणम्। एकों यद्धारंयद्देवः। रेजतीं रोद्सी उंभे। वाताद्विष्णोर्वलमाहुः। अक्षराँदीप्तिरुच्यंते। त्रिपदाद्धारंयद्देवः। यद्विष्णोरेक-मृत्तंमम्॥२८॥

अग्नयो वायंवश्चैव। एतदंस्य प्रायंणम्। पृच्छामि त्वा पंरं मृत्युम्। अवमं मध्यमश्चंतुम्। लोकं च पुण्यंपापानाम्। एतत्पृच्छामि सम्प्रंति। अमुमांहुः पंरं मृत्युम्। प्वमानं तु मध्यंमम्। अग्निरेवावंमो मृत्युः। चन्द्रमांश्चतुरुच्यंते॥२९॥

अनाभोगाः पेरं मृत्युम्। पापाः संयन्ति सर्वदा। आभोगास्त्वेवं संयन्ति। यत्र पुण्यकृतो जनाः। ततो मध्यमंमायन्ति। चतुमंग्निं च सम्प्रति। पृच्छामि त्वां पापकृतः। यत्र यातयते यंमः। त्वं नस्तद्वह्मंन् प्रब्रूहि। यदि वैतथाऽसतो गृंहान्॥३०॥

कुश्यपांदुदिताः सूर्याः। पापान्निप्निन्त सर्वदा।

रोदस्योन्तंर्देशेषु। तत्र न्यस्यन्तं वास्वैः। तेऽशरीराः प्रंपद्यन्ते। यथाऽपुंण्यस्य कर्मणः। अपाँण्यपादंकेशासः। तत्र तेऽयोनिजा जंनाः। मृत्वा पुनर्मृत्युमांपद्यन्ते। अद्यमांनाः स्वकर्मभिः॥३१॥

आशातिकाः क्रिमंय इव। ततः पूयन्तं वास्रवैः। अपैतं मृत्युं जंयित। य पृवं वेदं। स खल्वैवं विद्वाह्मणः। दीर्घश्रुंत्तमो भवंति। कश्यंपस्यातिंथिः सिद्धगंमनः सिद्धागंमनः। तस्यैषा भवंति। आयस्मिन्थ्सप्त वांस्वाः। रोहंन्ति पूर्व्यां रुहंः॥३२॥

ऋषिंर्ह दीर्घश्रुत्तंमः। इन्द्रस्य घर्मो अतिथिरित। कश्यपः पश्यंको भ्वति। यथ्सर्वं परिपश्यतीति सौक्ष्म्यात्। अथाग्नेरष्टपुंरुषस्य। तस्यैषा भवंति। अग्ने नयं सुपर्था राये अस्मान्। विश्वानि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मज्जंहराणमेनः। भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेमेति॥३३॥

[८]

अग्निश्च जातंवेदाश्च। सहोजा अंजिराप्रभुः। वैश्वानरो नंर्यापाश्च। पुङ्किरांधाश्च सप्तमः। विसर्पेवाऽष्टंमोऽग्रीनाम्। एतेऽष्टौ वसवः, क्षिंता इति। यथर्त्वेवाग्नेरर्चिर्वर्णविशेषाः। नीलार्चिश्च पीतकांचिश्चेति। अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैका-दशंस्रीकस्य। प्रभ्राजमाना व्यंवदाताः॥३४॥

याश्च वासुंकिवैद्युताः। रजताः पर्रुषाः श्यामाः। कपिला

अंतिलोहिताः। ऊर्ध्वा अवपंतन्ताश्च। वैद्युत इंत्येकादश। नैनं वैद्युतों हिन्स्ति। य एवं वेद। स होवाच व्यासः पाराश्यायः। विद्युद्वधमेवाहं मृत्युमैंच्छमिति। न त्वकांम १ हन्ति॥३५॥

य एवं वेद। अथ गन्धर्वगणाः। स्वानुभ्राट्। अङ्घारिकम्भारिः। हस्तः सुहंस्तः। कृशांनुर्विश्वावंसुः। मूर्धन्वान्थ्सूर्यवर्चाः। कृतिरित्येकादश गन्धर्वगणाः। देवाश्च महादेवाः। रश्मयश्च देवां गर्गिरः॥३६॥

नैनं गरों हिन्स्ति। य एंवं वेद। गौरी मिंमाय सिल्लानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा परमे व्योमन्निति। वाचों विशेषणम्। अथ निगदंव्याख्याताः। ताननुर्क्रमिष्यामः। व्राहवंः स्वतपसः॥३७॥

विद्युन्महसो धूपंयः। श्वापयो गृहमेधाँश्चेत्येते। ये चेमेऽशिंमिविद्विषः। पर्जन्याः सप्त पृथिवीमभिवंर्षन्ति। वृष्टिंभिरिति। एतयैव विभक्तिविंपरीताः। सप्तिभिवां तैंरुदीरिताः। अमूँल्लोकानभिवंर्षन्ति। तेषांमेषा भवंति। समानमेतदुदंकम्॥३८॥

उ्चैत्यंवचाहंभिः। भूमिं पुर्जन्या जिन्वंन्ति। दिवं जिन्वन्त्यग्नय इति। यदक्षरं भूतकृतम्। विश्वं देवा उपासंते। महर्षिमस्य गोप्तारम्। जमदंग्निमकुर्वत। जमदंग्निराप्यांयते। छन्दोभिश्चतुरुत्तरेः। राज्ञः सोमस्य तृप्तासंः॥३९॥ ब्रह्मणा वीर्यावता। शिवा नंः प्रदिशो दिशंः। तच्छुं योरावृणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवींः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। सोमपा (३) असोमपा (३) इति निगदंव्याख्याताः॥४०॥

[8]

सहस्रवृदियं भूमिः। प्रं व्योम सहस्रवृत्। अश्विनां भुज्यूनास्त्या। विश्वस्यं जगतस्पंती। जाया भूमिः पंतिर्व्योम। मिथुनंन्ता अतुर्यथुः। पुत्रो बृहस्पंती रुद्रः। स्रमां इति स्रीपुमम्। शुक्रं वांम्न्यद्यंज्तं वांम्न्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिव स्थः॥४१॥

विश्वा हि माया अवंथः स्वधावन्तौ। भुद्रा वाँ पूषणाविह रातिरंस्तु। वासाँत्यौ चित्रौ जगंतो निधानौँ। द्यावांभूमी च्रथंः स् सखांयौ। ताविश्वनां रासभाश्वा हवंं मे। शुभस्पती आगतर्ं सूर्ययां सह। त्युग्रोह भुज्युमंश्विनोदमेघे। रियं न कश्चिन्ममृवां (२) अवांहाः। तमूहथुनौभिराँत्मन्वतींभिः। अन्तरिक्षप्रिङ्गिरपोदकाभिः॥४२॥

तिस्रः, क्षपस्त्रिरहांतिव्रजंद्भिः। नासंत्या भुज्युमूंहथुः पत्ङ्गेः। समुद्रस्य धन्वंन्नार्द्रस्यं पारे। त्रिभीरथैः शृतपंद्भिः षडंश्वैः। सवितारं वितंन्वन्तम्। अनुंबध्नाति शाम्बरः। आपपूर्षम्बरश्चैव। सवितारेपुसोऽभवत्। त्यः सुतृप्तं विदित्वैव। बहुसोम गिरं वंशी॥४३॥

अन्वेति तुग्रो वंक्रियान्तम्। आयसूयान्थ्सोमंतृपसुषु। स सङ्ग्रामस्तमौद्योऽत्योतः। वाचो गाः पिपाति तत्। स तद्गोभिः स्तवाऽत्येत्यन्ये। रक्षसानन्विताश्चं ये। अन्वेति परिवृत्याऽस्तः। एवमेतौ स्थो अश्विना। ते एते द्युंः पृथिव्योः। अहंरहर्गर्भं दधाथे॥४४॥

तयोंरेतौ वृथ्सावंहोरात्रे। पृथिव्या अहंः। दिवो रात्रिः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोंरेतौ वृथ्सौ। अग्निश्चांऽऽदित्यश्चं। रात्रेर्वृथ्सः। श्वेत आंदित्यः। अह्रोऽग्निः॥४५॥

ताम्रो अंरुणः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती पुव भंवतः। तयोरेतौ वृथ्सौ। वृत्रश्चं वैद्युतश्चं। अग्नेर्वृत्रः। वैद्युतं आदित्यस्यं। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोरेतौ वथ्सौ॥४६॥

उष्मा चं नीहारश्चं। वृत्रस्योष्मा। वैद्युतस्यं नीहारः। तौ तावेव प्रतिपद्येते। सेय॰ रात्रीं गुर्भिणीं पुत्रेण संवंसित। तस्या वा एतदुल्बणम्। यद्रात्रौं रृष्टमयः। यथा गोर्गिभिण्यां उल्बणम्। एवमेतस्यां उल्बणम्। प्रजियष्णुः प्रजया च पशुभिश्च भ्वति। य एवं वेद। एतमुद्यन्तमिपयंन्तं चेति। आदित्यः पुण्यंस्य वृथ्सः। अथ पवित्राङ्गिरसः॥४७॥

.[१०]

पवित्रंवन्तः परिवाजमासंते। पितैषां प्रत्नो अभिरंक्षति

व्रतम्। महः संमुद्रं वर्रणस्तिरोदेधे। धीरां इच्छेकुर्धरुणेष्वारभम्। पिवत्रं ते वितंतं ब्रह्मणस्पते। प्रभुगित्राणि पर्येषिविश्वतः। अतंप्ततनूर्न तदामो अंश्रुते। शृतास् इद्वहंन्तस्तथ्समांशत। ब्रह्मा देवानांम्। असंतः सद्ये ततंक्षुः॥४८॥

ऋषंयः सप्तात्रिश्च यत्। सर्वेऽत्रयो अंगस्त्यश्च। नक्षंत्रैः शङ्कृंतोऽवसन्। अथं सवितुः श्यावाश्वस्याऽवर्तिकामस्य। अमी य ऋक्षा निहिंतास उचा। नक्तं दर्दश्चे कुहंचिद्दिवेयुः। अदंब्धानि वर्रुणस्य वृतानि। विचाकशंचन्द्रमा नक्षंत्रमेति। तथ्संवितुवरिंण्यम्। भर्गो देवस्यं धीमहि॥४९॥

धियो यो नंः प्रचोदयाँत्। तथ्संवितुर्वृणीमहे। वयं देवस्य भोजनम्। श्रेष्ठ सर्वधातमम्। तुरं भगस्य धीमहि। अपांगूहत सविता तृभीन्। सर्वान्दिवो अन्धंसः। नक्तं तान्यंभवन्दृशे। अस्थ्यस्थ्रा सम्भंविष्यामः। नाम् नामैव नाम में॥५०॥

नपुरसंकं पुमार्क्स्यस्मि। स्थावंरोऽस्म्यथ् जङ्गंमः। यजेऽयिक्षे यष्टाहे चं। मयां भूतान्यंयक्षत। पृशवों ममं भूतानि। अनूबन्ध्योऽस्म्यंहं विभुः। स्त्रियंः स्तीः। ता उमे पुर्स आंहुः। पश्यंदक्षण्वान्नविचेतद्न्धः। क्विर्यः पुत्रः स इमा चिकेत॥५१॥

यस्ता विजानाथ्मंवितुः पितासंत्। अन्धो मणिमंविन्दत्।

तमंनङ्गुलिरावंयत्। अग्रीवः प्रत्यंमुश्चत्। तमजिंह्वा असश्चंत। ऊर्ध्वमूलमंवाक्छाखम्। वृक्षं यो वेद् सम्प्रंति। न स जातु जनः श्रद्दध्यात्। मृत्युर्मा मार्यादितिः। हसित॰ रुदितं गीतम्॥५२॥

वीर्णापणवलासितम्। मृतं जीवं चं यत्किश्चित्। अङ्गानिं स्नेव विद्धिं तत्। अतृष्यु इस्तृष्यंध्यायत्। अस्माञ्जाता में मिथू चरत्रं। पुत्रो निर्ऋत्यां वैदेहः। अचेतां यश्च चेतनः। स् तं मणिमंविन्दत्। सोऽनङ्गुलिरावंयत्। सोऽग्रीवः प्रत्यंमुश्चत्॥५३॥

सोऽजिंह्वो असश्चंता नैतमृषिं विदित्वा नगरं प्रविशेत्। यदि प्रविशेत्। मिथौ चरित्वा प्रविशेत्। तथ्सम्भवंस्य व्रतम्। आतमग्ने रथं तिष्ठ। एकांश्वमेक्योजनम्। एकचर्ममेक्धुरम्। वातध्रांजिगतिं विभो। न रिष्यतिं न व्यथते॥५४॥

नास्याक्षों यातु सर्जाति। यच्छेतांन रोहिंता इश्वाग्नेः। र्थे युंकाऽधितिष्ठंति। एकया च दशिक्षं स्वभूते। द्वाभ्यामिष्टये विर्शत्या च। तिसृभिश्च वहसे त्रिरंशता च। नियुद्धिर्वायविह तां विमुश्च॥५५॥

[88]

आतंनुष्व प्रतंनुष्व। उद्धमाऽऽधंम् सन्धंम। आदित्ये चन्द्रंवर्णानाम्। गर्भमाधेहि यः पुमान्। इतः सिक्तः सूर्यगतम्। चन्द्रमंसे रसं कृधि। वारादं जनयाग्रेऽग्निम्। य एको रुद्र उच्यंते। असङ्ख्याताः संहस्राणि। स्मर्यते न च दृश्यंते॥५६॥

पुवमेतं निंबोधत। आ मन्द्रैरिन्द्र हरिंभिः। याहि मयूररोमिभः। मा त्वा केचिन्नियेमुरिन्न पाशिनः। द्धन्वेव ता इंहि। मा मन्द्रैरिन्द्र हरिंभिः। यामि मयूररोमिभः। मा मा केचिन्नियेमुरिन्न पाशिनः। नि्धन्वेव तां (२) इंमि। अणुभिश्च महद्भिश्व॥५७॥

निघृष्वैरस्मायुंतैः। कालैर्हिरत्वंमापृत्तैः। इन्द्राऽऽयांहि स्हस्रयुक्। अग्निर्विभाष्टिंवसनः। वायुः श्वेतंसिकद्रुकः। संवथ्सरो विषूवर्णैः। नित्यास्तेऽनुचरास्त्व। सुब्रह्मण्योश सुब्रह्मण्योश सुंब्रह्मण्योम्। इन्द्राऽऽगच्छ हरिव आगच्छ मेधातिथेः। मेष वृषणश्वंस्य मेने॥५८॥

गौरावस्कन्दिन्नहल्यांये जार। कौशिकब्राह्मण गौतमंब्रुवाण। अरुणाश्वां इहागंताः। वसंवः पृथिविक्षितंः। अष्टौदिग्वासंसोऽग्नयंः। अग्निश्च जातवेदांश्चेत्येते। ताम्राश्वांस्ताम्ररथाः। ताम्रवर्णांस्तथाऽसिताः। दण्डहस्ताः खादग्दतः। इतो रुद्राः पराङ्गताः॥५९॥

उक्त इस्थानं प्रमाणं च पुर् इत। बृह्स्पतिश्च सिवता च। विश्वरूपैरिहाऽऽगंताम्। रथेनोदक्वर्त्मना। अपसुषां इति तद्वंयोः। उक्तो वेषों वासार्धिस च। कालावयवानामितः प्रतीच्या। वासात्यां इत्यश्विनोः। कोऽन्तरिक्षे शब्दं करोतीति। वासिष्टो रौहिणो मीमा रेसां चुके। तस्यैषा भवंति। वाश्रेवं विद्युदितिं। ब्रह्मण उदरणमिस। ब्रह्मण उदीरणमिस। ब्रह्मण आस्तरंणमिस। ब्रह्मण उपस्तरंणमिस॥६०॥

-[१२]

# [अपंक्रामत गर्भिण्यंः]

अष्टयोनीम्ष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीम्मां महींम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयोन्यृष्टपुंत्रम्। अष्टपंदिदम्नतिरक्षम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न चामृत्युरघाऽऽहंरत्। अष्टयोनीम्ष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीम्मूं दिवम्॥६१॥

अहं वेद न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। सुत्रामाणं महीमू षु। अदितिर्घौरदितिर्न्तिरेक्षम्। अदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वे देवा अदितिः पश्चजनाः। अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्। अष्टौ पुत्रासो अदितेः। ये जातास्तन्वः परि। देवां (२) उपप्रैथ्सप्तभिः॥६२॥

प्रा मार्ताण्डमास्यंत्। सप्तिनिः पुत्रेरिदंतिः। उपप्रैत्पूर्वं युगम्। प्रजायं मृत्यवे तंत्। प्रा मार्ताण्डमाभरदिति। ताननुक्रमिष्यामः। मित्रश्च वरुणश्च। धाता चाँर्यमा चं। अश्रशंश्च भगंश्च। इन्द्रश्च विवस्वाईश्चेत्येते। हिर्ण्यगर्भो ह्रसः शुंचिषत्। ब्रह्मंजज्ञानं तिदत्पदिमिति। गर्भः प्रांजापत्यः। अथु पुरुषः सप्त पुरुषः॥६३॥

## [यथास्थानं गंर्भिण्यः]

[१३]

योऽसौं तपत्रुदेति। स सर्वेषां भूतानाँ प्राणानादायोदेति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायोदंगाः। असौ यौंऽस्तमेति। स सर्वेषां भूतानाँ प्राणानादायास्तमेति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायास्तंङ्गाः। असौ य आपूर्यति। स सर्वेषां भूतानाँ प्राणैरापूर्यति॥६४॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरापूरिष्ठाः। असौ योऽपक्षीयिति। स सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंक्षीयिति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंक्षेष्ठाः। अमूनि नक्षेत्राणि। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृपत् मोथ्मृंपत॥६५॥

ड्रमे मासाँश्चार्थमासाश्चं। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रस्पत् मोथ्संपत। इम ऋतवंः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोथ्संपत। अय संवथ्सरः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोथ्संपति च॥६६॥ मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। इदमहंः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पति चोथ्संपति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। इय॰ रात्रिः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पति चोथ्संपति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। ॐ भूर्भुवः स्वंः। एतद्वो मिथुनं मा नो मिथुन १ रीढ्वम्॥६७॥

[88]

अथाऽऽदित्यस्याष्टपुंरुष्स्य। वसूनामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रुद्राणामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। आदित्यानामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। सताः सत्यानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अभिधून्वतांमभिष्नताम्। वातवंतां मुरुताम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। ऋभूणामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। विश्वेषां देवानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। संवथ्सरंस्य स्वितुः। आदित्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। संवथ्सरंस्य स्वितुः। आदित्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भवः स्वः। रश्मयो वो मिथुनं मा नो मिथुनः रीद्वम्॥६८॥

[१५]

आरोगस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। भ्राजस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पटरस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पतङ्गस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। स्वर्णरस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ज्योतिषीमतस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। विभासस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। कश्यपस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भृवः स्वंः। आपो वो मिथुनं मा नो मिथुनं रीढ्वम्॥६९॥ ——[१६]

अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैकादशंस्रीकृस्य। प्रभ्राजमानानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। व्यवदातानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। वासुिकवैद्युतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रजतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। श्यामानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। कपिलानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अधिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अध्वानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि।

अवपतन्तानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। वैद्युतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। प्रभ्राजमानीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। व्यवदातीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। वासुकिवैद्युतीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। रजतानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। श्यामानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। कपिलानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। अतिलोहितीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। अतिलोहितीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। अधिलोहितीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। अधिलोहितीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जंसा अथाग्नेरष्टपुंरुष्स्य। अग्नेः पूर्विदश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। जातवेदस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। सहोजसो दक्षिणदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। अजिराप्रभव उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। वैश्वानरस्यापरदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। नर्यापस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पङ्किराधस उदग्दिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। विसर्पिण उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। दिशो वो मिथुनं मा नो मिथुन १ रीद्वम्॥ ७ २॥

[86]

दक्षिणपूर्वस्यां दिशि विसंपीं नुरकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। दक्षिणापरस्यां दिश्यविसंपीं नुरकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरपूर्वस्यां दिशि विषादी नुरकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरापरस्यां दिश्यविषादी नुरकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। आ यस्मिन्थ्सप्त वासवा इन्द्रियाणि शतक्रतंवित्येते॥७३॥

इन्द्रघोषा वो वसुंभिः पुरस्तादुपंदधताम्। मनोजवसो वः पितृभिर्दक्षिणृत उपंदधताम्। प्रचेता वो रुद्रैः

पृश्चादुपंदधताम्। विश्वकंमां व आदित्यैरुंत्तर्त उपंदधताम्।

त्वष्टां वो रूपैरुपरिष्टादुपंदधताम्। संज्ञानं वः पश्चादिति। आदित्यः सर्वोऽग्निः पृथिव्याम्। वायुर्न्तरिक्षे। सूर्यो दिवि। चन्द्रमां दिक्षु। नक्षंत्राणि स्वलोके। एवा ह्यंव। एवा ह्यंग्ने। एवा हि वायो। एवा हीन्द्र। एवा हि पूषन्। एवा हि देवाः॥७४॥

[२०]

आपंमापाम्पः सर्वाः। अस्माद्स्मादितोऽम्तः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्करिर्द्धया। वाय्वश्वां रश्मिपतंयः। मरींच्यात्मानो अद्रुंहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। महुसो महसः स्वः॥७५॥

देवीः पंजन्यसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। अपाश्चंिष्णम्पा रक्षः। अपाश्चंिष्णम्पा रघम्। अपाष्ट्रामपंचावर्तिम्। अपदेवीरितो हित। वर्ज्ञं देवीरजीता ॥ भवंनं देवसूर्वरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत॥ ७६॥

भृद्रं कर्णंभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैं स्तुष्टुवा र संस्तृनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। केतवो अर्रुणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठा श्वतधां हि। सुमाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु।

दिव्या आप् ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥७७॥

[२१]

योऽपां पुष्पं वेदं। पुष्पंवान् प्रजावांन् पशुमान् भंवति। चन्द्रमा वा अपां पुष्पम्। पुष्पंवान् प्रजावांन् पशुमान् भंवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। अग्निर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योंऽग्नेरायतंनं वेदं॥७८॥

आयतंनवान् भवति। आपो वा अग्नेरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनुं वेदं। आयतंनवान् भवति। वायुर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो वायोरायतंनुं वेदं। आयतंनवान् भवति॥७९॥

आपो वै वायोरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। असौ वै तपंत्रपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽमुष्य तपंत आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वा अमुष्य तपंत आयतंनम्॥८०॥

आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। चन्द्रमा वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यश्चन्द्रमंस आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै चन्द्रमंस आयतंनम्। आयतंनवान् भवति॥८१॥ य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। नक्षंत्राणि वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो नक्षंत्राणामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै नक्षंत्राणामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं॥८२॥

योऽपामायतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। पूर्जन्यो वा अपामायतेनम्। आयतेनवान् भवति। यः पूर्जन्यंस्याऽऽयतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। आपो वै पूर्जन्यंस्याऽऽयतेनम्। आयतेनवान् भवति। य पुवं वेदे। योऽपामायतेनं वेदे॥८३॥

आयतंनवान् भवति। संवथ्सरो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः संवथ्सरस्याऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै संवथ्सरस्याऽऽयतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। यौऽपसु नावं प्रतिष्ठितां वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥८४॥

इमे वै लोका अपसु प्रतिष्ठिताः। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। अपाश् रस्मुदंयश्सन्। सूर्ये शुक्रश् स्मार्भृतम्। अपाश् रसंस्य यो रसंः। तं वो गृह्णाम्युत्तममितिं। इमे वै लोका अपाश् रसंः। तेऽमुष्मिन्नादित्ये स्मार्भृताः। जानुद्व्रीम्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरियत्वा गुल्फद्व्रम्॥८५॥

पुष्करपर्णैः पुष्करदण्डैः पुष्करैश्चं सङ्स्तीर्य। तस्मिन्वि-हायसे। अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मौत्प्रणीतेऽयमुग्निश्चीयतैं। साप्रणीतेऽयमुफ्सु ह्ययंं चीयतें। असौ भुवंनेऽप्यनांहिताग्निरेताः। तम्भितं एता अबीष्टंका उपंदधाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयोः। पृशुबन्धे चांतुर्मास्येषुं॥८६॥

अथो आहुः। सर्वेषु यज्ञऋतुष्वितिं। एतद्धं स्मृ वा आहुः शण्डिलाः। कमृग्निं चिनुते। सृत्रियमृग्निं चिन्वानः। स्वथ्म्रं प्रत्यक्षेण। कमृग्निं चिनुते। सावित्रमृग्निं चिन्वानः। अमुमादित्यं प्रत्यक्षेण। कमृग्निं चिनुते॥८७॥

नाचिकेतम् ग्निं चिन्वानः। प्राणान्य्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिनुते। चातुर्होत्रियम् ग्निं चिन्वानः। ब्रह्मं प्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिनुते। वैश्वसृजम् ग्निं चिन्वानः। शरीरं प्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिनुते। उपानुवाक्यमाशुम् ग्निं चिन्वानः॥८८॥

इमाँ ल्लोकान्य्रत्यक्षेण। कम्भिं चिनुते। इममां रूणकेतुकम्भिं चिन्वान इति। य एवासौ। इतश्चाऽम्त्रंश्चाऽव्यतीपाती। तिमिति। यौं उग्नेर्मिथूया वेदे। मिथुन्वान्नंवति। आपो वा अग्नेर्मिथूयाः। मिथुन्वान्नंवति। य एवं वेदे॥८९॥

आपो वा इदमांसन्थ्सिल्लमेव। स प्रजापंतिरेकः पुष्करपूर्णे समंभवत्। तस्यान्तुर्मनंसि कामः समंवर्तत। इदः सृजेयमिति। तस्माद्यत्पुरुषो मनसाऽभिगच्छंति। तद्वाचा वंदति। तत्कर्मणा करोति। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। कामस्तदग्रे समंवर्तताधि। मनसो रेतः प्रथमं यदासीत्॥९०॥ स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषेति। उपैनन्तदुपंनमित। यत्कांमो भवंति। य एवं वेदं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तृत्वा। शरीरमधूनुत। तस्य यन्मा १ समासींत्। ततोंऽरुणाः केतवो वातंरश्ना ऋषंय उदंतिष्ठन्॥९१॥

ये नखाः। ते वैखान्साः। ये वालाः। ते वालखिल्याः। यो रसः। सोऽपाम्। अन्तर्तः कूर्मं भूतः सर्पन्तम्। तमंब्रवीत्। मम् वैत्वङ्गार्सा। समंभूत्॥९२॥

नेत्यंब्रवीत्। पूर्वमेवाहमिहासमितिं। तत्पुरुंषस्य पुरुष्त्वम्। स सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। भूत्वोदंतिष्ठत्। तमंब्रवीत्। त्वं वै पूर्वर्रं समंभूः। त्विमदं पूर्वः कुरुष्वेतिं। स इत आदायाऽऽपः॥९३॥

अञ्चलिनां पुरस्तांदुपादंधात्। एवा ह्येवेतिं। ततं आदित्य उदंतिष्ठत्। सा प्राची दिक्। अथांरुणः केतुर्दंक्षिणत उपादंधात्। एवा ह्यम् इतिं। ततो वा अग्निरुदंतिष्ठत्। सा दंक्षिणा दिक्। अथांरुणः केतुः पृश्चादुपादंधात्। एवा हि वायो इतिं॥९४॥

ततों वायुरुदंतिष्ठत्। सा प्रतीची दिक्। अथांरुणः केतुरुंत्तर्त उपादंधात्। एवा हीन्द्रेतिं। ततो वा इन्द्र उदंतिष्ठत्। सोदींची दिक्। अथांरुणः केतुर्मध्यं उपादंधात्। एवा हि पूष्तिति। ततो वै पूषोदंतिष्ठत्। सेयं दिक्॥९५॥

अथांरुणः केतुरुपरिष्टादुपादंधात्। एवा हि देवा इतिं। ततो देवमनुष्याः पितरंः। गुन्धुर्वाप्रसुरस्श्लोदंतिष्ठन्। सोध्वां दिक्। या विप्रुषों विपरापतन्। ताभ्योऽसुंरा रक्षांश्रेसि पिशाचाश्लोदंतिष्ठन्। तस्मात्ते पराभवन्। विप्रुङ्ग्रो हि ते समंभवन्। तदेषाऽभ्यनूँक्ता॥९६॥

आपो ह् यह्नंहृतीर्गर्भमायत्रं। दक्ष्वं दधांना जनयंन्तीः स्वयम्भुम्। ततं इमेध्यसृंज्यन्त् सर्गाः। अद्भो वा इदश् सम्भूत्। तस्मादिदश् सर्वं ब्रह्मं स्वयम्भिवतिं। तस्मादिदश् सर्वश् शिथिलम्वाऽध्रुवंमिवाभवत्। प्रजापंतिर्वाव तत्। आत्मनाऽऽत्मानं विधायं। तदेवानुप्राविशत्। तदेषाऽभ्यनूक्ता॥९७॥

विधायं लोकान् विधायं भूतानि। विधाय सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। आत्मनाऽऽत्मानंम्भि संविवेशेतिं। सर्वमेवेदमा्ष्वा। सर्वमव्रुद्धां। तदेवानुप्रविशति। य एवं वेदं॥९८॥ [२३]

चतुंष्टय्य आपों गृह्णाति। चत्वारि वा अपाः रूपाणि। मेघों विद्युत्। स्तुन्यिन्नुर्वृष्टिः। तान्येवावंरुन्थे। आतपंति वर्ष्यां गृह्णाति। ताः पुरस्तादुपंदधाति। पुता वै ब्रह्मवर्चस्या आपंः। मुख्त एव ब्रंह्मवर्चसमवंरुन्धे। तस्मान्मुख्तो ब्रंह्मवर्चसितंरः॥९९॥

कूप्यां गृह्णाति। ता दंक्षिण्त उपंदधाति। एता वै तेंज्ञस्विनीरापंः। तेजं एवास्यं दक्षिण्तो दंधाति। तस्माद्दक्षिणोऽर्धस्तेज्ञस्वितंरः। स्थावरा गृंह्णाति। ताः पश्चादुपंदधाति। प्रतिष्ठिता वै स्थावराः। पश्चादेव प्रतितिष्ठति। वहंन्तीर्गृह्णाति॥१००॥

ता उत्तर्त उपंदधाति। ओर्जसा वा एता वहंन्तीरिवोद्गंतीरिव आकूर्जतीरिव धावंन्तीः। ओर्ज एवास्यौत्तर्तो दंधाति। तस्मादुत्तरोऽर्धं ओज्स्वितंरः। सम्भार्या गृंह्णाति। ता मध्य उपंदधाति। इयं वै संम्भार्याः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। पुल्वल्या गृंह्णाति। ता उपरिष्टादुपादंधाति॥१०१॥

असौ वै पंल्वयाः। अमुष्यांमेव प्रतितिष्ठति। दिक्षूपंदधाति। दिक्षु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अन्द्यो वा अन्नं जायते। यदेवान्द्योऽन्नं जायते। तदवंरुन्धे। तं वा एतमंरुणाः केतवो वातंरश्ना ऋषंयोऽचिन्वन्। तस्मांदारुणकेतुकंः॥१०२॥

तदेषाऽभ्यनूँक्ता। केतवो अर्रुणासश्च। ऋषयो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठाः श्वतधां हि। समाहितासो सहस्रधायंसमिति। श्वतशंश्चेव सहस्रंशश्च प्रतितिष्ठति। य एतम्ग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०३॥

[२४]

जानुद्धीमुंत्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरयति। अपार संर्वत्वायं। पुष्करपूर्णर रुकां पुरुष्मित्युपंदधाति। तपो वै पुष्करपूर्णम्। सत्यर रुकाः। अमृतं पुरुषः। एतावृद्वा वाऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति॥१०४॥

तदवंरुन्थे। कूर्ममुपंदधाति। अपामेव मेधमवंरुन्थे। अथौं स्वर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्ये। आपंमापामपः सर्वाः। अस्मा-दस्मादितोऽमुतः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्क्ररिद्धंया इति। वाय्वश्वां रिश्मपत्यः। लोकं पृणच्छिद्रं पृण॥१०५॥

यास्तिम्नः पंरम्जाः। इन्द्रघोषा वो वसुंभिरेवाह्येवेतिं। पश्च-चितंय उपंदधाति। पाङ्गोऽग्निः। यावांनेवाग्निः। तं चिंनुते। लोकं पृंणया द्वितीयामुपंदधाति। पश्चं पदा वै विराट्। तस्या वा इयं पादंः। अन्तरिक्षं पादंः। द्यौः पादंः। दिशः पादंः। प्रोरजाः पादंः। विराज्येव प्रतितिष्ठति। य एतमृग्निं चिंनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०६॥

अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। तम्भित पुता अबीष्टका उपंदधाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयौः। पृशुबन्धे चांतुर्मास्येषुं। अथो आहुः। सर्वेषु यज्ञऋतुष्वितिं। अथे ह स्माहारुणः स्वांयम्भुवंः। सावित्रः सर्वोऽग्निरित्यनंनुषङ्गं मन्यामहे। नाना वा पृतेषां वीर्याणि। कम्ग्निं चिंनुते॥१०७॥ सत्रियमग्निं चिंन्वानः। कमग्निं चिंनुते। सावित्रमग्निं

चिन्वानः। कम्ग्निं चिन्ते। नाचिकेतम्ग्निं चिन्वानः। कम्ग्निं चिन्ते। चातुर्होत्रियम्ग्निं चिन्वानः। कम्ग्निं चिन्ते। वैश्वसृजम्ग्निं चिन्वानः। कम्ग्निं चिन्ते॥१०८॥

उपानुवाक्यंमाशुम्ग्निं चिंन्वानः। कम्ग्निं चिंनुते। इममारुणकेतुकम्ग्निं चिंन्वान इतिं। वृषा वा अग्निः। वृषाणौ सङ्स्फालयेत्। हुन्येतास्य युज्ञः। तस्मान्नानुषज्येः। सोत्तंरवेदिषुं ऋतुषुं चिन्वीत। उत्तर्वेद्याङ् ह्यंग्निश्चीयतैं। प्रजाकामश्चिन्वीत॥१०९॥

प्राजापत्यो वा पृषों ऽग्निः। प्राजापत्याः प्रजाः। प्रजावांन् भवति। य एवं वेदे। पृशुकांमश्चिन्वीत। संज्ञानं वा एतत् पंशूनाम्। यदापंः। पृशूनामेव संज्ञानेऽग्निं चिन्ते। पृशुमान् भंवति। य एवं वेदे॥११०॥

वृष्टिंकामश्चिन्वीत। आपो वै वृष्टिः। पूर्जन्यो वर्षुंको भवति। य एवं वेदं। आमयावी चिन्वीत। आपो वै भेषजम्। भेषजमेवास्मैं करोति। सर्वमायुरिति। अभिचर श्विन्वीत। वज्रो वा आपंः॥१११॥

वर्ज्रमेव भ्रातृं व्येभ्यः प्रहंरित। स्तृणुत एनम्। तेजंस्कामो यशंस्कामः। ब्रह्मवर्ज्यसकामः स्वर्गकामश्चिन्वीत। एतावृद्वा वाँऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति। तदवंरुन्थे। तस्यैतद्वृतम्। वर्षित् न धांवेत्॥११२॥

अमृतं वा आपंः। अमृत्स्यानंन्तरित्यै। नाफ्सु मूत्रंपुरीषं

कुर्यात्। न निष्ठीवेत्। न विवसनः स्नायात्। गृह्यो वा एषौऽग्निः। एतस्याग्नेरनंतिदाहाय। न पुष्करपूर्णानि हिरंण्यं वाऽधितिष्ठैत्। एतस्याग्नेरनंभ्यारोहाय। न कूर्मस्याश्नीयात्। नोदकस्याघातुंकान्येनंमोदकानिं भवन्ति। अघातुंका आपः। य एतम्ग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥११३॥

-[२६]

ड्मानुंकं भुंवना सीषधेम। इन्द्रेश्च विश्वें च देवाः। यज्ञं चं नस्तन्वं चं प्रजां चं। आदित्यैरिन्द्रंः सह सीषधातु। आदित्यैरिन्द्रः सगंणो मुरुद्धिः। अस्माकं भूत्वविता तनूनाम्। आप्रंवस्व प्रप्लंबस्व। आण्डीभंवज् मा मुहुः। सुखादीन्दुंःखनिधनाम्। प्रतिमुश्चस्व स्वां पुरम्॥११४॥

मरींचयः स्वायम्भुवाः। ये शंरीराण्यंकल्पयन्। ते ते देहं केल्पयन्तु। मा चं ते ख्यास्मं तीरिषत्। उत्तिष्ठत् मा स्वंप्ता अग्निमिच्छध्वं भारताः। राज्ञः सोमंस्य तृप्तासंः। सूर्येण स्युजोषसः। युवां सुवासाः। अष्टाचंक्रा नवंद्वारा॥११५॥

देवानां पूर्ययोध्या। तस्यार् हिरण्मयः कोशः। स्वर्गो लोको ज्योतिषाऽऽवृंतः। यो वै ताँ ब्रह्मणो वेद। अमृतेनाऽऽवृतां पुरीम्। तस्मैं ब्रह्म चं ब्रह्मा च। आयुः कीर्तिं प्रजां दंदुः। विभ्राजमानार् हरिणीम्। यशसां सम्प्रीवृंताम्। पुर्रं हिरण्मयीं ब्रह्मा॥११६॥

विवेशांऽपुराजिता। पराङेत्यंज्याम्यी। पराङेत्यंनाश्की।

-[२७]

इह चांमुत्रं चान्वेति। विद्वान्देवासुरानुंभ्यान्। यत्कुंमारी मन्द्रयंते। यद्योषिद्यत्पंतिव्रतां। अरिष्टं यत्किं चं क्रियतें। अग्निस्तदनुंवेधति। अशृतांसः शृंतासश्च॥११७॥

युज्वानो येऽप्यंयुज्वनंः। स्वंर्यन्तो नापेंक्षन्ते। इन्द्रंमृग्निं यं विदुः। सिकंता इव स्यन्तिं। रिष्मिभिः समुदीरिताः। अस्माल्लोकादंमुष्माच। ऋषिभिरदात्पृश्निभिः। अपेत वीत वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अहोभिरद्भिरक्तुः। भिर्व्यक्तम्॥११८॥

यमो दंदात्ववसानंमस्मै। नृ मुंणन्तु नृपात्वर्यः। अकृष्टा ये च कृष्टंजाः। कुमारींषु कनीनींषु। जारिणींषु च ये हिताः। रेतः पीता आण्डंपीताः। अङ्गारेषु च ये हुताः। उभयांन् पुत्रंपौत्रकान्। युवेऽहं यमराजंगान्। शतमिन्नु श्ररदंः॥११९॥

अदो यद्वर्ह्म विल्बम्। पितृणां चे यमस्यं च। वर्रुणस्याश्विनोर्ग्नेः। मुरुतां च विहायसाम्। कामुप्रयवणं मे अस्तु। स ह्येवास्मि सुनातनः। इति नाको ब्रह्मिश्रवो रायो धनम्। पुत्रानापो देवीरिहाऽऽहित॥१२०॥

विशींर्ष्णीं गृध्रंशीर्ष्णीं च। अपेतों निर्ऋति हैथः। परिबाध श्वेंतकुक्षम्। निजङ्घ शब्लोदंरम्। स् तान् वाच्यायंया सह। अग्ने नाशंय सन्दर्शः। ईर्ष्यासूये बुंभुक्षाम्। मन्युं कृत्यां चे दीधिरे। रथेन किश्शुकावंता। अग्ने नाशंय

## सन्दर्शः॥१२१॥

[२८]

पूर्जन्यांय प्रगांयत। दिवस्पुत्रायं मीदुषें। स नी यवसंमिच्छतु। इदं वचेः पूर्जन्यांय स्वराजें। हृदो अस्त्वन्तंरन्तद्यंयोत। मयोभूर्वातों विश्वकृष्टयः सन्त्वस्मे। सुपिप्पुला ओषंधीर्देवगोपाः। यो गर्भमोषंधीनाम्। गवौं कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणांम्॥१२२॥

[२९]

पुनंमांमैत्विन्द्रियम्। पुन्रायुः पुन्भगंः। पुन्क्राह्मंणमैतु
मा। पुन्द्रविंणमैतु मा। यन्मेऽद्य रेतंः पृथिवीमस्कान्।
यदोषंधीरप्यसंर्द्यदापंः। इदं तत्पुन्रादंदे। दीर्घायुत्वाय
वर्चसे। यन्मे रेतः प्रसिच्यते। यन्म आजांयते पुनंः। तेनं
माम्मृतंं कुरु। तेनं सुप्रजसंं कुरु॥१२३॥

[३०]

अद्मस्तिरोऽधाऽजांयत। तवं वैश्रवणः संदा। तिरोऽधेहि सपुत्रान्नः। ये अपोऽश्रन्तिं केचन। त्वाष्ट्रीं मायां वैंश्रवणः। रथ सहस्रवन्धुंरम्। पुरुश्चऋ सहस्राश्वम्। आस्थायायाहि नो बुलिम्। यस्मैं भूतानिं बुलिमावंहन्ति। धनं गावो हस्ति हिरंण्यमश्वानं॥१२४॥

असाम सुमृतौ युज्ञियंस्य। श्रियं बिश्रृतोऽन्नंमुखीं विराजम्। सुदर्शने च ऋौश्चे च। मैनागे च महागिरौ। शृतद्वाट्टारंगमुन्ता। सुरहायं नगरं तव। इति मन्नाः। कल्पोंऽत ऊर्ध्वम्। यदि बलि॰ हरेंत्। हिर्ण्यनाभयें वितुदयें कौबेरायायं बंलिः॥१२५॥

सर्वभूताधिपतये नम इति। अथ बलि हत्वोपंतिष्ठेत। क्षत्रं क्षत्रं वैश्वणः। ब्राह्मणां वयु स्मः। नमस्ते अस्तु मा मां हि सीः। अस्मात्प्रविश्यान्नंमद्धीति। अथ तमग्निमांदधीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुश्चीत। तिरोऽधा भूः। तिरोऽधा भुवंः॥१२६॥

तिरोऽधाः स्वंः। तिरोऽधा भूर्भुवः स्वंः। सर्वेषां लोकानामाधिपत्यं सीदेति। अथ तमग्निंमिन्धीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुश्चीत। तिरोऽधा भूः स्वाहाँ। तिरोऽधा भुवः स्वाहाँ। तिरोऽधाः स्वंः स्वाहाँ। तिरोऽधाः भूर्युः स्वाहाँ। विरोऽधाः भूर्युः स्वाहाँ। यस्मिन्नस्य काले सर्वा आहुतीर्हुतां भवेयुः॥१२७॥

अपि ब्राह्मणंमुखीनाः। तस्मिन्नहः काले प्रंयुञ्जीत। परंः सुप्तजंनाद्वेपि। मास्म प्रमाद्यन्तंमाध्यापयेत्। सर्वार्थाः सिद्ध्यन्ते। य एवं वेद। क्षुध्यन्निदंमजानताम्। सर्वार्थाः नं सिद्ध्यन्ते। यस्ते विघातुंको भ्राता। ममान्तर्ह्हंदये श्रितः॥१२८॥

तस्मां इममग्रपिण्डं जुहोमि। स मैंऽर्थान्मा विवंधीत्। मिय स्वाहाँ। राजाधिराजायं प्रसह्यसाहिनें। नमों वयं वैश्ववणायं कुर्महे। स मे कामान्कामकामाय मह्यम्। कामेश्वरो वैश्ववणो दंदातु। कुबेरायं वैश्ववणायं। महाराजाय नर्मः। केतवो अरुणासश्च। ऋषयो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठाः श्तथां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप् ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥१२९॥

[३१]

संवथ्सरमेतंद्वतं चरेत्। द्वौ वा मासौ। नियमः संमासेन। तस्मिन्नियमंविशेषाः। त्रिषवणमुदकोपस्पूर्शी। चतुर्थकालपानंभक्तः स्यात्। अहरहर्वा भैक्षंमश्रीयात्। औदुम्बरीभिः समिद्धिरग्निं परिचरेत्। पुनर्मामैत्त्विन्द्रियमि-त्येतेनानुंवाकेन। उद्धृतपरिपूताभिरद्भिः कार्यं कुर्वीत॥१३०॥

अंसश्चयवान्। अग्नये वायवें सूर्याय। ब्रह्मणे प्रंजापृतये। चन्द्रमसे नेक्षत्रेभ्यः। ऋतुभ्यः संवंध्सराय। वरुणायारुणायेति व्रंतहोमाः। प्रवर्ग्यवंदादेशः। अरुणाः काण्डऋषयः। अरण्ये-ऽधीयीरन्। भद्रं कर्णेभिरिति द्वें जिपत्वा॥१३१॥

महानाम्नीभिरुदक र सं इस्पृश्यः। तमाचाँयाँ द्द्यात्। शिवा नः शन्तमेत्योषधीरालुभते। सुमृडीकंति भूमिम्। एवमंपवृर्गः। धंनुर्दक्षिणा। करसं वासंश्च क्षौमम्। अन्यंद्वा शुक्रम्। यंथाशक्ति वा। एवइस्वाध्यायंधर्मेण। अरण्यंऽधीयीत। तपस्वी पुण्यो भवति तपस्वी पुण्यो भवति॥१३२॥———[३२]

भद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः।

स्थिरैरक्वैंस्तुष्टुवाश्संस्तुन्भिः। व्यशेम देवहितं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिंद्धातु॥ ॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



#### ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमेः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पत्ये नमो विष्णंवे बृह्ते कंरोमि॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सह वै देवानां चासुंराणां च युज्ञौ प्रतंतावास्तां वयक्ष्यक्ष्यं स्वर्गं लोकमें ष्यामा वयमें ष्याम् इति तेऽसुंराः स्त्रह्य सहंसैवाचंरन् ब्रह्मचर्येण् तपंसैव देवास्तेऽसुंरा अमुह्यक्ष्यं न प्राजांनक्ष्यं परांऽभवन्ते न स्वर्गं लोकमायन् प्रसृतेन वै युज्ञेनं देवाः स्वर्गं लोकमायन् प्रसृतेनासुंरान् परांभावयन् प्रसृतो ह वै यंज्ञोपवीतिनों युज्ञोऽप्रंसृतोऽनुंपवीतिनो यत्किं चं ब्राह्मणो यंज्ञोपवीत्यधीते यज्ञंत एव तत्तस्मां द्यज्ञोपवीत्येवाधीयीत याज्येद्यज्ञेत वा यज्ञस्य प्रसृत्या अजिनं वासों वा दक्षिण्त उपवीय दक्षिणं बाहुमुद्धंरतेऽवं धत्ते स्व्यमितिं यज्ञोपवीतमेतदेव विपंरीतं प्राचीनावीत स्वंवीतंं मानुषम्॥१॥

[8]

रक्षा रेसि ह वां पुरोऽनुवाके तपोग्रंमितष्ठन्त तान् प्रजापंतिर्वरेणोपामंत्रयत् तानि वरंमवृणीताऽऽदित्यो नो योद्धा इति तान् प्रजापंतिरब्रवीद्योधंयध्वमिति तस्मादुत्तिष्ठन्तर् ह वा तानि रक्षा रंस्यादित्यं योधंयन्ति यावंदस्तमन्वंगात्तानिं ह वा एतानि रक्षा रेसि गायित्रया-ऽभिंमित्रितेनाम्भंसा शाम्यन्ति तद्ं ह वा एते ब्रंह्मवादिनंः पूर्वाभिमुखाः सन्ध्यायाँ गायत्रियाऽभिमन्निता आपं ऊर्ध्वं विक्षिपन्ति ता एता आपो वृज्ञीभूत्वा तानि रक्षार्रस मन्देहारुंणे द्वीपे प्रक्षिपन्ति यत्प्रदिक्षिणं प्रक्रमन्ति तेनं पाप्मानमविधून्वन्त्युद्यन्तंमस्तं यन्तंम् आदित्यमंभिध्यायन् कुर्वन् ब्राँह्मणो विद्वान्ध्सकलं भृद्रमंश्रुतेऽसावांदित्यो ब्रह्मेति ब्रह्मैव सन् ब्रह्माप्येति य एवं वेदं॥२॥

यद्देवा देव्हेळंनं देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्यास्तस्मांन्मा मुश्चत्तिस्यतेन् मामित। देवां जीवनकाम्या यद्वाचाऽनृंत-मूदिम। तस्मांन्न इह मुंश्चत् विश्वं देवाः स्जोषंसः। ऋतेनं द्यावापृथिवी ऋतेन् त्व॰ संरस्वति। कृतान्नंः पाह्येनंसो यत्किं चानृंतमूदिम। इन्द्राग्नी मित्रावर्रुणो सोमो धाता बृह्स्पतिः। ते नो मुश्चन्त्वेनंसो यद्न्यकृतमारिम। स्जात्शृ॰्सादुत जांमिशृ॰्साञ्च्यायंसः श॰सांदुत वा कनीयसः। अनांधृष्टं देवकृतं यदेन्स्तस्मात् त्वमुस्माञ्जातवेदो मुमुग्धि॥३॥

यद्वाचा यन्मनंसा बाहुभ्यांमूरुभ्यांमष्ठीवद्धा १ शिश्वेर्यदर्नृतं चकुमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु चकुम यानि दुष्कृता। येनं त्रितो अंर्णवान्निर्बभूव येन् सूर्यं तमंसो निर्मुमोचं। येनेन्द्रो विश्वा अर्जहादरातीस्तेनाहं ज्योतिषा ज्योतिरानशान आक्षि। यत्कुसीद्मप्रंतीत्तं मयेह येनं यमस्यं निधिना चरांमि। एतत्तदंग्ने अनुणो भंवामि

जीवंत्रेव प्रति तत्ते दधामि। यन्मयिं माता यदां पिपेष् यदन्तिरक्षं यदाशसातिंकामामि त्रिते देवा दिवि जाता यदापं इमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नो अग्ने स त्वं नो अग्ने त्वमंग्ने अयासिं॥४॥

[३]

यददीं व्यन्नृणमृहं बुभूवादिं ध्सन्वा सञ्जगर जनें भ्यः। अग्निर्मा तस्मादिन्द्रंश्च संविदानौ प्रमुंश्चताम्। यद्धस्तौभ्यां चकर किल्बिषाण्यक्षाणां वृग्नुमुपुजिघ्नमानः। उुग्रं पृश्या र्च राष्ट्रभृच तान्यंपसरसावनुंदत्तामृणानिं। उग्रं पश्ये राष्ट्रंभृत्किल्बिषाणि यद्क्षवृंत्तमनुंदत्तमेतत्। नेन्नं ऋणानृणव इथ्समानो युमस्य लोके अधिरज्जुराय। अव ते हेळ उद्तंतमिमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नो अग्ने स त्वं नो अग्ने। सङ्कंसुको विकुंसुको निर्ऋथो यश्चं निस्वनः। तेऽ(१)स्मद्यक्ष्ममनांगसो दूरादूरमंचीचतम्। निर्यक्ष्ममचीचते कृत्यां निर्ऋतिं च। तेन योऽ(१)स्मथ्समृच्छातै तमस्मै प्रसुवामसि। दुःशुरुसानुशुरुसाभ्यां घणेनांनुघणेनं च। तेनान्योऽ(१)स्मथ्समृंच्छाते तमंस्मे प्रसुंवामसि। सं वर्चसा पर्यसा सन्तनूभिरगन्मिह मनसा सर शिवनी त्वष्टां नो अत्र विदंधातु रायोऽनुंमार्षु तन्वो(१) यद्विलिष्टम्॥५॥ [8]

आयुंष्टे विश्वतों दधद्यम् ग्निर्वरैण्यः। पुनंस्ते प्राण

आयांति परायक्ष्म र स्वामि ते। आयुर्दा अंग्ने ह्विषों जुषाणो घृतप्रंतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गव्यं पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्। इममंग्न आयुंषे वर्चसे कृधि तिग्ममोजों वरुण सर्शिशाधि। मातेवाँस्मा अदिते शर्म यच्छ विश्वं देवा जरंदष्टिर्यथाऽसंत्। अग्न आयूरंषि पवस आ सुवोर्ज्मिषं च नः। आरे बांधस्व दुच्छुनाँम्। अग्ने पवंस्व स्वपां अस्मे वर्चः सुवीर्यम्ं। दधंद्रियं मिय् पोषम्ं॥६॥

अग्निर्ऋषिः पर्वमानः पार्श्वजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महाग्यम्। अग्ने जातान्प्रणुंदा नः सप्रबान्प्रत्यजांताञ्चातवेदो नुदस्व। अस्मे दीदिहि सुमना अहेळ्ञ्छर्मन्ते स्याम त्रिवरूथ उद्भौ। सहंसा जातान्प्रणुंदा नः सप्रबान्प्रत्यजांताञ्चातवेदो नुदस्व। अधि नो ब्रूहि सुमन्स्यमानो वयः स्याम प्रणुंदा नः सप्रबान्। अग्ने यो नोऽभितो जनो वृको वारो जिघा स्ति। ताः सत्वं वृत्रहं जिह् वस्वस्मभ्यमाभेर। अग्ने यो नोऽभिदासंति समानो यश्च निष्ठ्यः। तं वयः समिधं कृत्वा तुभ्यम्ग्नेऽपि दध्मसि॥७॥

यो नः शपादशंपतो यश्चं नः शपंतः शपात्। उषाश्च तस्में निम्नुक्क सर्वं पाप॰ समूहताम्। यो नः सपत्नो यो रणो मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतो मा तस्योच्छेषि किं चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदो यं चाहं द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वाङ्क्ष्मतानंग्ने सन्दंह याङ्श्चाहं द्वेष्मि ये च माम्। यो अस्मभ्यमरातीयाद्यश्चं नो द्वेषंते जनः। निन्दाद्यो अस्मान्दिफ्सांच्च सर्वाङ्क्ष्मतान्मष्मषा कुरु। सर्श्यातं मे ब्रह्म सर्शितं वीर्या(१)म्बलम्ं। सर्शितं क्षत्रं में जिष्णु यस्याहमस्मि पुरोहितः। उदेषां बाहू अतिरमुद्वर्चो अथो बलम्ं। क्षिणोमि ब्रह्मणाऽमित्रानुन्नंयामि स्वा(१)म् अहम्। पुनर्मनः पुनरायुर्म आगात्पुनश्चक्षः पुनः श्रोत्रं म् आगात्पुनः प्राणः पुनराकूतं म् आगात्पुनश्चित्तं पुनराधीतं म् आगात्प् वेश्वानरो मेऽदंब्धस्तनूपा अवंबाधतां दुरितानि विश्वा॥८॥
[५]

वैश्वान्राय प्रतिवेदयामो यदीनृण संङ्गरो देवतांस्। स एतान्पाशांन प्रमुचन प्रवेद स नो मुश्चातु दुरितादवद्यात्। वैश्वान्रः पर्वयान्नः प्वित्रैर्यथ्संङ्गरम्भिधावांम्याशाम्। अनांजान्नमनंसा याचंमानो यदत्रेनो अव तथ्संवामि। अमी ये सुभगे दिवि विचृतौ नाम तारंके। प्रेहामृतंस्य यच्छतामेतद्वंद्वक्रमोचंनम्। विजिहीर्ष्व लोकान्कृधि बन्धान्मंश्चासि बद्धंकम्। योनेरिव प्रच्यंतो गर्भः सर्वान् प्रथो अनुष्व। स प्रंजानन्प्रतिगृभ्णीत विद्वान्प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। अस्माभिर्द्त्तं ज्ररसंः प्रस्तादच्छिन्नं तन्तुंमनुसश्चरेम॥९॥

ततं तन्तुमन्वेके अनु सश्चरिन्त येषां दत्तं पित्र्यमायनवत्। अबन्ध्वेके दर्दतः प्रयच्छाद्वातुं चेच्छक्रवा एसः स्वर्ग एषाम्। आरंभेथामनु सर्रंभेथार समानं पन्थांमवथो घृतेनं। यद्वां पूर्तं परिविष्टं यदुग्नौ तस्मै गोत्रायेह जायांपती संररेभेथाम्। यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्यां यन्मातरं पितरं वा जिहिश्सिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्य उन्नों नेषद्द्रिता यानिं चकुम। भूमिर्माताऽदितिर्नो जनित्रं भ्राताऽन्तरिक्षमभिशंस्त एनः। द्यौर्नः पिता पितृयाच्छं भेवासि जामि मित्वा मा विविध्सि लोकात्। यत्रं सुहार्दः सुकृतो मदंन्ते विहाय रोगं तुन्वा(१) इ स्वायाम्। अस्त्रोणाङ्गेरह्रंताः स्वर्गे तत्रं पश्येम पितरं च पुत्रम्। यदन्नमद्यनृंतेन देवा दास्यन्नदांस्यनुत वां करिष्यन्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चं प्रतिजग्राहमग्निर्मा तस्मादनृणं कृणोतु। यदन्नमिद्रा बहुधा विरूपं वासो हिरंण्यमुत गामुजामविम्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चे प्रतिजग्राहमग्निर्मा तस्मोदनृणं कृणोतु। यन्मयां मनसा वाचा कृतमेनेः कदाचन। सर्वस्मात्तस्मान्मेळितो मोग्धि त्व ह हि वेत्थे यथातथम्॥१०॥

वातंरशना हु वा ऋषंयः श्रमणा ऊर्ध्वमंन्थिनो बंभूवुस्तानृषंयोऽर्थमांयुङ्स्ते निलायंमचरुङ्स्तेऽनुंप्रविशुः कूश्माण्डानि ताङ्स्तेष्वन्वंविन्दञ्छूद्धयां च तपंसा च तानृषंयोऽब्रुवन्कथा निलायं चर्थेति त ऋषींनब्रुवृत्तमां वोऽस्तु भगवन्तोऽस्मिन्धांमि केनं वः सपर्यामेति तानृषंयोऽब्रुवन्पवित्रं नो ब्रूत येनारेपसंः स्यामेति त एतानिं सूक्तान्यंपश्यन् यद्देवा देवहेळेनं यददीं व्यत्रृणम्हं बभूवाऽऽयुंष्टे विश्वतों दध्दित्येतैराज्यं जुहुत वैश्वान्राय् प्रतिवेदयाम् इत्युपंतिष्ठत् यद्वीचीन्मेनौं भ्रूणहृत्याया-स्तस्मान्मोक्ष्यध्व इति त एतैरंजुहवुस्तेऽरेपसो-ऽभवन्कर्मादिष्वेतैर्जुहुयात्पूतो देवलोकान्थ्समंश्रुते॥११॥

कूश्माण्डेर्जुहुयाद्योऽपूंत इव मन्यंत यथाँ स्तेनो यथाँ भ्रूण्हैवमेष भंवित योऽयोनो रेतः सिश्चित यदंवीचीनमेनो भ्रूणहृत्यायास्तस्मान्मुच्यते यावदेनो दीक्षामुपैति दीक्षित एतेः संतित जुंहोति संवथ्मरं दीक्षितो भंवित संवथ्मरादेवाऽऽत्मानं पुनीते मासं दीक्षितो भंवित यो मासः स संवथ्मरः संवथ्मरादेवाऽऽत्मानं पुनीते चतुर्विश्वतिर्धमासाः संवथ्मरः संवथ्मरादेवाऽऽत्मानं पुनीते द्वादंश् रात्रीदीक्षितो भंवित चतुर्विश्वतिर्धमासाः संवथ्मरः संवथ्मरादेवाऽऽत्मानं पुनीते द्वादंश् रात्रीदीक्षितो भंवित द्वादंश् मासाः संवथ्मरः संवथ्मरादेवाऽऽत्मानं पुनीते द्वादंश् मासाः संवथ्मरः संवथ्मरादेवाऽऽत्मानं पुनीते प्रदादंवाऽऽत्मानं पुनीते प्रदादेवाऽऽत्मानं पुनीते प्रदादेवाऽऽत्मानं पुनीते प्रदादंवाऽऽत्मानं पुनीते प्रदादंवाऽऽत्मानं पुनीते प्रदादंवाऽऽत्मानं पुनीते प्रदादंवाऽऽत्मानं पुनीते प्रदादंवाऽऽत्मानं पुनीते प्रदादेवाऽऽत्मानं पुनीते प्रदादेवाऽऽत्मानं

संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते तिस्रो रात्रींदीिक्षितो भंवति त्रिपदां गायत्री गांयत्रिया पुवाऽऽत्मानं पुनीते न मा समंश्रीयात्र स्त्रियमुपंयात्रोपर्यासीत् जुगुंपसेतानृतात्पयौ ब्राह्मणस्यं व्रतं यंवागू राजन्यंस्याऽऽिमक्षा वैश्यस्याथों सौम्येप्यंध्वर पुतद्वतं ब्रूंयाद्यदि मन्येतोपदस्यामीत्योदनं धानाः सक्तून् घृतमित्यनुंव्रतयेदात्मनोऽनुंपदासाय॥१२॥

अजान् ह् वै पृश्नी ईस्तप्स्यमानान् ब्रह्मं स्वयम्भ्वंभ्यानंर्ष्त ऋषयोऽभवन्तद्दषीणामृषित्वं तां देवतामुपातिष्ठन्त यज्ञकांमास्त एतं ब्रंह्मय्ज्ञमंपश्यन्तमाहंरन्तेनांयजन्त यद्द्योऽध्यगीषत् ताः पर्यआहृतयो देवानांमभवन् यद्यजूरंषि घृताहंतयो यथ्सामानि सोमाहृतयो यदर्थवीङ्गिरसो मध्याहृतयो यद्घाँह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गाथां नाराश्रद्दसीर्मेदाहृतयो देवानांमभवन्ताभिः क्षुधं पाप्मान्म-पाँघन्नपहतपाप्मानो देवाः स्वर्गं लोकमायन् ब्रह्मणः सायुज्यमृषयोऽगच्छन्॥१३॥

पश्च वा एते मंहायज्ञाः संतित प्रतांयन्ते सतित सन्तिष्ठन्ते देवयज्ञः पितृयज्ञो भूतयज्ञो मनुष्ययज्ञो ब्रह्मयज्ञ इति यद्ग्रौ जुहोत्यपि समिधं तद्देवयज्ञः सन्तिष्ठते यत्पतृभ्यः स्वधा करोत्यप्यपस्तित्पतृयज्ञः सन्तिष्ठते यद्भूतेभ्यो बिलि॰ हरिति तद्भूतयज्ञः सन्तिष्ठते यद्भूतेभ्यो बिलि॰ हरिति तद्भूतयज्ञः सन्तिष्ठते यद्भौह्मणेभ्योऽन्तं ददीति तन्मनुष्ययज्ञः

सन्तिष्ठते यथ्स्वाध्यायमधीयीतेकांमप्यृचं यजुः सामं वा तद्वंह्मयुज्ञः सन्तिष्ठते यद्द्योऽधीते पर्यसः कूल्यां अस्य पितृन्थ्स्वधा अभिवंहन्ति यद्यजूरंषि घृतस्यं कूल्या यथ्सामानि सोमं एभ्यः पवते यद्यंवाङ्गिरसो मधौः कूल्या यद्वाँह्मणानीतिहासान् पुंराणानि कल्पान्गाथां नाराश्र्सीमेंदंसः कूल्यां अस्य पितृन्थ्स्वधा अभिवंहन्ति यद्द्योऽधीते पर्यआहुतिभिरेव तद्देवाङ्स्तंप्यति यद्यजूरंषि घृताहुंतिभिर्यथ्सामानि सोमांहुतिभिर्यदथंवाङ्गिरसो मध्यां-हुतिभिर्यद्वाँह्मणानीतिहासान् पुंराणानि कल्पान्गाथां नाराश्र्सीमेंदाहुतिभिरेव तद्देवाङ्स्तंप्यति त एनं तृप्ता आयुंषा तेजंसा वर्चसा श्रिया यशंसा ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्यंन च तर्पयन्ति॥१४॥

,,

ब्रह्मयज्ञेनं यक्ष्यमाणः प्राच्यां दिशि ग्रामादछंदिर्द्श उदींच्यां प्रागुदीच्यां वोदितं आदित्ये देक्षिणत उपवीयोपविश्य हस्तांववनिज्य त्रिराचांमेद्दिः पंरिमृज्यं सकृदुंपस्पृश्य शिर्श्वक्षंषी नासिके श्रोत्रे हृदंयमालभ्य यत्रिराचामंति तेन ऋचंः प्रीणाति यद्दिः पंरिमृजंति तेन यजूर्षेषि यथ्मकृदुंपस्पृशंति तेन सामानि यथ्मव्यं पाणि पादौ प्रोक्षति यच्छिरश्वक्षंषी नासिके श्रोत्रे हृदंयमालभंते तेनाथंवां क्रिरसों ब्राह्मणानीं तिहासान् पुंराणानि कल्पान्गाथां नाराश्र्सीः प्रीणाति दर्भाणां मृहद्ंपस्तीर्योपस्थं कृत्वा प्राङासीनः स्वाध्यायमधीयीतापां वा एष ओषंधीना्र रसो यद्भाः सरंसमेव ब्रह्मं कुरुते दक्षिणोत्तरौ पाणी पादौ कृत्वा सप्वित्रावोमिति प्रतिपद्यत एतद्वै यज्ञंस्रयीं विद्यां प्रत्येषा वागेतत्परमम्क्षरं तदेतदृचाऽभ्यंक्तमृचो अक्षरं परमे व्योमन् यस्मिन्देवा अधि विश्वं निषेदुर्यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति य इत्तद्विद्यस्त इमे समासत् इति त्रीनेव प्रायंङ्कः भूर्भवः स्वरित्यांहैतद्वै वाचः सत्यं यदेव वाचः सत्यं तत्प्रायुङ्कः थं सावित्रीं गांयत्रीं त्रिरन्वांह पच्छौंऽर्धर्चशोऽनवान स्विता श्रियंः प्रसविता श्रियंमेवाऽऽप्रोत्यथौं प्रज्ञातंयैव प्रतिपदा छन्दा सि प्रतिपद्यते॥१५॥

[११]

ग्रामे मनंसा स्वाध्यायमधीयीत दिवा नक्तं वेति हं स्माऽऽह शौच आह्रेय उतारंण्येऽबलं उत वाचोत तिष्ठंत्रुत व्रजंत्रुताऽऽसींन उत शयांनोऽधीयीतैव स्वाध्यायं तपंस्वी पुण्यो भवति य पुवं विद्वान्थ्स्वाध्यायमधीते नमो ब्रह्मणे नमो अस्त्वग्रये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमो वाचे नमो वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृहते कंरोमि॥१६॥

[१२]

मध्यन्दिने प्रबलमधीयीतासौ खलु वावैष आंदित्यो यद्ग्रौह्मणस्तस्मात्तर्हि तेऽक्ष्णिष्ठं तपति तदेषाऽभ्यंक्ता। चित्रं देवानामुदंगादनीकं चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्ष्य सूर्य आत्मा जगंतस्तस्थुषश्चेति स वा एष यज्ञः सद्यः प्रतायते सद्यः सन्तिष्ठते तस्य प्राक् सायमंवभृथो नमो ब्रह्मण इति परिधानीयां त्रिरन्वांहाप उपस्पृश्यं गृहानेति ततो यत्किं च ददांति सा दक्षिणा॥१७॥ ————[१३]

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य मेघों हिवधीनं विद्युदिग्निर्वर्षः
हिवः स्तंनियुव्वंषद्वारो यदंवस्फूर्जित् सोऽनुंवषद्वारो
वायुरात्माऽमांवास्यां स्विष्टकृद्य एवं विद्वान्मेघे वर्षितं
विद्योतंमाने स्तनयंत्यवस्फूर्जित् पर्वमाने वायावंमावास्यांयाः
स्वाध्यायमधीते तपं एव तत्तंप्यते तपो हि स्वाध्याय इत्युंत्तमं
नाकः रोहत्युत्तमः संमानानां भवित् यावंन्तः ह वा इमां
वित्तस्यं पूर्णां ददंथ्स्वर्गं लोकं जंयित् तावंन्तं लोकं जंयित्
भूयाः सं चाक्ष्ययं चापं पुनर्मृत्यं जंयित् ब्रह्मणः सायुंज्यं
गच्छिति॥१८॥

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य द्वावंनध्यायौ यदात्माऽश्चिर्यद्देशः समृंद्धिर्देवतानि य एवं विद्वान्मंहारात्र उषस्यदिते व्रज्ञङ्क्तिष्ठन्नासीनः शयानोऽरण्ये ग्रामे वा यावंत्तरसङ्क्ष्यायमधीते सर्वाष्ट्रोकाञ्जंयति सर्वाष्ट्रोकानंनृणोऽनु-सञ्चरति तदेषाभ्यंक्ता। अनृणा अस्मिन्नंनृणाः परस्मिङ्क्तितिये लोके अनृणाः स्याम। ये देवयानां उत पितृयाणाः

सर्वान्यथो अनृणा आक्षीयेमेत्यग्निं वै जातं पाप्मा जंग्राह तं देवा आहुंतीभिः पाप्मानमपाँघन्नाहुंतीनां युज्ञेनं युज्ञस्य दक्षिणाभिदक्षिणानां ब्राह्मणेन ब्राह्मणस्य छन्दोभिश्छन्दंसाः स्वाध्यायेनापंहतपाप्मा स्वाध्यायों देवपंवित्रं वा एतत्तं योऽनूँथ्मृजत्यभांगो वाचि भंवत्यभांगो नाके तदेषाऽभ्युंका। यस्तित्यां न सखिविद सखायं न तस्यं वाच्यपिं भागो अस्ति। यदी र शृणोत्यलक र शृणोति न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामिति तस्माध्यवाध्यायोऽध्येतव्यो यं यं ऋतुमधीते तेनं तेनास्येष्टं भंवत्यग्नेवीयोरांदित्यस्य सायुंज्यं गच्छति तदेषाऽभ्यंक्ता। ये अवीङ्गत वा पुराणे वेदं विद्वा १ संम्भिती वदन्त्यादित्यमेव ते परिवदन्ति सर्वे अग्निं द्वितीयं तृतीयं च हर्समिति यावंतीवें देवतास्ताः सर्वा वेदविदिं ब्राह्मणे वंसन्ति तस्माद्भाह्मणेभ्यों वेदविद्धों दिवे दिवे नमस्कुर्यान्नाश्लीलं कीर्तयेदेता एव देवताः प्रीणाति॥१९॥

रिच्यंत इव वा एष प्रेव रिच्यते यो याजयंति प्रति वा गृह्णाति याजयित्वा प्रतिगृह्य वाऽनंश्रित्रिः स्वाध्यायं वेदमधीयीत त्रिरात्रं वां सावित्रीं गांयत्रीम्नवातिरेचयित वरो दक्षिणा वरेणैव वरई स्पृणोत्यात्मा हि वरः॥२०॥

दुहे हु वा एष छन्दा १सि यो याजयंति स येनं यज्ञकृतुनां याजयेथ्सो ८ रंण्यं प्रेत्यं शुचौ देशे स्वाध्यायमेवेन्मधीयन्नासीत तस्यानशेनं दीक्षा स्थानमुप्सद् आसेन स्त्या वाग्जुहूर्मने उपभृद्धृतिर्ध्रुवा प्राणो ह्विः सामाध्वर्यः स वा एष यज्ञः प्राणदेक्षिणोऽनेन्तदक्षिणः समृद्धतरः॥२१॥

[69]

कृतिधावंकीणी प्रविशतिं चतुर्धेत्यां हुर्ब्रह्मवादिनों मुरुतः प्राणैरिन्द्रं बलेन बृहस्पतिं ब्रह्मवर्चसेनाग्निमेवेतंरेण सर्वेण तस्यैतां प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार सुदेवः काँश्यपो यो ब्रंह्मचार्यविकरेदमावास्यांया रात्र्यांमग्निं प्रणीयोपसमाधाय द्विराज्यंस्योपघातंं जुहोति कामावंकीर्णोऽस्म्यवंकीर्णोऽस्मि काम् कामाय स्वाहा कामाभिद्रुग्धोऽस्म्यभिद्रुग्धोऽस्मि काम कार्माय स्वाहेत्यमृतं वा आज्यंममृतंमेवाऽऽत्मन्धंत्ते प्रयंताञ्जलिः कर्वातिर्यङ्काग्निममित्रयेत मांऽऽसिश्चन्तु मुरुतः सिमन्द्रः सं बृहस्पतिः। माऽयमग्निः सिश्चत्वायुंषा च बलेन चाऽऽयुंष्मन्तं करोत मेति प्रति हास्मै मरुतः प्राणान्दंधति प्रतीन्द्रो बलं प्रति बृहस्पतिं ब्रह्मवर्चसं प्रत्यग्निरितरथ्सर्व सर्वतनुर्भूत्वा सर्वमायुरित त्रिर्भिमंत्रयेत त्रिषंत्या हि देवा योऽपूत इव मन्येत स इत्थं जुंह्यादित्थम्भिमंत्रयेत पुनीत एवाऽऽत्मानमायुरेवाऽऽत्मन्धंत्ते वरो दक्षिणा वरेणैव वरई स्पृणोत्यात्मा हि वर्रः॥२२॥ [86]

भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये स्वः प्रपंद्ये भूभुवः स्वः प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंदो ब्रह्मकोशं प्रपंदोऽमृतं प्रपंदोऽमृतकोशं प्रपंदो चतुर्जालं ब्रह्मकोशं यं मृत्युर्नावपश्यति तं प्रपद्ये देवान् प्रपद्ये देवपुरं प्रपंद्ये परीवृतो वरीवृतो ब्रह्मणा वर्मणा ८ ते जंसा कश्यंपस्य यस्मै नमस्तिच्छिरो धर्मी मूर्धानं ब्रह्मोत्तरा हर्नुर्यज्ञोऽधंरा विष्णुर्हृदेय संवथ्सुरः प्रजननमृश्विनौ पूर्वपादांवित्रर्मध्यं मित्रावरुणावपरपादांवग्निः पुच्छंस्य प्रथमं काण्डं तत इन्द्रस्ततः प्रजापितिरभेयं चतुर्थे स वा पुष दिव्यः शांक्वरः शिशुंमार्स्त १ ह य एवं वेदापं पुनर्मृत्युं जयित जयिति स्वर्गं लोकं नाध्वनि प्रमीयते नाफ्सु प्रमीयते नाग्नौ प्रमीयते नानपत्यः प्रमीयते लुघ्वान्नो भवति ध्रुवस्त्वमंसि ध्रुवस्य क्षितमसि त्वं भूतानामधिपतिरसि त्वं भूताना ॥ श्रेष्ठोऽसि त्वां भूतान्युपं पूर्यावंर्तन्ते नमंस्ते नमः सर्वं ते नमो नमः शिश्कुमाराय नर्मः॥२३॥

[ ? ? ]

नमः प्राच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो दक्षिणाये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमः प्रतींच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नम् उदींच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमं ऊर्ध्वाये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽधंराये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोंऽवान्त्रायें दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मध्ये यें वसन्ति ते मे प्रसन्नात्मानश्चिरं जीवितं वंधयन्ति नमो गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमः॥२४॥

-[२०]

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृह्ते कंरोमि॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

अग्निर्होता ऽष्टौ॥

### ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

ॐ तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवींः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिमीनुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नों अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

चित्तिः स्रुक्। चित्तमाज्यम्। वाग्वेदिः। आधीतं ब्र्हिः। केतो अग्निः। विज्ञातम्ग्निः। वाक्पंतिर्होतां। मनं उपवृक्ता। प्राणो हृविः। सामाध्वर्युः। वाचंस्पते विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। आऽस्मासुं नृम्णन्थाथ्स्वाहां॥१॥

पृथिवी होताँ। द्यौरंध्वर्युः। रुद्रौंऽग्नीत्। बृह्स्पतिंरुपवक्ता। वार्चस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृततमेनायंक्ष्यसे। यजमानाय वार्यम्। आसुवस्करंस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥

अग्निर्होताँ। अश्विनाँऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उंपवक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुक्रः शुक्रस्यं पुरोगाः। श्रातास्तं इन्द्र सोमाः। वातांपेर्हवनश्रुतः स्वाहाँ॥३॥

सूर्यं ते चक्षुं। वातं प्राणः। द्यां पृष्ठम्। अन्तरिक्षमात्मा। अङ्गैर्यज्ञम्। पृथिवी १ शरीरैः। वाचस्पतेऽच्छिंद्रया वाचा। अच्छिद्रया जुह्नाँ। दिवि देवावृध् होत्रा मेर्रयस्व स्वाहाँ॥४॥

महाहं विरहोतां। सृत्यहं विरध्वर्यः। अच्युंतपाजा अग्नीत्। अच्युंतमना उपवक्ता। अनाधृष्यश्चांप्रतिधृष्यश्चं यज्ञस्यां भिग्रो। अयास्यं उद्गृता। वाचंस्पते हृद्विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्समाकं नामं। वाचस्पतिः सोमंमपात्। मा दैव्यस्तन्तु श्छे दि मा मंनुष्यंः। नमों दिवे। नमंः पृथिव्ये स्वाहां॥५॥

अुपात्रीणि च॥————[५]

वाग्घोताँ। दीक्षा पत्नीं। वातों ऽध्वर्युः। आपों ऽभिग्रः। मनों ह्विः। तपंसि जुहोमि। भूर्भुवः सुवंः। ब्रह्मं स्वयम्भु। ब्रह्मंणे स्वयम्भुवे स्वाहाँ॥६॥

वाग्योता नवं॥————[६]

ब्राह्मण एकंहोता। स यज्ञः। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। यज्ञश्चं मे भूयात्। अग्निर्द्विहोता। स भूर्ता। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। भूर्ता चं मे भूयात्। पृथिवी त्रिहोता। स प्रतिष्ठा॥७॥

स में ददातु प्रजां प्रशून्पृष्टिं यर्शः। प्रतिष्ठा चे मे भूयात्। अन्तरिक्षं चतुरहोता। स विष्ठाः। स में ददातु प्रजां प्रशून्पृष्टिं यर्शः। विष्ठाश्चं मे भूयात्। वायुः पश्चंहोता। स प्राणः। स में ददातु प्रजां प्रशून्पृष्टिं यर्शः। प्राणश्चं मे भूयात्॥८॥

चन्द्रमाः षड्ढांता। स ऋतून्कंल्पयाति। स में ददातु प्रजां

पृशून्पृष्टिं यशैः। ऋतवेश्च मे कल्पन्ताम्। अन्नर्रं स्प्तहोता। स प्राणस्यं प्राणः। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशैः। प्राणस्यं च मे प्राणो भूयात्। द्यौर्ष्टहोता। सोऽनाधृष्यः॥९॥

स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। अनाधृष्यश्चं भूयासम्। आदित्यो नवंहोता। स तेंज्स्वी। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। तेज्स्वी चं भूयासम्। प्रजापंतिर्दशंहोता। स इदः सर्वम्। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। सर्वं च मे भूयात्॥१०॥

अग्निर्यजुंभिः। स्विता स्तोमैः। इन्द्रं उक्थाम्दैः। मित्रावरुणावाशिषाः। अङ्गिरसो धिष्णियेरग्निभिः। मरुतः सदोहविर्धानाभ्याम्। आपः प्रोक्षणीभिः। ओषंधयो ब्र्हिषाः। अदितिर्वेद्याः। सोमो दीक्षयाः॥११॥

त्वष्टेभ्मेनं। विष्णुंर्यज्ञेनं। वसंव आज्येन। आदित्या दक्षिणाभिः। विश्वे देवा ऊर्जा। पूषा स्वंगाकारेणं। बृह्स्पतिः पुरोधयां। प्रजापंतिरुद्गीथेनं। अन्तरिक्षं प्वित्रेण। वायुः पात्रैः। अहङ् श्रद्धयां॥१२॥

दीक्षया पात्रैरेकं च॥\_\_\_\_\_\_

सेनेन्द्रंस्य। धेना बृह्स्पतैः। पृत्थ्यां पूष्णः। वाग्वायोः। दीक्षा सोमंस्य। पृथिव्यंग्रेः। वसूनां गायत्री। रुद्राणां त्रिष्टुक्। आदित्यानां जगती। विष्णोरनुष्टुक्॥१३॥

वर्रुणस्य विराट्। यज्ञस्यं पङ्किः। प्रजापंतेरनुंमतिः।

मित्रस्यं श्रद्धा। स्वितुः प्रसूतिः। सूर्यस्य मरीचिः। चन्द्रमंसो रोहिणी। ऋषीणामरुन्धती। पूर्जन्यंस्य विद्युत्। चतंस्रो दिशः। चतंस्रोऽवान्तरिद्शाः। अहंश्च रात्रिश्च। कृषिश्च वृष्टिश्च। त्विष्श्चापंचितिश्च। आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क्व सूनृतां च देवानां पत्नयः॥१४॥

अनुष्टुग्दिशः पर्द्व॥———[१]

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रसिवं। अश्विनौंर्बाहुभ्यांम्। पूष्णो हस्तौभ्यां प्रतिगृह्णामि। राजां त्वा वरुंणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्नये हिरंण्यम्। तेनांमृतत्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे। क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामो दाता॥१५॥

कार्मः प्रतिग्रहीता। काम्रं समुद्रमाविंश। कार्मन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्तें। एषा ते काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वाङ्गीर्सः प्रतिगृह्णातु। सोमाय वार्सः। रुद्राय गाम्। वरुणायाश्वम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१६॥

मनंवे तल्पम्। त्वष्ट्रेऽजाम्। पूष्णेऽविम्। निर्ऋंत्या अश्वतरगर्दभौ। हिमवंतो हुस्तिनम्। गुन्धुर्वाफ्स्राभ्यः स्नगलं कर्णे। विश्वभ्यो देवेभ्यो धान्यम्। वाचेऽन्नम्। ब्रह्मण ओदनम्। सुमुद्रायाऽऽपंः॥१७॥

उत्तानायाँङ्गीर्सायानेः। वैश्वानुराय रथम्। वैश्वानुरः प्रत्नथा नाकुमारुहत्। दिवः पृष्ठं भन्दंमानः सुमन्मंभिः। स पूर्ववञ्चनयंञ्चन्तवे धनम्। समानमंज्मा परियाति जागृंविः। राजां त्वा वरुणो नयतु देवि दक्षिणे वैश्वान्राय रथम्। तेनांमृत्त्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे॥१८॥

क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामों दाता। कामः प्रतिग्रहीता। कामः समुद्रमा विंश। कामेंन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्तें। एषा तें काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वांङ्गीरुसः प्रतिंगृह्णातु॥१९॥

दाता पुरुषमर्पः प्रतिग्रहीत्रे नवं च॥———[१०]

सुवर्णं घुमं परिवेद वेनम्। इन्द्रंस्याऽऽत्मानं दश्धा चर्रन्तम्। अन्तः संमुद्रे मनंसा चर्रन्तम्। ब्रह्मान्वंविन्द्द्दशंहोतार्मर्णं। अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनांनाम्। एकः सन्बंहुधा विचारः। श्तर शुक्राणि यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे वेदा यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे होतांरो यत्रैकं भवंन्ति। समानंसीन आत्मा जनांनाम्॥२०॥

अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनाना सर्वाः प्रजा यत्रेकं भवंन्ति। चतुंरहोतारो यत्रं सम्पदं गच्छंन्ति देवैः। समानंसीन आत्मा जनानाम्। ब्रह्मेन्द्रंमृग्निं जगंतः प्रतिष्ठाम्। दिव आत्मान सिवतारं बृह्स्पतिम्। चतुंरहोतारं प्रदिशोऽनुं क्रुप्तम्। वाचो वीर्यं तपसाऽन्वंविन्दत्। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारंमेतम्। त्वष्टांर स्पाणिं विकुर्वन्तं

## विपश्चिम्॥२१॥

अमृतंस्य प्राणं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निचिक्यः। अन्तः प्रविष्टं कर्तारंमेतम्। देवानां बन्धु निहितं गुहांसु। अमृतेन क्रुप्तं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निचिक्यः। शतं नियुतः परिवेद विश्वां विश्ववांरः। विश्वंमिदं वृंणाति। इन्द्रंस्याऽऽत्मा निहितः पश्चंहोता। अमृतं देवानामायुः प्रजानांम्॥२२॥

इन्द्र राजांन सिवतारं मेतम्। वायोरात्मानं क्वयो निर्चिक्युः। रिश्मि रेश्मीनां मध्ये तपंन्तम्। ऋतस्य पदे क्वयो निर्पान्ति। य आण्डकोशे भुवंनं बिभर्ति। अनिर्मिण्णः सन्नर्थं लोकान् विचष्टें। यस्याऽऽण्डकोश शृष्मंमाहः प्राणमुल्बम्। तेनं क्रुप्तोऽमृतेनाहमंस्मि। सुवर्णं कोश् र रजसा परीवृतम्। देवानां वसुधानीं विराजम्॥२३॥

अमृतंस्य पूर्णान्ताम् कुलां विचंक्षते। पाद् षड्ढांतुर्न किलांविविथ्से। येनुर्तवंः पश्चधोत क्रुप्ताः। उत वां षड्धा मनुसोत क्रुप्ताः। त॰ षड्ढांतारमृतुभिः कर्त्पमानम्। ऋतस्यं पुदे कुवयो निपान्ति। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारंमेतम्। अन्तश्चन्द्रमंसि मनसा चरन्तम्। सहैव सन्तं न विजानन्ति देवाः। इन्द्रंस्याऽऽत्मान शतुधा चरन्तम्॥२४॥

इन्द्रो राजा जगंतो य ईशैं। सप्तहोता सप्तधा विक्रृप्तः।

परेण तन्तुं परिष्च्यमानम्। अन्तरांदित्ये मनसा चरन्तम्। देवाना हदयं ब्रह्मान्वंविन्दत्। ब्रह्मेतद्वह्मण उन्नभार। अर्क इश्चोतंन्त सरिरस्य मध्ये। आ यस्मिन्थ्सप्त पेरवः। मेहन्ति बहुला इश्चियम्। बहुश्वामिन्द्र गोमंतीम्॥२५॥

अर्च्युतां बहुला श्रियम्। स हरिर्वसुवित्तंमः। प्रेरिन्द्रांय पिन्वते। बृह्धामिन्द्रं गोमतीम्। अर्च्युतां बहुला श्रियम्। मह्यमिन्द्रो नियंच्छत्। शृत श्रिता अस्य युक्ता हरीणाम्। अर्वाङा यांतु वसुंभी रिश्मिरिन्द्रः। प्रमश्हंमाणो बहुला श्रियम्। रिश्मिरिन्द्रः सिवता मे नियंच्छतु॥२६॥

घृतं तेजो मधुंमदिन्द्रियम्। मय्ययम्ग्निर्दधात्। हरिः पत्ङ्गः पंट्री सुंपूर्णः। दिविक्षयो नर्भसा य एति। स न इन्द्रेः कामवृरं देदातु। पञ्चारं चक्रं परिवर्तते पृथु। हिरंण्यज्योतिः सिर्रस्य मध्यै। अजस्तं ज्योतिर्नभंसा सपंदेति। स न इन्द्रेः कामवृरं देदातु। सप्त युंञ्जन्ति रथमकेचक्रम्॥२७॥

एको अश्वो वहित सप्तनामा। त्रिनाभि चक्रम्जर्मनंवम्। येनेमा विश्वा भुवनानि तस्थुः। भुद्रं पश्यन्त उपसेदुरग्रें। तपो दीक्षामृषयः सुवर्विदंः। ततः क्षत्रं बल्मोर्जश्च जातम्। तद्स्मै देवा अभि सन्नमन्तु। श्वेत र रिश्मं बोभुज्यमानम्। अपा नेतारं भुवनस्य गोपाम्। इन्द्रं निर्चिक्यः पर्मे व्योमन्॥२८॥

रोहिणीः पिङ्गला एकंरूपाः। क्षरंन्तीः पिङ्गला एकंरूपाः।

श्तर सहस्राणि प्रयुतांनि नाव्यांनाम्। अयं यः श्वेतो रिश्मः। परि सर्वमिदं जगत्। प्रजां पृश्नस्थनांनि। अस्माकं ददातु। श्वेतो रिश्मः परि सर्वं बभूव। सुवन्मह्यं पृशून् विश्वरूपान्। पृतङ्गमक्तमसुरस्य माययां॥२९॥

हृदा पंश्यन्ति मनंसा मनीषिणंः। समुद्रे अन्तः क्वयो वि-चंक्षते। मरीचीनां पदिमेच्छन्ति वेधसंः। पत्ङ्गो वाचं मनंसा बिभर्ति। तां गंन्ध्वींऽवद्द्रभें अन्तः। तां द्योतंमानाः स्वर्यं मनीषाम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपान्ति। ये ग्राम्याः पशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। अग्निस्ताः अग्रे प्रमुमोक्तु देवः॥३०॥

प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। वीतः स्तुंकेस्तुके। युवम्स्मासु नियंच्छतम्। प्र प्र यज्ञपंतिन्तिर। ये ग्राम्याः प्रश्वो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। तेषा स्प्रानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय। य आर्ण्याः पृशवो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। वायुस्ता अग्रे प्रमुंमोक्त देवः। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। इडांये सृप्तं घृतवंचराच्रम्। देवा अन्वंविन्दन्गुहां हितम्। य आर्ण्याः पृशवो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। तेषा समानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय॥३१॥

एकंरूपा अष्टो चं॥————[११]

सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। स भूिमं विश्वतो वृत्वा। अत्यंतिष्ठद्दशाङ्गुलम्। पुरुष एवेद॰ सर्वम्। यद्भूतं यच् भव्यम्। उतामृतत्वस्येशानः। यदन्नेनातिरोहंति। एतावानस्य महिमा। अतो ज्यायार्श्व पूरुषः॥३२॥

पादौँऽस्य विश्वां भूतानिं। त्रिपादंस्यामृतंं दिवि। त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः। पादौँऽस्येहाभंवात्पुनः। ततो विष्वङ्कांकामत्। साशनानशने अभि। तस्माँद्विराडंजायत। विराजो अधि पूरुषः। स जातो अत्यंरिच्यत। पृश्लाद्भृमिमथों पुरः॥३३॥

यत्पुरुषेण ह्विषां। देवा यज्ञमतंन्वत। वसन्तो अस्यासी-दाज्यम्। ग्रीष्म इध्मः श्ररद्धविः। सप्तास्यासन्पर्धियः। त्रिः सप्त स्मिधः कृताः। देवा यद्यज्ञं तंन्वानाः। अबंध्रन्पुरुषं पृशुम्। तं युज्ञं बुर्हिष् प्रौक्षन्। पुरुषं जातमंग्रतः॥३४॥

तेनं देवा अयंजन्त। साध्या ऋषंयश्च ये। तस्माँ द्यज्ञार्थ्यते हुतेः। सम्भृतं पृषदाज्यम्। पृशू इस्ता इश्चेक्रे वायव्यान्। आर्ण्यान्ग्राम्याश्च ये। तस्माँ द्यज्ञार्थ्यते हुतेः। ऋचः सामानि जज्ञिरे। छन्दा ईसि जज्ञिरे तस्माँत्। यजुस्तस्मांदजायत॥३५॥

तस्मादश्वां अजायन्त। ये के चोंभ्यादंतः। गावों ह जिज्ञेर् तस्मांत्। तस्मांज्ञाता अंजावयः। यत्पुरुषं व्यंदधः। कृतिधा व्यंकल्पयन्। मुखं किमंस्य कौ बाहू। कावूरू पादांवुच्येते। ब्राह्मणौऽस्य मुखंमासीत्। बाहू रांजन्यः कृतः॥३६॥

ऊरू तदंस्य यद्वैश्यंः। पुद्धाः शूद्रो अंजायत। चुन्द्रमा मनंसो जातः। चक्षोः सूर्यो अजायत। मुखादिन्द्रंश्चाग्निश्चं। प्राणाद्वायुरंजायत। नाभ्यां आसीदन्तरिक्षम्। शीष्णो द्यौः समंवर्तत। पुद्धां भूमिदिशः श्रोत्रांत्। तथां लोकाः अंकल्पयन्॥३७॥

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवंणं तमंस्सतु पारे। सर्वाणि रूपाणि विचित्य धीरंः। नामानि कृत्वाऽभिवदन् यदास्ते। धाता पुरस्ताद्यमुंदाज्हारं। शक्तः प्रविद्वान्प्रदिशश्चतंस्रः। तमेवं विद्वान्मृतं इह भंवति। नान्यः पन्था अयंनाय विद्यते। यज्ञेनं यज्ञमंयजन्त देवाः। तानि धर्माणि प्रथमान्यांसन्। ते हु नाकं महिमानः सचन्ते। यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥३८॥ पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥३८॥

अद्धः सम्भूतः पृथिये रसाँच। विश्वकंर्मणः समेवर्तताधि। तस्य त्वष्टां विद्यंद्रूपमेति। तत्पुरुंषस्य विश्वमाजांनमग्रें। वेदाहमेतं पुरुंषं महान्तम्। आदित्यवंणं तमेसः परंस्तात्। तमेवं विद्वानमृतं इह भेवति। नान्यः पन्थां विद्यतेऽयंनाय। प्रजापंतिश्चरित गर्भे अन्तः। अजायंमानो बहुधा विजायते॥३९॥

तस्य धीराः परिजानन्ति योनिम्। मरीचीनां पदिमच्छन्ति

वेधसंः। यो देवेभ्य आतंपति। यो देवानां पुरोहितः। पूर्वो यो देवेभ्यो जातः। नमो रुचाय ब्राह्मये। रुचं ब्राह्मं जनयंन्तः। देवा अग्रे तदंब्रुवन्। यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्। तस्यं देवा अस्नवशे। हिश्चं ते लक्ष्मीश्च पत्यौ। अहोरात्रे पार्श्व। नक्षंत्राणि रूपम्। अश्विनौ व्यात्तम्। इष्टं मंनिषाण। अमुं मंनिषाण। सर्वं मनिषाण॥४०॥

भृतां सन्भ्रियमांणो बिभर्ति। एको देवो बंहुधा निर्विष्टः। यदा भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्। निधायं भारं पुन्रस्तंमेति। तमेव मृत्युम्मृतं तमांहुः। तं भृतारं तम् गोप्तारमाहुः। स भृतो भ्रियमाणो बिभर्ति। य एनं वेदं सृत्येन भर्तुम्। सुद्यो जातमुत जहात्येषः। उतो जर्रन्तं न जहात्येकम्॥४१॥

उतो बहूनेक्महंर्जहार। अतंन्द्रो देवः सदंमेव प्रार्थः। यस्तद्वेद् यतं आब्भूवं। सन्धां च याः सन्द्धे ब्रह्मंणैषः। रमंते तस्मिन्नुत जीणें शयांने। नैनं जहात्यहंः सु पूर्व्येषुं। त्वामापो अनु सर्वौश्चरन्ति जानृतीः। वृथ्सं पर्यसा पुनानाः। त्वमृग्निः हंव्यवाहः समिन्थ्से। त्वं भूर्ता मातुरिश्वां प्रजानांम्॥४२॥

त्वं यज्ञस्त्वमुंवेवासि सोमंः। तवं देवा हवमायंन्ति सर्वै। त्वमेकोऽसि बहूननुप्रविष्टः। नमस्ते अस्तु सुहवों म एधि। नमों वामस्तु शृणुत १ हवंं मे। प्राणांपानावजिर १ स्थरंन्तौ। ह्वयांमि वां ब्रह्मणा तूर्तमेतम्। यो मां द्वेष्टि तं जीहितं युवाना। प्राणांपानौ संविदानौ जीहितम्। अमुष्यासुनामा सङ्गंसाथाम्॥४३॥

तं में देवा ब्रह्मणा संविदानो। वधायं दत्तं तम्ह १ हंनामि। असंज्ञजान स्त आबंभूव। यं यं ज्जान स उं गोपो अस्य। यदा भारं तन्द्रयंते स भर्तृम्। प्रास्यं भारं पुन्रस्तमिति। तद्वे त्वं प्राणो अभवः। महान्भोगः प्रजापंतेः। भुजः करिष्यमाणः। यद्देवान्प्राणयो नवं॥४४॥

पुकं प्रजानाँङ्गसाथां नवं॥——[१४

हिर् हर्गन्तमनुयन्ति देवाः। विश्वस्येशानं वृष्भं मंतीनाम्। ब्रह्म सर्रूपमनुमेदमागात्। अयंनं मा विवधीर्विक्रमस्व। मा छिदो मृत्यो मा वधीः। मा मे बलं विवृहो मा प्रमोषीः। प्रजां मा में रीरिष आयुंरुग्र। नृचक्षंसं त्वा ह्विषां विधेम। सद्यश्चंकमानायं। प्रवेपानायं मृत्यवे॥४५॥

प्रास्मा आशां अशृण्वन्। कामेनाजनयन्पुनंः। कामेन मे काम आगाँत्। हृदंयाद्भृदंयं मृत्योः। यदमीषांमदः प्रियम्। तदैतूपमाम्भि। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थाँम्। यस्ते स्व इतरो देवयानाँत्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नंः प्रजाः रीरिषो मोत वीरान्। प्र पूर्वं मनसा वन्दंमानः। नार्थमानो वृष्मं चर्षणीनाम्। यः प्रजानांमेकराण्मानुंषीणाम्। मृत्युं यंजे प्रथमजामृतस्यं॥४६॥

| मत्यवे | वीरा ४श्चत्वारि | च॥ | [01] |   |
|--------|-----------------|----|------|---|
| 2(44   |                 |    | ۲٤,  | ٦ |

त्रणिर्विश्वदंर्शतो ज्योतिष्कृदंसि सूर्य। विश्वमा भांसि रोचनम्। उपयामगृहीतोऽसि सूर्याय त्वा भ्राजंस्वत एष ते योनिः सूर्याय त्वा भ्राजंस्वते॥४७॥

आ प्यांयस्व मदिन्तम् सोम् विश्वांभिरूतिभिः। भवां नः सुप्रथंस्तमः॥४८॥

\_[१७]

र्ड्युष्टे ये पूर्वतरामपंश्यन् व्युच्छन्तीमुषसं मर्त्यांसः। अस्माभिंरू नु प्रंतिचक्ष्यांऽभूदो ते यन्ति ये अंपुरीषु पश्यान्॥४९॥

[86]

ज्योतिष्मतीं त्वा सादयामि ज्योतिष्कृतं त्वा सादयामि ज्योतिर्विदं त्वा सादयामि भास्वतीं त्वा सादयामि ज्वलंन्तीं त्वा सादयामि मल्मलाभवंन्तीं त्वा सादयामि दीप्यंमानां त्वा सादयामि रोचंमानां त्वा सादयाम्यजंस्रां त्वा सादयामि बृहज्योतिषं त्वा सादयामि बोधयंन्तीं त्वा सादयामि जाग्रंतीं त्वा सादयामि॥५०॥

-[१९]

प्रयासाय स्वाहां ऽऽयासाय स्वाहां वियासाय स्वाहां संयासाय स्वाहों द्यासाय स्वाहां ऽवयासाय स्वाहां शुचे स्वाहा शोकांय स्वाहां तप्यत्वे स्वाहा तपंते स्वाहां

# ब्रह्महुत्यायै स्वाहा सर्वसमै स्वाहाँ॥५१॥

[૨૦]

तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं युज्ञायं। गातुं युज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः॥



#### ॥चतुर्थः प्रश्नः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम ऋषिंभ्यो मन्नकृद्धो मन्नपितभ्यो मा मामृषंयो मञ्जकृतो मञ्जपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मञ्जकृतो मन्नुपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये सत्यं विदिष्ये तस्मो अहमिदमुपस्तरणमुपस्तृण उपस्तरणं मे प्रजायै पश्नां भूयादुपस्तरणमहं प्रजायै पश्नां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योमां पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विदष्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास र शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मा देवा अवन्त् शोभायै पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम् ऋषिंभ्यो मत्रकृद्धो मत्रंपतिभ्यो मा मामृषंयो मत्रकृतों मत्रपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मत्रकृतों मत्रपतीन्परांदां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म में द्योः शर्म पृथिवी शर्म विश्वमिदं जगंत। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं

विदिष्ये तेजों विदिष्ये यशों विदिष्ये तपों विदिष्ये ब्रह्मं विदिष्ये सत्यं विदिष्ये तस्मां अहमिदमुंपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजाये पशूनां भूयादुपस्तरंणमहं प्रजाये पशूनां भूयास्ं प्राणांपानौ मृत्योमां पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मिनष्ये मधुं जिनष्ये मधुं विद्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास शृश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभाये पितरोऽनुंमदन्तु॥१॥

युअते मनं उत युंअते धियंः। विप्रा विप्रंस्य बृह्तो विप्रिक्षतः। वि होत्रां दधे वयुनाविदेक इत्। मृही देवस्यं सिवृतुः परिष्टुतिः। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यामादंदे। अभिरिस् नारिरिसे। अध्वरकृद्देवेभ्यः। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते॥२॥

देवयन्तंस्त्वेमहे। उप प्रयंन्तु मुरुतंः सुदानंवः। इन्द्रं प्राशूर्भवा सर्चां। प्रैतु ब्रह्मणस्पतिः। प्र देव्येतु सूनृतां। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किराधसम्। देवा यज्ञं नंयन्तु नः। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथाम्। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥३॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। इयत्यग्रं आसीः। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। देवीवभीरुस्य भूतस्यं प्रथमजा ऋतावरीः।

ऋखासंमुद्य। मुखस्य शिरं:॥४॥

म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णा। इन्द्रस्यौजींऽसि। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णा। अग्निजा असि प्रजापंते रेतंः। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥५॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीष्णी। आयुंधेहि प्राणं धेहि। अपानं धेहि व्यानं धेहि। चक्षुंधेहि श्रोत्रं धेहि। मनों धेहि वाचं धेहि। आत्मानं धेहि प्रतिष्ठां धेहि। मां धेहि मियं धेहि। मधुं त्वा मधुला करोतु। मुखस्य शिरोऽसि॥६॥

यज्ञस्यं पदे स्थंः। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमि। त्रैष्टुंभेन त्वा छन्दंसा करोमि। जागंतेन त्वा छन्दंसा करोमि। मुखस्य रास्नांऽसि। अदिंतिस्ते बिलंं गृह्णातु। पाङ्कंन छन्दंसा। सूर्यस्य हरंसा श्राय। मखोंऽसि॥७॥

पते शिरं ऋतावरीर्ऋद्धासंमुद्ध मुखस्य शिर्ः शिर्ः शिरांऽसि नवं च॥———[२]

वृष्णो अश्वंस्य निष्पदंसि। वर्रणस्त्वा धृतव्रंत आधूंपयतु। मित्रावर्रणयोर्ध्रुवेण धर्मणा। अर्चिषै त्वा। शोचिषै त्वा। ज्योतिषे त्वा। तपंसे त्वा। अभीमं मंहिना दिवम्। मित्रो बंभूव सप्रथाः। उत श्रवंसा पृथिवीम्॥८॥

मित्रस्यं चर्षणीधृतंः। श्रवो देवस्यं सान्सिम्। द्युम्नं चित्रश्रंवस्तमम्। सिध्यैं त्वा। देवस्त्वां सिव्तोद्वंपतु। सुपाणिः स्वंङ्गुरिः। सुबाहुरुत शक्त्यां। अपंद्यमानः पृथिव्याम्। आशा

# दिश् आ पृंण। उत्तिष्ठ बृहन्भंव॥९॥

ऊर्ध्वस्तिष्ठद्भवस्त्वम्। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्षे। ऋजवे त्वा। साधवें त्वा। सुक्षित्यै त्वा भूत्यैं त्वा। इदमृहमृमुमां-मुष्यायुणं विशा पृशुभिंब्रह्मवर्चसेन पर्यूहामि। गायत्रेणं त्वा छन्दसाऽऽच्छृंणद्मि। त्रेष्टुंभेन त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणद्मि। जागंतेन त्वा छन्दसाऽऽच्छृंणिद्मे। छृणत्तुं त्वा वाक्। छृणत्तु त्वोर्क्। छृणत्तुं त्वा हविः। छृन्धि वाचम्। छृन्ध्यूर्जम्। छृन्धि हविः। देवं पुरश्चर सग्घ्यासं त्वा॥१०॥

.[३]

ब्रह्मन् प्रवर्ग्येण प्रचेरिष्यामः। होतेर्घुर्मम्भिष्टुंहि। अग्नीद्रौहिंणौ पुरोडाशावधिंश्रय। प्रतिप्रस्थातर्विहंर। प्रस्तोतः सामानि गाय। यजुंर्युक्त सामंभिराक्तंखन्त्वा। विश्वैद्वैरनुंमतं मुरुद्भिः। दक्षिणाभिः प्रतंतं पारयिष्णुम्। स्तुभों वहन्तु सुमनुस्यमानम्। स नो रुचं धेह्यहूंणीयमानः। भूर्भुवः सुवैः। ओमिन्द्रेवन्तः प्रचेरत॥११॥ -[४]

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामः। होतेर्घर्मम्भिष्टुंहि। यमायं त्वा मुखायं त्वा। सूर्यस्य हरंसे त्वा। प्राणाय स्वाहां व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहां। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहां। मनंसे स्वाहां वाचे सरस्वत्ये स्वाहां। दक्षांय स्वाहा ऋतंवे स्वाहाँ। ओर्जसे स्वाहा बलांय स्वाहाँ। देवस्त्वां सविता

### मध्वांऽनक्तु॥१२॥

पृथिवीं तपंसस्रायस्व। अर्चिरंसि शोचिरंसि ज्योतिंरसि तपोऽसि। स॰सींदस्व महा॰ असि। शोचंस्व देववीतंमः। विधूममंग्ने अरुषं मियेध्य। सृज प्रंशस्तदर्शतम्। अञ्जन्ति यं प्रथयंन्तो न विप्राः। वपावंन्तं नाग्निना तपंन्तः। पितुर्न पुत्र उपंसि प्रेष्ठः। आ घुर्मी अग्निमृतयंत्रसादीत्॥१३॥

अनाधृष्या पुरस्तांत्। अग्नेराधिपत्ये। आयुंर्मे दाः। पुत्रवंती दक्षिणृतः। इन्द्रस्याऽऽधिपत्ये। प्रजां में दाः। सुषदां पृश्चात्। देवस्यं सवितुराधिपत्ये। प्राणं में दाः। आश्रुंतिरुत्तरुतः॥१४॥

मित्रावर्रुणयोराधिपत्ये। श्रोत्रं मे दाः। विधृतिरूपरिष्टात्। बृह्स्पतेराधिपत्ये। ब्रह्मं मे दाः क्षत्रं में दाः। तेजों मे धा वर्चों मे धाः। यशों मे धास्तपों मे धाः। मनों मे धाः। मनोरश्वांऽसि भूरिपुत्रा। विश्वांभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पाहि॥१५॥

सूपसदां मे भूया मा मां हिश्सीः। तपोष्वंग्ने अन्तराश् अमित्रान्। तपाशश्संमर्रुषः परस्य। तपांवसो चिकितानो अचित्तान्। वि तें तिष्ठन्तामुजरां अयासः। चितः स्थ परिचितः। स्वाहां म्रुद्धिः परिश्रयस्व। मा असि। प्रमा असि। प्रतिमा असि॥१६॥

सम्मा असि। विमा असि। उन्मा असि। अन्तरिक्षस्यान्तर्धि-रेसि। दिवं तपंसस्रायस्व। आभिर्गीर्भियंदतों न ऊनम्। आप्यायय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्टभाजो अधं ते स्याम। शुक्रं ते अन्यद्यंजतं ते अन्यत्॥१७॥

विष्रूं अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा ते पूषित्रह रातिरंस्तु। अर्हंन्बिभर्षि सायंकानि धन्वं। अर्हं निष्कं यंज्ञतं विश्वरूपम्। अर्हं निदन्दंयसे विश्वमञ्जेवम्। न वा ओजीयो रुद्र त्वदंस्ति। गायत्रमंसि। त्रैष्ट्रंभमसि। जागंतमसि। मधु मधु मधुं॥१८॥ अन्क्मादीदुन्तः पहि प्रतिम असि यज्ञतनं अन्यज्ञागंतमस्थे ॥———[५]

दश् प्राचीर्दशं भासि दक्षिणा। दशं प्रतीचीर्दशं भास्युदीचीः। दशोध्वा भांसि सुमन्स्यमानः। स नो रुचं धेह्यहंणीयमानः। अग्निष्ट्वा वसंभिः पुरस्ताँद्रोचयतु गायत्रेण छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिणतो रोचयतु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्चाद्रोचयतु जागंतेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्चाद्रोचयतु जागंतेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय॥१९॥

द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिरुत्तरतो रोचयत्वाऽनुंष्टुभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। बृह्स्पतिंस्त्वा विश्वैद्वै-रुपरिष्टाद्रोचयतु पाङ्केन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसिं। रोचिषीयाहं मंनुष्येषु। सम्राह्मर्म रुचितस्त्वं देवेष्वायुंष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चस्यसि। रुचितोऽहं मंनुष्येष्वायुंष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चसी भूयासम्।

## रुगंसि। रुचं मियं धेहि॥२०॥

मिय रुक्। दशं पुरस्तांद्रोचसे। दशं दक्षिणा। दशं प्रत्यङ्कः। दशोदङ्कं। दशोध्वीं भांसि सुमन्स्यमानः। स नः सम्राडिष्मूर्जं धेहि। वाजी वाजिने पवस्व। रोचितो धर्मी रुचीय॥२१॥ रोच्य धेहि वाजी वाजिने पवस्व। रोचितो धर्मी रुचीय॥२१॥

अपंश्यं गोपामनिपद्यमानम्। आ च परां च पृथिभिश्चरंन्तम्। स स्प्रीचीः स विषूचीर्वसानः। आ वंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीः। मधु माध्वीभ्यां मधु माधूंचीभ्याम्। अनुं वां देववीतये। सम्ग्रिर्ग्निनां गत। सं देवेनं सिवता। स॰ सूर्येण रोचते॥२२॥

स्वाहा समग्निस्तपंसा गता सं देवेनं सिवता। सं सूर्येणारोचिष्ट। धूर्ता दिवो विभांसि रजंसः। पृथिव्या धूर्ता। उरोरन्तरिक्षस्य धूर्ता। धूर्ता देवो देवानाम्। अमर्त्यस्तपोजाः। हृदे त्वा मनसे त्वा। दिवे त्वा सूर्याय त्वा॥२३॥

ऊर्ध्वमिममंध्वरं कृधि। दिवि देवेषु होत्रां यच्छ। विश्वांसां भुवां पते। विश्वंस्य भुवनस्पते। विश्वंस्य मनसस्पते। विश्वंस्य वचसस्पते। विश्वंस्य तपसस्पते। विश्वंस्य ब्रह्मणस्पते। देवश्रस्त्वं देव धर्म देवान्पांहि। तुपोजां वाचंम्स्मे नियंच्छ देवायुवम्॥२४॥

गर्भो देवानाम्। पिता मंतीनाम्। पतिः प्रजानाम्। मतिः

कर्वानाम्। सं देवो देवेनं सिवत्रा यंतिष्ट। सर सूर्येणारुक्त। आयुर्दास्त्वम्स्मभ्यं धर्म वर्चोदा असि। पिता नोंऽसि पिता नों बोध। आयुर्धास्तंनूधाः पंयोधाः। वर्चोदा वंरिवोदा द्रंविणोदाः॥२५॥

अन्तिरिक्षप्र उरोर्वरीयान्। अशीमिहं त्वा मा मां हि स्सीः। त्वमंग्ने गृहपंतिर्विशामंसि। विश्वांसां मानुंषीणाम्। श्वतं पूर्भिर्यविष्ठ पाह्य स्हंसः। समेद्धार श्वत हिमाः। तन्द्राविण सहितानम्। इहैव रातयः सन्तु। त्वष्टीमती ते सपेय। सुरेता रेतो दधाना। वीरं विंदेय तवं सन्दिशी। माऽह स्रायस्पोषेण वि योषम्॥२६॥

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यामादेवे। अदित्यै रास्नांसि। इड एहिं। अदित् एहिं। सरस्वत्येहिं। असावेहिं। असावेहिं। असावेहिं॥२७॥

अदित्या उष्णीषंमिस। वायुरंस्यैडः। पूषा त्वोपावंसृजतु। अश्विभ्यां प्रदापय। यस्ते स्तनंः शश्यो यो मयोभूः। येन् विश्वा पुष्यंसि वार्याणि। यो रंत्रुधा वंसुविद्यः सुदत्रंः। सरंस्वति तिमेह धातंवेकः। उस्रं घुर्मः शिरंष। उस्रं घुर्मं पाहि॥२८॥

घुर्मायं शि॰ष। बृह्स्पतिस्त्वोपंसीदतु। दानंवः स्थ पेरंवः। विष्वुग्वृतो लोहितेन। अश्विभ्यां पिन्वस्व। सरंस्वत्यै पिन्वस्व। पूष्णे पिन्वस्व। बृह्स्पतंये पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व॥२९॥

गायत्रोऽसि। त्रैष्टुंभोऽसि। जागंतमिस। सहोर्जो भागे-नोपमेहिं। इन्द्रौश्विना मधुंनः सार्घस्यं। घुर्मं पांत वसवो यजंता वट्। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य र्ष्ष्मये वृष्टिवनये जुहोमि। मधुं ह्विरंसि। सूर्यस्य तपंस्तप। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिगृह्णामि॥३०॥

अन्तरिक्षेण त्वोपंयच्छामि। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु शकेयम्। तेजोऽिस। तेजोऽनु प्रेहिं। दिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। अन्तरिक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। सुवंरिसे सुवंर्मे यच्छ। दिवं यच्छ दिवो मां पाहि॥३१॥

समुद्रायं त्वा वातांय स्वाहाँ। स्रिल्लायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अनाधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अप्रतिधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अवस्यवें त्वा वातांय स्वाहाँ। दुवंस्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। शिमिद्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। अग्नयें त्वा वसुंमते स्वाहाँ। सोमांय त्वा रुद्रवंते स्वाहाँ। वरुंणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहाँ॥३२॥

बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहां। स्वित्रे त्वंर्भुमतें विभुमतें प्रभुमते वाजंवते स्वाहां। युमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहाँ। विश्वा आशां दक्षिण्सत्। विश्वां देवानंयाडिह। स्वाहांकृतस्य घर्मस्यं। मधौः पिबतमिश्वना। स्वाहाऽग्रयं यज्ञियांय। शं यजुंिभः। अश्विना घर्मं पांतश् हार्दिवानम्॥३३॥

अहंर्दिवाभिंरूतिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्स्साताम्। स्वाहेन्द्रांय। स्वाहेन्द्रावट्। घुर्ममंपातमिश्वना हार्दिवानम्। अहंर्दिवाभिंरूतिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी अंमर्साताम्। तं प्राव्यं यथा वट्। नमो दिवे। नमः पृथिव्यै॥३४॥

दिवि धां इमं यज्ञम्। यज्ञमिमं दिवि धाः। दिवं गच्छ। अन्तरिक्षं गच्छ। पृथिवीं गच्छ। पश्चं प्रदिशों गच्छ। देवान्धंर्मपान्गंच्छ। पितृन्धंर्मपान्गंच्छ॥३५॥

आदित्यवंते स्वाहां हार्दिवानं पृथिव्या अष्टौ चं॥————[९]

ड्रषे पींपिहि। ऊर्जे पींपिहि। ब्रह्मंणे पीपिहि। क्षुत्रायं पीपिहि। अ्द्यः पींपिहि। ओषंधीभ्यः पीपिहि। वन्स्पितंभ्यः पीपिहि। द्यावांपृथिवीभ्यां पीपिहि। सुभूतायं पीपिहि। ब्रह्मवर्चसायं पीपिहि॥३६॥

यजंमानाय पीपिहि। मह्यं ज्यैष्ठ्यांय पीपिहि। त्विष्यैं त्वा। द्युम्नायं त्वा। इन्द्रियायं त्वा भूत्यैं त्वा। धर्मांऽसि सुधर्मा में न्यस्मे। ब्रह्मांणि धारय। क्षुत्राणिं धारय। विशं धारय। नेत्त्वा वार्तः स्कन्दयांत्॥३७॥

अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयामि। अमुनां सह निर्धं गंच्छ।

यों ऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। पूष्णे शरंसे स्वाहाँ। ग्रावंभ्यः स्वाहाँ। प्रतिरेभ्यः स्वाहाँ। द्यावांपृथिवीभ्याः स्वाहाँ। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहाँ। रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहाँ॥३८॥

अहुर्ज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिर्ज्योतिषा्ड् स्वाहाँ। रात्रिर्ज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिर्ज्योतिषा्ड् स्वाहाँ। अपीपरो माऽह्यो रात्रियै मा पाहि। एषा तें अग्ने समित्। तया समिध्यस्व। आयुंर्मे दाः। वर्चसा माञ्जीः। अपीपरो मा रात्रिया अह्यों मा पाहि॥३९॥

पुषा ते अग्ने स्मित्। तया समिध्यस्व। आयुंर्मे दाः। वर्चसा माञ्जीः। अग्निज्यीतिज्यीतिंरग्निः स्वाहाँ। सूर्यो ज्योतिज्यीतिः सूर्यः स्वाहाँ। भूः स्वाहाँ। हुतः ह्विः। मधुं हविः। इन्द्रंतमेऽग्नौ॥४०॥

पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीः। अश्यामं ते देवधर्म।
मधुंमतो वाजंवतः पितुमतः। अङ्गिरस्वतः स्वधाविनः।
अशीमहिं त्वा मा मां हिश्सीः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य
रशिमभ्यः। स्वाहाँ त्वा नक्षंत्रभ्यः॥४१॥
बह्मवर्षमारं पीपिह स्कृत्यांद्वारं कृदहाँ स्वाहाइहां मा पाह्यो सम वं॥———[१०]

घर्म् या ते दिवि शुक्। या गांयत्रे छन्दंसि। या ब्राँह्मणे। या हेविधीनें। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां। घर्म् या तेऽन्तिरिक्षे शुक्। या त्रैष्टुंभे छन्दंसि। या रांजन्यें। याऽऽग्नींग्रे। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां॥४२॥ घर्म् या ते पृथिव्या १ शुक्। या जागते छन्दंसि। या वैश्यै। या सदंसि। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहाँ। अनुंनोऽद्यानुंमितिः। अन्विदंनुमते त्वम्। दिवस्त्वां पर्स्पायाः। अन्तिरक्षस्य तुनुवंः पाहि। पृथिव्यास्त्वा धर्मणा॥४३॥

व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पायाः। क्ष्र्त्रस्यं तनुवंः पाहि। विशस्त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। प्राणस्यं त्वा पर्स्पायः। चक्षुंषस्तनुवंः पाहि। श्रोत्रंस्य त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। वृत्र्गुरंसि शुं युधायाः॥४४॥

शिशुर्जनंधायाः। शं च विश्वायुः शर्मं सप्रथाः। अप द्वेषो अप ह्वरं। अप द्वेषो अप ह्वरं। अन्यद्वंतस्य सिश्वम। धर्मेतत्तेऽन्नंमेतत्पुरीषम्। तेन वर्धस्व चाऽऽ चं प्यायस्व। वृधिषीमिहं च व्यम्। आचं प्यासिषीमिहं॥४५॥

रित्तिर्नामांसि दिव्यो गंन्ध्वाः। तस्यं ते पृद्वद्वंविधानम्। अग्निरध्यंक्षाः। रुद्रोऽधिपतिः। सम्हमायुंषा। सं प्राणेनं। सं वर्चसा। सं पर्यसा। सं गौपत्येनं। स॰ रायस्पोषेण॥४६॥

व्यंसौ। यों ऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। अचिंऋदृहृषा हरिः। महान्मित्रो न दंर्शृतः। स॰ सूर्येण रोचते। चिदंसि समुद्रयोनिः। इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावां। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुंरुण्युः। मुहान्थ्स्थस्थै ध्रुव आनिषंत्तः॥४७॥

नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। विश्वावंसुश् सोम गन्ध्वंम्। आपो दृहशुषीः। तृहतेनाव्यायन्। तृदन्ववैत्। इन्द्रो रारहाण आसाम्। परि सूर्यस्य परिधीश रपश्यत्। विश्वावंसुर्भि तन्नो गृणातु। दिव्यो गन्धवं रजसो विमानः। यद्वां घा सृत्यमुत यन्न विद्या ४८॥

धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यात्। सिम्नेमिवन्द् चरणे नदीनाम्। अपावृणोद्द्रो अश्मंत्रजानाम्। प्रासान्गन्ध्वीं अमृतांनि वोचत्। इन्द्रो दक्षं परिजानाद्हीनम्। एतत्त्वं देव धर्म देवो देवानुपागाः। इदमहं मनुष्यों मनुष्यान्। सोमंपीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषेण। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु॥४९॥

दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। यो उस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। उद्वयं तमंस्परिं। उदुत्यं चित्रम्। इममूषुत्यम्स्मभ्य र् सिनम्। गायत्रं नवीया रसम्। अग्ने देवेषु प्रवीचः॥५०॥ याऽऽग्रींध्र तान्तं पुनेनावं यक्ने स्वाह्य प्रमंणा श्रं पुष्पयाः प्यासिषीमहि पोषेण निषंतो विद्य संन्वृष्टो॥[११]

महीनां पयोऽसि विहितं देवत्रा। ज्योतिर्भा असि वनस्पतीनामोषधीनाः रसंः। वाजिनं त्वा वाजिनोऽवं नयामः। ऊर्ध्वं मनंः सुवर्गम्॥५१॥

[१२]

अस्कान्द्यौः पृथिवीम्। अस्कानृष्मो युवागाः। स्कन्नेमा

विश्वा भुवना। स्कन्नो युज्ञः प्रजनयतु। अस्कानजंनि प्राजंनि। आ स्कन्नाज्ञांयते वृषां। स्कन्नात् प्रजंनिषीमहि॥५२॥
————[१३]

या पुरस्तां द्विद्युदापंतत्। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहां। या देक्षिणतः। या पृश्चात्। योत्तंरतः। योपरिष्टाद्विद्युदापंतत्। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहां॥५३॥

प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहाँ। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहाँ। मनंसे स्वाहां वाचे सरंस्वत्यै

स्वाहाँ॥५४॥

[१५]

पूष्णे स्वाहां पूष्णे शरेसे स्वाहां। पूष्णे प्रंपुत्थ्यांय स्वाहां पूष्णे नरिन्धंषाय स्वाहां। पूष्णेऽङ्गंणये स्वाहां पूष्णे नरुणांय स्वाहां। पूष्णे सांकेताय स्वाहां॥५५॥

[१६]

उदंस्य शुष्माँद्भानुर्नात् बिभंति। भारं पृंथिवी न भूमं। प्र शुक्रैतं देवी मंनीषा। अस्मथ्सुतंष्टो रथो न वाजी। अर्चन्त एके मिंह सामंमन्वत। तेन सूर्यमधारयन्। तेन सूर्यमरोचयन्। धर्मः शिर्स्तद्यम्प्रिः। पुरीषमिस सं प्रियं प्रजयां पृश्मिभ्वत्। प्रजापितंस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५६॥

[१७]

यास्ते अग्न आर्द्रा योनयो याः कुलायिनीः। ये ते अग्न इन्देवो या उ नाभयः। यास्ते अग्ने तनुव ऊर्जो नाम। ताभिस्त्वमुभयीभिः संविदानः। प्रजाभिरग्ने द्रविणेह सीद। प्रजापितिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५७॥

[88]

अग्निरंसि वैश्वान्तेंऽसि। संवथ्सरोंऽसि परिवथ्सरोंऽसि। इदावथ्सरोंऽसीद्वथ्सरोंऽसि। इद्वथ्सरोंऽसि वथ्सरोंऽसि। तस्यं ते वस्नतः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। शरदुत्तंरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितंयः। अपरपृक्षाः पृरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। तस्यं ते मासांश्चार्थमासाश्चं कल्पन्ताम्। ऋतवंस्ते कल्पन्ताम्। संवथ्सरस्तं कल्पताम्। अहोरात्राणि ते कल्पन्ताम्। एति प्रेति वीति समित्युदितिं। प्रजापतिस्त्वा सादयत्। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवः सीद॥५८॥

चितंयो नवं च॥——[१९

भूर्भुवः सुवंः। ऊर्ध्व ऊ षु णं ऊतयें। ऊर्ध्वो नंः पाह्य १ हंसः। विधुन्दंद्राण १ समंने बहूनाम्। युवांन १ सन्तं पितृतो जंगार। देवस्यं पश्य काव्यं मिहृत्वाद्या मुमारं। सह्यः समान। यदृते चिंदिभिश्रिषंः। पुरा जुर्तृभ्यं आतृदंः। सन्धांता सन्धिं मघवां पुरोवसुंः॥ ५९॥

निष्केर्ता विह्नुंतं पुनः। पुनंरूर्जा सह रय्या। मा नो

घर्म व्यथितो विव्यथो नः। मा नः पर्मधरं मा रजोऽनैः। मोष्वंस्माः स्तमंस्यन्तरा धाः। मा रुद्रियांसो अभिगुंर्वृधानः। मा नः ऋतुंभिर्हीडितेभिर्स्मान्। द्विषांसुनीते मा परां दाः। मा नो रुद्रो निर्ऋतिर्मा नो अस्ताः। मा द्यावांपृथिवी हींडिषाताम्॥६०॥

उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नेः सखाया। आदित्यानां प्रसिंतिर्हेतिः। उग्रा शतापांष्ठा घविषा परि णो वृणक्तु। इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वं नो अग्ने स त्वं नो अग्ने। त्वमंग्ने अयासिं। उद्वयं तमस्परिं। उदुत्यं चित्रम्। वयः सुपूर्णाः॥६१॥

भूर्भुवः सुवंः। मिय् त्यिदिन्द्रियं महत्। मिय् दक्षो मिय् ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो विभातु मे। आकूँत्या मनंसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। ब्रह्मणा तेजंसा सह। क्षत्रेण यशंसा सह। सत्येन तपंसा सह। तस्य दोहंमशीमिह। तस्यं सुम्रमंशीमिह। तस्यं भूक्षमंशीमिह। तस्यं त इन्द्रेण पीतस्य मध्मतः। उपंहूत्स्योपंहूतो भक्षयामि॥६२॥

यास्ते अग्ने घोरास्तनुवंः। क्षुच् तृष्णां च। अस्नुक्वानांहुतिश्च। अशनया चं पिपासा चं। सेदिश्चामंतिश्च। एतास्ते अग्ने घोरास्तनुवंः। ताभिरमुं गंच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः॥६३॥

-[२२]

| स्निक्ष स्नीहिंतिश्च स्निहिंतिश्च। उष्णा चं शीता चं। उग्रा चं भीमा चं। सदाम्नी सेदिरनिंरा। एतास्ते अग्ने घोरास्तनुवंः। ताभिरमुं गंच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः॥६४॥ [२३]  |
|---|
| धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनयः श्चा निक्रिम्पश्चं विक्रिम्पश्चं<br>विक्षिपः॥६५॥<br>————[२४]  |
| उग्रश्च धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनयईश्च। सह्सह्वाइश्च<br>सहंमानश्च सहंस्वाइश्च सहीयाइश्च। एत्य प्रेत्यं<br>विक्षिपः॥६६॥——[२५]  |
| अहोरात्रे त्वोदीरयताम्। अर्धमासास्त्वोदीं जयन्तु।<br>मासौस्त्वा श्रपयन्तु। ऋतवंस्त्वा पचन्तु। संवथ्सरस्त्वां<br>हन्त्वसौ॥६७॥——[२६]  |
| खट फड जिहि। छिन्धी भिन्धी हुन्धी कट्। इति वार्चः<br>कूराणि॥६८॥  |
| विगा इंन्द्र विचरंन्थ्स्पाशयस्व। स्वपन्तंमिन्द्र<br>पशुमन्तंमिच्छ। वज्रेणामुं बोधय दुर्विदत्रम्। स्वप्तौऽस्य<br>प्रहर् भोजनेभ्यः। अग्ने अग्निना संवदस्व। मृत्यो मृत्युना<br>संवदस्व। नमंस्ते अस्तु भगवः। स्कृत्ते अग्ने नमः। द्विस्ते |

**—**[३३]

| असृंन्मुखो रुधिरेणाव्यंक्तः। यमस्यं दूतः श्वपाद्विधांविस। गृध्रंः सुपणः कुणपं निषेवसे। यमस्यं दूतः प्रहितो भ्वस्यं चोभयोः॥७०॥  [२९]  यदेतहृंकसो भूत्वा। वाग्देंव्यभिरायंसि। हिष्वन्तं मेऽभिराय। तं मृत्यो मृत्यवं नय। स आर्त्यार्तिमार्च्छतु॥७१॥  [३०]  यदीषितो यदि वा स्वकामी। भ्येडंको वदित् वाचंमेताम्। तामिन्द्राग्नी ब्रह्मणा संविदानौ। शिवामस्मभ्यं कृणतं गृहेषुं॥७२॥  [३१]  दीर्घमुखि दुर्हंणु। मा स्मं दक्षिणतो वंदः। यदि दक्षिणतो वदाहिष्वन्तं मेऽवं बाधासै॥७३॥  [३२]  इत्थादुलूंक आपंप्तत्। हिर्ण्याक्षो अयोमुखः। रक्षंसां दूत | नर्मः। त्रिस्ते नर्मः। चृतुस्ते नर्मः। पृञ्चकृत्वंस्ते दशकृत्वंस्ते नर्मः। शृतकृत्वंस्ते नर्मः। आसहस्रकृत्वंस्ते नर्मः। अपरिमितकृत्वंस्ते नर्मः। नर्मस्ते अस्तु माहिश्सीः॥६९॥ | त्वंस्ते     |
|--|---|--------------|
| ्यदेतहृंक्सो भूत्वा। वाग्देंव्यभिरायंसि। द्विषन्तं मेऽभिराय। तं मृंत्यो मृत्यवं नय। स आर्त्यार्तिमार्च्छतु॥७१॥ ———————————————————————————————————   | अर्सृन्मुखो रुधिरेणाव्यंक्तः। यमस्यं दूतः श्वपाद्विधां  | वसि।         |
| मेऽभिराय। तं मृत्यो मृत्यवे नय। स आर्त्यार्तिमार्च्छंतु॥७१॥ [३०] यदीषितो यदि वा स्वकामी। भ्येडंको वदित् वाचंमेताम्। तामिन्द्राग्नी ब्रह्मणा संविदानो। शिवामस्मभ्यं कृणुतं गृहेषुं॥७२॥ [३१] दीर्घमुखि दुर्हंणु। मा स्मं दक्षिणतो वंदः। यदि दक्षिणतो वदाँद्विषन्तं मेऽवं बाधासे॥७३॥ [३२] इत्थादुलूंक आपंप्तत्। हिर्ण्याक्षो अयोमुखः। रक्षंसां दूत  |   |              |
| वार्चमेताम्। तामिन्द्राग्नी ब्रह्मणा संविदानौ। शिवामस्मभ्यं कृणतं गृहेषुं॥७२॥ ————[३१] दीर्घमुखि दुर्हणु। मा स्मं दक्षिणतो वंदः। यदि दक्षिणतो वदाँद्विषन्तं मेऽवं बाधासै॥७३॥ —————[३२] इत्थादुलूंक आपंत्रत्। हिर्ण्याक्षो अयोमुखः। रक्षंसां दूत  | मेऽभिराय। तं मृत्यो मृत्यवे नय। स आर्त्यार्तिमार्च्छतु॥   | ७१॥<br>[३०]  |
| दीर्घमुखि दुर्हणु। मा स्मं दक्षिणुतो वंदः। यदि दक्षिणुतो वदाँद्विषन्तं मेऽवं बाधासै॥७३॥ [३२] इत्थादुलूंक आपंत्रत्। हिर्ण्याक्षो अयोमुखः। रक्षंसां दूत  | वाचंमेताम्। तामिन्द्राग्नी ब्रह्मणा संविदानौ। शिवाम्<br>कृणतं गृहेषुं॥७२॥   | स्मभ्यं<br>- |
| इत्थादुर्लूक् आपंप्तत्। हिर्ण्याक्षो अयोमुखः। रक्षंसां दूत   | दीर्घमुखि दुर्हणु। मा स्मं दक्षिण्तो वंदः। यदि दिष्ठ<br>वदाँद्विषन्तं मेऽवं बाधासै॥७३॥  | भ्रेणुतो     |
| आगतः। तर्मितो नाशयाग्रे॥७४॥  |   |              |

यदेतद्भूतान्यंन्वाविश्यं। दैवीं वार्चं वृदसिं। द्विषतीं नः परावद। तान्मृत्यो मृत्यवें नय। त आर्त्याऽऽर्तिमार्च्छंन्तु। अग्निनाऽग्निः संवंदताम्॥७५॥

[38]

प्रसार्य सुक्थ्यौ पतिसि। सुव्यमिक्षं निपेपि च। मेहकंस्य चनामंमत्॥७६॥

[३५]

अत्रिणा त्वा क्रिमे हन्मि। कण्वेन ज्मदेग्निना। विश्वावंसोर्ब्रह्मणा हृतः। क्रिमीणा् राजाः। अप्येषाः स्थपतिर्हृतः। अथो माताऽथो पिता। अथौ स्थूरा अथौ क्षुद्राः। अथो कृष्णा अथौ श्वेताः। अथो आशातिका हृताः। श्वेताभिः सह सर्वे हताः॥७७॥

[३६]

आह्रावंद्य। शृतस्यं ह्विषो यथां। तथ्सत्यम्। यद्मुं यमस्य जम्भंयोः। आदंधामि तथा हि तत्। खण्फण्म्रसिं॥७८॥

[シょ]

ब्रह्मणा त्वा शपामि। ब्रह्मणस्त्वा शपथेन शपामि। घोरेणं त्वा भृगूणां चक्षुंषा प्रेक्षें। रौद्रेण त्वाङ्गिरसां मनसा ध्यायामि। अघस्यं त्वा धारंया विद्धामि। अधंरो मत्पंद्यस्वासौ॥७९॥ ————[३८]

उत्तंद शिमिजावरि। तल्पेंजे तल्प उत्तंद। गिरी १ रनु

प्रवेशय। मरीचीरुप सन्नुंद। यावंदितः पुरस्तांदुदयांति सूर्यः। तावंदितोऽमुं नाशय। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चे व्यं द्विष्मः॥८०॥ ————[३९]

भूर्भुवः सुवो भूर्भुवः सुवो भूर्भुवः सुवंः। भुवो उद्घायि भुवो उद्घायि। नृम्णायि नृप्णायो वायि निधाय्यो वायि। ए अस्मे अस्मे। सुवर्न ज्योतीः॥८१॥

[४०]

पृथिवी समित्। ताम्गिः सिनंन्धे। साऽग्निः सिनंन्धे। ताम्हः सिनंन्धे। सा मा सिनंद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन सिनंन्ताः स्वाहां। अन्तरिक्षः समित्॥८२॥

तां वायुः सिनन्धे। सा वायु सिनन्धे। ताम्ह सिनन्धे। सा मा सिनंद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चंसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन सिनन्ता स्वाहाँ। द्यौः सिन्त। तामांदित्यः सिनन्धे॥८३॥

साऽऽदित्य सिन्धे। ताम्ह सिन्धे। सा मा सिमंद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन सिन्ता स्वाहाँ। प्राजापत्या में सिनदेसि सपबृक्षयंणी। भ्रातृब्यहा में ऽसि स्वाहाँ। अग्नैं व्रतपते व्रतं चेरिष्यामि॥८४॥ तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। वायों व्रतपत् आदित्य व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। द्यौः स्मित्। तामांदित्यः समिन्धे। साऽऽदित्य समिन्धे। तामह समिन्धे। सा मा समिद्धा। आयुंषा तेर्जसा॥८५॥

वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन् सिनंन्ताः स्वाहां। अन्तरिक्षः सिनंताः तां वायुः सिनंन्धे। सा वायुः सिनंन्धे। सा वायुः सिनंन्धे। तामृहः सिनंन्धे। सा मा सिनंद्धा। आयुंषा तेर्जसा। वर्चसा श्रिया॥८६॥

यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन् सिनंन्ता क्ष् स्वाहाँ। पृथिवी सिमत्। तामृग्निः सिनंन्थे। साऽग्निः सिनंन्थे। तामृहः सिनंन्थे। सा मा सिनंद्या। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं॥८७॥

अन्नाद्येन समिन्ता इस्वाहाँ। प्राजापत्या में समिदंसि सपत्नक्षयंणी। भ्रातृ व्यहा में ऽसि स्वाहाँ। आदित्य व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्में ऽराधि। वायौं व्रतपते उग्नै व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्में ऽराधि॥८८॥

सुमिथ्समिन्धे ब्रुतं चेरिष्याम्यायुषा तेर्जसा वर्चसा श्रिया यशंसा ब्रह्मवर्चसेनाष्टौ चं॥————[४१]

शं नो वार्तः पवतां मात् रिश्वा शं नंस्तपतु सूर्यः। अहां निशं भवन्तु नः श॰ रात्रिः प्रतिधीयताम्। शमुषा नो व्युच्छतु शमां दित्य उदेतु नः। शिवा नः शन्तमा भव सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सुन्हिशी। इडांये वास्त्विसि वास्तुमद्वांस्तुमन्तों भूयास्म मा वास्तोंश्छिथ्स्मह्मवास्तुः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। प्रतिष्ठासि प्रतिष्ठावंन्तो भूयास्म मा प्रतिष्ठायांश्छिथ्स्मह्मप्रतिष्ठः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। आ वांत वाहि भेषजं वि वांत वाहि यद्रपंः। त्वः हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमो वातौ वात आ सिन्धोरा पंरावतः॥८९॥

दक्षं मे अन्य आवातु परान्यो वातु यद्रपंः। यद्दो वांतते गृहें ऽमृतंस्य निधिर्हितः। ततों नो देहि जीवसे ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो मह आवंह वात आवांतु भेषजम्। शम्भूर्मयोभूर्नो हृदे प्र ण आयूर्धि तारिषत्। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तं त्वा प्रपंद्ये सगुः सार्थः। सह यन्मे अस्ति तेन। भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये सुवः प्रपंद्ये भूभुवः सुवः प्रपंद्ये वायुं प्रपद्येऽनातां देवतां प्रपद्येऽश्मानमाख्णं प्रपंदो प्रजापंतेर्ब्रह्मकोशं ब्रह्म प्रपंद्य ओं प्रपंदो। अन्तरिक्षं म उर्वन्तरं बृहद्ग्रयः पर्वताश्च यया वातः स्वस्त्या स्वंस्तिमान्तयां स्वस्त्या स्वंस्तिमानंसानि। प्राणापानौ मृत्योर्मा पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टुं मियं मेथां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेधां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मियं प्रजां मिय सूर्यो भ्राजों दधातु॥९०॥

द्युभिर्क्तिभः परिपातम्स्मानिरष्टिभिरिश्वना सौभंगेभिः। तत्रो मित्रो वर्रुणो मामहन्तामिदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः। कयां निश्चत्र आ भ्वदूती सदावृधः सखाँ। कया शिचेष्ठया वृता। कस्त्वां सत्यो मदानां मर्रहेष्ठो मथ्सदन्धंसः। दृढाचिदारुजे वसुं। अभी षुणः सखींनामिवता जरितृणाम्। शृतं भवास्यूतिभिः। वयः सुपूर्णा उपसेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूणुंहि पूर्धि चक्षुंर्मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेव बद्धान्॥९१॥

शं नों देवीर्भिष्टंय आपों भवन्तु पीतयें। शं योर्भिस्नंवन्तु नः। ईशांना वार्याणां क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्। अपो यांचामि भेषजम्। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्यों ऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मंयोभुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन। महे रणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतमो रसस्तस्यं भाजयतेह नंः। उश्तीरिंव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ॥९२॥

आपों जनयंथा च नः। पृथिवी शान्ता साऽग्निनां शान्ता सा में शान्ता शुचर शमयत्। अन्तिरक्षिर शान्तं तद्वायुनां शान्तं तन्में शान्तर शुचर शमयत्। द्यौः शान्ता साऽऽदित्येनं शान्ता सा में शान्ता शुचर शमयत्। शमयत्। पृथिवी शान्तिरन्तिरक्षिर शान्तिर्द्यौः शान्तिर्दिशः शान्तिरवान्तरदिशाः शान्तिरग्निः शान्तिर्वायः शान्तिरादित्यः

शान्तिश्चन्द्रमाः शान्तिर्नक्षेत्राणि शान्तिरापः शान्तिरोषंधयः शान्तिर्वनस्पतंयः शान्तिर्गौः शान्तिरजा शान्तिरश्वः शान्तिः पुरुषः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिं र्ब्राह्मणः शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः शान्तिंमें अस्तु शान्तिः। तयाहर शान्त्या सर्वशान्त्या मह्यं द्विपदे चतुंष्पदे च शान्तिं करोमि शान्तिंमें अस्तु शान्तिः। एह श्रीश्च हीश्च धृतिश्च तपों मेधा प्रतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चेतानि मोत्तिष्ठन्तुमनूत्तिष्ठन्तु मा माङ् श्रीश्च हीश्च धृतिश्च तपो मेधा प्रंतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चेतानि मा मा हांसिषुः। उदायुंषा स्वायुषोदोषंधीना १ रसेनोत्पर्जन्यंस्य शुष्मेणोदंस्थाममृता १ अनु। तचक्षुंदेविहेतं पुरस्तौच्छुऋमुचरत्। पश्येम श्ररदेः श्तं जीवेम श्ररदेः श्तं नन्दाम शरदेः शतं मोदाम श्रारदेः शतं भवीम श्रारदेः श्रात । श्रुणवीम श्रारदेः श्रातं प्रब्रंवाम शरदेः शतमजीताः स्याम शरदेः शतं ज्योक सूर्यं दृशे। य उदंगान्महतोऽर्णवाँद्विभ्राजंमानः सरि्रस्य मध्याथ्स मां वृषभो लोहिताक्षः सूर्यो विपश्चिन्मनंसा पुनातु। ब्रह्मणश्चोतंन्यसि ब्रह्मण आणी स्थो ब्रह्मण आवर्पनमसि धारितेयं पृथिवी ब्रह्मणा मही धारितमेनेन मृहद्न्तरिक्षं दिवं दाधार पृथिवी सदेवां यदहं वेद तदहं धारयाणि मा मद्वेदोऽधिविस्नंसत्। मेधामनीषे माविंशता समीची भूतस्य भव्यस्यावंरुध्यै सर्वमायुरयाणि सर्वमायुरयाणि। आभिर्गीर्भिर्यदतों न ऊनमाप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा

स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं भूयिष्ठभाजो अर्ध ते स्याम। ब्रह्म प्रावादिष्म तन्नो मा हांसीत्॥९३॥
परावती दधातु बढां जिन्बंथ दशे सह चै॥————————[४२]

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम ऋषिंभ्यो मन्नकृद्धो मन्नपतिभ्यो मा मामृषंयो मञ्जकृतो मञ्जपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मञ्जकृतो मन्नपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये सत्यं विदिष्ये तस्मो अहमिदमुप्स्तरणमुपस्तृण उपस्तरणं मे प्रजायै पशूनां भूयादुपस्तरंणमहं प्रजायै पशूनां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मध् मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विदष्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वार्चमुद्यास १ शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभायै पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



#### ॥पञ्चमः प्रश्नः॥

ॐ शं नस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥ देवा वै सन्नमांसत। ऋद्धिंपरिमितं यशंस्कामाः। तेंंऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषां नस्तथ्सहासदितिं। तेषां कुरुक्षेत्रं वेदिरासीत्। तस्यै खाण्ड्वो देक्षिणार्ध आंसीत्। तूर्प्रमृत्तरार्धः। पुरीणज्ञंघनार्धः। मुरवं उत्करः॥१॥

तेषां मुखं वैष्णावं यशं आर्च्छत्। तत्र्यंकामयत। तेनापांकामत्। तं देवा अन्वायन्। यशोऽव्रुरुंश्यमानाः। तस्यान्वागंतस्य। स्व्याद्धनुरजांयत। दक्षिणादिषंवः। तस्मादिषुधन्वं पुण्यंजन्म। यज्ञजंन्मा हि॥२॥

तमेक्॰ सन्तम्ं। बहवो नाभ्यंधृष्णुवन्। तस्मादेकंमिषुधन्वि-नम्ं। बहवोऽनिषुधन्वा नाभिधृंष्णुवन्ति। सोंऽस्मयत। एकं मा सन्तं बहवो नाभ्यंधर्षिषुरितिं। तस्यं सिष्मियाणस्य तेजोऽपांकामत्। तद्देवा ओषंधीषु न्यंमृजुः। ते श्यामाकां अभवन्। स्मयाका वे नामैते॥३॥

तथ्स्मयाकांना इस्मयाकृत्वम्। तस्मांद्वीक्षितेनांपिगृह्यं स्मेत्व्यम्। तेजंसो धृत्यैं। स धनुः प्रतिष्कभ्यांतिष्ठत्। ता उपदीकां अब्रुवन्वरं वृणामहै। अर्थं व इम इर्न्थयाम। यत्र क्षं च खनांम। तद्पोंऽभितृंणदामेतिं। तस्मांदुपदीका यत्र क्षं च खनंन्ति। तदपोंऽभितृंन्दन्ति॥४॥

वारेवृत् ह्यांसाम्। तस्य ज्यामप्यांदन्। तस्य

धर्नुर्विप्रवंमाण १ शिर उदंवर्तयत्। तद्मावांपृथिवी अनुप्रावंतित। यत्प्रावंतित। तत्प्रंवर्ग्यस्य प्रवर्ग्यत्वम्। यद्धाँ(४)इत्यपंतत्। तद्घर्मस्यं घर्मत्वम्। महतो वीर्यमपप्तदितिं। तन्मंहावीरस्यं महावीरत्वम्॥५॥

यदस्याः समर्भरन्। तथ्सम्राज्ञीः सम्राद्वम्। तङ् स्तृतं देवतां स्त्रेधा व्यंगृह्णता अग्निः प्रांतः सवनम्। इन्द्रो मार्ध्यं दिन र सर्वनम्। विश्वेदेवास्तृतीयसवनम्। तेनापंशीर्ष्णा यज्ञेन यजमानाः। नाशिषोऽवारुन्धतः। न सुवर्गं लोकमभ्यंजयन्। ते देवा अश्विनांवब्रुवन्॥६॥

भिषजो वै स्थंः। इदं यज्ञस्य शिरः प्रतिंधत्तमितिं। तावंब्रूतां वरं वृणावहै। ग्रहं एव नावत्रापि गृह्यतामितिं। ताभ्यांमेतमांश्विनमंगृह्णन्। तावेतद्यज्ञस्य शिरः प्रत्यंघत्ताम्। यत्प्रवर्ग्यः। तेन सशींष्णा यज्ञेन यजंमानाः। अवाशिषो-ऽर्रुन्थता अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। यत्प्रंवर्ग्यं प्रवृणक्तिं। यज्ञस्यैव तच्छिरः प्रतिंदधाति। तेन सशींष्णां यज्ञेन यजमानः। अवाशिषो रुन्थे। अभि सुवर्गं लोकं जयित। तस्मदिष आश्विनप्रवया इव। यत्प्रवर्ग्यः॥७॥

उत्करो ह्येते तृन्दन्ति महावीर्त्वमंब्रुवन्नजयन्थस्पत चं॥

सावित्रं जुंहोति प्रसूँत्यै। चृतुर्गृहीतेनं जुहोति। चतुंष्पादः पशवंः। पशूनेवावंरुन्धे। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतितिष्ठति। छन्दा ऐसि देवेभ्योऽपाँकामन्। न वोंऽभागानि हव्यं वंक्ष्याम् इतिं। तेभ्यं एतचंतुर्गृहीतमंधारयन्। पुरोनुवाक्यांयै याज्यांयै॥८॥

देवतांयै वषद्भारायं। यचंतुर्गृहीतं जुहोतिं। छन्दा ईस्येव तत् प्रीणाति। तान्यंस्य प्रीतानि देवेभ्यों हृव्यं वंहन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंं दीक्षितस्यं गृहा(३)इ न होत्व्या(३)मितिं। हृविर्वे दीक्षितः। यज्जंहुयात्। हृविष्कृतं यजमानमुग्नौ प्रदंध्यात्। यन्न जुंहुयात्॥९॥

यज्ञपुरुरुन्तरियात्। यजुरेव वंदेत्। न ह्विष्कृंतं यजमानमुग्नौ प्रदर्धाति। न यंज्ञपुरुरुन्तरेति। गायुत्री छन्दाु स्यत्यमन्यत। तस्यै वषद्कारौं ऽभ्यय्य शिरौं ऽच्छिनत्। तस्यै द्वेधा रसः परापतत्। पृथिवीमुर्धः प्राविंशत्। पृशूनुर्धः। यः पृथिवीं प्राविंशत्॥१०॥

स खंदिरों ऽभवत्। यः पृशून्। सों ऽजाम्। यत्खांदिर्यभ्रिर्भ-वंति। छन्दंसामेव रसेंन युज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यदौदुंम्बरी। ऊर्ग्वा उंदुम्बरंः। ऊर्जैव युज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यद्वैण्वी। तेजो वै वेणुंः॥११॥

तेजंसैव यज्ञस्य शिरः सम्भंरित। यद्वैकंङ्कती। भा एवावंरुन्थे। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इत्यभ्रिमादंते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांहु यत्यै। वर्ज्ञं इव वा एषा। यदभ्रिः। अभ्रिरिस् नारिर्सीत्यांह शान्त्यै॥१२॥

अध्वर्कृद्देवेभ्य इत्याह। यज्ञो वा अध्वरः। यज्ञकृद्देवेभ्य इति वावैतदाह। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पत् इत्याह। ब्रह्मणेव यज्ञस्य शिरोऽच्छैति। प्रेतु ब्रह्मणस्पतिरित्याह। प्रेत्यैव यज्ञस्य शिरोऽच्छैति। प्र देव्येतु सूनृतेत्याह। यज्ञो वै सूनृतां। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किरांधस्मित्यांह॥१३॥

पाङ्को हि युज्ञः। देवा युज्ञं नंयन्तु न इत्यांह। देवानेव यंज्ञिनयः कुरुते। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथामित्यांह। आभ्यामेवानुंमतो युज्ञस्य शिरः सम्भंरित। ऋद्यासंमुद्य मुखस्य शिर् इत्यांह। युज्ञो वै मुखः। ऋद्यासंमुद्य युज्ञस्य शिर् इति वावैतदांह। मुखायं त्वा मुखस्यं त्वा शीर्ष्णं इत्यांह। निर्दिश्यैवैनंद्धरित॥१४॥

त्रिर्हरित। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य पृव लोकेभ्यों यज्ञस्य शिरः सम्भरित। तूष्णीं चंतुर्थः हरित। अपिरिमितादेव यज्ञस्य शिरः सम्भरित। मृत्खनादग्रे हरित। तस्मान्मृत्खनः करुण्यंतरः। इयत्यग्रं आसीरित्यांह। अस्यामेवाछंम्बद्धारं यज्ञस्य शिरः सम्भरित। ऊर्जं वा एतः रसं पृथिव्या उपदीका उद्दिहन्ति॥१५॥

यद्वल्मीकम्ं। यद्वल्मीकवृपा संम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवंरुन्धे। अथो श्रोत्रंमेव। श्रोत्रुड्ड होतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकः। अवंधिरो भवति। य पुवं वेदे। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदेयच्छत्। स यत्रं यत्र पुराक्रमत॥१६॥

तन्नाद्धियत। स पूंतीकस्तम्बे पराँक्रमत। सौंऽद्धियत। सौंऽब्रवीत्। ऊतिं वै में धा इतिं। तदूतीकांनामूतीकृत्वम्। यदूतीका भवंन्ति। यज्ञायैवोतिं देधति। अग्निजा असि प्रजापंते रेत इत्यांह। य एव रसंः पुशून्प्राविंशत्॥१७॥

तमेवावंरुन्थे। पश्चेते संम्भारा भंवन्ति। पाङ्को यज्ञः। यावांनेव यज्ञः। तस्य शिरः सम्भंरति। यद्ग्राम्याणां पश्नां चर्मणा सम्भरेत्। ग्राम्यान्पश्र्ञ्जुचाऽर्पयेत्। कृष्णाजिनेन सम्भंरति। आर्ण्यानेव पृश्र्ञ्जुचार्पयति। तस्मांथ्समावंत्पश्नां प्रजायंमानानाम्॥१८॥

आर्ण्याः पृशवः कनीया सः। शुचा ह्यृंताः। लोमतः सम्भरित। अतो ह्यस्य मेध्यम्। पृरिगृह्या यन्ति। रक्षंसामपंहत्ये। बहवों हरन्ति। अपंचितिमेवास्मिन्दधित। उद्धंते सिकंतोपोप्ते परिश्रिते निदंधित शान्त्यै। मदंन्तीभिरुपं सृजित॥१९॥

तेजं पुवास्मिन्दधाति। मधुं त्वा मधुला कंरोत्वित्यांह। ब्रह्मणैवास्मिन्तेजों दधाति। यद्ग्राम्याणां पात्रांणां कृपालैंः स॰सृजेत्। ग्राम्याणि पात्रांणि शुचाऽर्पयेत्। अर्मकृपालैः स॰सृजिति। पुतानि वा अनुपजीवनीयानिं। तान्येव शुचार्पयिति। शर्कराभिः सरसृंजित् धृत्यैं। अथो शन्त्वायं। अज्ञलोमेः सरसृंजिति। एषा वा अग्नेः प्रिया तृनः। यद्जा। प्रिययैवैनं तृनुवा सरसृंजिति। अथो तेजंसा। कृष्णाजिनस्य लोमंभिः सरसृंजिति। युज्ञो वै कृष्णाजिनम्। युज्ञेनैव युज्ञर सरसृंजिति॥२०॥

परिश्रिते करोति। ब्रह्मवर्चसस्य परिगृहीत्यै। न कुर्वन्निभ प्राण्यात्। यत्कुर्वन्नीभ प्राण्यात्। प्राणाञ्छुचार्पयेत्। अपहाय प्राणिति। प्राणानां गोपीथायं। न प्रवग्यं चाऽऽदित्यं चान्तरेयात्। यदंन्तरेयात्। दुश्चर्मां स्यात्॥२१॥

तस्मान्नान्त्राय्यम्। आत्मनो गोपीथायं। वेणुंना करोति। तेजो वै वेणुंः। तेजंः प्रवर्ग्यः। तेजंसैव तेजः समर्धयति। मखस्य शिरोऽसीत्यांह। युज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्प्रंवर्ग्यः॥२२॥

तस्मादेवमाह। यज्ञस्यं पदे स्थ इत्याह। यज्ञस्य ह्यंते पदे। अथो प्रतिष्ठित्यै। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमीत्यांह। छन्दोंभिरेवैनं करोति। त्र्यंद्धं करोति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यैं। छन्दोंभिः करोति॥२३॥

वीर्यं वै छन्दा रेसि। वीर्येणैवैनं करोति। यर्जुषा बिलं करोति व्यावृत्यै। इयंं तं करोति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयं तं करोति। युज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयं तं करोति। एतावद्वै पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥२४॥

अपंरिमितं करोति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धै। पृरिग्रीवं कंरोति धृत्यै। सूर्यस्य हरसा श्रायेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अश्वश्केनं धूपयति। प्राजापत्यो वा अर्श्वः सयोनित्वायं। वृष्णो अश्वंस्य निष्पद्सीत्यांह। असौ वा आंदित्यो वृषाऽश्वंः। तस्य छन्दार्श्स निष्पत्॥२५॥

छन्दोंभिरेवैनं धूपयति। अर्चिषं त्वा शोचिषे त्वेत्यांह। तेजं प्वास्मिन्दधाति। वारुणोंऽभीद्धंः। मैत्रियोपैति शान्त्यैं। सिद्धे त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। देवस्त्वां सिव्तेतोद्वंपत्वित्यांह। सिव्वेत्रंसूत प्वैनं ब्रह्मंणा देवतांभिरुद्वंपति। अपंद्यमानः पृथिव्यामाशा दिश् आपृणेत्यांह॥२६॥

तस्मांद्गिः सर्वा दिशोऽनु विभाति। उत्तिष्ठ बृहन्भवोध्वस्तिष्ठ ध्रुवस्त्वमित्यांह् प्रतिष्ठित्यै। ईश्वरो वा एषौऽन्धो भवितोः। यः प्रवृग्यम्नवीक्षेते। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्ष् इत्यांह। चक्षुषो गोपीथायं। ऋजवै त्वा साधवै त्वा सुक्षित्यै त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। इयं वा ऋजः। अन्तरिक्ष साधा असौ सुक्षितिः॥२७॥

दिशो भूतिः। इमानेवास्मैं लोकान्कंल्पयति। अथो प्रतिष्ठित्ये। इदमहम्मुमांमुष्यायुणं विशा पुशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन् पर्यूह्मित्यांह। विशेवनं पृश्भिर्ब्रह्मवर्चसेन् पर्यूहित। विशेतिं राज्ञन्यंस्य ब्रूयात्। विशेवनं पर्यूहित। पृश्भिरिति वैश्यंस्य। पृश्भिरेवेनं पर्यूहित। असुर्यं पात्रमनांच्छृण्णम्॥२८॥

आच्छृंणत्ति। देवत्राकंः। अज्ञक्षीरेणाऽऽच्छृंणत्ति। प्रमं वा एतत्पर्यः। यदंजक्षीरम्। प्रमेणैवैनं पयसाऽऽच्छृंणत्ति। यजुंषा व्यावृंत्त्यै। छन्दोंभिराच्छृंणत्ति। छन्दोंभिर्वा एष क्रियते। छन्दोंभिरेव छन्दाङ्स्याच्छृंणत्ति। छृन्धि वाचमित्यांह। वाचंमेवावंरुन्धे। छृन्ध्यूर्जमित्यांह। ऊर्जमेवावंरुन्धे। छृन्धि ह्विरित्यांह। ह्विरेवाकंः। देवं पुरश्चर सुघ्यासन्त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्॥२९॥ स्याद्यसंक्रवंकि करेति वीर्यसम्मतं छन्दार्थनि निष्पत्रुगेत्यांह सुक्षितिरांच्छण्यञ्चन्दाङ्स्याच्छ्ंणत्यहो चं॥[३]

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामो होतेर्घुर्मम्भिष्टुहीत्यांह। एष वा एतर्राहु बृह्स्पतिः। यद्भृह्मा। तस्मां एव प्रंतिप्रोच्य प्रचंरति। आत्मनोऽनांत्ये। यमायं त्वा मुखाय त्वेत्यांह। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवैन् समंध्यति। मदन्तीभिः प्रोक्षंति। तेजं एवास्मिन्दधाति॥३०॥

अभिपूर्वं प्रोक्षंति। अभिपूर्वमेवास्मिन्तेजों दधाति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो मेध्यत्वायं। होताऽन्वांह। रक्षंसामपहत्ये। अनंवानम्। प्राणानाः सन्तंत्ये। त्रिष्टुभंः स्तीर्गायत्रीरिवान्वांह॥३१॥

गायत्रो हि प्राणः। प्राणमेव यर्जमाने दधाति।

सन्तंतमन्वांह। प्राणानांमुन्नाद्यंस्य सन्तंत्यै। अथो रक्षंसामपंहत्यै। यत्परिंमिता अनुब्रूयात्। परिंमित्मवंरुन्धीत। अपंरिमिता अन्वांह। अपंरिमित्स्यावंरुद्धौ। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं॥३२॥

यत्प्रंवर्ग्यः। ऊर्ङ्गुञ्जाः। यन्मौञ्जो वेदो भवंति। ऊर्जैव यज्ञस्य शिरः समर्धयति। प्राणाहुतीर्जुहोति। प्राणानेव यजमाने दधाति। सप्त जुहोति। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। देवस्त्वां सविता मध्याऽनुक्तित्यांह॥३३॥

तेजंसैवैनंमनिक्त। पृथिवीं तपंसस्रायस्वेति हिरंण्यमुपौ-स्यति। अस्या अनंतिदाहाय। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निः सर्वा देवताः। प्रल्वानादीप्योपौस्यति। देवतास्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिद्धाति। अप्रंतिशीणीग्रं भवति। एतद्वर्रहिर्ह्यंषः॥३४॥

अर्चिरंसि शोचिर्सीत्यांह। तेजं एवास्मिन्ब्रह्मवर्च्सं दंधाति। स॰सींदस्व मृहा॰ असीत्यांह। मृहान् ह्यंषः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। एते वाव त ऋत्विजंः। ये दंर्शपूर्णमासयौंः। अर्थं कथा होता यजंमानायाऽऽशिषो नाशांस्त इतिं। पुरस्तांदाशीः खलु वा अन्यो यज्ञः। उपरिष्टादाशीर्न्यः॥३५॥

अनाधृष्या पुरस्तादिति यदेतानि यजूर्ष्थ्याहं।

शीर्षत एव यज्ञस्य यजंमान आशिषोऽवंरुन्धे। आयुंः पुरस्तांदाह। प्रजां दक्षिणतः। प्राणं पश्चात्। श्रोत्रंमुत्तर्तः। विधृंतिमुपरिष्टात्। प्राणानेवास्मै समीचो दधाति। ईश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति॥३६॥

मनोरश्वांसि भूरिंपुत्रेतीमाम्भिमृंशित। इयं वै मनोरश्वा भूरिंपुत्रा। अस्यामेव प्रतितिष्ठत्यनुंन्मादाय। सूप्सदां मे भूया मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। चितः स्थ परिचित् इत्यांह। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तस्यं मुरुतों रुश्मयंः॥३७॥

स्वाहां मुरुद्धिः परिश्रयस्वेत्यांह। अमुमेवाऽऽदित्यश्रयस्मिभिः पर्यूहिति। तस्मांदसावांदित्योंऽमुष्मिं छोके रिश्मिभिः पर्यूढः। तस्माद्राजां विशा पर्यूढः। तस्माद्रामणीः संजातैः पर्यूढः। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आंर्च्छत्। यद्वैकंङ्कताः परिधयो भवन्ति। भा एवावंरुन्धे। द्वादंश भवन्ति॥३८॥

द्वार्वश्च मासाः संवथ्सरः। स्वथ्सरम्वावंरुन्थे। अस्ति त्रयोदशो मास् इत्यांहुः। यत्रयोदशः पंरिधिर्भवंति। तेनैव त्रयोदशं मास्मवंरुन्थे। अन्तरिक्षस्यान्तर्धिर्सीत्यांहु व्यावृत्त्यै। दिवं तपंसस्त्रायस्वेत्युपरिष्टाद्धिरण्यमिष् निदंधाति। अमुष्या अनंतिदाहाय। अथो आभ्याम्वैनंमुभ्यतः परिगृह्णाति। अर्हन् विभर्षि सार्यकान् धन्वेत्यांह॥३९॥ स्तौत्येवैनंमेतत्। गायत्रमंसि त्रैष्टुंभमसि जागंतम्सीतिं ध्वित्राण्यादंत्ते। छन्दोंभिरेवैनान्यादंत्ते। मधु मध्वितिं धूनोति। प्राणो वै मधुं। प्राणमेव यजंमाने दधाति। त्रिः परियन्ति। त्रिवृद्धि प्राणः। त्रिः परियन्ति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥४०॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुष्वेव प्रतितिष्ठन्ति। यो वै घुर्मस्यं प्रियां तनुवंमाक्रामंति। दुश्चर्मा वै स भंवति। एष हु वा अस्य प्रियां तनुवमाक्रांमति। यित्रेः प्रीत्यं चतुर्थं पर्येति। एता ह वा अस्योग्रदेवो राजंनिराचंक्राम॥४१॥

ततो वै स दुश्चर्मां ऽभवत्। तस्मान्तिः प्रीत्य न चंतुर्थं परीयात्। आत्मनों गोपीथायं। प्राणा वै ध्वित्रांणि। अव्यंतिषङ्गं धून्वन्ति। प्राणानामव्यंतिषङ्गाय क्रुप्त्यैं। विनिषद्यं धून्वन्ति। दिक्ष्वंव प्रतितिष्ठन्ति। ऊर्ध्वं धून्वन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ठ्ये। सर्वतों धून्वन्ति। तस्मांद्य सर्वतंः पवते॥४२॥

दुधातीवान्वांह युज्ञस्यांहुष उपरिष्टादाशीर्ऱ्यो व्यास्थापयंन्ति रुश्मयो भवन्ति धन्वेत्यांह युज्ञश्चंक्राम् समंध्ये द्वे चं॥ig[ig 8ig]

अग्निश्चा वसुंभिः पुरस्तांद्रोचयतु गायत्रेण छन्द्सेत्यांह। अग्निरेवैनं वसुंभिः पुरस्तांद्रोचयति गायत्रेण छन्दंसा। स मां रुचितो रोच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिणतो रोचयतु त्रैष्टुंभेन छन्दसेत्यांह। इन्द्रं एवैन र रुद्रैदंक्षिणतो रोचयति त्रैष्टुंभेन छन्दंसा। स मां रुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवेतामा शांस्ते। वर्रणस्त्वाऽऽदित्यैः पृश्चाद्रोंचयतु जागंतेन छन्द्सेत्यांह। वर्रण एवेनंमादित्यैः पृश्चाद्रोंचयति जागंतेन छन्दंसा॥४३॥

स मां रुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। चुतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिरुत्तर्तो रोंचयत्वानुंष्टुभेन् छन्दसेत्यांह। चुतान एवैनं मारुतो मुरुद्धिरुत्तर्तो रोंचयत्यानुंष्टुभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। बृह्स्पतिंस्त्वा विश्वैद्वैरुपरिंष्टा-द्रोचयतु पाङ्केन् छन्दसेत्यांह। बृह्स्पतिंरेवैन् विश्वैद्वै-रुपरिंष्टाद्रोचयति पाङ्केन् छन्दसेत्यांह। स मां रुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते॥४४॥

रोचितस्त्वं देव धर्म देवेष्वसीत्यांह। रोचितो ह्यंष देवेषुं। रोचिषीयाहं मंनुष्येष्वित्याह। रोचंत एवेष मंनुष्येषु। सम्राह्ममं रुचितस्त्वं देवेष्वायुष्मा इस्ते जस्वी ब्रह्मवर्चस्यंसीत्यांह। रुचितो ह्यंष देवेष्वायुष्मा इस्ते जस्वी ब्रह्मवर्चसी। रुचितो इहं मंनुष्येष्वायुष्मा इस्ते जस्वी ब्रह्मवर्चसी। रुचितो इहं मंनुष्येष्वायुष्मा इस्ते जस्वी ब्रह्मवर्चसी भूयास्मित्यांह। रुचित एवेष मंनुष्येष्वायुष्मा इस्ते जस्वी ब्रह्मवर्चसी भंवति। रुगसि रुचं मिये धेहि मिये रुगित्यांह। आशिषंमे वैतामा शास्ते। तं यदेतैर्यर्जुर्भिररोचियत्वा। रुचितो धर्म इति प्रब्रूयात्। अरोचुको उध्वर्यः स्यात्। अरोचुको यर्जमानः। अथ यदेनमेतैर्यर्जुर्भी रोचियत्वा। रुचितो धर्म इति प्राहं।

रोचुंकोऽध्वर्युर्भवंति। रोचुंको यजमानः॥४५॥ पृक्षाद्रोचयित जागंतेन छन्दंसा पाईन छन्दंसा स मां रुचितो रोच्येत्यांह्यिषंमेयेतामाशांस्त शास्तुऽष्टौ ची॥[५]

शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्रंवर्ग्यः। ग्रीवा उपसदः। पुरस्तांदुपसदां प्रवर्ग्यं प्रवृंणिक्ति। ग्रीवास्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति। त्रिः प्रवृंणिक्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकभ्यो यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥४६॥

ऋतुभ्यं पुव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। द्वादंशकृत्वः प्रवृंणिक्ति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरादेव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। चतुंविंश्शितः सम्पंद्यन्ते। चतुंविंश्शितरर्धमासाः। अर्धमासेभ्यं एव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। अथो खलुं। सकृदेव प्रवृज्यः। एक्र् हि शिरंः॥४७॥

अग्निष्टोमे प्रवृंणिक्ति। एतावान् वै यज्ञः। यावानिग्निष्टोमः। यावानेव यज्ञः। तस्य शिरः प्रतिद्धाति। नोक्थ्ये प्रवृंश्यात्। प्रजा वै प्शवं उक्थानि। यदुक्थ्ये प्रवृश्यात्। प्रजां प्शूनंस्य निर्दहेत्। विश्वजिति सर्वपृष्टे प्रवृंणिक्ति॥४८॥

पृष्ठानि वा अच्युंतं च्यावयन्ति। पृष्ठेरेवास्मा अच्युंतं च्यावयित्वाऽवंरुन्थे। अपंश्यं गोपामित्यांह। प्राणो वै गोपाः। प्राणमेव प्रजासु वियातयति। अपंश्यं गोपामित्यांह। असौ वा आंदित्यो गोपाः। स हीमाः प्रजा गोपायतिं। तमेव प्रजानां गोपारं कुरुते। अनिंपद्यमान्मित्यांह॥४९॥ न ह्यंष निपद्यंते। आ च पर्रा च पृथिभिश्चरंन्त्मित्यांह। आ च ह्यंष पर्रा च पृथिभिश्चरंति। स स्प्रीचीः स विषूचीर्वसान् इत्यांह। स्प्रीचींश्च ह्यंष विषूचीश्च वसानः प्रजा अभि विपश्यंति। आवंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तरित्यांह। आ ह्यंष वंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीर्मधु माध्वींभ्यां मधु माधूचीभ्यामित्यांह। वासंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंत्पयति। समग्निरग्निनां गतेत्यांह॥५०॥

ग्रैष्मांवेवास्मां ऋतू केल्पयति। सम्ग्रिर्ग्निनां गृतेत्यांह। अग्निर्ह्यंवैषांऽग्निनां सङ्गच्छंते। स्वाहा सम्ग्निस्तपंसा गृतेत्यांह। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृंणाति। धूर्ता दिवो विभासि रजंसः पृथिव्या इत्यांह। शारदावेवास्मां ऋतू कंल्पयति॥५१॥

दिवि देवेषु होत्रां यच्छेत्यांह। होत्रांभिरेवेमाँ ह्रोकान्थ्सन्दं-धाति। विश्वासां भुवां पत् इत्यांह। हैमंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। देवश्रस्त्वं देव धर्म देवान्पाहीत्यांह। शैशिरावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। तुपोजां वार्चमस्मे नियंच्छ देवायुव्मित्यांह। या वै मेध्या वाक्। सा तंपोजाः। तामेवावंरुन्थे॥५२॥

गर्भो देवानामित्यांह। गर्भो ह्येष देवानांम्। पिता मंतीनामित्यांह। प्रजा वै मृतयः। तासांमेष एव पिता। यत्प्रवर्ग्यः। तस्मादेवमांह। पतिः प्रजानामित्यांह। पतिर्ह्योष

## प्रजानांम्। मितः कवीनामित्यांह॥५३॥

मितृह्येष केवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवता यंतिष्ट् सर् सूर्येणारुक्तेत्यांह। अमुं चैवाऽऽदित्यं प्रवर्णं च सर्शांस्ति। आयुर्दास्त्वम्स्मर्भ्यं घर्म वर्चोदा असीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। पिता नोऽसि पिता नो बोधेत्यांह। बोधयंत्येवैनम्। न वै तेऽवकाशा भवन्ति। पित्रिये दश्मः। नव वै पुरुषे प्राणाः॥५४॥

नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यर्जमाने दधाति। अथो दशाँक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्धे। यज्ञस्य शिरोंऽच्छिद्यत। तद्देवा होत्रांभिः प्रत्यंदधः। ऋत्विजोऽवेंक्षन्ते। एता वै होत्राः। होत्रांभिरेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥५५॥

रुचितमवें क्षन्ते। रुचिताद्वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजाना सृष्ट्याः रुचितमवें क्षन्ते। रुचिताद्वै पूर्जन्यो वर्षित। वर्षुंकः पूर्जन्यो भवति। सं प्रजा एधन्ते। रुचितमवें क्षन्ते। रुचितं वै ब्रह्मवर्चसम्। ब्रह्मवर्चसिनो भवन्ति॥५६॥

अधीयन्तोऽवेंक्षन्ते। सर्वमायुंर्यन्ति। न पत्यवेंक्षेत। यत्पत्यवेक्षेत। प्रजांयेत। प्रजां त्वंस्यै निर्दहेत्। यन्नावेक्षेत। न प्रजांयेत। नास्यैं प्रजां निर्दहेत्। तिर्स्कृत्य यजुंवांचयित। प्रजांयते। नास्यैं प्रजां निर्दहित। त्वष्टींमती ते सप्येत्यांह। सपाद्धि प्रजाः प्रजायंन्ते॥५७॥ देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्व इति रश्नामादिते प्रस्ति। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्याह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्याह यत्यै। आद्देऽदित्यै रास्राऽसीत्याह यजुंष्कृत्यै। इड एह्यदित एहि सर्रस्वत्येहीत्याह। एतानि वा अस्यै देवनामानि। देवनामेरेवेनामाह्वंयति। असावेह्यसावेह्यसावेहीत्यांह। एतानि वा अंस्यै मनुष्यनामानि॥५८॥

मनुष्यनामेरेवेनामाह्वयिति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवेनामाह्वयिति। अदित्या उष्णीषंमसीत्यांह। यथायजुरेवेतत्। वायुरंस्येड इत्यांह। वायुदेवत्यों वे वथ्सः। पूषा त्वोपावंसृज्तित्यांह। पौष्णा वे देवतंया पृशवंः॥५९॥

स्वयैवैनं देवतंयोपावंसृजित। अश्विभ्यां प्रदांपयेत्यांह। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्में भेषजं कंरोति। यस्ते स्तनः शश्य इत्यांह। स्तौत्येवैनांम्। उस्रं घर्मश् शिश्षोस्रं घर्मं पाहि घर्मायं शिश्षेत्यांह। यथां ब्रूयादमुष्में देहीतिं। ताद्दगेव तत्। बृहुस्पितस्त्वोपं सीद्त्वित्याह॥६०॥

ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवैनामुपंसीदति। दानवः स्थ पेरव इत्यांह। मेध्यांनेवैनान्करोति। विष्वुग्वृतो लोहितेनेत्यांह व्यावृत्त्यै। अश्विभ्यां पिन्वस्व सरस्वत्यै पिन्वस्व पूष्णे पिन्वस्व बृह्स्पतंये पिन्वस्वेत्यांह। एताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पिन्वंते। इन्द्रांय पिन्वस्वेन्द्रांय पिन्वस्वेत्यांह। इन्द्रंमेव भागधेयेन समर्धयति। द्विरिन्द्रायेत्यांह॥६१॥

तस्मादिन्द्रों देवतांनां भूयिष्ठभाक्तंमः। गायत्रोंऽसि त्रैष्टुंभोऽसि जागंतम्सीतिं शफोपयमानादंत्ते। छन्दोंभि-रेवैनानादंत्ते। सहोर्जो भागेनोपमेहीत्यांह। ऊर्ज एवैनं भागमंकः। अश्विनौ वा एतद्यज्ञस्य शिरंः प्रतिदर्धतावब्रूताम्। आवाभ्यांमेव पूर्वांभ्यां वषंद्रियाता इतिं। इन्द्रांश्विना मधुंनः सार्घस्येत्यांह। अश्विभ्यांमेव पूर्वांभ्यां वषंद्वरोति। अथों अश्विनांवेव भाग्धेयेन समर्धयति॥६२॥

घुर्मं पांत वसवो यजंता विडित्यांह। वसूनेव भांगधेयेंन् समर्धयित। यद्वेषद्भुर्यात्। यातयांमाऽस्य वषद्भारः स्यांत्। यन्न वंषद्भुर्यात्। रक्षारेसि यज्ञर हंन्युः। विडित्यांह। प्रोक्षंमेव वषंद्भरोति। नास्यं यातयांमा वषद्भारो भवंति। न यज्ञर रक्षारेसि प्रन्ति॥६३॥

स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य र्ष्मयं वृष्टिवनंये जुहोमीत्यांह। यो वा अस्य पुण्यो र्ष्मिः। स वृष्टिवनिः। तस्मा एवैनं जुहोति। मधुं ह्विर्सीत्यांह। स्वद्यंत्येवैनम्ं। सूर्यस्य तपंस्तपेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिगृह्णामीत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं परिगृह्णाति॥६४॥ अन्तिरिक्षेण त्वोपंयच्छामीत्यांह। अन्तिरिक्षेणेवैन्मुपंयच्छित।
न वा एतं मनुष्यों भर्तुमर्हित। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो
भर्तु शकेयमित्यांह। देवैरेवैनं पितृभिरनुंमत् आदंत्ते। वि
वा एनमेतदर्धयन्ति। यत्पश्चात्प्रवृज्यं पुरो जुह्वति। तेजोऽसि
तेजोऽनु प्रेहीत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाति। दिविस्पृङ्गा
मां हिश्सीरन्तिरिक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीः पृथिविस्पृङ्गा मां
हिश्सीरित्याहाहिर्स्मायै॥६५॥

सुवंरसि सुवंर्मे यच्छ दिवं यच्छ दिवो मां पाहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। आत्मा वायुः। उद्यत्यं वातनामान्याह। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति। अनंवानम्। प्राणानाः सन्तंत्यै। पश्चाह॥६६॥

पाङ्को यज्ञः। यावांनेव यज्ञः। तस्य शिरः प्रतिद्धाति। अग्नये त्वा वसुंमते स्वाहेत्यांह। असौ वा आंदित्योंऽग्निर्वसुं-मान्। तस्मां एवैनं जुहोति। सोमाय त्वा रुद्रवंते स्वाहेत्यांह। चन्द्रमा वै सोमों रुद्रवान्। तस्मां एवैनं जुहोति। वर्रणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहेत्यांह॥६७॥

अपसु वै वर्रण आदित्यवान्। तस्मां एवैनं जुहोति। बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहेत्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिंः। ब्रह्मणैवैनं जुहोति। सुवित्रे त्वंर्भुमतें विभुमते प्रभुमते वाजंवते स्वाहेत्यांह। संवथ्सरो वै संवितर्भुमान् विभुमान्प्रभुमान् वाजंवान्। तस्मां एवैनं जुहोति। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहेत्यांह। प्राणो वै यमोऽङ्गिरस्वान्पितृमान्॥६८॥

तस्मां पुवैनं जुहोति। पुताभ्यं पुवैनं देवताभ्यो जुहोति। दश् सम्पंद्यन्ते। दशाँक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजेवात्राद्यमवंरुन्थे। रौहिणाभ्यां वे देवाः सुवर्गं लोकमांयन्। तद्रौहिणयों रौहिणत्वम्। यद्रौहिणौ भवंतः। रौहिणाभ्यांमेव तद्यजमानः सुवर्गं लोकमेति। अहुर्ज्योतिः केतुनां जुषता स्रुज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहा रात्रिर्ज्योतिः केतुनां जुषता स्रुज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहत्याह। आदित्यमेव तदम् पिष्णाको केऽह्रां प्रस्ताद्दाधार। रात्रिया अवस्तात। तस्माद्मावादित्योऽमुष्मां लोक प्रहात्यहिर्मा प्राविष्यां प्रवाहत्यके स्वाहत्यां प्रवाहत्यके प्रवाहत्यके स्वाहत्यके प्रवाहत्यके प्रवाहत्यके प्रवाहत्यके प्रवाहत्यके स्वाहत्यके प्रवाहत्यके प्रवाहत्यके प्रवाहत्यके स्वाहत्यके प्रवाहत्यके प्रव

विश्वा आशां दक्षिण्सदित्यांह। विश्वांनेव देवान्प्रीणाति। अथो दुरिष्ट्या एवैनं पाति। विश्वां देवानयाडिहेत्यांह। विश्वांनेव देवान्भांगुधेयेंन समर्धयति। स्वाहांकृतस्य घर्मस्य मधोः पिबतमिश्वनेत्यांह। अश्विनांवेव भांगुधेयेंन समर्धयति। स्वाहाऽग्रयें युज्ञियांय शं यर्जुर्भिरित्यांह। अभ्येंवैनं घारयति। अथों ह्विरेवाकः॥७०॥ अश्विना घर्मं पांतर हार्दिवानमहंदिवाभिक्तिभिरित्यांह। अश्विनांवेव भांगधेयेन समर्धयित। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्ससातामित्याहानुंमत्यै। स्वाहेन्द्रांय स्वाहेन्द्राविहित्यांह। इन्द्रांय हि पुरो हूयतें। आश्राव्यांह घर्मस्यं यजेतिं। वर्षट्टते जुहोति। रक्षसामपंहत्यै। अनुयजित स्वगाकृत्यै। धर्ममंपातमश्विनेत्यांह॥७१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृंणाति। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमश्सातामित्याहानुंमत्ये। तं प्राव्यं यथावण्णमों दिवे नर्मः पृथिव्या इत्याह। यथायजुरेवेतत्। दिविधां इमं यज्ञं यज्ञमिमं दिविधा इत्याह। सुवर्गमेवेनं लोकं गंमयति। दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गच्छेत्याह। एष्वंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठापयति। पश्चं प्रदिशों गुच्छेत्यांह॥७२॥

दिक्ष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। देवान्धंर्म्पान्गंच्छ पितॄन्धंर्म्-पान्गच्छेत्यांह। उभयेंष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। यत्पिन्वंते। वर्षुकः पूर्जन्यों भवति। तस्मात्पिन्वंमानः पुण्यः। यत्प्राङ्घिन्वंते। तद्देवानांम्। यद्दंक्षिणा। तत्पितृणाम्॥७३॥

यत्प्रत्यक्। तन्मंनुष्यांणाम्। यद्दङ्शं। तद्रुद्राणांम्। प्राश्चमुदंश्चं पिन्वयति। देवृत्राकः। अथो खलुं। सर्वा अनु दिशंः पिन्वयति। सर्वा दिशः समेधन्ते। अन्तःप्रिधि पिन्वयति॥७४॥

तेज्सोऽस्कंन्दाय। इषे पीपिह्यूर्जे पीपिहीत्यांह।

इषंमेवोर्जं यर्जमाने दधाति। यर्जमानाय पीपिहीत्यांह। यर्जमानायैवैतामाशिषमा शाँस्ते। मह्यं उयैष्ठ्यांय पीपिहीत्यांह। आत्मनं पुवैतामाशिषमा शाँस्ते। त्विष्यैं त्वा द्युम्नायं त्वेन्द्रियायं त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। यथायुजुरेवैतत्। धर्मास सुधर्मा में न्यस्मे ब्रह्मांणि धार्येत्यांह॥७५॥

ब्रह्मंत्रेवैनं प्रतिष्ठापयति। नेत्त्वा वातः स्कृन्दयादिति यद्यंभिचरैत्। अमुष्यं त्वा प्राणे सादयाम्यमुनां सह निर्धं गुच्छेतिं ब्र्याद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तेनैन सह निर्धं गमयति। पूष्णे शरसे स्वाहेत्याह। या एव देवतां हुतभांगाः। ताभ्यं एवैनं जुहोति। ग्रावंभ्यः स्वाहेत्यांह। या एवान्तरिक्षे वार्चः॥७६॥

ताभ्यं पृवैनं जुहोति। प्रतिरेभ्यः स्वाहेत्यांह। प्राणा वै देवाः प्रतिराः। तेभ्यं पृवैनं जुहोति। द्यावांपृथिवीभ्याः इ स्वाहेत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं जुहोति। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहेत्यांह। ये वै यज्वांनः। ते पितरों धर्मपाः। तेभ्यं पृवैनं जुहोति॥७७॥

रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहेत्यांह। रुद्रमेव भांगुधेयेंन् समर्धयति। सर्वतः समनिक्ति। सर्वतं एव रुद्रं निरवंदयते। उद्श्रं निरस्यति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। अप उपस्पृशति मेध्यत्वायं। नान्वींक्षेत। यदन्वीक्षेत॥७८॥ चक्षुंरस्य प्रमायुंक इस्यात्। तस्मान्नान्वीक्ष्यः। अपीपरो माऽह्यो रात्रिये मा पाह्येषा ते अग्ने समित्तया सिमध्यस्वायुंमें दा वर्चसा माऽऽश्चीरित्यांह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अपीपरो मा रात्रिया अह्यो मा पाह्येषा ते अग्ने समित्तया सिमध्यस्वाऽऽयुंमें दा वर्चसा माऽऽश्चीरित्यांह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अग्निज्योतिंज्योतिंर्गिः स्वाहा सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। बृह्यवादिनों वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्रा(३)न्न होत्व्या(३)मितिं॥७९॥

यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यन्न जुंहुयात्। अग्निः परांभवेत्। भूः स्वाहेत्येव होत्व्यम्। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। हुत १ ह्विर्मधुं ह्विरित्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। इन्द्रंतमेऽग्नावित्यांह॥८०॥

प्राणो वा इन्द्रंतमोऽग्निः। प्राण एवैन्मिन्द्रंतमेऽग्नौ जुंहोति। पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। अश्यामं ते देव धर्म मधुंमतो वाजंवतः पितुमत् इत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। स्वधाविनोंऽशीमहिं त्वा मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। तेजंसा वा एते व्यंध्यन्ते। ये प्रंवर्ग्येण चरंन्ति। प्राश्ञंन्ति। तेजं पुवात्मन्दंधते॥८१॥

संवथ्सरं न मार्समंश्जीयात्। न रामामुपेयात्। न

मृन्मयेन पिबेत्। नास्यं राम उच्छिष्टं पिबेत्। तेज एव तथ्स इथिति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुप्यन्तः। विभ्राजि सौर्ये ब्रह्मसन्त्रंदधत। यत्किं चं दिवाकीर्त्यम्। तदेतेनैव व्रतेनांगोपायत्। तस्मादेतद्वतं चार्यम्। तेजंसो गोपीथायं। तस्मादेतानि यजू १षि विभ्राजेः सौर्यस्येत्यांहुः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रिश्मिभ्य इति प्रातः स्थादयति। स्वाहाँ त्वा नक्षंत्रेभ्य इति सायम्। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवैन समर्भियति॥८२॥
अक्रिक्त्यांह प्रविशां गुच्छत्यांह पितृणामंतः पिरिषे पित्वयित पार्येत्यांह वावां पर्मपास्तेन्यं पुवेनं जहीत्यन्विश्रां होत्व्या(३)मित्युमावित्यांह व्यतेऽगोपायथम् वं॥ [८]

घर्म् या तें दिवि शुगितिं तिस्र आहुंतीर्जुहोति। छन्दोभिरेवास्यैभ्यो लोकेभ्यः शुचमवं यजते। इयत्यग्रें जुहोति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। अनुं नोऽद्यानुं-मित्रित्याहानुंमत्यै। दिवस्त्वां पर्स्पाया इत्यांह। दिव एवेमाँ लोकान्दांधार। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पाया इत्यांह॥८३॥

पृष्वेव लोकेषुं प्रजा दांधार। प्राणस्यं त्वा पर्स्पाया इत्यांह। प्रजास्वेव प्राणान्दांधार। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तं यद्दंक्षिणा प्रत्यश्चमुदंश्चमुद्वासयेत्। जि्ह्यं यज्ञस्य शिरो हरेत्। प्राश्चमुद्वांसयति। पुरस्तांदेव यज्ञस्य शिरः प्रतिदधाति॥८४॥

प्राश्चमुद्वांसयति। तस्मांद्सावांदित्यः पुरस्तादुदेति। शफोपयमान्धवित्रांणि धृष्टी इत्यन्ववंहरन्ति। सात्मांनमेवैन् ५ सतंनुं करोति। सात्माऽमुष्मिं श्लोके भवति। य एवं वेदं। औदुंम्बराणि भवन्ति। ऊर्ग्वा उंदुम्बरंः। ऊर्जमेवावंरुन्धे। वर्त्मना वा अन्वित्यं॥८५॥

युज्ञ रक्षा रेसि जिघा रसन्ति। साम्ना प्रस्तोताऽन्ववैति। साम् वै रक्षोहा। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिर्निधन्मुपैति। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य एव लोकेभ्यो रक्षा इस्यपहन्ति। पुरुषः पुरुषो निधन्मुपैति। पुरुषः पुरुषो हि रक्षस्वी। रक्षंसामपंहत्यै॥८६॥

यत्पृंथिव्यामुंद्वासयैत्। पृथिवी शुचाऽर्पयेत्। यद्फ्सु। अपः शुचार्पयेत्। यदोषंधीषु। ओषंधीः शुचाऽर्पयेत्। यद्वन्स्पतिषु। वन्स्पतीं ञ्छुचार्पयेत्। हिरंण्यं निधायोद्वांसयति। अमृतं वै हिरंण्यम्॥८७॥

अमृतं एवैनं प्रतिष्ठापयति। वृल्गुरंसि शं युधाया इति त्रिः पंरिषिञ्चन्पर्येति। त्रिवृद्वा अग्निः। यावांनेवाग्निः। तस्य शुचर् शमयति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवास्य शुचर् शमयति। चतुंः स्रक्तिनीभिर्ऋतस्येत्यांह॥८८॥

ड्यं वा ऋतम्। तस्यां एष एव नाभिः। यत्प्रंवर्गः। तस्मादेवमाह। सदो विश्वायुरित्याह। सदो हीयम्। अप द्वेषो अप ह्वर् इत्याह् भ्रातृंव्यापनुत्त्यै। घर्मैतत्तेऽन्नंमेतत्पुरींषमितिं द्वा मंधुमिश्रेणं पूरयति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे।

# ऊर्जैवैनम्नाद्येन समर्धयति॥८९॥

अनंशनायुको भवति। य एवं वेदं। रन्तिर्नामांसि दिव्यो गंन्ध्रवं इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्महिमान् रन्तिं बन्धुतां व्याचंष्टे। समहमायुषा सं प्राणेनेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। व्यंसौ यांऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्यैषः। अचिक्रदृदृषा हरिरित्यांह। वृषा ह्यंषः॥९०॥

वृषा हरिः। महान्मित्रो न देर्श्वत इत्यांह। स्तौत्येवैनंमेतत्। चिदंसि समुद्रयोनिरित्यांह। स्वामेवैनं योनिं गमयति। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। विश्वावंसुश् सोम गन्ध्वंमित्यांह। यदेवास्यं क्रियमांण-स्यान्तर्यन्ति। तदेवास्यैतेना प्यांययति। विश्वावंसुर्भि तन्नों गृणात्वित्यांह॥९१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यादित्यांह। ऋतूनेवास्मैं कल्पयति। प्राऽऽसां गन्धर्वो अमृतांनि वोच्दित्यांह। प्राणा वा अमृताः। प्राणानेवास्मै कल्पयति। पृतत्त्वं देव घर्म देवो देवानुपांगा इत्यांह। देवो ह्येष सं देवानुपैतिं। इदमहं मंनुष्यों मनुष्यांनित्यांह॥९२॥

म्नुष्यों हि। एष सन्मंनुष्यांनुपैतिं। ईश्वरो वै प्रंवर्ग्यमुद्वासयन्। प्रजां पुशून्थ्सोमपीथमंनूद्वासुः सोमं पीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषेणेत्यांह। प्रजामेव पश्न्थ्सोमपीथमात्मन्धंते। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तिवत्यांह। आशिषंमेवेतामा शांस्ते। दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्यों ऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्येषः। प्र वा एषों ऽस्माल्लोकाच्यंवते। यः प्रवर्ण्यमुद्वासयितं। उदुत्यं चित्रमितिं सौरीभ्यांमृग्भ्यां पुन्रेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। अयं वे लोको गार्हंपत्यः। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। असौ खलु वा आंदित्यः सुंवर्गो लोकः। यथ्सौरी भवंतः। तेनैव सुंवर्गालोकान्नेतिं॥९३॥ बढ्णां पर्स्याय इत्यंह द्यात्वित्यं रक्षस्या रक्षस्याम्पंहत्ये वे हिरण्यमाहार्थ्य इत्यं गृण्यत्वत्यं म्युयांनित्यांहास्येर्पें वे हिरण्यमाहार्थ्य इत्यं गृण्यत्वत्यं म्युयांनित्यांहास्येर्पें वे हिरण्यमाहार्थ्यों स्वं गृण्यत्वत्यं म्युयांनित्यांहास्येर्पें वे हिरण्यमाहार्थ्यों स्वं गृण्यत्वत्यं म्युयांनित्यांहास्येर्पें वे हिरण्यमाहार्थये वे हिरण्यमाहार्थेव स्वायां ह्यां प्राप्तित्यांहास्येर्पें वे हिरण्यमाहार्थेव वे विवाय ह्यां प्राप्तित्यां स्वायांनित्यांहास्येर्पें वे हिरण्यमाहार्थेव वे हिरण्यमाहार्थे वे हिरण्यमाहार्थेव वे विवाय ह्यां प्राप्तित्यां स्वायांनित्यांहास्येर्पें वे ह्यां प्राप्तित्यां स्वायांनित्यांहास्येर्पें वे ह्यां प्राप्तित्यां स्वायांनित्यांहास्येर्पें वे ह्यां प्राप्तित्यां स्वायांनित्यांहास्येर्पें वे ह्यां स्वायांनित्यांहास्येर्पें वे ह्यांनित्यां स्वायांनित्यांहास्येर्पें वे ह्यांनित्यां स्वायांनित्यांहास्येर्पें वे ह्यांनित्यां स्वायांनित्यां स्वायांनित्यां स्वायांनित्यां स्वायांनित्यां स्वायांनित्यांनित्यांनित्यां स्वायांनित्

प्रजापंतिं वै देवाः शुक्रं पयोंऽदुह्नन्। तदेंभ्यो न व्यंभवत्। तद्ग्निर्व्यंकरोत्। तानि शुक्तियाणि सामान्यभवन्। तेषां यो रसोऽत्यक्षंरत्। तानिं शुक्रयज्ञू इष्यंभवन्। शुक्तियाणां वा पृतानि शुक्तियाणि। सामप्यसं वा पृतयोर्न्यत्। देवानामन्यत्पयंः। यद्गोः पयंः॥९४॥

तथ्साम्नः पर्यः। यद्जायै पर्यः। तद्देवानां पर्यः। तस्माद्यत्रैतैर्यजुंर्भिश्चरंन्ति। तत्पर्यसा चरन्ति। प्रजापंतिमेव तत्पर्यसाऽन्नाद्येन समर्धयन्ति। एष ह त्वै साक्षात्प्रवर्ग्यं भक्षयति। यस्यैवं विदुषंः प्रवर्ग्यः प्रवृज्यतें। उत्तर्वेद्यामुद्धांस-येत्तेजंस्कामस्य। तेजो वा उत्तरवेदिः॥९५॥

तेजंः प्रवर्ग्यः। तेजंसैव तेजः समर्धयित। उत्तर्वेद्यामुद्वांसये-दन्नंकामस्य। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। मुखंमुत्तरवेदिः। शीर्ष्णेव मुख्र सन्दंधात्यन्नाद्यांय। अन्नाद एव भवति। यत्र खलु वा एतमुद्वांसितं वयार्रस पूर्यासंते। परि वै तार समां प्रजा वयार्रस्यासते॥९६॥

तस्मांदुत्तरवेद्यामेवोद्वांसयेत्। प्रजानां गोपीथायं। पुरो वां पृश्चाद्वोद्वांसयेत्। पुरस्ताद्वा एतज्योतिरुदेति। तत्पृश्चान्निम्नोचित। स्वामेवैनं योनिमनूद्वांसयित। अपां मध्य उद्वांसयेत्। अपां वा एतन्मध्याज्योतिरजायत। ज्योतिः प्रवृग्यः। स्वयैवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥९७॥

यं द्विष्यात्। यत्र् स स्यात्। तस्यां दिश्युद्वांसयेत्। एष वा अग्निवेश्वान्रः। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निनैवेनं वैश्वान्रेणाभि प्रवंतयिति। औद्मबर्याक् शाखायामुद्वांसयेत्। ऊर्ग्वा उंदुम्बरेः। अन्नं प्राणः। शुग्धर्मः॥९८॥

ड्दम्हम्मुष्यांमुष्यायणस्यं शुचा प्राणमपिं दहामीत्यांह। शुचैवास्यं प्राणमपिं दहित। ताजगार्तिमार्च्छति। यत्रं दर्भा उपदीकंसन्तताः स्यः। तदुद्वांसयेद्वृष्टिंकामस्य। एता वा अपामनूज्झावंर्यो नामं। यद्दर्भाः। असौ खलु वा आंदित्य इतो वृष्टिमुदींरयित। असावेवास्मां आदित्यो वृष्टिं नियंच्छिति। ता आपो नियंता धन्वंना यन्ति॥९९॥ गोः पर्य उत्तरवेदिरांसते स्थापयति घुर्मो यन्ति॥————[१०]

प्रजापंतिः सिम्भ्रियमाणः। सम्राट्थ्सम्भृतः। घर्मः प्रवृंक्तः। महावीर उद्वांसितः। असौ खलु वावेष आदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स एतानि नामान्यकुरुत। य एवं वेदं। विदुरंनं नाम्ना। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥१००॥

यो वै वसीया १ सं यथाना ममुंपूचरित। पुण्यां तिं वै स तस्मैं कामयते। पुण्यां तिंमस्मै कामयन्ते। य पृवं वेदं। तस्मांदेवं विद्वान्। घूर्म इति दिवाऽऽचं क्षीत। सम्माडिति नक्तम्। पृते वा पृतस्यं प्रिये तुनुवौं। पृते अस्य प्रिये नामंनी। प्रिययैवैनं तनुवां॥१०१॥

प्रियेण नाम्ना समेर्धयति। कीर्तिरेस्य पूर्वागेच्छति जनतांमायतः। गायत्री देवेभ्योऽपांकामत्। तां देवाः प्रवग्येंणैवानु व्यंभवन्। प्रवग्येणाऽऽप्रवन्। यचंतुर्विरशतिकृत्वंः प्रवग्यें प्रवृणक्ति। गायत्रीमेव तदनु विभवति। गायत्रीमाप्रोति। पूर्वाऽस्य जनं यतः कीर्तिर्गच्छति। वैश्वदेवः सरसंन्नः॥१०२॥

वसंवः प्रवृंक्तः। सोमोंऽभिकीयमाणः। आश्विनः पर्यस्यानीयमाने। मारुतः क्वथन्। पौष्ण उदंन्तः। सारुस्वतो विष्यन्दंमानः। मैत्रः शरो गृहीतः। तेज उद्यंतः। वायुर्ह्वियमाणः। प्रजापंतिर्हूयमानो वाग्युतः॥१०३॥

असौ खलु वावैष आंदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स एतानि

नामाँन्यकुरुत। य एवं वेदं। विदुरेंनं नाम्नाँ। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यन्मृन्मयमाहंतिं नाश्जुतेऽथं। कस्मांदेषौंऽश्जुत इतिं। वागेष इतिं ब्रूयात्। वाच्येव वाचं दधाति॥१०४॥

तस्मांदश्ज्ते। प्रजापंतिर्वा एष द्वांदश्धा विहितः। यत्प्रविग्यः। यत्प्रागंवकाशेभ्यः। तेनं प्रजा अंसृजत। अवकाशेर्देवासुरानंसृजत। यदूर्ध्वमंवकाशेभ्यः। तेनान्नंम-सृजत। अन्नं प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥१०५॥ वृद्वि वृत्तवा सरसंग्रे ह्यमांव वायुवा देवात्येषः॥——[११]

स्विता भूत्वा प्रंथमेऽह्न्प्रवृंज्यते। तेन् कामा एति। यद्वितीयेऽहंन्प्रवृज्यतें। अग्निर्भूत्वा देवानेति। यत्तृतीयेऽहंन्प्र-वृज्यतें। वायुर्भूत्वा प्राणानेति। यत्तंतुर्थेऽहंन्प्रवृज्यतें। आदित्यो भूत्वा रश्मीनेति। यत्पंश्चमेऽहंन्प्रवृज्यतें। चन्द्रमां भूत्वा नक्षंत्राण्येति॥१०६॥

यत्ष्षेऽहंन्प्रवृज्यतें। ऋतुर्भूत्वा संवथ्स्रमेति। यथ्संप्तमेऽहंन्प्रवृज्यतें। धाता भूत्वा शक्वंरीमेति। यदंष्टमेऽहंन्प्रवृज्यतें। बृह्स्पतिंर्भूत्वा गांयत्रीमेति। यत्नंवमेऽहंन्प्रवृज्यतें। मित्रो भूत्वा त्रिवृतं इमाँ छोकानेति। यदंशमेऽहंन्प्रवृज्यतें। वर्रुणो भूत्वा विराजंमेति॥१०७॥

यदेंकाद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। इन्द्रों भूत्वा त्रिष्टुभंमेति। यद्वांद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। सोमों भूत्वा सुत्यामेति। पश्चमः प्रश्नः 591

यत्पुरस्तांदुप्सदां प्रवृज्यतें। तस्मांदितः परांङ्मूँ ह्लोका ॥ स्तपंत्रेति। यदुपरिष्टादुप्सदां प्रवृज्यतें। तस्मांदुमुतोऽर्वा-ङिमाँ ह्लोका ॥ स्तपंत्रेति। य पृवं वेदे। ऐव तपिति॥१०८॥ व्यांत्राक्षेति विपति॥१०८॥ [१२]

ॐ शं नुस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥



#### ॥षष्ठः प्रश्नः॥

ॐ सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

प्रेयुवारसं प्रवतो महीरनं बहुभ्यः पन्थांमनपस्पशानम्। वैवस्वतर सङ्गमंनं जनांनां यमर राजांनर हिवषां दुवस्यत। इदं त्वा वस्त्रं प्रथमन्वागृन्नपैतदूंह यदिहाबिंभः पुरा। इष्टापूर्तमनु सम्पंश्य दक्षिणां यथां ते दत्तं बंहुधा विबंन्धुष्। इमौ युनज्मि ते वृह्णी असुनीथाय वोढवें। याभ्यां यमस्य सादंनर सुकृतां चापि गच्छतात्। पूषा त्वेतश्च्यांवयतु प्रविद्वाननंष्टपशुर्भुवंनस्य गोपाः। स त्वैतेभ्यः परिददात्पृत्भयोऽग्निर्देवभ्यः सुविदन्नेभ्यः। पूषमा आशा अनुवेद सर्वाः सो अस्मार अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अर्घृणिः सर्ववीरोऽप्रयुच्छन्पुर एतु प्रविद्वान्॥१॥

आयुंर्विश्वायुः परिपासित त्वा पूषा त्वां पातु प्रपंथे पुरस्तांत्। यत्राऽऽसंते सुकृतो यत्र ते ययुस्तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। भुवंनस्य पत इद॰ ह्विः। अग्नयं रियमते स्वाहां। पुरुषस्य सयावर्यपेद्घानि मृज्महे। यथां नो अत्र नापंरः पुरा जरम् आयंति। पुरुषस्य सयाविर् वि ते प्राणमंसि स्रसम्। शरीरेण महीमिहि स्वधयेहि पितृनुपं प्रजयाऽस्मानिहावंह। मैवं माङ् स्ता प्रियेऽहं देवी सती

पिंतृलोकं यदैषिं। विश्ववारा नर्भसा संव्ययन्त्युमौ नो लोकौ पर्यसाऽभ्यावंवृथ्स्व॥२॥

इयं नारी पितलोकं वृंणाना निपंद्यत् उपं त्वा मर्त्य् प्रेतम्। विश्वं पुराणमन् पालयंन्ती तस्यै प्रजां द्रविणं चेह धेहि। उदींर्ष्वं नार्यभि जींवलोकमितासुंमेतमुपंशेष एहिं। ह्स्तुग्राभस्यं दिधिषोस्त्वमेतत्पत्युंर्जनित्वम्भि सम्बंभूव। सुवर्ण् हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये ब्रह्मणे तेजंसे बलाय। अत्रैव त्वमिह वय स्शेवा विश्वाः स्पृधों अभिमांतीर्जयम। धनुर्हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये क्षुत्रायौजंसे बलाय। अत्रैव त्वमिह वय स्शेवा विश्वाः स्पृधों अभिमांतीर्जयम। मणि ह हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये विशे पृष्ट्ये बलाय। अत्रैव त्वमिह वय स्शेवा विश्वाः स्पृधों अभिमांतीर्जयम॥३॥

ड्ममंग्ने चम्सं मा विजींहरः प्रियो देवानांमुत सोम्यानांम्। एष यश्चंमसो देवपान्स्तस्मिन्देवा अमृतां मादयन्ताम्। अग्नेर्वर्म् परि गोभिर्व्ययस्व सं प्रोणुंष्व मेदंसा पीवंसा च। नेत्त्वां धृष्णुरहरंसा जरहंषाणो दधंद्विधक्ष्यन्पर्यङ्खयांते। मैनंमग्ने विदंहो माऽभिशोंचो माऽस्य त्वचं चिक्षिपो मा शरीरम्। यदा शृतं क्रवों जातवेदोऽथेंमेनं प्रहिंणुतात्पितृभ्यंः। शृतं यदा क्रसीं जातवेदोऽथेंमेनं परिदत्तात्पितृभ्यंः। यदा गच्छात्यसुंनीतिमेतामथां देवानां वश्नीर्भवाति। सूर्यं ते चक्षुंर्गच्छत् वातंमात्मा द्यां च् गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ् यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। अजो भागस्तपंसा तं तंपस्व तं ते शोचिस्तंपत् तं ते अर्चिः। यास्ते शिवास्तन्वों जातवेदस्ताभिविहेम स् सुकृतां यत्रं लोकाः। अयं वै त्वम्स्मादिध त्वमेतद्यं वै तदंस्य योनिरिसे। वैश्वानरः पुत्रः पित्रे लोककृञ्जांतवेदो वहंम स् सुकृतां यत्रं लोकाः॥४॥

य एतस्यं पृथो गोप्तार्स्तेभ्यः स्वाहा य एतस्यं पृथो रिक्षेतार्स्तेभ्यः स्वाहा य एतस्यं पृथोभिऽरिक्षेतार्स्तेभ्यः स्वाहांऽऽख्यात्रे स्वाहांऽपाख्यात्रे स्वाहांऽभिलालंपते स्वाहांऽपुलालंपते स्वाहाऽग्नयं कर्मकृते स्वाहा यमत्र नाधीमस्तस्मै स्वाहां। यस्तं इध्मं जुभरिक्षिष्विदानो मूर्धानं वात तपंते त्वाया। दिवो विश्वंस्माथ्सीमघायत उरुष्यः। अस्मात्त्वमधि जातोऽसि त्वद्यं जांयतां पुनः। अग्नयं विश्वान्तरायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहां॥५॥

य पुतस्य त्वत्पश्चं॥———[२]

प्र केतुनां बृह्ता भाँत्यग्निराविर्विश्वांनि वृष्भो रोरवीति। दिवश्चिदन्तादुप मामुदानंडपामुपस्थे महिषो वंवर्ध। इदं त एकं प्र ऊत् एकं तृतीयेन ज्योतिषा संविंशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरेधि प्रियो देवानां पर्मे स्थस्थे। नाके सुपूर्णमुप् यत्पतंन्तर हृदा वेनंन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वर्रुणस्य दूतं यमस्य योनौ शकुनं भुंरुण्युम्। अतिंद्रव सारमेयौ श्वानौ चतुरक्षौ श्वलौ साधुनां पथा। अथां पितृन्थ्सुंविदत्रार् अपीहि यमेन ये संधुमादं मदंन्ति। यौ ते श्वानौ यमरिक्षितारौ चतुरक्षौ पंथिरक्षी नृचक्षंसा। ताभ्यार् राज्ञन्परि देह्येन इस्विस्त चास्मा अनमीवं चं धेहि॥६॥

उरुण्सावंसुतृपांवुलुम्बलौ यमस्यं दूतौ चंरतो वशा क्रम्। आनुं। ताव्समभ्यं दृशये सूर्याय पुनर्दत्ता वसुंमुद्येह भूद्रम्। सोम् एकैंभ्यः पवते घृतमेक उपांसते। येभ्यो मधुं प्रधावंति ता श्रिंदेवापि गच्छतात्। ये युध्यंन्ते प्रधनेषु शूरांसो ये तंनुत्यजः। ये वां सहस्रंदक्षिणास्ता श्रिंदेवापि गच्छतात्। तपो ये चिक्रिरे महत्ता श्रिंदेवापि गच्छतात्। अश्मंन्वती रेवतीः सक्षंद्रिक्षेत्रे महत्ता श्रिंदेवापि गच्छतात्। अश्मंन्वती रेवतीः सक्षंद्रिक्षेत्रे प्रत्ता प्रत्यायः। अत्रां जहाम् ये अस्त्रशंवाः शिवान् व्यम्भि वाजानुत्तंरेम॥७॥

यह्रै देवस्यं सिवतुः पवित्र सहस्रंधारं वितंतम्नतिरक्षे। येनापुनादिन्द्रमनार्तमार्त्ये तेनाहं मा स्वितंनुं पुनामि। या राष्ट्रात्पन्नादप् यन्ति शाखां अभिमृता नृपतिंमिच्छमानाः। धातुस्ताः सर्वाः पर्वनेन पूताः प्रजयास्मान्नय्या वर्चसा स स्मृजाथ। उद्वयं तमंसस्परि पश्यंन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगंनम् ज्योतिंरुत्तमम्। धाता पुनातु सविता पुनातु। अग्नेस्तेजंसा सूर्यस्य वर्चसा॥८॥

यन्ते अग्निममंन्थाम वृष्भायेव पक्तेव। इमन्तर शंमयामिस क्षीरेणं चोदकेनं च। यन्त्वमंग्ने समर्दह्स्त्वमु निर्वापया पुनः। क्याम्बूरत्रं जायतां पाकदूर्वा व्यंत्कशा। शीतिके शीतिकावित ह्रादुंके ह्रादुंकावित। मण्डूक्यां सुसङ्गमयेम स्वंग्निर श्वमयं। शं ते धन्वन्या आपः शम्ं ते सन्त्वनूक्याः। शं ते समुद्रिया आपः शम्ं ते सन्त्व वर्ष्याः। शं ते स्रवंन्तीस्त्नुवे शम्ं ते सन्तु कूप्याः। शन्ते नीहारो वंर्षतु शम् पृष्वाऽवंशीयताम्॥९॥

अवं सृज् पुनंरग्ने पितृभ्यो यस्त आहुंत्श्चरंति स्वधाभिः। आयुर्वसान् उपं यातु शेष् सङ्गंच्छतां तनुवां जातवेदः। सङ्गंच्छस्व पितृभिः सङ् स्वधाभिः सिम्ष्टापूर्तेनं पर्मे व्योमन्। यत्र भूम्ये वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। यत्तं कृष्णः शंकुन आंतुतोदं पिपीलः सूर्प उत वा श्वापंदः। अग्निष्टद्विश्वांदनृणं कृणोतु सोमंश्च्यो ब्रांह्मणमांविवेशं। उत्तिष्ठातंस्तनुव सम्भंरस्व मेह गात्रमवंहा मा शरीरम्। यत्र भूम्ये वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। इदं त एकं पुर ऊत एकं तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरिध

प्रियो देवानां परमे सधस्थैं। उत्तिष्ठ प्रेहि प्रद्रवौकः कृणुष्व परमे व्योमन्। यमेन त्वं यम्यां संविदानोत्तमं नाकमधिं रोहेमम्। अश्मन्वती रेवतीर्यद्वे देवस्यं सवितुः प्वित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंसस्परि धाता पुनातु। अस्मात्त्वमधि जातौंऽस्ययं त्वदधिजायताम्। अग्नये वैश्वानरायं सुवर्गायं 

आयांतु देवः सुमनांभिरूतिभिर्यमो हंवेह प्रयंताभिर्क्ता। आसींदता र सुप्रयतेंह बर्हिष्यूर्जाय जात्ये ममं शत्रुहत्यैं। यमे इंव यतमाने यदैतं प्रवाम्भरन्मान्षा देवयन्तः। आसींदत इस्वमुं लोकं विदाने स्वासस्थे भंवतिमन्देवे नः। यमाय सोम र सुनुत यमायं जुहुता हविः। यमर हं युज्ञो गच्छत्यग्निदूतो अरंङ्कतः। युमायं घृतवंद्धविर्जुहोत् प्र चं तिष्ठत। स नों देवेष्वायंमद्दीर्घमायुः प्र जीवसें। यमाय मधुमत्तम् राज्ञे हव्यं जुहोतन। इदं नम् ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वेभ्यः पथिकुन्धः॥११॥

योऽस्य कौष्ठ्य जगंतः पार्थिवस्यैकं इद्वशी। यमं भंज्ञाश्रवो गांय यो राजानपरोध्यः। यमङ्गार्य भङ्गाश्रवो यो राजानपरोध्यः। येनाऽऽपो नद्यो धन्वांनि येन द्यौः पृंथिवी दृढा। हिर्ण्युक्क्ष्यान् सुधुरान् हिर्ण्याक्षानयः शफान्। अश्वाननश्येतो दानं यमो राजाऽभि तिष्ठंति। यमो दांधार पृथिवीं यमो विश्वंमिदं जर्गत्। यमाय सर्वमित्रंस्थे यत्प्राणद्वायुरंक्षितम्। यथा पश्च यथा षड्यथा पश्चं दुशर्षयः। यमं यो विद्याथ्स ब्रूंयाद्यथैक ऋषिर्विजानते॥१२॥

त्रिकंद्रुकेिमः पतंति षडुर्वीरेकिमद्भृहत्। गायत्री त्रिष्ठप्छन्दा एसि सर्वा ता यम आहिता। अहंरहर्नयंमानो गामश्वं पुरुषं जगंत्। वैवंस्वतो न तृंप्यति पश्चिमिर्मानंवैर्यमः। वैवंस्वते विविंच्यन्ते यमे राजंनि ते जनाः। ये चेह सत्येनेच्छंन्ते य उ चानृंतवादिनः। ते राजित्रिह विविंच्यन्तेऽथा यन्ति त्वामुपं। देवा एश्च ये नमस्यन्ति ब्राह्मणा एश्चापचित्यंति। यस्मिन्वृक्षे सुंपलाशे देवैः सम्पिबंते यमः। अत्रां नो विश्पतिः पिता पुराणा अनुवेनित॥१३॥ प्रकृष्णे विज्ञान्तेऽदं वेनित॥

वैश्वान्रे ह्विरिदं जुंहोमि साह्स्रमुथ्स श्रातधारमेतम्।
तिस्मिन्नेष पितरं पिताम्हं प्रिपेताम्हं बिभर्त्यन्वमाने।
द्रुप्सश्चेस्कन्द पृथिवीमन् द्यामिमं च योनिमन् यश्च पूर्वः।
तृतीयं योनिमन् स्थरंन्तं द्रुप्सं जुंहोम्यन् स्प्त होत्राः।
इमश् संमुद्रश् श्रातधारम्थसंव्यच्यमानं भुवनस्य मध्ये।
घृतं दुहानामिदितिं जनायाग्रे मा हिश्सीः पर्मे व्योमन्।
अपेत वीत वि चं सर्पतातो येऽत्र स्थ पुराणा ये च्
नूतनाः। अहोभिरद्भिरक्तिर्भिर्वातः यमो दंदात्ववसानमस्म।
सिवततानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे।

## तेभिर्युज्यन्तामघ्रियाः॥१४॥

शुनं वाहाः शुनं नाराः शुनं कृषत् लाङ्गंलम्। शुनं वेर्त्रा बेध्यन्ता । शुनमष्ट्रामुदिङ्गय शुनांसीरा शुनम्स्मास् धत्तम्। शुनांसीराविमां वाचं यद्दिवि चंक्रथुः पर्यः। तेनेमामुपं सिश्चतम्। सीते वन्दांमहे त्वाऽर्वाचीं सुभगे भव। यथां नः सुभगा संसि यथां नः सुफला संसि। सवितैतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे। तेभिरदिते शं भंव। विमुंच्यध्वमिष्ट्रया देवयाना अतांरिष्म तमंसस्पारम्स्य। ज्योतिरापाम् सुवंरगन्म॥१५॥

प्र वाता वान्तिं प्तयंन्ति विद्युत् उदोषंधीर्जिहते पिन्वंते सुवंः। इरा विश्वंस्मै भुवंनाय जायते यत्पर्जन्यः पृथिवी १ रेत्साऽवंति। यथां यमायं हार्म्यमवप्न्पश्चं मानवाः। एवं वंपामि हार्म्यं यथासाम जीवलोके भूर्रयः। चितः स्थ परिचितं ऊर्ध्वचितः श्रयध्वं पितरो देवता। प्रजापंतिर्वः सादयतु तयां देवत्या। आप्यांयस्व सन्ते॥१६॥

उत्ते तभ्नोमि पृथिवीं त्वत्परीमं लोकं निदधन्मो अहर रिषम्। एताइ स्थूणौं पितरों धारयन्तु तेऽत्रां यमः सादंनात्ते मिनोतु। उपंसर्प मातरं भूमिंमेतामुंरुव्यचंसं पृथिवीर सुशेवौम्। ऊर्णम्रदा युवृतिर्दक्षिणावत्येषा त्वां पातु निर्ऋत्या उपस्थैं। उङ्ग्रंश्चस्व पृथिवि मा विबांधिथाः सूपायनास्में भव सूपवश्चना। माता पुत्रं यथां सिचाभ्येनं भूमि वृण्। उङ्गश्चमाना पृथिवी हि तिष्ठंसि सहस्रं मित् उप हि श्रयंन्ताम्। ते गृहासो मधुश्चतो विश्वाहाँस्मै शर्णाः सन्त्वत्रं। एणींर्धाना हरिणी्रर्जुनीः सन्तु धेनवंः। तिलंबथ्सा ऊर्जमस्मै दुहांना विश्वाहां सन्त्वनपंस्फुरन्तीः॥१७॥

पुषा तें यमसादंने स्वधा निधीयते गृहे। अक्षितिर्नामं ते असौ। इदं पितृभ्यः प्रभेरेम ब्रहिर्देवेभ्यो जीवन्त उत्तरं भरेम। तत्त्वंमारोहासो मेघ्यो भवं यमेन त्वं यम्यां संविदानः। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधिष्टां मा माता पृंथिवि त्वम्। पितृन् हि यत्र गच्छास्येधांसं यमराज्यें। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधिथां मा माता पृंथिवी मही। वैवस्वत हि गच्छांसि यमराज्ये विरांजिस। नळं प्रवमारोहैतं नळेनं पृथोऽन्विंहि। स त्वं नळप्रंवो भूत्वा सन्तरं प्रतरोत्तर॥१८॥

स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्यै मातुरूपस्थ आदंधे। तेभ्यंः पृथिवि शं भंव। षड्ढांता सूर्यं ते चक्षुंर्गच्छतु वातंमात्मा द्यां च गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छु यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानांत्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नंः प्रजा रीरिषो मोत वीरान्। शं वातः शर हि ते घृणिः शम्ं ते सन्त्वोषंधीः। कल्पंन्तां मे दिशः श्गमाः। पृथिव्यास्त्वां

लोके सांदयाम्यमुष्य शर्मासि पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अन्तरिक्षस्य त्वा दिवस्त्वां दिशां त्वा नाकंस्य त्वा पृष्ठे ब्रथ्नस्यं त्वा विष्टपं सादयाम्यमुष्य शर्मासि पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥१९॥

अपूपवाँन्धृतवा ईश्चरुरेह सींदतूत्तभुवन् द्यामुतोपरि। योनिकृतः पथिकृतः सपर्यत् ये देवानां घृतभागा इह स्थ। एषा ते यमसादेने स्वधा निधीयते गृहें ऽसौ। दशाँक्षरा ता रंक्षस्व तां गोंपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वा मा दंभन्पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तया देवतंया। अपूपवाँञ्छृतवाँन् क्षीरवान्दिधंवान्मधुंमाङ्श्वरुरेह सींदतूत्तभ्रुवन् पृंथिवीं द्यामुतोपरिं। योनिकृतंः पथिकृतंः सपर्यतं ये देवाना ई श्तमांगाः क्षीरमांगा दिधमागा मधुमागा इहं स्थ। एषा तें यमसादंने स्वधा निधीयते गृहें ऽसौ। शताक्षंरा सहस्रौक्षराऽयुतौक्षराऽच्युंताक्षरा ता र्रेक्षस्व तां गोंपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वा मा दंभन्पितरों देवता। प्रजापितिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥२०॥ अनंपस्फुरन्ती्रुक्तंर देवतंया द्वे

पुतास्तें स्वधा अमृताः करोमि यास्ते धानाः परिकिराम्यत्रं। तास्ते यमः पितृभिः संविदानोऽत्रं धेनूः कामदुषाः करोत्। त्वामर्जुनौषंधीनां पर्यो ब्रह्माण इद्विदुः। तासाँ त्वा मध्यादादंदे चरुभ्यो अपिधातवे। दूर्वाणाई स्तुम्बमाहंरेतां प्रियतंमां ममं। इमां दिशं मनुष्यांणां भूयिष्ठानु वि रोहतु। काशांनाइ स्तुम्बमाहंर रक्षंसामपंहत्ये। य एतस्ये दिशः प्राभंवन्नघायवो यथा तेनाभंवान्पुनंः। दर्भाणाई स्तुम्बमाहंर पितृणामोषंधीं प्रियाम्। अन्वस्यै मूलं जीवादनु काण्डमथो फलम्॥२१॥

लोकं पृंण ता अस्य सूर्द्दोहसः। शं वातः शक् हि
ते घृणिः शम् ते सन्त्वोषंधीः। कल्पन्तां ते दिशः सर्वाः।
इदमेव मेतोऽपंरामार्तिमाराम् काश्चन। तथा तदिश्वभ्यां कृतं
मित्रेण वर्रुणेन च। वरुणो वार्यादिदं देवो वनस्पतिः। आर्त्ये
निर्ऋत्ये द्वेषांच वनस्पतिः। विधृतिरिक्ष विधारयासमद्घा
द्वेषाक्षेसि शमि शमयासमद्घा द्वेषाक्षेसि यव यवयासमद्घा
द्वेषाक्षेसि। पृथिवीं गच्छान्तरिक्षं गच्छ दिवं गच्छ दिशों
गच्छ सुवंगच्छ सुवंगच्छ दिशों गच्छ दिवं गच्छान्तरिक्षं
गच्छ पृथिवीं गच्छाऽऽपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु
प्रतितिष्ठा शरीरैः। अश्मन्वती रेवतीर्यद्वै देवस्यं सिवतः प्वित्रं
या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंसस्परि धाता प्नातु॥२२॥

आ रोह्ताऽऽयुंर्ज्रसं गृणाना अनुपूर्वं यतंमाना यतिष्ट। इह त्वष्टां सुजनिमा सुरत्नों दीर्घमायुंः करतु जीवसें वः। यथाऽहाँन्यनुपूर्वं भवंन्ति यथर्तवं ऋतुभिर्यन्तिं क्रुप्ताः। यथा न पूर्वमपेरो जहाँत्येवा धांत्रायू ५ षि कल्पयेषाम्। न हिं ते अग्ने तुनुवैं कूरं चकार् मर्त्यः। कृपिर्बभिस्ति तेजेनं पुनेर्ज्रायु गौरिव। अपं नः शोश्चंचद्घमग्ने शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोश्चंचद्घमग्ने शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोश्चंचद्घं मृत्यवे स्वाहाँ। अनुङ्वाहंमन्वारंभामहे स्वस्तयें। स न इन्द्रं इव देवेभ्यो विह्रंः सुम्पारंणो भव॥२३॥

इमे जीवा विं मृतैरावंवर्तिन्नभूँद्भद्रा देवहंतिं नो अद्य। प्राञ्जोगामानृतये हसाय द्राघीय आयुः प्रतुरां दर्धानाः। मृत्योः पुदं योपयंन्तो यदैम् द्राघीय आर्युः प्रतरां दर्धानाः। आप्यायंमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भेवथ यज्ञियासः। इमं जीवेभ्यः परिधिं देधामि मा नोऽनुंगादपेरो अर्धमेतम्। शतं जीवन्तु शरदेः पुरूचीस्तिरो मृत्युं दंद्महे पर्वतेन। इमा नारीरविध्वाः सुपत्नीराञ्जनेन सर्पिषा सम्मृंशन्ताम्। अनुश्रवों अनमीवाः सुशेवा आरोहन्तु जनयो योनिमग्रै। यदाञ्जनं त्रैककुदं जातः हिमवतस्परि। तेनामृतस्य मूलेनारांतीर्जम्भयामसि। यथा त्वमुंद्भिनथ्स्योंषधे पृथिव्या अधि। एविम्म उद्भिन्दन्तु कीत्या यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अजौं उस्यजास्मदघा द्वेषा ५ सि यवो ऽसि यवयास्मदघा द्वेषा ५सि॥२४॥

अपं नः शोशंचद्घमग्ने शुशुध्या र्यिम्। अपं नः

शोशुंचद्घम्। सुक्षेत्रिया सुंगातुया वंसूया चं यजामहे। अपं

नः शोशुंचद्घम्। प्रयद्भन्दिष्ठ एषां प्रास्माकांसश्च सूरयः। अपं नः शोशुंचद्घम्। प्रयद्ग्नेः सहंस्वतो विश्वतो यन्तिं सूरयः। अपं नः शोशुंचद्घम्। प्रयत्ते अग्ने सूरयो जायेमहि प्र ते वयम्। अपं नः शोशुंचद्घम्॥२५॥

त्व ह विश्वतोमुख विश्वतः परिभूरसिं। अपं नः शोशंचद्घम्। द्विषों नो विश्वतोमुखाऽतिं नावेवं पारय। अपं नः शोशंचद्घम्। स नः सिन्धंमिव नावयातिं पर्षा स्वस्तयें। अपं नः शोशंचद्घम्। आपं प्रवणादिंव यतीरपास्मथ्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोशंचद्घम्। अपं नः शोशंचद्घम्। उद्वनादुंदकानीवापास्मथ्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोशंचद्घम्। अन्वन्दायं प्रमोदाय पुनरागाङ् स्वान्गृहान्। अपं नः शोशंचद्घम्। आन्न्दायं प्रमोदाय पुनरागाङ् स्वान्गृहान्। अपं नः शोशंचद्घम्। न व तत्र प्रमीयते गौरश्वः पुरुषः पशुः। यत्रेदं ब्रह्मं क्रियते परिधिर्जीवनायकमपं नः शोशंचद्घम्॥२६॥

अुषमुषं चुत्वरि च॥———[१०]

अपंश्याम युवृतिमाचरंन्तीं मृतायं जीवां पंरिणीयमांनाम्। अन्थेन या तमसा प्रावृताऽसि प्राचीमवांचीमवयन्नरिष्ठौ। मयैतां मा्र्स्तां भ्रियमांणा देवी सती पिंतृलोकं यदैषि। विश्ववांरा नमसा संव्यंयन्त्युभौ नों लोकौ पयसाऽऽवृंणीहि। रियष्ठामृग्निं मध्मन्तमूर्मिणमूर्जः सन्तं त्वा पयसोप् सर्सदेम। सर् रय्या समु वर्चसा सचंस्वा नः स्वस्तयै। ये जीवा ये चं मृता ये जाता ये च जन्त्याः। तेभ्यों घृतस्यं

धारियतुं मधुंधारा व्युन्दती। माता रुद्राणां दुहिता वसूना्र्ं स्वसांऽऽदित्यानांममृतंस्य नाभिः। प्रणुवोचं चिकितुषे जनाय मागामनांगामदितिं विधष्ट। पिबंतूदकं तृणांन्यत्तु। ओमुथ्मुजत॥२७॥

वृधिष्ट द्वे चं॥————[११]

सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सुमङ्गलीरियं वधूरिमा संमेत पश्यंत। सौभाँग्यम्स्यै द्त्त्वायाथास्तं वि परेतन। इमां त्विमंन्द्र मीद्वः सुपुत्रा स्मुभगां कुरु। दशाँस्यां पुत्राना धेहि पतिमेकाद्शं कृषि॥ आवहंन्ती वितन्वाना। कुर्वाणा चीरमात्मनंः। वासा सि मम् गावश्च। अन्नुपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावह।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



### ॥ सप्तमः प्रश्नः — शीक्षावल्ली॥

ॐ। शं नों मित्रः शं वर्रुणः। शं नों भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमंस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मं विद्यामि। ऋतं विदिष्यामि। सत्यं विदिष्यामि। तन्मामंवतु। तद्यक्तारंमवतु। अवंतु माम्। अवंतु वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥१॥

सुत्यं वंदिष्यामि पश्चं च॥**\_\_\_\_\_\_[१**]

शीक्षां व्यांख्यास्यामः। वर्णः स्वरः। मात्रा बलम्। सामे सन्तानः। इत्युक्तः शीक्षाध्यायः॥२॥

शीक्षां पश्चं॥——[२]

सह नौ यशः। सह नौ ब्रंह्मवर्चसम्। अथातः स॰हिताया उपनिषदं व्यांख्यास्यामः। पञ्चस्वधिकंरणेषु। अधिलोकमधिज्यौतिषमधिविद्यमधिप्रजंमध्यात्मम्। ता महास॰हिता इंत्याचृक्षते। अथांधिलोकम्। पृथिवी पूर्वरूपम्। द्यौरुत्तंररूपम्। आकांशः सुन्धिः॥३॥

वार्यः सन्धानम्। इत्यंधिलोकम्। अथांधिज्यौतिषम्। अग्निः पूर्वरूपम्। आदित्य उत्तररूपम्। आपः सन्धिः। वैद्युतंः सन्धानम्। इत्यंधिज्यौतिषम्। अथांधिविद्यम्। आचार्यः पूर्वरूपम्॥४॥

अन्तेवास्युत्तंररूपम्। विंद्या सुन्धिः। प्रवचनर्ं सन्धानम्। इत्यंधिविद्यम्। अथाधिप्रजम्। माता पूर्व- रूपम्। पितोत्तंररूपम्। प्रंजा सुन्धिः। प्रजननर्ं सन्धानम्। इत्यधिप्रजम्॥५॥

अथाध्यात्मम्। अधराहनुः पूँर्वरूपम्। उत्तराहनुरुत्तंर-रूपम्। वाख्यन्धिः। जिह्वां सन्धानम्। इत्यध्यात्मम्। इतीमा महास्रहिताः। य एवमेता महास्रहिता व्याख्यांता वेद। सन्धीयते प्रजंया पृश्भिः। ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन सुवर्ग्यणं लोकेन॥६॥

यश्छन्दंसामृष्भो विश्वरूपः। छन्दोभ्योऽध्यमृतांध्सम्बभूवं। स मेन्द्रों मेधयां स्पृणोतु। अमृतंस्य देव धारंणो भूयासम्। शरीरं मे विचंर्षणम्। जिह्वा मे मधुंमत्तमा। कर्णांभ्यां भूरि विश्रुंवम्। ब्रह्मंणः कोशोंऽसि मेधयाऽपिंहितः। श्रुतं मे गोपाय। आवहंन्ती वितन्वाना॥७॥

कुर्वाणा चीरंमात्मनंः। वासारंसि मम् गावंश्च। अन्नपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह। लोमशां पशुभिः सह स्वाहाँ। आ मा यन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। वि मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। प्र मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। दमांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। शमांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ॥८॥

यशो जर्नेऽसानि स्वाहाँ। श्रेयान् वस्यंसोऽसानि स्वाहाँ। तं त्वां भग् प्रविशानि स्वाहाँ। स मां भग् प्रविश् स्वाहाँ। तस्मिन्थ्सहस्रंशाखे। निभंगाहं त्वियं मृजे स्वाहाँ। यथाऽऽपः प्रवंता यन्ति। यथा मासां अहर्जुरम्। एवं मां ब्रंह्मचारिणः। धातुरायंन्तु सुर्वतुः स्वाहां। प्रतिवेशोऽसि प्र मां भाहि प्र मां पद्यस्व॥९॥

भूर्भुवः सुवृरिति वा एतास्तिस्रो व्याहृतयः। तासामहस्मै तां चतुर्थीम्। माहाचमस्यः प्रवेदयते। मह् इति। तद्वह्मां। स आत्मा। अङ्गान्यन्या देवताः। भूरिति वा अयं लोकः। भुव इत्यन्तरिक्षम्। सुवृरित्यसौ लोकः॥१०॥

मह् इत्यांदित्यः। आदित्येन् वाव सर्वे लोका महीयन्ते। भूरिति वा अग्निः। भुव इति वायः। सुव्रित्यांदित्यः। मह् इति चन्द्रमाः। चन्द्रमंसा वाव सर्वाणि ज्योती १षि महीयन्ते। भूरिति वा ऋचः। भुव इति सामानि। सुव्रिति यजू १षि॥११॥

मह् इति ब्रह्मं। ब्रह्मंणा वाव सर्वे वेदा महीयन्ते। भूरिति वै प्राणः। भुव इत्यंपानः। सुव्रितिं व्यानः। मह् इत्यन्नम्। अन्नेन वाव सर्वे प्राणा महीयन्ते। ता वा पृताश्चतंस्रश्चतुर्धा। चतंस्रश्चतस्रो व्याहंतयः। ता यो वेदं। स वेंद् ब्रह्मं। सर्वेंऽस्मै देवा बुलिमावंहन्ति॥१२॥

स य पृषों ऽन्तर्ह्हंदय आकाशः। तस्मिन्नयं पुर्रुषो मनोमयः। अमृतो हिर्ण्मयः। अन्तरेण तालुंके। य पृष स्तनं इवावलम्बंते। सेन्द्रयोनिः। यत्रासौ केशान्तो विवर्तते। व्यपोर्ह्यं शीर्षकपाले। भूरित्युग्नौ प्रतितिष्ठति। भुव इति वायौ॥१३॥

सुवरित्यांदित्ये। मह् इति ब्रह्मंणि। आप्नोति स्वारांज्यम्। आप्नोति मनंस्स्पतिम्। वाक्पंतिश्वक्षंष्पतिः। श्रोत्रंपतिर्वि-ज्ञानंपतिः। पुतत्ततों भवति। आकाशशंरीरं ब्रह्मं। सत्यात्मंप्राणारामं मनं आनन्दम्। शान्तिंसमृद्धमृतम्। इतिं प्राचीनयोग्योपांस्व॥१४॥

वायावमृत्मेकं च॥———[६]

पृथिव्यंन्तिरेक्षं द्योर्दिशोऽवान्तरिद्धाः। अग्निर्वायुरादित्य-श्चन्द्रमा नक्षंत्राणि। आप ओषंधयो वनस्पतंय आकाश आत्मा। इत्यंधिभूतम्। अथाध्यात्मम्। प्राणो व्यानोऽपान उंदानः संमानः। चक्षुः श्रोत्रं मनो वाक्तक्। चर्म मा॰्सइ स्नावास्थि मुजा। पृतदंधि विधायर्षिरवोचत्। पाङ्कं वा इदः सर्वम्। पाङ्केनेव पाङ्कः स्पृणोतीति॥१५॥

ओमिति ब्रह्मं। ओमितीद सर्वम्ं। ओमित्येतदंनुकृति ह स्म वा अप्योश्रांवयेत्याश्रांवयन्ति। ओमिति सामांनि गायन्ति। ओश्शोमितिं शुस्त्राणिं शश्सन्ति। ओमित्यंध्वर्युः प्रंतिग्रं प्रतिंगृणाति। ओमिति ब्रह्मा प्रसौंति। ओमित्यंग्निहोत्रमनुंजानाति। ओमितिं ब्राह्मणः प्रंवक्ष्यन्नांह

ब्रह्मोपाँप्रवानीतिं। ब्रह्मैवोपाँप्रोति॥१६॥

.[८]

ऋतं च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यं च स्वाध्यायप्रवंचने च। तपश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। दमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। शमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवंचने च। अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। मानुषं च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यमिति सत्यवचां राथीतरः। तप इति तपोनित्यः पौरुशिष्टः। स्वाध्यायप्रवचने एवेति नाकों मौद्गल्यः। तिद्धि तपंस्तिद्धि तपः॥१७॥

अहं वृक्षस्य रेरिवा। कीर्तिः पृष्ठं गिरेरिव। ऊर्ध्वपंवित्रो वाजिनीव स्वमृतंमस्मि। द्रविण् सर्वर्चसम्। सुमेधा अमृतोक्षितः। इति त्रिशङ्कोर्वेदांनुवचनम्॥१८॥

अहर पद॥**\_\_\_\_\_[१०**]

वेदमनूच्याऽऽचार्योऽन्तेवासिनमंनुशास्ति। सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायाँन्मा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यंवच्छ्रेथ्सीः। सत्यान्न प्रमंदित्व्यम्। धर्मान्न प्रमंदित्व्यम्। कुशलान्न प्रमंदित्व्यम्। भूत्ये न प्रमंदित्व्यम्। स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमंदितव्यम्॥१९॥

देविपतृकार्याभ्यां न प्रमंदित्व्यम्। मातृंदेवो भव। पितृंदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिंदेवो भव। यान्यनवद्यानिं कर्माणि। तानि सेविंतव्यानि। नो इंतराणि। यान्यस्माकश् सुचंरितानि। तानि त्वयोपास्यानि॥२०॥ नो इंतराणि। ये के चास्मच्छ्रेया स्मो ब्राह्मणाः। तेषां त्वयाऽऽसनेन प्रश्वंसित्व्यम्। श्रद्धंया देयम्। अश्रद्धंयाऽदेयम्। श्रिया देयम्। ह्रिया देयम्। भिया देयम्। संविंदा देयम्। अथ यदि ते कर्मविचिकिथ्सा वा वृत्तविचिकिंथ्सा वा स्यात्॥२१॥

ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्यः। यथा ते तत्रं वर्तेरन्। तथा तत्रं वर्तेथाः। अथाभ्यांख्यातेषु। ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्यः। यथा ते तेषुं वर्तेरन्। तथा तेषुं वर्तेथाः। एषं आदेशः। एष उंपदेशः। एषा वेदोपनिषत्। एतदंनुशासनम्। एवमुपांसित्व्यम्। एवमु चैतंदुपास्यम्॥२२॥

स्वाध्यायप्रवचना-यात्र प्रमंदितृव्यं तानि त्वयोपास्यानि स्यात्तेषुं वर्तेरन्थ्सप्त चं॥————[११]

ॐ। शं नों मित्रः शं वर्रणः। शं नों भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमंस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांति। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मावादिषम्। ऋतमंवादिषम्। सत्यमंवादिषम्। तन्मामावीत्। तद्वक्तारंमावीत्। आवीन्माम्। आवींद्वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥२३॥

स्त्यमंबादिषुं पश्चं च॥\_\_\_\_\_\_[१२

#### ॥ अष्टमः प्रश्नः — ब्रह्मानन्दवल्ली॥

ॐ। सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

ब्रह्मविदाँप्रोति परम्ं। तदेषाभ्यंक्ता। सत्यं ज्ञानमंनन्तं ब्रह्मं। यो वेद निहितं गुहांयां पर्मे व्योमन्। सौंऽश्जृते सर्वान्कामान्थ्सह। ब्रह्मंणा विपश्चितेतिं। तस्माद्वा एतस्मा-दात्मनं आकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायः। वायोर्ग्निः। अग्नेरापः। अन्धः पृथिवी। पृथिव्या ओषंधयः। ओषंधीभ्योऽन्त्रम्। अन्नात्पुर्रुषः। स वा एष पुरुषोऽन्नंरस्मयः। तस्येदंमेव शिरः। अयं दक्षिणः पृक्षः। अयमुत्तंरः पृक्षः। अयमात्मा। इदं पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भ्वति॥१॥

अत्राह्वै प्रजाः प्रजायंन्ते। याः काश्चं पृथिवी १ श्रिताः। अथो अत्रेंनेव जीवन्ति। अथेन्दिपं यन्त्यन्ततः। अत्र १ हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मांध्सर्वीष्धमुंच्यते। सर्वं वे तेऽत्रंमाप्रुवन्ति। येऽत्रं ब्रह्मोपासंते। अत्र १ हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मांध्सर्वीष्धमुंच्यते। अत्राह्मतानि जायंन्ते। जातान्यत्रेन वर्धन्ते। अद्यतेऽत्ति चं भूतानि। तस्मादत्रं तद्च्यंत इति। तस्माद्वा एतस्मादत्रंरस्मयात्। अन्योऽन्तर आत्मां प्राण्मयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्राणं एव

शिरः। व्यानो दक्षिणः पृक्षः। अपान उत्तरः पृक्षः। आकांश आत्मा। पृथिवी पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥२॥

प्राणं देवा अनु प्राणंन्ति। मनुष्याः पृशवंश्च ये। प्राणो हि भूतानामायुः। तस्माध्सर्वायुषमुंच्यते। सर्वमेव त् आयुंर्यन्ति। ये प्राणं ब्रह्मोपासंते। प्राणो हि भूतानामायुः। तस्माध्सर्वायुषमुच्यंत इति। तस्येष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मात् प्राणमयात्। अन्योऽन्तर आत्मा मनोमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य यजुरेव शिरः। ऋग्दक्षिणः पृक्षः। सामोत्तरः पृक्षः। आदेश आत्मा। अथर्वाङ्गिरसः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भ्वति॥३॥

यतो वाचो निवंतन्ते। अप्रांप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कदांचनेति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मांन्मनोमयात्। अन्योऽन्तर आत्मा विज्ञानमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य श्रंद्धेव शिरः। ऋतं दक्षिणः पृक्षः। सत्यमुत्तरः पृक्षः। योग आत्मा। महः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥४॥

विज्ञानं युज्ञं तंनुते। कर्माणि तनुतेऽपि च। विज्ञानं देवाः

सर्वे। ब्रह्म ज्येष्टमुपांसते। विज्ञानं ब्रह्म चेद्वेदं। तस्माचेन्न प्रमाद्यंति। शरीरं पाप्मंनो हित्वा। सर्वान्कामान्थ्समश्जेत इति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्माद्विज्ञान्मयात्। अन्योऽन्तर आत्मांऽऽनन्दमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्रियंमेव शिरः। मोदो दक्षिणः पृक्षः। प्रमोद उत्तरः पृक्षः। आनंन्द आत्मा। ब्रह्म पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥५॥

असंत्रेव सं भवति। अस्द्रह्मेति वेद चेत्। अस्ति ब्रह्मेति चेद्वेद। सन्तमेनं ततो विंदुरिति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। अथातोऽनुप्रश्ञाः। उता विद्वानुमुं लोकं प्रेत्यं। कश्चन गंच्छ्कती(३)॥ आहो विद्वानुमुं लोकं प्रेत्यं। कश्चिष्यमंश्जुता(३) उ। सोऽकामयत। बहु स्यां प्रजांयेयेति। स तपीऽतप्यत। स तपंस्तृष्त्वा। इद र सर्वमसृजत। यदिदं किं चं। तथ्सृष्ट्वा। तदेवानु प्राविंशत्। तदंनुप्रविश्यं। सच् त्यचांभवत्। निरुक्तं चानिंरुक्तं च। निल्यनं चानिंलयनं च। विज्ञानं चाविंज्ञानं च। सत्यं चानृतं च संत्यम्भवत्। यदिंदं किं च। तथ्सत्यमिंत्याचक्षते। तदप्येष श्लोको भवति॥६॥

असुद्वा इदमग्रं आसीत्। ततो वै सदंजायत। तदात्मानः स्वयंमकुरुत। तस्मात्तथ्सुकृतमुच्यंत इति। यद्वै तथ्सुकृतम्। रंसो वै सः। रसः ह्येवायं लब्ध्वाऽऽनंन्दी
भवति। को ह्येवान्याँत्कः प्राण्यात्। यदेष आकाश
आनंन्दो न स्यात्। एष ह्येवानंन्दयाति। यदा ह्यंवैष्
एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां
विन्दते। अथ सोऽभयं गंतो भवति। यदा ह्यंवैष्
एतस्मिन्नदृरमन्तंरं कुरुते। अथ तस्य भंयं भवति। तत्त्वेव
भयं विदुषोऽमंन्वानस्य। तदप्येष श्लोंको भवति॥७॥

भीषाऽस्माद्वातंः पवते। भीषोदेति सूर्यः। भीषाऽस्मादिग्ने-श्चेन्द्रश्च। मृत्युर्धावित पश्चेम इति। सैषाऽऽनन्दस्य मीमा रेसा भवति। युवा स्याथ्साधु युवाऽध्यायकः। आशिष्ठो दिढष्ठो बलिष्ठः। तस्येयं पृथिवी सर्वा वित्तस्यं पूर्णा स्यात्। स एको मानुषं आनन्दः। ते ये शतं मानुषां आनन्दाः।

स एको मनुष्यगन्धर्वाणांमान्नन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य। ते ये शतं मनुष्यगन्धर्वाणांमानन्दाः।

स एको देवगन्धर्वाणामानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहत्स्य। ते ये शतं देवगन्धर्वाणामानन्दाः।

स एकः पितृणां चिरलोकलोकानांमानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहत्स्य। ते ये शतं पितृणां चिरलोकलोकानांमानुन्दाः।

स एक आजानजानां देवानांमानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतमाजानजानां देवानांमानन्दाः।

स एकः कर्मदेवानां देवानांमानुन्दः। ये कर्मणा

देवानंपियन्ति। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। ते ये शतं कर्मदेवानां देवानांमानन्दाः।

स एको देवानांमान्नन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। ते ये शतं देवानांमानन्दाः।

स एक इन्द्रंस्याऽऽन्न्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। ते ये शतमिन्द्रंस्याऽऽनन्दाः।

स एको बृहस्पर्तरानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। ते ये शतं बृहस्पर्तरानन्दाः।

स एकः प्रजापतेरान्न्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। ते ये शतं प्रजापतेरानन्दाः।

स एको ब्रह्मणं आनुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। स यश्चांयं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकंः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतं मनोमयमात्मानमुपं-सङ्कामित। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतमानन्द-मयमात्मानमुपंसङ्कामित। तदप्येष श्लोको भवति॥८॥

यतो वाचो निवंतिन्ते। अप्रांप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मंणो विद्वान्। न बिभेति कुतंश्चनेति। एत ह वावं न तपति। किमह साधुं नाक् रवम्। किमहं पापमक रविमिति। स य एवं विद्वानेते आत्मांन इस्पृणुते। उभे ह्येंवैष एते आत्मांन इस्पृणुते। उभे ह्येंवैष एते आत्मांन इस्पृणुते। य एवं वेदं। इत्युंपनिषंत्॥ ९॥

ॐ। सह नांववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

#### ॥नवमः प्रश्नः — भृगुवल्ली॥

ॐ। सह नांववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृगुर्वे वांरुणिः। वर्रणं पितंरमुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। तस्मां एतत्प्रोवाच। अन्नं प्राणं चक्षुः श्रोत्रं मनो वाचमितिं। त॰ होवाच। यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते। येन जातांनि जीवंन्ति। यत्प्रयंन्त्यभि संविंशन्ति। तद्विजिंज्ञासस्व। तद्वह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥१॥

अत्रं ब्रह्मेति व्यंजानात्। अन्नाद्धेव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। अन्नेन जातांनि जीवंन्ति। अन्नं प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तद्धिज्ञायं। पुनरेव वरुणं पितर्मुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥२॥

प्राणो ब्रह्मेति व्यंजानात्। प्राणास्येव खल्विमानि भूतांनि जायन्ते। प्राणेन जातांनि जीवंन्ति। प्राणं प्रयंन्त्यभि संविश्वन्तीतिं। तद्विज्ञायं। पुनेरेव वर्रणं पितर्मुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥३॥

मनो ब्रह्मेति व्यंजानात्। मनंसो ह्यंव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। मनंसा जातांनि जीवंन्ति। मनः प्रयंन्त्यभि संविंशन्तीति। तिंद्वज्ञायं। पुनंरेव वरुणं पितर्मुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥४॥

विज्ञानं ब्रह्मेति व्यंजानात्। विज्ञाना्द्येव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। विज्ञानंन जातांनि जीवंन्ति। विज्ञानं प्रयंन्त्यभि संविश्वन्तीति। तद्विज्ञाये। पुनेरेव वर्रणं पितंर्मुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥५॥

आन्नन्दो ब्रह्मेति व्यंजानात्। आनन्दास्येव खिल्वमानि भूतांनि जायन्ते। आन्नन्देन जातांनि जीवंन्ति। आन्नन्दं प्रयंन्त्यभि संविंशन्तीति। सैषा भाँग्वी वांरुणी विद्या। प्रमे व्योम्न् प्रतिष्ठिता। य एवं वेद् प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजयां प्रशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥६॥ अत्रं न निंन्द्यात्। तद्वृतम्। प्राणो वा अत्रम्ं। शरीरमत्रादम्। प्राणे शरीरं प्रतिष्ठितम्। शरीरे प्राणः प्रतिष्ठितः। तदेतदत्रमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदत्रमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अत्रंवानन्नादो भंवति। महान्भवित प्रजयां पृशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥७॥

अत्रं न परिचक्षीत। तद्वृतम्। आपो वा अन्नम्। ज्योतिरन्नादम्। अपसु ज्योतिः प्रतिष्ठितम्। ज्योतिष्यापः प्रतिष्ठिताः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवित प्रजयां पृश्विम्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥८॥

अन्नं बहु कुंवीत। तद्वृतम्। पृथिवी वा अन्नम्। आकाशौँऽन्नादः। पृथिव्यामांकाशः प्रतिष्ठितः। आकाशे पृथिवी प्रतिष्ठिता। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नंवानन्नादो भंवति। महान्भंवति प्रजयां पृशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥९॥

न कश्चन वसतौ प्रत्यांचक्षीत। तद्वृतम्। तस्माद्यया कया च विधया बह्वंत्रं प्राप्नुयात्। अराध्यस्मा अन्नमित्याच्क्षते। एतद्वे मुखतौऽन्नः राद्धम्। मुखतोऽस्मा अन्नः राध्यते। एतद्वे मध्यतौऽन्नः राद्धम्। मध्यतोऽस्मा अन्नः राध्यते। एतद्वा अन्ततौऽन्नः राद्धम्। अन्ततोऽस्मा अन्नः राध्यते। य एवं वेद। क्षेम इति वाचि। योगक्षेम इति प्रांणापानयोः। कर्मति ह्स्तयोः। गतिरिति पादयोः। विमुक्तिरिति

पायौ। इति मानुषीः समाज्ञाः। अथ दैवीः। तृप्तिरिति वृष्टौ। बलमिति विद्युति। यश इति पशुषु। ज्योतिरिति नंक्षत्रेषु। प्रजातिरमृतमानन्द इंत्युपस्थे। सर्वमिंत्याकाशे। तत्प्रतिष्ठेत्युंपासीत। प्रतिष्ठांवान्भवति। तन्मह इत्युंपासीत। मंहान्भवति। तन्मन इत्युंपासीत। मानवान्भवति। तन्नम इत्युपासीत। नम्यन्तैंऽस्मै कामाः। तद्वह्मेत्युपासीत। ब्रह्मवान्भवति। तद्भह्मणः परिमर इत्युपासीत। पर्येणं म्रियन्ते द्विषन्तंः सपत्नाः। परि येंऽप्रियां भ्रातृव्याः। स यश्चायं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकः। स य एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं प्राण-मयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं मनोमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतमानन्दमय-मात्मानमुपंसङ्कम्य। इमाँ होकान्कामान्नी कामरूप्यंनु-स्थरन्। एतथ्साम गांयन्नास्ते। हा(३) वु हा(३) वु हा(३) व्। अहमन्नमहमन्नम्। अहमन्नादो(२)ऽहमन्नादो(२)-अहमस्मि प्रथमजा ऋता(३) स्य। पूर्वं देवेभ्यो अमृतस्य ना(३) भाइ। यो मा ददाति स इदेव मा(३) वाः। अहमन्नमन्नमदन्तमा(३) द्मि। अहं विश्वं भुवंनमभ्यंभवाम्। सुवर्न ज्योतीः। य एवं वेदं। इत्युपनिषंत्॥१०॥

ॐ। सह नांववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः

# शान्तिः॥



#### ॥दशमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत्॥

ॐ। सह नांववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

### ॥अम्भस्य पारे॥

अम्भंस्य पारे भुवंनस्य मध्ये नाकंस्य पृष्ठे मंहुतो महीयान्। शुक्रेण ज्योती १ षि समनुप्रविष्टः प्रजापंतिश्चरित् गर्भे अन्तः॥ यस्मिन्निद्दः सं च विचैति सर्वं यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः। तदेव भूतं तदु भव्यंमा इदं तद्क्षरे पर्मे व्योमन्॥ येनांऽऽवृतं खं च दिवं महीं च येनांऽऽदित्यस्तपंति तेजंसा भ्राजंसा च। यमन्तः समुद्रे क्वयो वयंन्ति यद्क्षरे पर्मे प्रजाः॥ यतः प्रसूता ज्गतः प्रसूती तोयंन जीवान् व्यसंसर्ज् भूम्याम्। यदोषंधीभिः पुरुषान्पशूङ्श्च विवेश भूतानिं चराचराणि॥ अतः परं नान्यदणीयसः हि परात्परं यन्महंतो महान्तम्॥ यदेकम्व्यक्तमनंन्तरूपं विश्वं पुराणं तमंसः परंस्तात्॥१॥

तदेवर्तं तदुं स्त्यमांहुस्तदेव ब्रह्मं पर्मं केवीनाम्। इष्टापूर्तं बंहुधा जातं जायंमानं विश्वं बिंभर्ति भुवंनस्य नाभिः॥ तदेवाग्निस्तद्वायुस्तथ्सूर्यस्तदुं चन्द्रमाः। तदेव शुक्रम्मृतं तद्वह्म तदापः स प्रजापंतिः॥ सर्वे निमेषा ज्ञिरे विद्युतः पुरुषादिधे। कुला मृहूर्ताः काष्ठांश्वाहोरात्राश्चे सर्वशः॥ अर्धमासा मासां ऋतवः संवथ्सरश्चं कल्पन्ताम्। स आपः प्रदुघे उभे इमे अन्तरिक्षमथो सुवः॥ नैनेमूर्धं न तिर्यश्चं न मध्ये परिजग्रभत्। न तस्येशे कश्चन तस्यं नाम मृहद्यशः॥२॥

न स्न्हशें तिष्ठित् रूपंमस्य न चक्षुंषा पश्यित् कश्चनैनम्ं। हृदा मंनीषा मनंसाऽभिक्नृंष्तो य एनं विदुरमृंतास्ते भवन्ति॥ अद्भः सम्भूंतो हिरण्यग्भं इत्यष्टौ॥ एष हि देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो हि जातः स उ गर्भे अन्तः। स विजायंमानः स जिन्ष्यमाणः प्रत्यङ्गुःखाँस्तिष्ठति विश्वतोमुखः॥ विश्वतंश्वक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोहस्त उत विश्वतंस्पात्। सं बाहुभ्यां नमित् सं पतंत्रैर्द्यावांपृथिवी जनयंन्देव एकः॥ वेनस्तत्पश्यन्विश्वा भुवंनानि विद्वान् यत्र विश्वं भवत्येकंनीळम्। यस्मित्रिदः सं च विचैकः स ओतः प्रोतंश्व विभुः प्रजासुं। प्र तद्वोचे अमृतं नु विद्वान्गंन्थवी नाम निहितं गुहांसु॥३॥

त्रीणि पदा निहिता गुहांसु यस्तद्वेदं सिवतुः पिताऽसंत्। स नो बन्धंर्जनिता स विधाता धामांनि वेद भुवंनानि विश्वां। यत्रं देवा अमृतंमानशानास्तृतीये धामांन्यभ्यैरंयन्त। परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः परि लोकान् परि दिशः परि सुवंः। ऋतस्य तन्तुं विततं

विचृत्य तदंपश्यत्तदंभवत् प्रजासं। प्रीत्यं लोकान्प्रीत्यं भूतानिं प्रीत्य सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्याऽऽत्मनाऽऽत्मानमभिसम्बंभूव। सदंसस्पितमद्भंतं प्रियमिन्द्रंस्य काम्यम्। सिनं मेधामंयासिषम्। उद्दीप्यस्व जातवेदोऽपघ्नित्रर्र्ऋतिं ममं॥४॥

पुश्रृश्च मह्यमावंह जीवंनं च दिशों दिश। मा नों हिश्सीज्ञातवेदो गामश्वं पुरुषं जगंत्। अविंभ्रदग्न आगंहि श्रिया मा परिपातय।

#### ॥ गायत्रीमन्त्राः॥

पुरुषस्य विद्य सहस्राक्षस्यं महादेवस्यं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहं महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहं वक्रतुण्डायं धीमहि। तन्नों दिन्तः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहं वक्रतुण्डायं धीमहि। तन्नों दिन्तः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहं चक्रतुण्डायं धीमहि॥५॥

तन्नों नन्दिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्यहें महासेनायं धीमित। तन्नेः षण्मुखः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्यहें सुवर्णपक्षायं धीमित। तन्नों गरुडः प्रचोदयाँत्। वेदात्मनायं विद्यहें हिरण्यगर्भायं धीमित। तन्नों ब्रह्मं प्रचोदयाँत्। नारायणायं विद्यहें वासुदेवायं धीमित। तन्नों विष्णुः प्रचोदयाँत्। वृज्जन्खायं विद्यहें तीक्ष्णद्ङ्ष्ट्रायं धीमित॥६॥

तन्नों नारसि १ हः प्रचोदयात्। भास्करायं विद्महें

महद्युतिक्रायं धीमहि। तन्नों आदित्यः प्रचोदयाँत्। वैश्वानरायं विद्महें लालीलायं धीमहि। तन्नों अग्निः प्रचोदयाँत्। कात्यायनायं विद्महें कन्यकुमारि धीमहि। तन्नों दुर्गिः प्रचोदयाँत्।

# ॥ दूर्वासूक्तम्॥

सहस्रपरेमा देवी शतमूला शताङ्करा। सर्वर् हरतुं मे पापं दूर्वा दुःस्वप्ननाशनी। काण्डांत्काण्डात् प्ररोहंन्ती पर्रुषः परुषः परि॥७॥

पुवानों दूर्वे प्रतंनु सहस्रेण श्तेनं च। या श्तेनं प्रत्नोषिं सहस्रेण विरोहंसि। तस्यांस्ते देवीष्टके विधेमं ह्विषां व्यम्। अश्वंक्रान्ते रंथक्रान्ते विष्णुक्रांन्ते वसुन्धंरा। शिरसां धारंयिष्यामि रक्षस्व मां पदे पदे।

### ॥ मृत्तिकासूक्तम्॥

भूमिर्धेनुर्धरणी लोकधारिणी। उद्धृतांऽसि वंराहेण कृष्णेन शंतबाहुना। मृत्तिकं हनं मे पापं यन्मया दुंष्कृतं कृतम्। मृत्तिकं ब्रह्मंदत्ताऽसि काश्यपेनाभिमन्त्रिता। मृत्तिकं देहिं मे पुष्टिं त्विय संवं प्रतिष्ठितम्॥८॥

मृत्तिकै प्रतिष्ठिते सुर्वं तुन्मे निर्णुद् मृत्तिके। तयां हुतेने पापेन गुच्छामि पंरमां गतिम्।

#### ॥ शत्रुजयमन्त्राः॥

यतं इन्द्र भयांमहे ततों नो अभयं कृषि। मघंवन्छ्ग्धि तव् तन्नं ऊतये विद्विषो विमृधों जिहि। स्वस्तिदा विशस्पतिर्वृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अभयङ्करः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः स्वस्ति नंः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। आपान्तमन्युस्तृपलेप्रभर्मा धुनिः शिमीवाञ्छ्ररुंमा स्कृजीषी। सोमो विश्वान्यतसावनानि नार्वागिन्द्रं प्रतिमानानिदेभुः॥९॥

ब्रह्मंजज्ञानं प्रंथमं पुरस्ताद्विसीमृतः सुरुचो वेन आंवः। सबुध्नियां उपमा अस्य विष्ठाः सृतश्च योनिमसंतश्च विवेः। स्योना पृंथिवि भवां ऽनृक्षरा निवेशंनी। यच्छांनः शर्म सृप्रथाः। गृन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपृष्टां करीषिणींम्। ईश्वरी सर्वभूतानां तामिहोपंह्वये श्रियम्। श्रीमें भूजतु। अलक्ष्मीमें नृश्यतु। विष्णुमुखा वै देवाश्छन्दोभिरिमाँ श्लोकानंनप-ज्ययम्भ्यंजयन्। मृहा इन्द्रो वर्ज्रबाहुः षोड्शी शर्म यच्छतु॥१०॥

स्वस्ति नों मुघवां करोतु हन्तुं पाप्मानं योंऽस्मान् द्वेष्टिं। सोमान् स्वरंणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते। कृक्षीवंन्तुं य औशिजम्। शरीरं यज्ञशम्लं कुसीदं तस्मिन्थ्सीदतु योंऽस्मान् द्वेष्टिं। चरंणं प्वित्रं वितंतं पुराणं येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं प्वित्रंण शुद्धेनं पूता अतिं पाप्मान्मरांतिं तरेम। स्जोषां इन्द्र सर्गणो म्रुद्धिः सोमं पिब वृत्रहञ्छूर विद्वान्। ज्रिह शत्रूर् रप् मृधों नुद्स्वाथाभयं कृणुहि विश्वतों नः। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्यों ऽस्मान् द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मंयो भुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन॥११॥

महेरणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयतेह नंः। उशतीरिंव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ। आपों जनयंथा च नः।

## ॥ अघमर्षणसूक्तम्॥

हिरंण्यशृङ्गं वर्रणं प्रपंद्ये तीर्थं में देहि याचितः। युन्मयां भुक्तम्साधूनां पापेभ्यश्च प्रतिग्रंहः। यन्मे मनसा वाचा कर्मणा वा दुष्कृतं कृतम्। तन्न इन्द्रो वर्रणो बृह्स्पतिः सविता चं पुनन्तु पुनः पुनः। नमोऽग्नयेंऽफ्सुमते नम् इन्द्रांय नमो वर्रणाय नमो वारुण्यें नमोऽन्न्यः॥१२॥

यद्पां ऋूरं यदंमेध्यं यदंशान्तं तदपंगच्छतात्। अत्याशनादंतीपानाद्यच उग्रात् प्रतिग्रहात्। तन्नो वर्रणो राजा पाणिनां ह्यवमर्शतु। सोऽहमपापो विरजो निर्मुक्तो मुक्तिकिल्बषः। नाकस्य पृष्ठमारुह्य गच्छेद्वह्मंसलोकताम्। यश्चापसु वर्रणः स पुनात्वंघमर्षणः। इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुंद्रि स्तोम र् सचता परुष्णिया। असिक्रिया मंरुद्वृधे वितस्त्याऽऽर्जीकीये शृणुह्या सुषोमया। ऋतं चं सत्यं चाभीद्धात्तप्सोऽध्यंजायत। ततो रात्रिरजायत् ततः समुद्रो अर्ण्वः॥१३॥

समुद्रादंर्णवादिधं संवथ्सरो अंजायत। अहोरात्राणिं विद्धिद्विश्वंस्य मिष्तो वृशी। सूर्याचन्द्रमसौं धाता यंथापूर्वमंकल्पयत्। दिवंं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो सुवंः। यत्पृथिव्याः रजः स्वमान्तरिक्षे विरोदंसी। इमाः स्तदापो वंरुणः पुनात्वंघमर्षणः। पुनन्तु वसंवः पुनातु वर्रुणः पुनात्वंघमर्षणः। पुनन्तु वसंवः पुनातु वर्रुणः पुनात्वंघमर्षणः। एष भूतस्यं मध्ये भुवंनस्य गोप्ता। एष पुण्यकृतां लोकानेष मृत्योर्हिर्ण्मयम्। द्यावांपृथिव्योर्हिर्ण्मयः सः श्रितः सुवंः॥१४॥

स नः सुवः स॰शिंशाधि। आर्द्रं ज्वलंति ज्योतिर्हमंस्मि। ज्योतिर्ज्वलंति ब्रह्माहमंस्मि। योऽहमंस्मि ब्रह्माहमंस्मि। अहमंस्मि ब्रह्महमंस्मि। अहमेवाहं मां जुंहोमि स्वाहाँ। अकार्यकार्यवकीणीं स्तेनो भ्रूणहा गुंरुतल्पगः। वर्रुणोऽपामघमर्षणस्तस्माल्पापात् प्रमुंच्यते। रजो भूमिस्त्वमा॰ रोदंयस्व प्रवंदन्ति धीराँः। आक्राँन्थ्समुद्रः प्रथमे विधमा जनयंन्प्रजा भुवंनस्य राजाँ। वृषां प्वित्रे अधि सानो अव्ये बृहथ्सोमो वावृधे सुवान इन्दुंः॥१५॥

# ॥दुर्गासूक्तम्॥

जातवेदसे सुनवाम सोमंमरातीयतो निदंहाति वेदः। स नंः पर्षदितं दुर्गाणि विश्वां नावेव सिन्धुं दुरिताऽत्यग्निः। तामग्निवंणां तपंसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कर्मफुलेषु जुष्टाम्। दुर्गां देवी र शरणमहं प्रपद्ये सुतर्रसि तरसे नर्मः। अग्ने त्वं पारया नव्यों अस्मान्थ्स्वस्तिभिरतिं दुर्गाणि विश्वां। पूर्श्व पृथ्वी बंहुला नं उुवीं भवां तोकाय तनयाय शं योः। विश्वांनि नो दुर्गहां जातवेदः सिन्धुं न नावा दुरितातिं पर्षि। अग्ने अत्रिवन्मनंसा गृणानौंऽस्माकं बोध्यविता तनूनांम्। पृत्नाजित् सहंमानम् ग्रिमुग्र ह्वेम पर्माथ्सधस्थात्। स नंः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा क्षामंद्वेवो अति दुरिताऽत्यग्निः। प्रत्नोषिं कमीड्यों अध्वरेषुं सनाच् होता नव्यंश्च सथ्सि। स्वाश्रांग्ने तनुवंं पिप्रयंस्वास्मभ्यं च सौभंगमायंजस्व। गोभिर्जुष्टमयुजो निषिक्तं तवैन्द्र विष्णोरनुसश्चरेम। नाकस्य पृष्ठमभि संवसानो वैष्णंवीं लोक इह मादयन्ताम्॥१६॥

### ॥ व्याहृतिहोमन्त्राः॥

भूरत्रम्ययं पृथिव्ये स्वाह्य भुवोऽत्तं वायवेऽन्तिरक्षाय् स्वाह्य सुव्रत्नमादित्यायं दिवे स्वाह्य भूभृंवः सुव्रत्तं चन्द्रमसे दिग्भ्यः स्वाह्य नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूभृंवः सुव्रत्नमोम्॥१७॥

भूरमयें पृथिवये स्वाहा भुवों वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुवंरादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवरग्न ओम्॥१८॥

भूरग्नयें च पृथिव्यै चं महते च स्वाहा भुवों वायवें चान्तरिक्षाय च महते च स्वाहा सुवंरादित्यायं च दिवे चं महते च स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्वन्द्रमंसे च नक्षंत्रेभ्यश्च दिग्भ्यश्चं महते च स्वाहा नमों देवेभ्यंः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवृर्महरोम्॥१९॥

## ॥ ज्ञानप्राप्त्यर्थहोममन्त्राः॥

पाहि नो अग्र एनंसे स्वाहा। पाहि नो विश्ववेदंसे स्वाहा। यज्ञं पाहि विभावंसो स्वाहा। सर्वं पाहि शतक्रंतो स्वाहा॥२०॥

पाहि नों अग्न एकंया। पाह्युंत द्वितीयंया। पाह्यूर्जं तृतीयंया। पाहि गीर्भिश्चं तसृभिवंसो स्वाहाँ॥२१॥

[*し*]

## ॥वेदविस्मरणाय जपमन्त्राः॥

यश्छन्दंसामृषभो विश्वरूपश्छन्दोंभ्यश्छन्दाईस्याविवेशं। शिक्यः पुरोवाचोपनिषदिन्द्रौं ज्येष्ठ इंन्द्रियाय ऋषिंभ्यो नमों देवेभ्यंः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवृश्छन्द ओम्॥२२॥

|८|

नमो ब्रह्मणे धारणं मे अस्त्वनिराकरणं धारयिता भूयासं कर्णयोः श्रुतं मा च्यौंबुं ममामुष्य ओम्॥२३॥ ————[९]

॥ तपः प्रशंसा॥

ऋतं तपंः स्तयं तपंः श्रुतं तपंः शान्तं तपो दम्स्तपः शम्स्तपो दानं तपो यज्ञं तपो भूर्भुवः सुवुर्ब्रह्मैतदुपाँस्यैतत्तपंः॥२४॥

-[१०]

### ॥ विहिताचरणप्रशंसा निषिद्धाचरणनिन्दा च॥

यथां वृक्षस्यं सम्पुष्पितस्य दूराद्गन्धो वाँत्येवं पुण्यंस्य कुर्मणों दूराद्गन्धो वांति यथांऽसिधारां कुर्तेऽवंहितामवृक्तामे यद्युवे युवे ह वां विह्वयिंष्यामि कुर्तं पंतिष्यामीत्येवमृनृतांदात्मानं जुगुफ्सेंत्॥२५॥

-[ { } { } ]

### ॥ दहरविद्या ॥

अणोरणीयान्मह्तो महीयानात्मा गुहांयां निहितोऽस्य जन्तोः। तमंक्रतुं पश्यति वीतशोको धातुः प्रसादौन्महिमानं-मीशम्। सप्त प्राणाः प्रभवंन्ति तस्माध्सप्तार्चिषंः समिधंः सप्त जिह्वाः। सप्त इमे लोका येषु चरंन्ति प्राणा गुहाशंयां निहिंताः सप्त संप्त। अतः समुद्रा गि्रयंश्च सर्वेऽस्माथ्स्यन्दंन्ते सिन्धंवः सर्वरूपाः। अतंश्च विश्वा ओषंधयो रसाँच येनैंष भूतस्तिष्ठत्यन्तरात्मा। ब्रह्मा देवानां पद्वीः कंवीनामृषिर्विप्नांणां महिषो मृगाणांम्। श्येनो गृध्रांणाः स्विधितिर्वनांनाः सोमः प्वित्रमत्येति रेभन्। अजामेकां लोहितशुक्ककृष्णां बह्वीं प्रजां जनयंन्तीः सरूपाम्। अजो ह्येको जुषमांणोऽनुशेते जहाँत्येनां भृक्तभोगामजौऽन्यः॥२६॥

ह्रसः शुंचिषद्वसुंरन्तिरक्षसद्धोतां वेदिषदितिथिर्दुरोण्सत्।
नृषद्वरसदंत्सद्धोमसद्जा गोजा ऋत्जा अद्विजा ऋतं
बृहत्। घृतं मिमिक्षिरे घृतमस्य योनिर्घृते श्रितो घृतमुंवस्य
धामं। अनुष्वधमावंह मादयंस्व स्वाहांकृतं वृषभ
विक्ष ह्व्यम्। समुद्रादूर्मिर्मधुंमार् उदारदुपार्शुना
सम्मृत्त्वमानद्। घृतस्य नाम् गृह्यं यदस्ति जिह्वा
देवानाममृतंस्य नाभिः। वयं नाम् प्रब्रंवामा घृतेनास्मिन्
यज्ञे धारयामा नमोभिः। उपं ब्रह्मा शृंणवच्छ्रस्यमानं चतुः
शृङ्गोऽवमीद्गौर पृतत्। च्त्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे
शीर्षे सप्त हस्तांसो अस्य। त्रिधां बद्धो वृष्भो रोरवीति
महो देवो मर्त्यार् आविवेश॥२७॥

त्रिधां हितं पणिभिंर्गुह्यमांनं गविं देवासों घृतमन्वंविन्दन्। इन्द्र एक्ट्रं सूर्य एकंं जजान वेनादेक एक्ट्रं स्वधया

निष्टंतक्षुः। यो देवानां प्रथमं पुरस्ताद्विश्वाधियों रुद्रो महर्षिः। हिर्ण्यगर्भं पंश्यत जायमानः स देवः शुभया स्मृत्या संयुनक्तु। यस्मात्परं नापर्मस्त किञ्चिद्यस्मान्नाणीयो न ज्यायौँऽस्ति कश्चित्। वृक्ष इंव स्तब्धो दिवि तिष्ठत्येकुस्तेनेदं पूर्णं पुरुषेण सर्वम्। न कर्मणा न प्रजया धर्नेन त्यागेनैके अमृतत्वमानशुः। परेण नाकं निहितं गुहांयां विभाजंते यद्यतंयो विशन्ति। वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्थाः सन्यासयोगाद्यतंयः शुद्धसत्त्वाः। ते ब्रह्मलोके तु परौन्तकाले परोमृतात्परिमुच्यन्ति सर्वै। दहं विपापं परमेशमभूतं यत्पुंण्डरीकं पुरमध्यसङ्स्थम्। तत्रापि दह्नं गगर्नं विशोकस्तस्मिन् यदन्तस्तदुपांसितव्यम्। यो वेदादौ स्वंरः प्रोक्तो वेदान्तं च प्रतिष्ठिंतः। तस्यं प्रकृतिंलीनस्य यः परंः स महेश्वंरः॥२८॥

[88]

### ॥ नारायणसूक्तम्॥

सहस्रशीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशंम्भुवम्। विश्वं नारायणं देवमक्षरं परमं पदम्। विश्वतः परमान्नित्यं विश्वं नारायणः हरिम्। विश्वमेवेदं पुरुषस्तद्विश्वमुपंजीवति। पतिं विश्वंस्याऽऽत्मेश्वंरः शाश्वंतः शिवमंच्युतम्। नारायणं महाज्ञेयं विश्वात्मानं परायणम्। नारायणपंरो ज्योतिरात्मा नारायणः परः। नारायण परं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः पंरः। नारायणपंरो ध्याता ध्यानं नारायणः पंरः। यर्च किञ्जिज्ञंगथ्सर्वं दृश्यते श्रूयतेऽपि वा॥ अन्तर्बिहिश्चं तथ्सर्वं व्याप्य नारायणः स्थितः॥२९॥

अनेन्तमव्येयं कवि॰ संमुद्रेऽन्तं विश्वशंम्भुवम्। पद्मकोश प्रतीकाश्र हृदयं चाप्यधोमुंखम्। अधो निष्ट्या वितस्त्यान्ते नाभ्यामुपिर तिष्ठति। ज्वालमालाकुलं भाती विश्वस्यांऽऽयतुनं मंहत्। सन्तंतः शिलाभिंस्तु-लम्बंत्याकोशसन्निभम्। तस्यान्ते सुष्टिर सूक्ष्मं तस्मिन्थ्सुर्वं प्रतिष्ठितम्। तस्य मध्ये महानंग्निर्विश्वार्चिर्विश्वतोम्खः। सोऽग्रंभुग्विभंजन्तिष्ठन्नाहारमजुरः कविः। तिर्यगूर्ध्वमधः शायी र्श्मयंस्तस्य सन्तंता। सन्तापयंति स्वं देहमापादतल-मस्तंकः। तस्य मध्ये वहिंशिखा अणीयौर्ध्वा व्यवस्थितः। नीलतोयदंमध्यस्थाद्विद्युष्टेखेव भास्वरा। नीवारशूकंवत्तन्वी पीता भौस्वत्यणूर्पेमा। तस्यौः शिखाया मध्ये परमौत्मा व्यवस्थितः। स ब्रह्म स शिवः स हरिः सेन्द्रः सोऽक्षरः परेमः स्वराट्॥३०॥ नारायणः स्थितो व्यवस्थितश्चत्वारि

॥ आदित्यमण्डले परब्रह्मोपासनम्॥

आदित्यो वा एष एतन्मण्डलं तपंति तत्र ता ऋचस्तद्रचा मण्डलु स ऋचां लोकोऽथ य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिदीप्यते तानि सामोनि स साम्रां मण्डलु स साम्रां लोकोऽथ य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिषि पुरुषस्तानि यजूर्षेषि स यजुंषा मण्डल्र् स यजुंषां लोकः सैषा त्रुय्येवं विद्या तंपित् य एषोंऽन्तरांदित्ये हिंर्ण्मयः पुरुषः॥३१॥

-[88]

## ॥ आदित्यपुरुषस्य सर्वात्मकत्वप्रदर्शनम्॥

आदित्यो वै तेज ओजो बलं यश्श्रक्षः श्रोत्रंमात्मा मनों मन्युर्मनुंर्मृत्युः सत्यो मित्रो वायुरांकाशः प्राणो लोंकपालः कः किं कं तथ्सत्यमन्नंममृतों जीवो विश्वः कत्मः स्वंयम्भु ब्रह्मैतदमृत एष पुरुष एष भूतानामधिपतिर्ब्रह्मणः सायुंज्य स्लोकतांमाप्रोत्येतासांमेव देवतांना सायुंज्य समानलोकतांमाप्रोति य एवं वेदेंत्युपनिषत्॥३२॥

-[१५]

#### ॥ शिवोपासनमन्त्राः॥

निधंनपतये नमः। निधंनपतान्तिकाय नमः। ऊर्ध्वाय् नमः। ऊर्ध्वलिङ्गाय् नमः। हिरण्याय् नमः। हिरण्यलिङ्गाय् नमः। सुवर्णाय् नमः। सुवर्णलिङ्गाय् नमः। दिव्याय् नमः। दिव्यलिङ्गाय् नमः। भवाय् नमः। भवलिङ्गाय् नमः। शर्वाय् नमः। शर्वलिङ्गाय् नमः। शिवाय् नमः। शिवलिङ्गाय् नमः। ज्वलाय् नमः। ज्वललिङ्गाय् नमः। आत्माय् नमः। आत्मलिङ्गाय् नमः। परमाय् नमः। परमलिङ्गाय् नमः। एतथ्सोमस्यं सूर्यस्य सर्वलिङ्गः स्थाप्यति पाणिमन्नं पवित्रम्॥३३॥

[१६]

### ॥ पश्चिमवऋ-प्रतिपाद्क-मन्त्रः॥

सुद्योजातं प्रंपद्यामि सुद्योजाताय वै नमो नर्मः। भवे भंवे नाति भवे भवस्व माम्। भवोद्भवाय नर्मः॥३४॥ —————[१७]

#### ॥ उत्तरवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

वामदेवाय नमों ज्येष्ठाय नमें श्रेष्ठाय नमों रुद्राय नमः कालाय नमः कलंविकरणाय नमो बलंविकरणाय नमो बलाय नमो बलंप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः॥३५॥
[१८]

### ॥ दक्षिणवऋ-प्रतिपाद्क-मन्त्रः॥

अघोरैभ्योऽथ घोरैभ्यो घोरघोरंतरेभ्यः। सर्वैभ्यः सर्वृशर्वेभ्यो नमंस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥३६॥ ————[१९]

#### ॥ प्राग्वऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

तत्पुरुंषाय विदाहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्॥३७॥ ————[२०]

### ॥ ऊर्ध्ववऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणी-ऽधिपतिर्ब्रह्मां शिवो मे अस्तु सदाशिवोम्॥३८॥ —————[२१]

-[२७]

#### ॥ नमस्कारमन्त्राः॥

| नमो              | हिरण्य                      | ग्राहवे       | हिरण्यवर्णाः             | •             |                  |
|------------------|-----------------------------|---------------|--------------------------|---------------|------------------|
| हिरण्या<br>नमः॥३ | पतयेऽम्बिका<br>१ ॥          | पतय           | उमापतये                  | पशुपतरे       | र्भ नमो          |
|                  | . <b>.</b>                  |               |                          |               | <u>     [२२]</u> |
| _                | _                           |               | पुरुषं कृष्ण्            |               | ऊर्धरेतं         |
| विंरूपा          | क्षं विश्वरूप               | ाय वै न       | मो नर्मः॥४०              |               | [22]             |
|                  | ·                           |               | <del></del>              |               | —[२३]            |
| _                | -                           |               | य नमों अस<br>भूतं भुवंनं | -             | -                |
|                  | _                           |               | मूल मुपन<br>होष रुद्रस   |               | -                |
| अस्तु॥           | ४१॥ <u> </u>                | 1 (19]        | (वन रुप्ररा              | _             |                  |
|                  | <u> </u>                    |               | 15                       |               | —[२४]            |
|                  | _                           | _             | माय् तर्व्यसे।<br>—— —-  |               |                  |
| <u>ह</u> द। स    | াবা <i>হা</i> ব <i>ক্</i> ষ | <del></del>   | रुद्राय नमो              |               | ता<br>——[२५]     |
| ॥ अकि            | रोचर सामा :                 | जागर          | <b>क्स्य वृक्षविः</b>    |               |                  |
|                  |                             |               |                          |               |                  |
|                  |                             |               | णी भवति !                | प्रत्येवास्या | ऽऽहुंतय-         |
| स्तिष्टन         | यथो प्रतिष्ठि               | .त्ये॥४३<br>- | II                       |               | <u>     [२६]</u> |
| குர              | ष्व पाज इ                   | ति पश्चं॥     | 8811                     |               | [ / ◄]           |
| ડે. તે           | : " = 2                     | <u> </u>      | 11                       |               |                  |

## ॥ भूदेवताकमन्त्रः॥

अदितिर्देवा गंन्ध्वां मंनुष्याः पितरोऽसुंरास्तेषाः सर्वभूतानां माता मेदिनीं मह्ता मही सांवित्री गांयत्री जगंत्युर्वी पृथ्वी बंहुला विश्वां भूता कंत्मा का या सा सत्येत्यमृतेतिं वसिष्ठः॥४५॥

-[२८]

## ॥ सर्वदेवता आपः॥

आपो वा इद सर्वं विश्वां भूतान्यापः प्राणा वा आपः पृशव आपोऽन्नमापोऽमृतमापः सम्राडापो विराडापः स्वराडापृश्छन्दा इस्यापो ज्योती इष्यापो यजू इष्यापः सत्यमापः सर्वा देवता आपो भूर्भवः सुवराप ओम्॥४६॥————[२९]

#### ॥ सन्ध्यावन्दनमन्त्राः ॥

आपं पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम्। पुनन्तु ब्रह्मण्स्पित् ब्रह्मपूता पुनातु माम्। यद्चिष्ठंष्ट्रमभौज्यं यद्वा दुश्चरितं ममं। सर्वं पुनन्तु मामापोऽस्तां चे प्रतिग्रह् स्वाहां॥४७॥

. ३०

अग्निश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षन्ताम्। यदह्रा पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरेण शि्षञा। अह्स्तदंवलुम्पत्। यत्किं चं दुरि्तं मियं। इदमहं माममृंतयो॒नौ। सत्ये ज्योतिषि जुहोंमि स्वाहा॥४८॥

[३१]

सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षन्ताम्। यद्रात्रिया पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरेण शि्ष्ञा। रात्रिस्तदंवलुम्पतु। यत्किं चं दुरितं मिये। इदमहं माममृतयोनौ। सूर्ये ज्योतिषि जुहोंमि स्वाहा॥४९॥

[३२]

#### ॥प्रणवस्य ऋष्यादिविवरणम्॥

ओमित्येकाक्षेरं ब्रह्म। अग्निर्देवता ब्रह्मं इत्यार्षम्। गायत्रं छन्दं परमात्मं सरूपम्। सायुज्यं विनियोगम्॥५०॥
[३३]

#### ॥ गायत्र्यावाहनमन्त्राः ॥

आयांतु वरंदा देवी अक्षरं ब्रह्मसम्मितम्। गायत्रीं छन्दंसां मातेदं ब्रह्म जुषस्वं मे। यदह्रांत्कुरुते पापं तदह्रांत्प्रतिमुच्यंते। यद्रात्रियांत्कुरुते पापं तद्रात्रियांत्प्रतिमुच्यंते। सर्वं वर्णे मंहादेवि सन्थ्याविद्ये स्रस्वंति॥५१॥

ओजोंऽसि सहोंऽसि बलंमसि भ्राजोंऽसि देवानां धाम नामांसि विश्वंमसि विश्वायुः सर्वंमसि सर्वायुरिभभूरों गायत्रीमावाहयामि सावित्रीमावाहयामि सरस्वतीमावाह- यामि छन्दऋषीनावांहयामि श्रियमावांहयामि गायत्रिया गायत्रीच्छन्दो विश्वामित्र ऋषिः सविता देवताऽग्निर्मुखं ब्रह्मा शिरो विष्णुर्हृदय रुद्धः शिखा पृथिवी योनिः प्राणापानव्यानोदानसमाना सप्राणा श्वेतवर्णा साङ्क्ष्यायनसगोत्रा गायत्री चतुर्वि शत्यक्षरा त्रिपदां षद्भुक्षिः पश्चशीर्षोपनयने विनियोग ओं भूः। ओं भुवः। ओर सुवः। ओं महः। ओं जनः। ओं तपः। ओर सृत्यम्। ओं तथ्मंवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्यं धीमहि। धियो यो नंः प्रचोदयात्। ओमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भवः सुव्रोम्॥५२॥

॥ गायत्री उपस्थानमन्त्राः॥

उत्तमें शिखंरे जाते भूम्यां पर्वतमूर्धनि। ब्राह्मणैभ्योऽभ्यंनु-ज्ञाता गुच्छ देवि यथासुंखम्। स्तुतो मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्ती पवने द्विजाता। आयुः पृथिव्यां द्रविणं ब्रह्मवर्चसं मह्यं दत्त्वा प्रजातुं ब्रह्मलोकम्॥५३॥

.[३६]

## ॥ आदित्यदेवतामन्त्रः॥

घृणिः सूर्यं आदित्यो न प्रभां वात्यक्षंरम्। मधुं क्षरन्ति तद्रंसम्। सत्यं वै तद्रसमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्॥५४॥

.[ うり]

# ॥ त्रिसुपर्णमन्त्राः ॥

ब्रह्मंमेतु माम्। मधुंमेतु माम्। ब्रह्मंमेव मधुंमेतु माम्। यास्ते सोम प्रजावथ्सोभि सो अहम्। दुःस्वंप्रहन्दुंरुष्यह। यास्ते सोम प्राणाः स्तां जुंहोमि। त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। ब्रह्महृत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठन्ति। ते सोमं प्राप्नुवन्ति। आसहस्रात्पङ्किं पुनंन्ति। ओम्॥५५॥

ब्रह्मं मेधयाँ। मधुं मेधयाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधयाँ। अद्या नों देव सिवतः प्रजावंथ्सावीः सौभंगम्। परां दुःष्विप्तंय स्व। विश्वांनि देव सिवतर्दुरितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्म आ सुंव। मधु वातां ऋतायते मधुं क्षरन्ति सिन्धंवः। माध्वींनिः सन्त्वोषंधीः। मधु नक्तं मुतोषिस मधुं मृत्पार्थिव र उज्ञेः। मधु द्यौरंस्तु नः पिता। मधुं मान्नो वनस्पति मधुं मार्थ अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः। य इमं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। भ्रूणहृत्यां वा एते प्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठन्ति। ते सोमं प्राप्नुंवन्ति। आस्तु स्त्रात्पङ्कः पुनन्ति। ओम्॥५६॥

ब्रह्मं मेधवाँ। मधुं मेधवाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधवाँ। ब्रह्मा देवानां पद्वीः कंवीनामृषिर्विप्राणां मिह्षो मृगाणाँम्। श्येनो गृध्राणाः स्वधितिर्वनांनाः सोमः पवित्रमत्येति रेभन्। हुः सः शुंचिषद्वसुंरन्तिरक्षसद्धोतां वेदिषदितिथिर्दरोणसत्।

नृषद्वं रसहंत्सद्योम्सद्जा गोजा ऋत्जा अंद्रिजा ऋतं बृहत्। ऋचे त्वां रुचे त्वा सिमथ्स्रंविन्त स्रितो न धेनाः। अन्तर्हृदा मनंसा पूयमानाः। घृतस्य धारां अभिचांकशीमि। हिर्ण्ययो वेत्सो मध्यं आसाम्। तिस्मन्ध्सुपूर्णो मंधुकृत्कुंलायी भजंन्नास्ते मधुंदेवतांभ्यः। तस्यां ऽऽसते हर्रयः सप्ततीरे स्वधां दहांना अमृतंस्य धारांम्। य इदं त्रिसुंपर्ण्मयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। वीर्हृत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठंन्ति। ते सोमं प्राप्नंवन्ति। आस्हस्रात्पङ्किं पुनंन्ति। ओम्॥५७॥

[88].

## ॥ मेधासूक्तम्॥

मेधा देवी जुषमाणा न आगाँद्विश्वाची भूद्रा सुमन्स्यमाना। त्वया जुष्टां जुषमाणा दुरुक्ताँन्बृहद्वंदेम विदथें सुवीराँः॥ त्वया जुष्टं ऋषिर्भवति देवि त्वया ब्रह्मांऽऽगृतश्रीरुत त्वयां। त्वया जुष्टंश्चित्रं विन्दते वसु सा नों जुषस्व द्रविणो न मेधे॥५८॥

[88]

मेधां म् इन्द्रों ददातु मेधां देवी सरंस्वती। मेधां में अश्विनांवुभावार्धत्तां पुष्कंरस्रजा। अपस्रासुं च या मेधा गंन्ध्वेषुं च यन्मनंः। देवीं मेधा सरंस्वती सा मां मेधा सुरभिर्जुषता्र् स्वाहां॥५९॥

[४२]

आ माँ मेधा सुरभिर्विश्वरूपा हिरंण्यवर्णा जगंती जगम्या। ऊर्जस्वती पर्यसा पिन्वंमाना सा माँ मेधा सुप्रतीका जुषन्ताम्॥६०॥

[४३]

मियं मेधां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेधां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मियं प्रजां मिय सूर्यो भ्राजों दधातु॥६१॥

[४४]

### ॥ मृत्युनिवारणमन्त्राः॥

अपैतु मृत्युर्मृतंं न् आगंन्वैवस्वतो नो अभंयं कृणोतु। पुर्णं वनस्पतेरिवाभिनः शीयता र्यिः स चं तान्नः शचीपतिः॥६२॥

[४५]

परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानाँत्। चक्षुंष्मते शृण्वते तें ब्रवीमि मा नः प्रजा॰ रीरिषो मोत वीरान्॥६३॥

[४६]

वार्तं प्राणं मनंसाऽन्वा रंभामहे प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नों मृत्योस्रायतां पात्वश्हंसो ज्योग्जीवा जरामंशीमहि॥६४॥

[88]

अमुत्र भूयादध यद्यमस्य बृहंस्पते अभिशंस्तेरम्ंश्चः।

| प्रत्यौहताम् श्विनां मृत्युमंस्माद्देवानां मग्ने भिषजा शचीं भिः॥६५॥  |
|--|
| [28]   |
| हरि १ हरेन्तमनुयन्ति देवा विश्वस्येशानं वृष्मं मंतीनाम्।   |
| हरि हरेन्तमनुंयन्ति देवा विश्वस्येशांनं वृष्मं मंतीनाम्।<br>ब्रह्म सर्रूपमनुंमेदमागादयनं मा विवंधीर्विक्रंमस्व॥६६॥ |
| [88]   |
| शल्केर्ग्निमिन्धान उभौ लोकौ संनेम्हम्। उभयौर्लोकयोर्-  |
| ऋध्वाऽति मृत्युं तराम्यहम्॥६७॥   |
| [40]   |
| मा छिदो मृत्यो मा वंधीमा मे बलं विवृहो मा प्रमोषीः।  |
| प्रजां मा में रीरिष् आयुंरुग्र नृचक्षंसं त्वा ह्विषां विधेम॥६८॥  |
| [48]   |
| मा नों महान्तंमुत मा नों अर्भुकं मा नु उक्षंन्तमुत मा  |
| नं उक्षितम्। मा नोंऽवधीः पितरं मोत मातरं प्रिया मा   |
| नंस्तनुवों रुद्र रीरिषः॥६९॥  |
| [42]   |
| मा नंस्तोके तनये मा न आयंषि मा नो गोषु मा नो   |
| अश्वेषु रीरिषः। वीरान्मा नो रुद्र भामितोऽवधीर्ह्विष्मन्तो  |
| नमंसा विधेम ते॥७०॥   |
| [\(\phi\)\]  |

# ॥ प्रजापतिप्रार्थनामन्त्रः॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वां जातानि परिता बंभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नों अस्तु वयक्ष स्याम् पर्तयो

#### रयीणाम्॥७१॥

[५૪]

-[५५]

## ॥इन्द्रप्रार्थनामन्त्रः॥

स्वस्तिदा विशस्पतिवृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रेः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अभयङ्करः॥७२॥

## ॥ मृत्युञ्जयमन्त्राः ॥

त्र्यंम्बकं यजामहे सुगुन्धिं पृष्टिवर्धनम्। उर्वारुकिमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतांत्॥७३॥

ये ते सहस्रम्युतं पाशा मृत्यो मर्त्याय हन्तंवे। तान् यज्ञस्यं मायया सर्वानवं यजामहे॥७४॥

मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहां॥७५॥

[५८]

-[५७]

#### ॥ पापनिवारक-मन्त्राः॥

देवकृंतस्यैनंसोऽवयजंनमसि स्वाहाँ। मृनुष्यंकृतस्यैनंसो-ऽवयजंनमसि स्वाहाँ। पितृकृंत्स्यैनंसोऽवयजंन-मसि स्वाहाँ। आत्मकृंत्स्यैनंसोऽवयजंनमसि स्वाहाँ। अन्यकृंत्स्यैनंसोऽवयजंनमसि स्वाहाँ। अस्मत्कृंत्स्यैनंसो-ऽवयजंनमसि स्वाहाँ। यद्दिवा च नक्तं चैनंश्चकृम तस्यांवयजंनमसि स्वाहाँ। यथ्स्वपन्तंश्च जाग्रंत्श्चैनंश्चकृम तस्यांवयजंनमसि स्वाहाँ। यथ्सुषुप्तश्च जाग्रंतश्चेनंश्चकृम तस्यांवयजंनमसि स्वाहाँ। यद्विद्वाः सश्चाविद्वाः सश्चेनंश्चकृम तस्यांवयजंनमसि स्वाहाँ। एनस एनसोऽवयजनमसि स्वाहा॥७६॥

.[५९]

# ॥ वसुप्रार्थनामन्त्रः॥

यद्वो देवाश्चकृम जिह्नयां गुरुमनंसो वा प्रयुंती देव हेर्डनम्। अरांवा यो नो अभि दुंच्छुनायते तस्मिन्तदेनों वसवो निधेतन् स्वाहाँ॥७७॥

[६०]

#### ॥कामोऽकार्षीत्-मन्युरकार्षीत् मन्त्रः॥

कामोऽकार्षीं त्रमो नमः। कामोऽकार्षीत्कामः करोति नाहं करोमि कामः कर्ता नाहं कर्ता कामः कार्यिता नाहं कार्यिता एष ते काम कामाय स्वाहा॥७८॥

[६१]

मन्युरकार्षीं नमः। मन्युरकार्षीन्मन्युः करोति नाहं करोमि मन्युः कर्ता नाहं कर्ता मन्युः कार्यिता नाहं कार्यिता एष ते मन्यो मन्यंवे स्वाहा॥७९॥

-[६२]

#### ॥ विराजहोममन्त्राः॥

तिलाञ्जहोमि सरसा सिपष्टान् गन्धार मम चित्ते रमन्तु स्वाहा। गावो हिरण्यं धनमन्नपान सर्वेषा श्रिये स्वाहा। श्रियं च लक्ष्मीं च पुष्टिं च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रजाः सन्ददांतु स्वाहा॥८०॥ ————[६३]

तिलाः कृष्णास्तिलाः श्वेतास्तिलाः सौम्या वशानुगाः। तिलाः पुनन्तुं मे पापं यत्किश्चिद्द्रितं मंयि स्वाहा। चोर्स्यात्रं नेवश्राद्धं ब्रह्महा गुरुत्त्पगः। गोस्तेय स्र्रापानं भ्रूणहत्या तिला शान्ति शमयन्तु स्वाहा। श्रीश्च लक्ष्मीश्च पृष्टीश्च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रज्ञा तु जातवेदः सन्दर्दातु स्वाहा॥८१॥

प्राणापानव्यानोदानसमाना में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। वाङ्मनश्चक्षःश्रोत्रजिह्वाघ्राणरेतो- बुद्धाकूतिःसङ्कल्पा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। त्वक्रममा स्मरुधिरमेदोमञ्जास्रायवो- उस्थीनि में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। शिरःपाणिपादपार्श्वपृष्ठोरूदरजङ्घशिश्ञोपस्थपायवो में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। उत्तिष्ठ पुरुष हरित पिङ्गल लोहिताक्षि देहि देहि ददापियता में शुद्धान्तां ज्योतिरहं ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। उत्तिष्ठ पुरुष हरित पिङ्गल लोहिताक्षि देहि देहि ददापियता में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास स्वाहाँ॥८२॥

पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशा में शुद्ध्यन्तां ज्योतिंर्हं

विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहां। शब्दस्पर्शरूपरसगन्धा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहां। मनोवाक्कायकर्माणि में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरज्जां विपाप्मा भूयास इस्वाहाँ। अव्यक्तभावैरहङ्कारेज्यीतिरहं विरजी विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ। आत्मा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयास्ड् स्वाहां। अन्तरात्मा में श्खान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ। परमात्मा में शुद्ध्यन्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास इस्वाहां। क्षुधे स्वाहाँ। क्षुत्पिपासाय स्वाहाँ। विविद्ये स्वाहाँ। ऋग्विधानाय स्वाहाँ। कषौत्काय स्वाहाँ। क्षुत्पिपासामेलं ज्येष्ठामलक्ष्मीनांशयाम्यहम्। अभूतिमसंमृद्धिं च सर्वान्निर्णुद मे पाप्मान इ स्वाहा। अन्नमय-प्राणमय-मनोमय-विज्ञानमय-मानन्दमय-मात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ॥८३॥

[ દ્દદ્

## ॥ वैश्वदेवमन्त्राः॥

अग्नये स्वाहाँ। विश्वेंभ्यो देवेभ्यः स्वाहाँ। ध्रुवायं भूमाय स्वाहाँ। ध्रुवक्षितंये स्वाहाँ। अच्युतक्षितंये स्वाहाँ। अग्नयें स्विष्टकृते स्वाहाँ॥ धर्माय स्वाहाँ। अधर्माय स्वाहाँ। अग्न्यः स्वाहाँ। ओषधिवनस्पतिभ्यः स्वाहाँ॥८४॥

रुक्षोदेवजनेभ्यः स्वाहाँ। गृह्याँभ्यः स्वाहाँ। अवसानेँभ्यः

स्वाहाँ। अवसानंपतिभ्यः स्वाहाँ। सूर्वभूतेभ्यः स्वाहाँ। कामाय स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ। यदेजंति जगंति यच् चेष्टंति नाम्नो भागोऽयं नाम्ने स्वाहाँ। पृथिव्यै स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ॥८५॥

दिवे स्वाहाँ। सूर्याय स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहाँ। नक्षंत्रेभ्यः स्वाहाँ। इन्द्रांय स्वाहाँ। बृह्स्पतंये स्वाहाँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। ब्रह्मणे स्वाहाँ। स्वधा पितृभ्यः स्वाहाँ। नमो रुद्रायं पशुपतंये स्वाहाँ॥८६॥

देवेभ्यः स्वाहाँ। पितृभ्यः स्वधाऽस्तुं। भूतेभ्यो नर्मः।
मनुष्यँभ्यो हन्ताँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। प्रमेष्ठिने स्वाहाँ। यथा
कूपः शतधारः सहस्रंधारो अक्षितः। एवा मे अस्तु धान्यः
सहस्रंधारमिक्षितम्। धनंधान्यै स्वाहाँ। ये भूताः प्रचरन्ति
दिवानक्तं बिलिमिच्छन्तों वितुदंस्य प्रेष्याः। तेभ्यो बिलि
पृष्टिकामो हरामि मिय पृष्टिं पृष्टिंपतिर्दधातु स्वाहाँ॥८७॥
————[६७]

ओं तद्घ्रह्म। ओं तद्घ्रायुः। ओं तद्गत्मा। ओं तथ्मत्यम्। ओं तथ्मवंमं। ओं तत्पुरोर्नमः॥ अन्तश्चरतिं भूतेषु गृहायां विश्वमूर्तिषु। त्वं यज्ञस्त्वं वषद्कारस्त्वमिन्द्रस्त्व रुद्धस्त्वं विष्णुस्त्वं ब्रह्म त्वं प्रजापितः। त्वं तंदाप आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवस्सुवरोम्॥८८॥
[६८]

## ॥ प्राणाहुतिमन्त्राः॥

श्रुद्धायां प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायांमपाने निविष्टोऽमृतंं जुहोमि। श्रद्धायांं व्याने निविष्टोऽमृतंं जुहोमि। श्रद्धार्यामुदाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। श्रद्धार्यार्थं समाने निविंष्टोऽमृतंं जुहोमि। ब्रह्मंणि म आत्माऽमृंतत्वायं॥ अमृतोपस्तरंणमसि॥ श्रद्धायां प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। प्राणाय स्वाहां॥ श्रद्धायां-मपाने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। अपानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायाँ व्याने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। व्यानाय स्वाहा॥ श्रद्धायां-मुदाने निविष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। उदानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धाया ५ समाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। समानाय स्वाहा॥ ब्रह्मणि म आत्माऽमृंतत्वायं। अमृतापिधानमंसि॥८९॥ -[६९]

॥ भुक्तान्नाभिमन्त्रणमन्त्राः॥

श्रृद्धायां प्राणे निविषयामृत हुतम्। प्राणमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायां मपाने निविषयामृत हुतम्। अपानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायां व्याने निविषयामृत हुतम्। व्यानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायां मुदाने निविषयामृत हुतम। उदानमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धाया रे समाने निर्विषयामृत रे हुतम्। समानमन्नेनाप्या-यस्व॥९०॥

[りo]-

[१७]

### ॥भोजनान्ते आत्मानुसन्धानमन्त्राः॥

अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽङ्गुष्ठं चं समाश्रितः। ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः प्रीणातिं विश्वभुक्॥॥९१॥

#### ॥ अवयवस्वस्थता-प्रार्थनामन्त्रः ॥

## ॥ इन्द्रसप्तर्षि-संवादमन्त्रः॥

वयः सुपूर्णा उपं सेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुंर्मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेऽव बुद्धान्।
—————[७३]

#### ॥ हृदयालम्भनमन्त्रः॥

प्राणानां ग्रन्थिरसि रुद्रो मां विशान्तकः। तेनान्नेनांप्या-युस्व॥९३॥

[とり]·

## ॥ देवताप्राणनिरूपणमन्त्रः॥

नमो रुद्राय विष्णवे मृत्युंर्मे पाहि॥९४॥

.[ ७ ५]

## ॥ अग्निस्तुतिमन्त्रः॥

त्वमंग्रे द्युभिस्त्वमांशुशुक्षणिस्त्वमुद्धस्त्वमश्मंनस्परिं। त्वं वनेंभ्यस्त्वमोषंधीभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिः॥९५॥ ————[७६]

### ॥ अभीष्टयाचनामन्त्राः॥

शिवेन में सन्तिष्ठस्व स्योनेन में सन्तिष्ठस्व सुभूतेन में सन्तिष्ठस्व ब्रह्मवर्चसेन में सन्तिष्ठस्व यज्ञस्यर्धिमनु सन्तिष्ठस्वोपं ते यज्ञ नम् उपं ते नम् उपं ते नमः॥९६॥
————[७७]

#### ॥ परतत्त्व-निरूपणम्॥

सृत्यं परं परं सृत्यः सृत्येन न सुंवर्गाक्षोकाच्यंवन्ते कृदाचन सृताः हि सृत्यं तस्मांथ्यत्ये रमन्ते तप इति तपो नानशंनात्परं यि परं तपस्तद्वर्धर्षं तद्दर्गधर्षं तस्मात्तपंसि रमन्ते दम् इति नियंतं ब्रह्मचारिणस्तस्माद्दमें रमन्ते शम् इत्यरंण्ये मुनयस्तस्माच्छमें रमन्ते दानमिति सर्वाणि भूतानि पृशः संन्ति दानान्नाति दुष्करं तस्माद्द्मि रमन्ते धर्म इति धर्मण् सर्वमिदं परिगृहीतं धर्मान्नाति दुष्करं तस्माद्द्मि रमन्ते प्रजन् इति भूयाः स्तरस्माद्भूयिष्ठाः प्रजायन्ते तस्माद्भूयिष्ठाः प्रजनने रमन्तेऽग्नय इत्याह तस्माद्म्यय आधातव्या अग्निहोत्रमित्यांह तस्मादिग्नहोते यज्ञो हि देवास्तस्माद्वञ्ञे रमन्ते मानसमिति

विद्वा श्स्रस्तस्माँ द्विद्वा श्सं एव मां नुसे रंमन्ते न्यास इतिं ब्रह्मा ब्रह्मा हि परः परों हि ब्रह्मा तानि वा एतान्यवंराणि परा श्री न्यास एवात्यंरेचयुद्य एवं वेदेंत्युपनिषत्॥९७॥———[७८]

## ॥ ज्ञानसाधन-निरूपणम्॥

प्राजापत्यो हार्रुणिः सुपर्णेयः प्रजापंतिं पितरमुपंससार किं भंगवन्तः पंरमं वंदन्तीति तस्मै प्रोवाच सत्येनं वायुरावांति सत्येनांऽऽदित्यो रांचते दिवि सत्यं वाचः प्रतिष्ठा सत्ये सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माध्यत्यं पेरमं वदन्ति तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्तपसर्षयः सुवरन्वंविन्दन् तपंसा सपत्नान् प्रणुंदामारातीस्-तपंसि सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मात्तपः परमं वदन्ति दमेन दान्ताः किल्बिषंमवधून्वन्ति दमेन ब्रह्मचारिणः सुवंरगच्छन्दमो भूतानां दुराधर्षं दमें सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माइमेः पर्मं वदेन्ति शमेन शान्ताः शिवमाचरन्ति शमेन नाकं मुनयोऽन्वविन्दञ्छमो भूतानां दुराधर्षञ्-छुमें सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माच्छुमेः परमं वदन्ति दानं यज्ञानां वरूथं दक्षिणा लोके दातार ५ सर्वभूतान्युंपजीवन्ति दानेनारांतीरपांनुदन्त दानेनं द्विषन्तो मित्रा भंवन्ति दाने सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्दानं प्रेमं वदेन्ति

धुर्मो विश्वस्य जगंतः प्रतिष्ठा लोके धुर्मिष्ठं प्रजा उपसूर्पन्ति धुर्मेणं पापमपुनुदेति

र्धमें सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्धमं पर्मं वदेन्ति प्रजनेनं वै प्रतिष्ठा लोके साधु प्रजायौस्तन्तुं तेन्वानः पितृणामनृणो भवति

तदेव तस्यानृणं तस्मौत् प्रजनेनं पर्मं वदेन्त्य-

ग्नयो वै त्रयी विद्या देवयानः पन्था गार्हपृत्य ऋक्पृंथिवी रथन्तरमन्वाहार्यपर्चनं यजुरन्तरिक्षं वामदेव्यमाहवनीयः साम सुवर्गो लोको बृहत्तस्मादग्नीन्पर्मं वदन्त्य-

ग्निहोत्र र्मयं प्रातर्गृहाणां निष्कृतिः स्विष्ट स्हुतं येज्ञकतूनां प्रायण स्वर्गस्यं लोकस्य ज्योतिस्तस्मादग्निहोत्रं पेर्मं वदन्ति

यज्ञ इति यज्ञेन हि देवा दिवं गता यज्ञेनासुंरानपानुदन्त यज्ञेन द्विष्नतो मित्रा भवन्ति

युज्ञे सुर्वं प्रतिष्ठितुं तस्मौद्यज्ञं पर्मं वदन्ति

मान्सं वै प्रांजापृत्यं पुवित्रं मान्सेन् मनंसा साधु पंश्यति मानसा ऋषंयः प्रजा अंसृजन्त

मानुसे सुवैं प्रतिष्ठितं तस्मौन्मानुसं पेरुमं वदन्ति

न्यास इत्याहुंर्मनीषिणौं ब्रह्माणं ब्रह्मा विश्वः कत्मः स्वयम्भः प्रजापितः संवथ्सर इति संवथ्सरोऽसावादित्यो य एष अदित्ये पुरुषः स पंरमेष्ठी ब्रह्मात्मा

याभिरादित्यस्तपंति रृष्टिमभिस्ताभिः पूर्जन्यों वर्षति

पर्जन्येनौषधिवनस्पतयः प्रजांयन्त ओषधिवनस्पतिभिरन्नं भवत्यन्नेन प्राणाः प्राणैर्बलं बलेन तपस्तपंसा श्रद्धा श्रद्धयां मेधा मेधयां मनीषा मंनीषया मनो मनसमा शान्तिः शान्त्यां चित्तं चित्तेन स्मृति इस्मृत्या स्मार् स्मारंण विज्ञानं विज्ञानंनाऽऽत्मानं वेदयति तस्मोदन्नं ददन्थ्सर्वाण्येतानि ददात्यन्नौत् प्राणा भवन्ति भूतानां प्राणैर्मनो मनंसश्च विज्ञानं विज्ञानांदानन्दो ब्रह्मयोनिः स वा एष पुरुषः पश्चधा पंश्चात्मा येन सर्वमिदं प्रोतं पृथिवी चान्तरिक्षं च द्यौश्च दिशंश्चावान्तरदिशाश्च स वै सर्विमिदं जगथ्म च भूत ई स भव्यं जिज्ञासक्रुप्त ऋतुजा रियंष्ठा श्रद्धा सत्यो महंस्वान्तपसो वरिष्ठाद्भात्वां तमेवं मनसा हुदा च भूयों न मृत्युमुपयाहि विद्वान्तस्मौन्त्रासमेषां तपंसामतिरिक्तमाहुंर्वसुरण्वों विभूरंसि प्राणे त्वमसिं सन्धाता ब्रह्मंन् त्वमसिं विश्वधृत्तें जोदास्त्वमंस्यग्निरंसि वर्चोदास्त्वमंसि सूर्यस्य द्युम्नोदास्त्वमंसि उपयामगृहीतोऽसि ब्रह्मणें त्वा महस् ओमित्यात्मानं यु अतितद्वे महोपनिषदं देवानां गृह्यं य एवं वेदं ब्रह्मणीं महिमानंमाप्नोति तस्मांद्वह्मणों महिमानंमित्युपनिषत्॥९८॥

#### ॥ ज्ञानयज्ञः ॥

तस्यैवं विदुषों यज्ञस्याऽऽत्मा यजंमानः श्रद्धा पत्नी

शरीरमिध्ममुरो वेदिलीमानि ब्रहिर्वेदः शिखा हृदंयं यूपः काम् आर्ज्यं मृन्युः पृशुस्तपोऽग्निर्दमः शमयिता दक्षिणा वाग्घोतां प्राण उद्गाता चक्षुरध्वर्युर्मनो ब्रह्मा श्रोत्रंमग्रीद्यावद्धियंते सा दीक्षा यदश्जाति तद्धविर्यत्पिबंति तदंस्य सोमपानं यद्रमंते तदुंपसदो यथ्मश्चरंत्युपविशंत्युत्तिष्ठंते च स प्रवग्यों यन्मुखं तदाहवनीयो या व्याहृतिराहुतिर्यदंस्य विज्ञानं तज्जुहोति यथ्सायं प्रातरंत्ति तथ्समिधं यत्प्रातर्मध्यं दिन सायं च तानि सर्वनानि ये अंहोरात्रे ते दंर्शपूर्णमासौ येंऽर्धमासाश्च मासाँश्च ते चांतुर्मास्यानि य ऋतवस्ते पंशुबन्धा ये संवथ्सराश्चं परिवथ्सराश्च तेऽहंर्गणाः संववेदसं वा एतथ्सत्रं यन्मरंणं तदंवभृषं एतद्वे जरामर्यमग्निहोत्र सत्रं य एवं विद्वानुंदगयंने प्रमीयंते देवानांमेव मंहिमानं गुत्वाऽऽदित्यस्य सायुंज्यं गच्छत्यथ यो दंक्षिणे प्रमीयंते पितृणामेव मंहिमानं गुत्वा चन्द्रमंसः सायुंज्य । सलोकतांमाप्रोत्येतौ वै सूर्याचन्द्रमसोंमिहिमानौ ब्राह्मणो विद्वानभिजंयति तस्माँद्वह्मणों महिमानंमाप्रोति तस्माँद्वह्मणों महिमानंमित्युपनिषत्॥९९॥ [८०<u>]</u>

ॐ। सह नांववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजुस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः

# शान्तिः॥



#### ॥ कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्॥

#### ॥प्रथमः प्रश्नः॥

स्ंज्ञानं विज्ञानं प्रज्ञानं जानदंभिजानत्। सङ्कल्पंमानं प्रकल्पंमानमुपंकल्पंमानमुपंक्कृतं क्रुप्तम्। श्रेयो वसीय आयथसम्भूतं भूतम्। चित्रः केतुः प्रभानाभान्थसम्भान्। ज्योतिष्माङ्क्तेजस्वानातपङ्क्तपंत्रभितपन्। रोचनो रोचमानः शोभनः शोभमानः कल्याणः। दर्शां दृष्टा दर्शता विश्वरूपा सुदर्शना। आप्यायंमाना प्यायंमाना प्यायं सूनृतेरां। आपूर्यमाणा पूर्यमाणा पूर्यन्ती पूर्णा पौर्णमासी। दाता प्रदाताऽऽनन्दो मोदः प्रमोदः॥१॥

आवेशयंत्रिवेशयंन्थ्संवेशनः स॰शांन्तः शान्तः। आभवेन्प्रभवंन्थ्सम्भवन्थ्सम्भूतो भूतः। प्रस्तुंतं विष्टुंत्रः सङ्स्तुंतं कृत्याणं विश्वरूपम्। शुक्रम्मृतं तेज्ञस्वि तेजः समिद्धम्। अरुणं भानुमन्मरीचिमदभितपृत्तपंस्वत्। स्विता प्रंसविता दीप्तो दीपयन्दीप्यंमानः। ज्वलंञ्चलिता तपंन्वितपंन्थ्यन्तपन्। रोचनो रोचमानः शुम्भूः शुम्भंमानो वामः। सुता सुन्वती प्रसुता सूयमानाऽभिषूयमाणा। पीतीं प्रपा सम्पा तृप्तिंस्तर्पयंन्ती॥२॥

कान्ता काम्या कामजाताऽऽयुंष्मती कामृदुघाँ। अभिशास्ताऽनुंमन्ताऽऽनन्दो मोदः प्रमोदः। आसादयंत्रिषा-दयंन्थ्सु सादंनः सश्संत्रः सन्नः। आभूर्विभूः प्रभूः शम्भूर्भुवंः। पुवित्रं पवियुष्यन्पूतो मेध्यंः। यशो यशंस्वानायुर्मृतंः। जीवो जीविष्यन्थ्स्वर्गो लोकः। सहंस्वान्थ्सहीयानोजंस्वान्थ्सहंमानः। जयेन्नभिजयंन्थ्सु-द्रविणो द्रविणोदाः। आर्द्रपंवित्रो हरिकेशो मोर्दः प्रमोदः॥३॥ अरुणों ऽरुणरंजाः पुण्डरींको विश्वजिदंभिजित्। आर्द्रः पिन्वमानोऽन्नंवात्रसंवानिरावान्। सर्वोष्धः संम्भुरो महंस्वान्। एजत्का जोवत्काः। क्षुष्ठकाः शिपिविष्टकाः। सरिस्रराः सुशेरंवः। अजिरासों गमिष्णवंः। इदानीं तदानींमेतर्हिं क्षिप्रमंजिरम्। आशुर्निंमेषः फणो द्रवंन्नतिद्रवन्। त्वरङ्स्त्वरंमाण आशुराशीयाञ्जवः। अग्निष्टोम उक्थ्योऽतिरात्रो द्विरात्रस्त्रिरात्रश्चेतूरात्रः। अग्निर्ऋतुः सूर्य ऋतुश्चन्द्रमां ऋतुः। प्रजापंतिः संवर्ध्सरो महान्कः॥४॥

भूरिम्नं चं पृथिवीं च मां चं। त्री इश्चं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। भुवों वायुं चान्तिरक्षं च मां चं। त्री इश्चं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। स्वंरािदत्यं च दिवं च मां चं। त्री इश्चं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। भूर्भुवः स्वंश्चन्द्रमंसं च दिशंश्च मां चं। त्री इश्चं लोकान्थ्संवथ्सरं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। भूर्भुवः स्वंश्चन्द्रमंसं च दिशंश्च मां चं। त्री इश्चं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां

# देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥५॥

[२]

त्वमेव त्वां वैत्थ योऽसि सोऽसिं। त्वमेव त्वामंचैषीः। चितश्चासि सिश्चंतश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। यते अग्ने न्यूनं यदु तेऽतिरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गिरस-श्चिन्वन्तु। विश्वं ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चंतश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। मा ते अग्ने च येन माऽति च येनाऽऽयुरावृंक्षि। सर्वेषां ज्योतिषां ज्योतिर्यद्दावुदेति। तपंसो जातमिनभृष्टमोर्जः। तत्ते ज्योतिरिष्टके। तेनं मे तप। तेनं मे ज्वल। तेनं मे दीदिहि। यावदेवाः। यावदसांति सूर्यः। यावदुतापि ब्रह्मं॥६॥

संवथ्सरोऽसि परिवथ्सरोऽसि। इदावथ्सरोऽसीदुवथ्सरो-ऽसि। इद्वथ्सरोऽसि वथ्सरोऽसि। तस्य ते वस्नतः शिरेः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। शुरदुत्तरः पृक्षः। हेम्नतो मध्यम्। पूर्वपक्षाश्चित्तयः। अपरपक्षाः पुरीषम्॥७॥

अहोरात्राणीष्टंकाः। ऋष्भोऽसि स्वर्गो लोकः। यस्यां दिशि महीयंसे। ततो नो मह् आवंह। वायुर्भूत्वा सर्वा दिश् आवंहि। सर्वा दिशोऽनुविवांहि। सर्वा दिशोऽनुसंवांहि। चित्त्या चितिमापृंण। अचित्त्या चितिमापृंण। चिदंसि समुद्रयोनिः॥८॥

इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावाँ। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुर्ण्युः।
महान्थ्स्थस्थँ ध्रुव आनिषंत्तः। नमंस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः।
एति प्रेति वीति समित्युदितिं। दिवं मे यच्छ। अन्तरिक्षं मे
यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। अन्तरिक्षं मे
यच्छ। दिवं मे यच्छ। अह्य प्रसारय। रात्र्या समेच। रात्र्या
प्रसारय। अह्य समेच। काम् प्रसारय। काम्॰ समेच॥९॥
[४]

भूर्भुवः स्वंः। ओजो बलम्ं। ब्रह्मं क्ष्रत्रम्। यशो महत्। सत्यं तपो नामं। रूपममृतम्ं। चक्षुः श्रोत्रम्ं। मन् आयुंः। विश्वं यशो महः। समं तपो हरो भाः। जातवेदा यदि वा पावकोऽसिं। वैश्वानरो यदि वा वैद्युतोऽसिं। शं प्रजाभ्यो यजमानाय लोकम्। ऊर्जं पृष्टिं ददंदभ्यावंवृथ्स्व॥१०॥

राज्ञीं विराज्ञीं। सम्माज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निरिन्द्रो बृह्स्पतिः। विश्वें देवा भुवनस्य गोपाः। ते मा सर्वे यशंसा स॰सृंजन्तु॥११॥

\_[٤]\_

असंवे स्वाहा वसंवे स्वाहाँ। विभुंवे स्वाहा विवंस्वते स्वाहाँ। अभिभुवे स्वाहाऽधिपतये स्वाहाँ। दिवां पत्ये स्वाहाऽईहस्पत्याय स्वाहाँ। चाक्षुष्मत्याय स्वाहाँ। ज्योतिष्मत्याय स्वाहाँ। राज्ञे स्वाहां विराज्ञे स्वाहाँ। सम्राज्ञे स्वाहाँ स्वराज्ञे स्वाहाँ। सूर्याय

स्वाहाँ। चुन्द्रमंसे स्वाहा ज्योतिषे स्वाहाँ। स्र्सर्पाय स्वाहां कुल्याणाय स्वाहाँ। अर्जुनाय स्वाहाँ॥१२॥

विपश्चिते पर्वमानाय गायत। मृही न धाराऽत्यन्थीं अर्षित। अहिंर्ह जीणीमितिंसपिति त्वचम्। अत्यो न क्रीडंन्नसरृद्धृषा हिरः। उपयामगृंहीतोऽसि मृत्यवे त्वा जुष्टं गृह्णामि। एष ते योनिंमृत्यवे त्वा। अपमृत्युमपृक्षुधम्। अपेतः शपथं जिह। अधा नो अग्र आवंह। रायस्पोष सहस्रिणम्॥१३॥

ये ते सहस्रम्युतं पाशाः। मृत्यो मर्त्यायं हन्तेवे। तान् यज्ञस्यं माययाः। सर्वानवयजामहे। भृक्षोःऽस्यमृतभृक्षः। तस्यं ते मृत्युपीतस्यामृतंवतः। स्वगाकृतस्य मधुंमतः। उपहूत्स्योपहूतो भक्षयामि। मृन्द्राऽभिभूतिः कृतुर्यज्ञानां वाक्। असावेहिं॥१४॥

अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बिधिर आंक्रन्दयितरपान। असावेहिं। अहुस्तोस्त्वा चक्षुः। असावेहिं। अपादाशो मनः। असावेहिं। कवे विप्रंचित्ते श्रोत्रं। असावेहिं॥१५॥

सुह्स्तः सुंवासाः। शूषो नामाँस्यमृतो मर्त्येषु। तं त्वाऽहं तथा वेदं। असावेहिं। अग्निर्मे वाचि श्रितः। वाग्धदंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। वायुर्में प्राणे श्रितः॥१६॥ प्राणो हदये। हदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। सूर्यो मे चक्षंषि श्रितः। चक्षुर्हदये। हदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। चुन्द्रमां मे मनंसि श्रितः॥१७॥

मनो हदंये। हदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। दिशों मे श्रोत्रें श्रिताः। श्रोत्र्र् हदंये। हदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। आपों मे रेतिस श्रिताः॥१८॥

रेतो हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पृथिवी मे शरीरे श्रिता। शरीर्॰ हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। ओष्धिवनस्पतयों मे लोमंसु श्रिताः॥१९॥

लोमांनि हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। इन्द्रों मे बलें श्रितः। बल् १ हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पूर्जन्यों मे मूर्प्नि श्रितः॥२०॥

मूर्धा हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृते। अमृतं ब्रह्मणि। ईशानो मे मृन्यौ श्रितः। मृन्युर्ह्दये। हृदयं मिये। अहम्मृते। अमृतं ब्रह्मणि। आत्मा मे आत्मिनि श्रितः॥२१॥

आत्मा हृदंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पुनर्म आत्मा पुनरायुरागांत्। पुनंः प्राणः पुनराकृतमागांत्। वैश्वानरो रिष्मिभिवविधानः। अन्तस्तिष्ठत्वमृतंस्य गोपाः॥२२॥

[८]

प्रजापंतिर्देवानंसृजत। ते पाप्मना सन्दिता अजायन्त।

तान्व्यंद्यत्। यद्यद्यत्। तस्माँद्विद्युत्। तमंवृश्चत्। यदवृंश्चत्। तस्माद्वृष्टिंः। तस्माद्यत्रैते देवते अभिप्राप्नुंतः। वि चं हैवास्य तत्रं पाप्मानं द्यतः॥२३॥

वृश्चतंश्च। सैषा मींमा साऽग्निंहोत्र एव संम्पन्ना। अथों आहुः। सर्वेषु यज्ञकृतुष्वितिं। होष्यंत्रप उपंस्पृशेत्। विद्युंदिस् विद्यं मे पाप्मान्मितिं। अथं हुत्वोपंस्पृशेत्। वृष्टिंरिस् वृश्चं मे पाप्मान्मितिं। यक्ष्यमांणो वेष्ट्वा वां। वि चं हैवास्यैते देवतें पाप्मानं द्यतः॥२४॥

वृश्चतंश्च। अत्युर्हो हाऽऽर्रुणिः। ब्रह्मचारिणे प्रश्नान्प्रोच्यु प्रजिघाय। परेहि। प्रक्षं दय्यांम्पातिं पृच्छ। वेत्थं सावित्रा(३)न्न वेत्था(३) इतिं। तमागत्यं पप्रच्छ। आचार्यो मा प्राहैषीत्। वेत्थं सावित्रा(३)न्न वेत्था(३) इतिं। स होवाच वेदेतिं॥२५॥

स कस्मिन्प्रतिष्ठित इति। प्रोरंज्सीति। कस्तद्यत्परोरंजा इति। एष वाव स प्रोरंजा इति होवाच। य एष तपंति। एषौंऽर्वाग्रंजा इति। स कस्मिन्त्वेष इति। सत्य इति। किं तथ्सत्यमिति। तप इति॥२६॥

कस्मिन्नु तप् इति। बलु इति। किं तद्वल्मिति। प्राण इति। मा स्मं प्राणमितिपृच्छु इति माऽऽचार्यौऽब्रवीदिति होवाच ब्रह्मचारी। स होवाच प्रुक्षो दय्याँम्पातिः। यद्वै ब्रह्मचारिन्प्राणमत्यंप्रक्ष्यः। मूर्धा ते व्यपंतिष्यत्। अहमुंत आचार्याच्छ्रेयाँ-भविष्यामि। यो मां सावित्रे समवांदिष्टेतिं॥२७॥

तस्माँथ्सावित्रे न संवंदेत। स यो हु वै सांवित्रं विदुषां सावित्रे संवदंते। सहाँस्मिञ्छियं दधाति। अनुं हु वा अस्मा असौ तप्ञ्छियं मन्यते। अन्वंस्मै श्रीस्तपों मन्यते। अन्वंस्मै तपो बलं मन्यते। अन्वंस्मै वलं प्राणं मन्यते। स यदाहं। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेतिं। एष एव तत्॥२८॥

अथ यदाहै। प्रस्तुंतं विष्टुंत स्मृता सुन्वतीति। एष एव तत्। एष ह्यंव तान्यहानि। एष रात्रयः। अथ यदाहै। चित्रः केतुर्दाता प्रदाता संविता प्रसिवताऽभिशास्ताऽनुंमन्तेति। एष एव तत्। एष ह्यंव तेऽह्यं मुहूर्ताः। एष रात्रैः॥२९॥

अथ यदाहं। प्वित्रं पवियष्यन्थ्सहंस्वान्थ्सहीयानरुणीं-ऽरुणरंजा इति। एष एव तत्। एष ह्यंव तेंंऽर्धमासाः। एष मासाः। अथ यदाहं। अग्निष्टोम उक्थ्योंऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवथ्सर इति। एष एव तत्। एष ह्यंव ते यज्ञकृतवंः। एष ऋतवंः॥३०॥

पुष संवथ्सरः। अथ यदाहं। इदानीं तदानीमितिं। एष एव तत्। एष ह्येव ते मुंहूर्तानां मुहूर्ताः। जनको ह वैदेहः। अहोरात्रेः समाजंगाम। त॰ होचुः। यो वा अस्मान् वेदं। विजहत्याप्मानंमेति॥३१॥ सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं जयिति। नास्यामुष्मिं छोके-ऽन्नं क्षीयत् इति। विजहंद्ध वै पाप्मानंमेति। सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं जयिति। नास्यामुष्मिं छोकेऽन्नं क्षीयते। य एवं वेदं। अहीना हाऽऽश्वंथ्यः। सावित्रं विदां चंकार॥३२॥

स हं हुर्सो हिंरुण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकिमियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। हुर्सो हु वै हिंरुण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेदं। देवभागो हं श्रौतर्षः। सावित्रं विदां चंकार। तर हु वागदृंश्यमानाऽभ्युंवाच॥३३॥

सर्वं बत गौतमो वेदं। यः सांवित्रं वेदेतिं। स होवाच। कैषा वागुसीतिं। अयमहरू सांवित्रः। देवानांमृत्तमो लोकः। गुह्यं महो बिभ्रदितिं। एतावंति ह गौतमः। यज्ञोपवीतं कृत्वाऽधो निपंपात। नमो नम् इतिं॥३४॥

स होवाच। मा भैषीर्गीतम। जितो वै ते लोक इति। तस्माद्ये के चे सावित्रं विदुः। सर्वे ते जितलोकाः। स यो हु वै सावित्रस्याष्टाक्षरं पुदक्ष श्रियाऽभिषिक्तं वेदं। श्रिया हैवाभिषिच्यते। घृणिरिति द्वे अक्षरें। सूर्य इति त्रीणि। आदित्य इति त्रीणि॥३५॥

पुतद्वै सांवित्रस्याष्टाक्षेरं पुदः श्रियाऽभिषिक्तम्। य पुवं वेदं। श्रिया हैवाभिषिच्यते। तदेतदृचाऽभ्यंक्तम्। ऋचो अक्षरे पर्मे व्योमन्। यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदः। यस्तं न वेद् किमृचा केरिष्यति। य इत्तद्विद्स्त इमे समांसत् इतिं। न ह वा एतस्यूर्चा न यजुंषा न साम्राऽर्थोंऽस्ति। यः सांवित्रं वेदं॥३६॥

तदेतत्पंरि यद्देवच्क्रम्। आर्द्रं पिन्वंमानः स्वर्गे लोक एंति। विजहिद्धश्वां भूतानिं सम्पश्यंत्। आर्द्रो ह वै पिन्वंमानः स्वर्गे लोक एंति। विजहिन्वश्वां भूतानिं सम्पश्यन्। य एवं वेदं। शूषो ह वै वाँष्णेयः। आदित्येनं समाजंगाम। तः होवाच। एहिं सावित्रं विद्धि। अयं वै स्वर्ग्योऽग्निः पारियष्णुरमृताथ्सम्भूत इतिं। एष वाव स सांवित्रः। य एष तपंति। एहि मां विद्धि। इतिं हैवेनं तदुंवाच॥३७॥

ड्यं वाव स्रघाँ। तस्यां अग्निरेव सांर्घं मधुं। या एताः पूर्वपक्षापरपक्षयो रात्रयः। ता मधुकृतंः। यान्यहांनि। ते मधुवृषाः। स यो ह वा एता मधुकृतंश्च मधुवृषा इश्च वेदं। कुर्वन्तिं हास्यैता अग्नौ मधुं। नास्येष्टापूर्तं धंयन्ति। अथ् यो न वेदं॥३८॥

न हाँ स्यैता अग्नौ मधुं कुर्वन्ति। धयंन्त्यस्येष्टापूर्तम्। यो ह् वा अंहोरात्राणां नामधेयांनि वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेतिं। एतावंनुवाकौ पूर्वपक्षस्यां-होरात्राणां नामधेयांनि। प्रस्तुंतं विष्टुंत सुता सुन्वतीतिं। एतावंनुवाकावंपरपक्षस्यांहोरात्राणां नाम्-धेयांनि। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं॥३९॥

यो हु वै मुंहूर्तानां नाम्धेयांनि वदं। न मुंहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। चित्रः केतुर्दाता प्रंदाता संविता प्रंसिवताऽभिंशास्ताऽनुं-मन्तेतिं। एतंऽनुवाका मुंहूर्तानां नाम्धेयांनि। न मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं। यो हु वा अर्धमासानां च मासानां च नाम्धेयांनि वेदं। नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छंति। प्रवित्रं पवियष्यन्थ्सहं-स्वान्थ्सहीयानरूणोऽरूणरंजा इतिं। एतंऽनुवाका अर्धमासानां च मासानां च नाम्धेयांनि॥४०॥

नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो ह वै यंज्ञकतूनां चंतूनां चं संवथ्सरस्यं च नामधेयांनि वेदं। न यंज्ञकृतुषु नर्तुषु न संवथ्सर आर्तिमार्च्छति। अग्निष्टोम उक्थ्यौऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवथ्सर इति। एतेऽनुवाका यंज्ञकतूनां चंतूनां चं संवथ्सरस्यं च नामधेयांनि॥४१॥

न यंज्ञऋतुषु नर्तुषु न संवथ्सर आर्तिमार्च्छिति। य एवं वेदं। यो हु वै मृंहूर्तानां मृहूर्तान् वेदं। न मृंहूर्तानां मृहूर्तेष्वार्तिमार्च्छिति। इदानीं तदानीमितिं। एते वै मुंहूर्तानां मुहूर्ताः। न मुंहूर्तानां मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं। अथो यथां क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुंप्रविश्यान्नमित्तं। एवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुंप्रविश्यान्नमित्त। स एतेषांमेव संलोकता सायुंज्यमश्रुते। अपं पुनर्मृत्युं जयित। य एवं वेदं॥४२॥

[१०]

कश्चिंद्ध वा अस्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयमहम्स्मीतिं। कश्चिथ्स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अग्निम्ंग्धो हैव धूमतान्तः। स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अथ् यो हैवैतमृग्निः सांवित्रं वेदं। स एवास्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयमहमस्मीतिं॥४३॥

स स्वं लोकं प्रतिप्रजांनाति। एष उं वेवैनं तथ्सांवित्रः। स्वर्गं लोकम्भिवंहति। अहोरात्रैर्वा इदः स्युग्भिः क्रियते। इतिरात्रायांदीक्षिषत। इतिरात्रायं व्रतमुपांगुरिति। तानिहानेवं विदुषंः। अमुष्मिं लोके शेव्धिं धंयन्ति। धीतः हैव स शेव्धिमनु परैति। अथु यो हैवैत्मग्निः सांवित्रं वेदं॥४४॥

तस्यं हैवाहोंरात्राणि। अमुष्मिं छोके शेवधिं न धंयन्ति। अधीतः हैव स शेवधिमनु परैति। भरद्वांजो ह त्रिभिरायुंभिं ब्रह्मचर्यमुवास। तः हु जीणिं क्ष् स्थविंर्ः शयांनम्। इन्द्रं उपव्रज्योवाच। भरद्वाज। यत्ते

चतुर्थमायुंर्द्द्याम्। किमेनेन कुर्या इति। ब्रह्मचर्यमेवैनेन चरेयमिति होवाच॥४५॥

त १ ह् त्रीन्गिरिरूपानविज्ञातानिव दर्श्यां चेकार। तेषा १ है कैंकस्मान्मुष्टिनाऽऽदंदे। स होंवाच। भरंद्वाजेत्यामन्त्र्यं। वेदा वा एते। अनुन्ता वै वेदाः। एतद्वा एतेस्त्रिभिरायुर्भिरन्वं-वोचथाः। अर्थ त इतंर्दनंनूक्तमेव। एहीमं विद्धि। अयं वै संविवद्येति॥४६॥

तस्मै हैतम्ग्निश्स सांवित्रमुंवाच। तश्स विदित्वा। अमृतों भूत्वा। स्वर्गं लोकिमियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। अमृतों हैव भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेदे। एषो एव त्रयी विद्या॥४७॥

यावंन्तर हु वै त्रय्या विद्ययां लोकं जंयित। तावंन्तं लोकं जंयित। य एवं वेदं। अग्नेर्वा एतानि नामधेयांनि। अग्नेरेव सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। वायोर्वा एतानि नामधेयांनि। वायोरेव सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वा एतानि नामधेयांनि॥४८॥

इन्द्रंस्यैव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। बृह्स्पतेवा एतानि नामधेयांनि। बृह्स्पतेंरेव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। प्रजापंतेवा एतानि नाम-धेयांनि। प्रजापंतेरेव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। ब्रह्मणो वा एतानि नामधेयांनि। ब्रह्मण एव सायुंज्य स सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। स वा एषौंऽग्निरंपक्षपुच्छो वायुरेव। तस्याग्निर्मुखम्। असावांदित्यः शिरंः। स यदेते देवते अन्तरेण। तथ्सर्वर् सीव्यति। तस्मांथ्सावित्रः॥४९॥ ————[११]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके प्रथमः प्रश्नः समाप्तः॥१॥

#### ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

लोकोंऽसि स्वर्गोंऽसि। अनुन्तौंऽस्यपारोंऽसि। अक्षितो-ऽस्यक्ष्य्योंऽसि। तपंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१॥

तपोंऽसि लोके श्रितम्। तेजंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनयित्। तत्त्वोपंदधे काम्दुघ्मक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥२॥

तेजोऽसि तपंसि श्रितम्। समुद्रस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सभूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनियृत्। तत्त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥३॥

स्मुद्रोऽस् तेजंसि श्रितः। अपां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्म्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥४॥

आपंः स्थ समुद्रे श्रिताः। पृथिव्याः प्रतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूर्त्यों विश्वंस्य जनियुत्र्यः। ता व उपंदधे काम्दुघा अक्षिंताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५॥

पृथिव्यंस्यपस् श्रिता। अग्नेः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनियत्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥६॥

अग्निरंसि पृथिव्याः श्रितः। अन्तरिक्षस्य प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥७॥

अन्तरिक्षमस्यग्नौ श्रितम्। वायोः प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनयितः। तत्त्वोपंदधे कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतः। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥८॥

वायुरंस्यन्तिरंक्षे श्रितः। दिवः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥९॥

द्यौरंसि वायौ श्रिता। आदित्यस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१०॥

आदित्योऽसि दिवि श्रितः। चन्द्रमंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥११॥

चन्द्रमां अस्यादित्ये श्रितः। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१२॥

नक्षंत्राणि स्थ चन्द्रमंसि श्रितानि। संवथ्सरस्यं प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भृतृणि विश्वंस्य जनियृतृणिं। तानिं व उपंदधे काम्दुघान्यक्षितानि। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१३॥

संवथ्सरोऽसि नक्षंत्रेषु श्रितः। ऋतूनां प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१४॥

ऋतवंः स्थ संवथ्सरे श्रिताः। मासानां प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनयितारः। तान् व उपंदधे काम्दुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥१५॥

मासौः स्थतंषुं श्रिताः। अर्धमासानौं प्रतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सुभूतम्। विश्वस्य भूतारो विश्वंस्य जनयितारः। तान् व उपंदधे काम्दुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१६॥ अर्धमासाः स्थं मासु श्रिताः। अहोरात्रयोः प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनयितारः। तान् व उपंदधे कामृदुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१७॥

अहोरात्रे स्थौंऽर्धमासेषुं श्रिते। भूतस्यं प्रतिष्ठे भव्यंस्य प्रतिष्ठे। युवयोरिदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूर्यो विश्वंस्य जनिय्र्यौ। ते वामुपंदधे काम्दुधे अक्षिते। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१८॥

पौर्णमास्यष्टंकाऽमावास्यां। अन्नादाः स्थांन्नद्घो युष्मास्। इदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूर्त्यो विश्वंस्य जनिय्त्रयः। ता व उपंदधे कामदुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१९॥

राडंसि बृह्ती श्रीर्सीन्द्रंपत्नी धर्मपत्नी। विश्वं भूतमनुप्रभूता। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥२०॥ ओजोंऽसि सहोंऽसि। बलंमसि भ्राजोंऽसि। देवानां धामामृतम्। अमर्त्यस्तपोजाः। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरस्वद्भवा सींद॥२१॥

[8]

त्वमंग्ने रुद्रो असुंरो महो दिवः। त्वः शर्धो मार्रतं पृक्ष ईशिषे। त्वं वातैंररुणैर्यांसि शङ्ग्यः। त्वं पूषा विंधतः पांसि न त्मनां। देवां देवेषुं श्रयध्वम्। प्रथंमा द्वितीयेषु श्रयध्वम्। द्वितीयास्तृतीयेषु श्रयध्वम्। तृतीयाश्चतुर्थेषुं श्रयध्वम्। चृतुर्थाः पंश्चमेषुं श्रयध्वम्। पृश्चमाः षृष्ठेषुं श्रयध्वम्॥२२॥

षष्ठाः संप्तमेषुं श्रयध्वम्। सप्तमा अष्टमेषुं श्रयध्वम्। अष्टमा नंवमेषुं श्रयध्वम्। नवमा दंशमेषुं श्रयध्वम्। दशमा एंकादशेषुं श्रयध्वम्। एकादशा द्वांदशेषुं श्रयध्वम्। द्वादशास्त्रयोदशेषुं श्रयध्वम्। त्रयोदशाश्चंतुर्दशेषुं श्रयध्वम्। चतुर्दशाः पंश्रदशेषुं श्रयध्वम्। पश्चदशाः षोंडशेषुं श्रयध्वम्॥२३॥

षोड्शाः संप्तद्शेषुं श्रयध्वम्। स्प्तद्शा अंष्टाद्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाद्शा एंकान्नविश्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नविश्शा विश्शेषुं श्रयध्वम्। विश्शा एंकविश्शेषुं श्रयध्वम्। एकविश्शा द्वांविश्शेषुं श्रयध्वम्। द्वाविश्शास्त्रंयोविश्शेषु श्रयध्वम्। त्रयोविश्शाश्चंतुर्विश्शेषुं श्रयध्वम्। चतुर्विश्शाः पंञ्जविर्शेषुं श्रयध्वम्। पृञ्जविर्शाः षंड्विर्शेषुं श्रयध्वम्॥२४॥

षृद्धिर्शाः संप्तिविर्शेषुं श्रयध्वम्। स्प्तिविर्शा अष्टाविर्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाविर्शा एंकान्नित्रिर्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नित्रिर्शास्त्रिर्शेषुं श्रयध्वम्। त्रिर्शा एंकित्रिर्शेषुं श्रयध्वम्। एकित्रिर्शा द्वात्रिर्शेषुं श्रयध्वम्। द्वात्रिर्शास्त्रयस्त्रिर्शेषुं श्रयध्वम्। देवास्त्रिरेकादशास्त्रिस्त्रंय-स्त्रिरशाः। उत्तरे भवत। उत्तरवर्त्मान् उत्तरसत्त्वानः। यत्कांम इदं जुहोमिं। तन्मे समृध्यताम्। वयङ् स्यांम् पतंयो रयीणाम्। भूर्भवः स्वः स्वाहा॥२५॥

-[२]

अग्नांविष्णू स्जोषंसा। इमा वर्धन्तु वां गिरंः। सुम्नेर्वाजेंभिरागंतम्। राज्ञीं विराज्ञीं। सम्माज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निः सोमो बृह्स्पतिः। विश्वें देवा भुवंनस्य गोपाः। ते सर्वे सङ्गत्यं। इदं मे प्रावंता वर्चः। वयः स्यांम् पत्यो रयीणाम्। भूर्भवः स्वंः स्वाहां॥२६॥

अन्नप्तेऽन्नंस्य नो देहि। अनुमीवस्यं शुष्मिणः। प्र प्रंदातारं तारिषः। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अग्ने पृथिवीपते। सोमं वीरुधां पते। त्वष्टंः समिधां पते। विष्णंवाशानां पते। मित्रं सत्यानां पते। वरुण धर्मणां पते॥२७॥

मुरुतो गणानां पतयः। रुद्रं पशूनां पते। इन्द्रौंजसां पते। बृहंस्पते ब्रह्मणस्पते। आ रुचा रोचेऽह इस्वयम्। रुचा

रुंरुचे रोचंमानः। अतीत्यादः स्वंराभंरेह। तस्मिन् योनौँ प्रजनौ प्रजांयेय। वयः स्यांम् पतंयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वंः स्वाहां॥२८॥

[8]

सप्त ते अग्ने स्मिधंः स्पप्त जिह्वाः। स्प्तर्षयः स्प्त धामं प्रियाणिं। सप्त होत्रां अनुविद्वान्। स्प्त योनीरापृंणस्वा घृतेनं। प्राची दिक्। अग्निर्देवतां। अग्निः स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यै दिशोंऽभिदासंति। दक्षिणा दिक्। इन्द्रों देवतां॥२९॥

इन्द्रभ् स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यैं दिशोंऽभिदासंति। प्रतीची दिक्। सोमों देवतां। सोम्भ स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यैं दिशोंऽभिदासंति। उदींची दिक्। मित्रावर्रुणो देवतां। मित्रावर्रुणो स दिशां देवो देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यैं दिशोंऽभिदासंति॥३०॥

ऊर्ध्वा दिक्। बृह्स्पतिर्देवतां। बृह्स्पति स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्ये दिशों ऽभिदासंति। इयं दिक्। अदितिर्देवतां। अदिति सम दिशां देवीं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यें दिशों ऽभिदासंति। पुरुषो दिक्। पुरुषो मे कामान्थ्समंध्यतु॥ ३१॥

अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बिधिर आंक्रन्दयितरपान। असावेहिं। उषसंमुषसमशीय। अहमसो ज्योतिंरशीय। अहमसोऽपोऽशीय। वयः स्यांम् पतंयो रयीणाम्। भूर्भुवः

#### स्वंः स्वाहां॥३२॥

ى

यत्तेऽचितं यदं चितं ते अग्ने। यत्तं ऊनं यद् तेऽतिरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गिरसिश्चन्वन्तु। विश्वे ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चितश्चास्यग्ने। एतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। लोकं पृण च्छिद्रं पृण। अथो सीद शिवा त्वम्। इन्द्राग्नी त्वा बृहस्पतिः। अस्मिन् योनांवसीषदन्॥३३॥

तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। ता अस्य सूर्ददोहसः। सोमई श्रीणन्ति पृश्नंयः। जन्मं देवानां विशंः। त्रिष्वा रोचने दिवः। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। अग्ने देवाः इहाऽऽवंह। जज्ञानो वृक्तबंर्हिषे। असि होतां न ईड्यंः। अगन्म महा मनसा यविष्ठम्॥३४॥

यो दीदाय सिमंद्ध स्वे दुंरोणे। चित्रभांनू रोदंसी अन्तरुवीं। स्वांहुतं विश्वतः प्रत्यश्चम्। मेधाकारं विदर्थस्य प्रसाधंनम्। अग्निश् होतांरं परिभूतंमं मृतिम्। त्वामर्भस्य हृविषंः समानमित्। त्वां महो वृंणते नरो नान्यं त्वत्। मृनुष्वत्त्वा निधीमहि। मृनुष्वथ्समिधीमहि। अग्ने मनुष्वदंङ्गिरः॥३५॥

देवान्देवायते यंज। अग्निर्हि वाजिनं विशे। ददांति विश्वचंर्षणिः। अग्नी राये स्वाभुवम्। स प्रीतो यांति वार्यम्। इष है स्तोतृभ्य आभंर। पृष्टो दिवि पृष्टो अग्निः पृथिव्याम्। पृष्टो विश्वा ओषंधीराविवेश। वैश्वानुरः सहंसा पृष्टो अग्निः।

# स नो दिवा स रिषः पांतु नक्तम्॥३६॥

દિ

अयं वाव यः पवंते। सौंऽग्निर्नाचिकेतः। स यत्प्राङ् पवंते। तदंस्य शिरंः। अथ् यदंक्षिणा। स दक्षिणः पृक्षः। अथ् यत्प्रत्यक्। तत्पुच्छम्। यदुदङ्ङ्। स उत्तरः पृक्षः॥३७॥

अथ यथ्संवाति। तदेस्य समर्श्वनं च प्रसारेणं च। अथो सम्पदेवास्य सा। स॰ हु वा अस्मै स कार्मः पद्यते। यत्कांमो यज्ञते। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। यो हु वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतेनं प्रतिष्ठां वेदं। आयतेनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्॥३८॥

हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठा। य एवं वेदं। आयतंनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्। यो हृ वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरींरं वेदं। सशंरीर एव स्वर्गं लोकमेंति। हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरींरम्। य एवं वेदं। सशंरीर एव स्वर्गं लोकमेंति। अथो यथां रुका उत्तंप्तो भाय्यात्॥३९॥

पुवमेव स तेर्जसा यशंसा। अस्मिङ्श्चं लोकेंऽमुष्मिईश्च भाति। उरवों हु वै नामैते लोकाः। येऽवरेणाऽऽदित्यम्। अथं हैते वरीयाश्सो लोकाः। ये परेणाऽऽदित्यम्। अन्तंवन्तश् हु वा एष क्ष्रय्यं लोकं जंयति। योऽवरेणाऽऽदित्यम्। अर्थं हैषोंऽनुन्तमंपारमंक्षय्यं लोकं जंयति। यः

### परेणाऽऽदित्यम्॥४०॥

अनुन्त १ हु वा अपारमंक्षय्यं लोकं जंयित। यों ऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदे। अथो यथा रथे तिष्ठन्पक्षंसी पर्यावर्तमाने प्रत्यपेक्षते। पुवमहोरात्रे प्रत्यपेक्षते। नास्यांहोरात्रे लोकमांप्रुतः। यों ऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदे॥४१॥

·[ゅ]

उशन् हु वै वांजश्रव्सः संविवेद्सं दंदौ। तस्यं हु निवेकता नामं पुत्र आंस। त॰ हं कुमार॰ सन्तम्। दक्षिणासु नीयमानासु श्रृद्धाऽऽविवेश। स होवाच। तत् कस्मै मां दांस्यसीति। द्वितीयं तृतीयम्। त॰ हु परीत उवाच। मृत्यवें त्वा ददामीति। त॰ ह स्मोत्थितं वागुभिवंदति॥४२॥

गौतंम कुमारमिति। स होवाच। परेहि मृत्योर्गृहान्। मृत्यवे वे त्वांऽदामिति। तं वे प्रवसंन्तं गुन्तासीति होवाच। तस्यं स्म तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृहे वंसतात्। स यदिं त्वा पृच्छेत्। कुमांर् कित रात्रीरवाथ्सीरिति। तिस्र इति प्रतिंब्रतात्। किं प्रथमा रात्रिमाश्रा इति॥४३॥

प्रजां त इतिं। किं द्वितीयामितिं। पृशू इतिं। किं तृतीयामितिं। साधुकृत्यां त इतिं। तं वै प्रवसन्तं जगाम। तस्यं ह तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृह उंवास। तमागत्यं पप्रच्छ। कुमांर कित रात्रीरवाथ्सीरिति। तिस्र इति प्रत्युंवाच॥४४॥

किं प्रथमा रात्रिमाश्रा इति। प्रजां त इति। किं द्वितीयामिति। प्रशू स्त इति। किं तृतीयामिति। साधुकृत्यां त इति। नमंस्ते अस्त भगव इति होवाच। वरं वृणीष्वेति। पितरमेव जीवन्नयानीति। द्वितीयं वृणीष्वेति॥४५॥

ड्ष्ण्यपूर्तयोर्मेऽक्षिंतिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतम्भिं नांचिकेतम्वाच। ततो वै तस्येष्टापूर्ते ना क्षीयेते। नास्येष्टापूर्ते क्षीयेते। योऽभिं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। तृतीयंं वृणीष्वेतिं। पुनुमृत्योर्मेऽपंचितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतम्भिं नांचिकेतम्वाच। ततो वै सोऽपं पुनमृत्युमंजयत्॥४६॥

अपं पुनर्मृत्युं जंयित। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। प्रजापंतिर्वे प्रजाकांम्स्तपोंऽतप्यत। स हिंरण्यमुदांस्यत्। तद्ग्नौ प्रास्यत्। तदंस्मै नाच्छंदयत्। तद्वितीयं प्रास्यंत्। तदंस्मै नैवाच्छंदयत्। तत्तृतीयं प्रास्यंत्॥४७॥

तदंस्मे नैवाच्छंदयत्। तदात्मन्नेव हंद्य्येंऽग्नो वैश्वान्रे प्रास्यंत्। तदंस्मा अच्छदयत्। तस्माद्धिरंण्यं किनेष्ठं धनानाम्। भुञ्जत्प्रियतंमम्। हृद्युज हि। स व तमेव नाविंन्दत्। यस्मे तां दक्षिणामनेष्यत्। ता इस्वायेव हस्तांयु दक्षिणायानयत्। तां प्रत्यंगृह्णात्॥४८॥

दक्षांय त्वा दक्षिणां प्रतिंगृह्णामीतिं। सोंऽदक्षत् दक्षिणां

प्रतिगृह्यं। दक्षंते हु वै दक्षिणां प्रतिगृह्यं। य एवं वेदं। एतद्धं स्म वै तिद्वद्वारसों वाजश्रवसा गोतंमाः। अप्यंनूदेश्यांं दक्षिणां प्रतिगृह्णन्ति। उभयेन वयं दक्षिष्यामह एव दक्षिणां प्रतिगृह्यते। तेऽदक्षन्त दक्षिणां प्रतिगृह्यं। दक्षंते हु वै दक्षिणां प्रतिगृह्यं। य एवं वेदं। प्र हान्यं द्वीनाति॥४९॥

तक् हैतमेकं पशुबन्ध एवोत्तरवेद्यां चिन्वते। उत्तरवेदिसंम्मित एवोंऽग्निरिति वदंन्तः। तन्न तथां कुर्यात्। एतमृग्निं कामेन व्यर्धयेत्। स एनं कामेन व्यृद्धः। कामेन व्यर्धयेत्। सौम्ये वावैनंमध्वरे चिन्वीत। यत्रं वा भूयिष्ठा आहुंतयो हूयेरन्। एतमृग्निं कामेन समर्धयित। स एनं कामेन समृद्धः॥५०॥

कामेन समर्धयति। अर्थ हैनं पुरर्षयः। उत्तर्वेद्यामेव सित्रयमिचन्वत। ततो वै तेऽविन्दन्त प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकमंजयन्। विन्दतं एव प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकं जंयति। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं वायुर्ऋद्धिंकामः॥५१॥

यथान्युप्तमेवोपंदधे। ततो वै स एतामृद्धिंमार्भ्रोत्। यामिदं वायुर्ऋद्धः। एतामृद्धिंमृभ्रोति। यामिदं वायुर्ऋद्धः। यौऽग्निं नाचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं गोबलो वार्णः पशुकांमः। पाङ्कंमेव चिक्ये। पश्चं पुरस्तौत्॥५२॥ पश्चं दक्षिणतः। पश्चं पृश्चात्। पश्चोंत्तर्तः। एकां मध्यें। ततो वै स सहस्रं पृश्चन्प्राप्नौत्। प्र सहस्रं पृश्चनौप्नोति। यौंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनं प्रजापंति ज्येष्ठ्यंकामो यशंस्कामः प्रजनंनकामः। त्रिवृतंमेव चिक्रो॥५३॥

स्प्त पुरस्तांत्। तिस्रो दंक्षिण्तः। स्प्त पृश्चात्। तिस्र उत्तर्तः। एकां मध्यें। ततो वै स प्र यशो ज्यैष्ठ्यंमाप्नोत्। एतां प्रजातिं प्राजांयत। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। त्रिवृद्वे ज्यैष्ठ्यम्। माता पिता पुत्रः॥५४॥

त्रिवृत्प्रजनंनम्। उपस्थो योनिर्मध्यमा। प्र यशो ज्यैष्ठ्यंमाप्नोति। एतां प्रजांतिं प्रजांयते। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उ चैनमेवं वेदं। अथं हैन्मिन्द्रो ज्यैष्ठ्यंकामः। ऊर्ध्वा एवोपंदधे। ततो वै स ज्यैष्ठ्यंमगच्छत्॥५५॥

ज्येष्ठ्यं गच्छति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनम्सावांदित्यः स्वर्गकांमः। प्राचीरेवोपंदधे। ततो वै सोंऽभि स्वर्गं लोकमंजयत्। अभि स्वर्गं लोकं जयति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। स यदीच्छेत्॥५६॥

तेज्स्वी यंशस्वी ब्रह्मवर्चसी स्यामिति। प्राङाहोतुर्धिष्णया-दुथ्संपेत्। येयं प्रागाद्यशंस्वती। सा मा प्रोणीतु। तेजसा यशंसा ब्रह्मवर्चसेनेति। तेज्रस्येव यंशस्वी ब्रह्मवर्चसी भंवति। अथ यदीच्छेत्। भूयिष्ठं मे श्रद्दंधीरन्। भूयिष्ठा दक्षिणा नयेयुरिति। दक्षिणासु नीयमानासु प्राच्येहि प्राच्येहीति प्राची जुषाणा वेत्वाऽऽज्यंस्य स्वाहेति सुवेणोपहत्यांऽऽहवनीये जुहुयात्॥५७॥

भूयिष्ठमेवास्मै श्रद्दंधते। भूयिष्ठा दक्षिणा नयन्ति। पुरीषमुप्धायं। चितिक्कृप्तिभिर्राभृष्यं। अग्निं प्रणीयोप-समाधायं। चतंस्र एता आहुंतीर्जुहोति। त्वमंग्ने रुद्र इतिं शतरुद्रीयंस्य रूपम्। अग्नांविष्णू इतिं वसोर्धारांयाः। अन्नपत् इत्यंत्रहोमः। सप्त ते अग्ने स्मिधः सप्त जिह्वा इतिं विश्वप्रीः॥५८॥

यां प्रंथमामिष्टंकामुप्दधांति। इमं तयां लोकम्भिजंयति। अथो या अस्मिँ लोके देवताः। तासार् सायुंज्यर सलोकतांमाप्रोति। यां द्वितीयांमुप्दधांति। अन्तिरक्षिलोकं तयाऽभिजंयति। अथो या अन्तिरक्षिलोके देवताः। तासार् सायुंज्यर सलोकतांमाप्रोति। यां तृतीयांमुप्दधांति। अमुं तयां लोकम्भिजंयति॥५९॥

अथो या अमुष्मिं होके देवताः। तासार सायुंज्यर सलोकतां माप्नोति। अथो या अमूरितंरा अष्टादंश। य एवामी उरवंश्च वरीं यारसश्च लोकाः। तानेव ताभिर्भिजंयति॥ कामचारों हु वा अंस्योरुषुं च वरीं यःसु च लोकेषुं भवति। यों ऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। संवृथ्सरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्यं वसन्तः शिरंः॥६०॥

ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षा उत्तरः। श्रारत्पुच्छम्। मासाः कर्मकाराः। अहोरात्रे शंतरुद्रीयम्। पूर्जन्यो वसोर्धारां। यथा व पूर्जन्यः सुवृष्टं वृष्ट्वा। प्रजाभ्यः सर्वान्कामांन्थ्सम्पूरयंति। प्रवमेव स तस्य सर्वान्कामान्थ्सम्पूरयति। यौऽग्निं नाचिकेतं चिनुते॥६१॥

य उं चैनमेवं वेदं। संवथ्सरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्यं वसन्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वृर्षाः पृच्छम्ं। शूरदुत्तंरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्ं। पूर्वपृक्षाश्चितंयः। अपूरपृक्षाः पृरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। एष वाव सौंऽग्निरंग्निमयंः पुनर्णवः। अग्निमयो ह वै पुनर्णवो भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। यौंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तितरीयकाठके द्वितीयः प्रश्नः समाप्तः॥२॥

#### ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

तुभ्यं ता अंङ्गिरस्तमाऽश्याम् तं काममग्ने। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। अनुं नोऽद्यानुंमित्रिरन्विदंनुमते त्वम्। कामो भूतस्य कामस्तदग्रें। ब्रह्मं जज्ञानं पिता विराजांम्। यज्ञो रायोऽयं युज्ञः। आपों भुद्रा आदित्पंश्यामि। तुभ्यं भरन्ति यो देह्यः। पूर्वं देवा अपंरेण प्राणापानौ। हृव्यवाहु इस्वष्टम्॥१॥ ————[१]

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोंऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोंऽभूत्। तमन्विच्छेतिं। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तिमिष्टिंभिरन्वैच्छत्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तिदिष्टींनामिष्टि-त्वम्। एष्टंयो हु वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥२॥

तमाशाँऽब्रवीत्। प्रजांपत आशया वै श्राँम्यसि। अहमु वा आशाँऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते स्त्याऽऽशां भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। आशायै चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं स्त्याऽऽशांऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्या हु वा अस्याऽऽशां भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहाऽऽशाये स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगांयं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥३॥

तं कामौंऽब्रवीत्। प्रजांपते कामेंन् वै श्रांम्यसि। अहमु वै कामौंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सुत्यः कामों भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामाय पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपत्। कामाय चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वे तस्यं सृत्यः कामोऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सृत्यो ह वा अंस्य कामो भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामाय स्वाहा कामाय स्वाहा। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥४॥

तं ब्रह्माँऽब्रवीत्। प्रजांपते ब्रह्मंणा वै श्राँम्यसि। अहमु वै ब्रह्माँऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते ब्रह्मण्वान् यज्ञो भंविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्प्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। ब्रह्मंणे चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं ब्रह्मण्वान् यज्ञोंऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। ब्रह्मण्वान् हु वा अस्य यज्ञो भंवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यज्ते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहा ब्रह्मणे स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगांयं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥५॥

तं युज्ञों'ऽब्रवीत्। प्रजांपते युज्ञेन वै श्रांम्यसि। अहमु वै युज्ञों'ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यो युज्ञो भंविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। युज्ञायं चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यो युज्ञोऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सृत्यो हु वा अस्य युज्ञो भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दिति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहां युज्ञाय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयं स्विष्टकृते स्वाहेति॥६॥

तमापों ऽब्रुवन्। प्रजांपते ऽफ्सु वै सर्वे कामाः श्रिताः। वयमु वा आपः स्मः। अस्मान्नु यंजस्व। अथ् त्विय् सर्वे कामाः श्रियिष्यन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं वेथस्यसीति। स एतम् ग्रये कामांय पुरोडाशं मृष्टाकंपालं निरंवपत्। अन्धश्रुरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वै तस्मिन्थ्सर्वे कामां अश्रयन्त। अनुं स्वर्गं लोकमं विन्दत्। सर्वे हु वा अस्मिन्कामाः श्रयन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहा ऽज्यः स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहा ऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥ ७॥

तम्ग्निर्बिल्मानंब्रवीत्। प्रजांपतेऽग्नये वै बंलिमते सर्वाणि भूतानि बुलि॰ हंरन्ति। अहमु वा अग्निर्बिल्मानंस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सर्वाणि भूतानि बुलि॰ हंरिष्यन्ति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपत्। अग्नयें बिल्मतें चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वे तस्मै सर्वाणि भूतानिं बिलिमंहरन्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सर्वाणि हु वा अस्मै भूतानिं बिलिश् हंरन्ति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दित। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नयें कामांय स्वाहाऽग्नयें बिल्मते स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥८॥

तमनुंवित्तिरब्रवीत्। प्रजांपते स्वर्गं वै लोकमनुंविविध्सिस्। अहमु वा अनुंवित्तिरस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते स्त्याऽनुंवित्तिर्भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेध्स्यसीति। स एतम् ग्रये कामांय पुरोडाशंम् ष्टाकंपालं निरंवपत्। अनुंवित्त्ये चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वे तस्य सत्याऽनुंवित्तिरभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या हु वा अस्यानुंवित्तिर्भवति। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहाऽनुंवित्त्ये स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रये स्विष्टकृते स्वाहेति॥९॥

ता वा एताः सप्त स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। दिवःश्येनयोऽनुंवित्तयो नामं। आशाँ प्रथमाः रक्षिति। कामों द्वितीयांम्। ब्रह्मं तृतीयांम्। यज्ञश्चंतुर्थीम्। आपंः पश्चमीम्। अग्निर्बिल्मान्थ्यष्ठीम्। अनुंवित्तिः सप्तमीम्। अनुं हु वै स्वर्गं लोकं विन्दिति। कामचारोंऽस्य स्वर्गे लोकं भवति। य एताभिरिष्टिभिर्यजंते। य उं चैना एवं वेदे। तास्वंन्विष्टि। पृष्ठौही्व्रां दद्यात्कुर्सं चं। स्नियै चाऽऽभारर समृद्धौ॥१०॥

२

तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्। तप्सर्षयः स्वंरन्वंविन्दन्। तपंसा सपत्नान्प्रणुंदामारांतीः। येनेदं विश्वं परिभूतं यदस्ति। प्रथमजं देव १ ह्विषां विधेम। स्वयम्भु ब्रह्मं पर्मं तपो यत्। स एव पुत्रः स पिता स माता। तपो ह यक्षं प्रथम १ सम्बंभूव। श्रद्धया देवो देवत्वमंश्रुते। श्रद्धा प्रतिष्ठा लोकस्यं देवी॥११॥

सा नों जुषाणोपं यज्ञमागाँत्। कामंवथ्साऽमृतं दुहांना। श्रृद्धा देवी प्रथम्जा ऋतस्यं। विश्वंस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। ता श्रृद्धा श्रृह्वा स्हृविषां यजामहे। सा नों लोकम्मृतं दधातु। ईशांना देवी भुवंनस्याधिपत्नी। आगाँथ्सत्य हिविर्दं जुषाणम्। यस्माँदेवा जंजिरे भुवंनं च विश्वें। तस्मै विधेम हिवषां घृतेनं॥१२॥

यथां देवैः संधमादंं मदेम। यस्यं प्रतिष्ठोर्वन्तिरिक्षम्। यस्मादिवा जंजिरे भुवंनं च सर्वें। तथ्सत्यमर्चदुपं युज्ञं न् आगाँत्। ब्रह्माऽऽहृंती्रुप्मोदंमानम्। मनंसो वशे सर्विमिदं बंभूव। नान्यस्य मनो वश्मनिवंयाय। भीष्मो हि देवः सहंसुः सहीयान्। स नो जुषाण उपं युज्ञमागाँत्। आकूतीनामधिपतिं चेतंसां च॥१३॥

सङ्कल्पर्जूतिं देवं विपश्चिम्। मनो राजानिम्ह वर्धयन्तः। उपहुवेंऽस्य सुमृतौ स्याम। चरणं प्वित्रं वितंतं पुराणम्। येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं प्वित्रंण शुद्धेनं पूताः। अति पाप्मान्मरातिं तरेम। लोकस्य द्वारंमर्चिमत्पवित्रम्। ज्योतिष्मद्भाजमानं महंस्वत्। अमृतंस्य धारां बहुधा दोहंमानम्। चरणं नो लोके सुधितां दधातु। अग्निर्मूर्धा भुवंः। अनुं नोऽद्यानुंमति्रन्विदंनुमते त्वम्। हृव्यवाह्र्ड् स्विष्टम्॥१४॥

[3]

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोंऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोंऽभूत्। तमन्विच्छेतिं। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तिमष्टिभिरन्वैच्छत्। तिमष्टिभिरन्वंविन्दत्। तिदिष्टींनामिष्टित्वम्। एष्टंयो ह् वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव् हि देवाः॥१५॥

तं तपौँ ऽब्रवीत्। प्रजांपते तपंसा वै श्राम्यिस। अहमु वै तपौँ ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्यं तपों भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। तपंसे चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यं तपोंऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सृत्य ह वा अस्य तपों भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा तपंसे स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१६॥

तः श्रुद्धाऽब्रंबीत्। प्रजांपते श्रुद्धया वै श्रांम्यसि। अहमु वै श्रुद्धाऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्या श्रुद्धा भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमांग्रेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। श्रुद्धायें चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्या श्रुद्धाऽभंवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सृत्या हु वा अंस्य श्रुद्धा भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहां श्रुद्धाये स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥१७॥

तः स्त्यमंब्रवीत्। प्रजापते स्त्येन् वै श्राम्यसि। अहमु वै स्त्यमंस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते स्त्यः स्त्यं भंविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स् एतमांग्नेयमृष्टाकंपालुं निरंवपत्। स्त्यायं चुरुम्। अनुंमत्यै चुरुम्। ततो वै तस्यं स्त्यः स्त्यमंभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्यः ह वा अस्य स्त्यं भंवति। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्यः ह वा अस्य स्त्यं भंवति। अनुं स्वर्गं

लोकं विन्दिति। य एतेनं हिविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदे। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहां सत्याय स्वाहां। अनुमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१८॥

तं मनौंऽब्रवीत्। प्रजांपते मनंसा वै श्रांम्यसि। अहमु वै मनौंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थं ते सृत्यं मनों भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। मनंसे चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यं मनोंऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सृत्य॰ हु वा अस्य मनों भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा मनंसे स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्वष्टकृते स्वाहतिं॥१९॥

तं चरंणमब्रवीत्। प्रजांपते चरंणेन् वै श्रांम्यसि। अहमु वै चरंणमस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सृत्यं चरंणं भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमांग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। चरंणाय चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यं चरंणमभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमिवन्दत्। सृत्य ह् वा अंस्य चरंणं भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेन ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा चरंणाय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंत्ये स्वाहां।

स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयं स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥२०॥

ता वा पृताः पश्चं स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। अपांघा अनुंवित्तयो नामं। तपंः प्रथमा र रक्षिति। श्रद्धा द्वितीयाँम्। सत्यं तृतीयाँम्। मनश्चतुर्थीम्। चरंणं पश्चमीम्। अनुं हु वै स्वर्गं लोकं विन्दित। कामचारौं उस्य स्वर्गे लोकं भेवति। य पृताभिरिष्टिभिर्यजेते। य उं चैना एवं वेदं। तास्वन्विष्टि। पृष्ठौहीवरां दंद्यात्कर्सं चं। स्त्रियै चाऽऽभार समृद्धौ॥२१॥

ब्रह्म वै चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधिंयुज्ञो निर्मितः। नैन १ श्राप्तम्। नाभिचंरितमागंच्छति। य एवं वेदं। यो ह् वै चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वं वेदं। अथो पश्चंहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशः कल्पन्ते। वाचस्पतिर्होता दशंहोतॄणाम्। पृथिवी होता चतुंर्होतॄणाम्॥२२॥

अग्निर्होता पश्चंहोतॄणाम्। वाग्घोता षड्ढोतॄणाम्। महाहंविर्होतां सप्तहोतॄणाम्। एतद्वे चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वम्। अथो पश्चंहोतृत्वम्। सर्वां हास्मै दिशंः कल्पन्ते। य एवं वेदं। एषा वै संविवद्या। एतद्वेषजम्। एषा पङ्किः स्वर्गस्यं लोकस्यांश्वसाऽयंनिः स्रुतिः॥२३॥

पुतान् योऽध्यैत्यछंदिर्दर्शे यावंत्तरसम्। स्वंरेति। अनुपृब्रवः सर्वमायुंरेति। विन्दते प्रजाम्। रायस्पोषं गौपृत्यम्। ब्रह्मवुर्चसी भंवति। पुतान् योऽध्यैतिं। स्पृणोत्यात्मानम्। प्रजां पितॄन्। एतान् वा अंरुण औपवेशिर्विदां चंकार॥२४॥

पुतैरंधिवादमपांजयत्। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंर्ययौ। पुतान्योऽध्यैतिं। अधिवादं जंयति। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंरेति। पुतैर्ग्निं चिन्वीत स्वर्गकांमः। पुतैरायुंष्कामः। प्रजापृशुकांमो वा॥२५॥

पुरस्ताद्दर्शहोतार्मुदंश्चमुपंदधाति यावत्पदम्। हृदंयं यज्ञंषी पत्न्यौ च। दक्षिणतः प्राश्चं चतुर्होतारम्। पृश्चादुदंश्चं पश्चंहोतारम्। उत्तर्तः प्राश्चं पङ्गंतारम्। उपरिष्टात्प्राश्चं सप्तहोतारम्। हृदंयं यज्ञ्रंषि पत्न्यंश्च। यथावकाशं ग्रहान्। यथावकाशं प्रतिग्रहाँ ह्यों कं पृणाश्चं। सर्वा हास्यैता देवताः प्रीता अभीष्टां भवन्ति॥२६॥

सदेवम्गिं चिन्ते। रथसंम्मितश्चेत्व्यः। वज्रो वै रथः। वज्रेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यः स्तृणुते। पृक्षः संम्मितश्चेत्व्यः। एतावान् वै रथः। यावंत्पृक्षः। रथसंम्मितमेव चिन्ते। इममेव लोकं पेशुबन्धेनाभिजंयति। अथो अग्निष्टोमेनं॥२७॥

अन्तरिक्षमुक्थ्येन। स्वरितरात्रेणं। सर्वौक्षोकानंहीनेनं। अथो स्त्रेणं। वरो दक्षिणा। वरेणैव वर स्पृणोति। आत्मा हि वर्रः। एकंवि श्वतिर्दक्षिणा ददाति। एकवि श्वा वा इतः स्वर्गो लोकः। प्र स्वर्गं लोकमाप्रोति॥२८॥

असावांदित्य एंकविष्शः। अमुमेवाऽऽदित्यमाँप्रोति।

शृतं ददांति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। सहस्रं ददाति। सहस्रंसिम्मतः स्वर्गो लोकः। स्वर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। अन्विष्ट्कं दक्षिणा ददाति। सर्वाणि वया रस्ति॥२९॥

सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धे। यदि न विन्देतं। मन्थानेतावृतो दंद्यादोदनान् वाँ। अश्रुते तं कामम्। यस्मै कामायाग्निश्चीयतें। पृष्ठौहीं त्वन्तर्वतीं दद्यात्। सा हि सर्वाणि वयार्सस। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धे॥३०॥

हिरंण्यं ददाति। हिरंण्यज्योतिरेव स्वर्गं लोकमेंति। वासों ददाति। तेनाऽऽयुः प्रतिरते। वेदितृतीये यंजेत। त्रिषंत्या हि देवाः। स संत्यम्भिं चिनुते। तदेतत्पंशुबन्धे ब्राह्मंणं ब्रूयात्। नेतंरेषु य्ज्ञेषुं। यो ह वै चतुरहोतॄननुसव्नं तंपीयत्व्यान् वेदं॥३१॥

तृप्यंति प्रजयां पृश्निः। उपैन सोमपीथो नमिति। पृते वै चतुंरहोतारोऽनुसवनं तंपियत्व्याः। ये ब्राह्मणा बंहुविदः। तेभ्यो यद्दक्षिणा न नयेत्। दुरिष्ट स्यात्। अग्निमंस्य वृश्जीरन्। तेभ्यो यथाश्रद्धं दंद्यात्। स्विष्टमेवैतित्क्रियते। नास्याग्निं वृंश्जते॥३२॥

हिर्ण्येष्टको भंवति। यावंदुत्तममंङ्गुलिकाण्डं यंज्ञप्रुषा सम्मितम्। तेजो हिरंण्यम्। यदि हिरंण्यं न विन्देत्। शर्करा अक्ता उपंदध्यात्। तेजो घृतम्। सर्तेजसमेवाग्निं चिनुते। अग्निं चित्वा सौनामण्या यंजेत मैत्रावरुण्या वाँ। वीर्येण वा एष व्यृध्यते। योँऽग्निं चिंनुते॥३३॥

यावंदेव वीर्यम्। तदंस्मिन्दधाति। ब्रह्मणः सायुंज्यश् सलोकतांमाप्नोति। एतासांमेव देवतांनाः सायुंज्यम्। सार्षिताः समानलोकतांमाप्नोति। य एतम्भ्रिं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। एतदेव सांवित्रे ब्राह्मणम्। अथों नाचिकते॥३४॥

ا لع

यचामृतं यच मर्त्यम्। यच प्राणिति यच न। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृद्घां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। सर्वाः स्त्रियः सर्वांन्पुर्सः। सर्वं न स्त्रीपुमं च यत्। सर्वास्ताः। यावंन्तः पार्सवो भूमैः॥३५॥

सङ्ख्यांता देवमाययां। सर्वास्ताः। यावंन्त ऊषाः पशूनाम्। पृथिव्यां पृष्टिंरिह्ताः। सर्वास्ताः। यावंतीः सिकंताः सर्वाः। अपस्वंन्तश्च याः श्रिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः शर्करा धृत्यै। अस्यां पृथिव्यामधि॥३६॥

सर्वास्ताः। यावन्तोऽश्मांनोऽस्यां पृंथिव्याम्। प्रतिष्ठासु प्रतिष्ठिताः। सर्वास्ताः। यावंतीर्वीरुधः सर्वाः। विष्ठिताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः। यावंतीरोषंधीः सर्वाः। विष्ठिताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः॥३७॥ यावंन्तो वनस्पतंयः। अस्यां पृथिव्यामधि। सर्वास्ताः। यावंन्तो ग्राम्याः पृशवः सर्वै। आरुण्याश्च ये। सर्वास्ताः। ये द्विपादश्चतुंष्पादः। अपादं उदरसपिंणः। सर्वास्ताः। यावदाञ्जनमुच्यते॥३८॥

देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। यावंत्कृष्णायंस् सर्वम्ं। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। यावंश्लोहायंस् सर्वम्ं। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वर् सीस् सर्वं त्रपुं। देवत्रा यर्च मानुषम्॥३९॥

सर्वास्ताः। सर्वे १ हिरंण्य १ रज्तम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वे १ सुर्वर्णे १ हिरंतम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतयाऽङ्गिरस्बद्धुवा सींद॥४०॥

[٤]

सर्वा दिशों दिक्षु। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुर्घा दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। अन्तरिक्षं च केवंलम्। यचास्मिन्नंन्तराहितम्। सर्वास्ताः। आन्तरिक्ष्यंश्च याः प्रजाः॥४१॥

गुन्धुर्वाफ्सुरसंश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्थ्सिललान्। अन्तरिक्षे प्रतिष्ठितान्। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्थ्सेलिलान्। स्थावराः प्रोष्याश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वां धुनिः

## सर्वान्ध्व ५ सान्। हिमो यचं शीयते ॥ ४२॥

सर्वास्ताः। सर्वान्मरीचीन् वितंतान्। नीहारो यर्च शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वा विद्युतः सर्वान्थ्स्तनियृत्न्। ह्रादुनीर्यर्चे शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वाः स्रवंन्तीः स्रितंः। सर्वमफ्सुच्रं च् यत्। सर्वास्ताः॥४३॥

याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैश्वन्तीरुत प्रांस्चीर्याः। सर्वास्ताः। ये चोत्तिष्ठंन्ति जीमूताः। याश्च वर्षन्ति वृष्टयः। सर्वास्ताः। तप्स्तेजं आकाशम्। यचांऽऽकाशे प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। वायुं वयार्ससे सर्वाणि॥४४॥

अन्तिरिक्षचरं च यत्। सर्वास्ताः। अग्निश् सूर्यं चन्द्रम्।
मित्रं वर्रुणं भगम्। सर्वास्ताः। सृत्यः श्रृद्धां तपो दमम्। नामं
रूपं च भूतानाम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुषां
दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा
सीद॥४५॥
[७]

सर्वान्दिव्र सर्वान्देवान्दिवि। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टेकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। यावंतीस्तारंकाः सर्वाः। वितंता रोचने दिवि। सर्वास्ताः। ऋचो यजूर्षेष

#### सामांनि॥४६॥

अथर्वाङ्गिरसंश्च ये। सर्वास्ताः। इतिहासपुराणं चं। सर्पदेवजनाश्च ये। सर्वास्ताः। ये चं लोका ये चालोकाः। अन्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। यच् ब्रह्म यचौब्रह्म। अन्तर्बृह्मन्प्रतिष्ठितम्॥४७॥

सर्वास्ताः। अहोरात्राणि सर्वाणि। अर्धमासा ॥ केवंलान्। सर्वास्ताः। सर्वानृतून्थ्सर्वान्मासान्। संवथ्सरं च केवंलम्। सर्वास्ताः। सर्वं भूत् सर्वं भव्यम्। यचातोऽधिभविष्यति। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृदुर्घा दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥४८॥

ऋचां प्राचीं मह्ती दिगुंच्यते। दक्षिंणामाहुर्यजुंषामपाराम्। अथंवणामङ्गिरसां प्रतीचीं। साम्नामुदींची मह्ती दिगुंच्यते। ऋग्भिः पूर्वाह्वे दिवि देव ईयते। यजुर्वेदे तिष्ठति मध्ये अहं। सामवेदेनांऽस्तम्ये महीयते। वेदैरशूंन्यस्त्रिभिरेति सूर्यः। ऋग्भ्यो जाता सर्वेशो मूर्तिमाहुः। सर्वा गतिंयांजुषी हैव शर्ष्वत्॥४९॥

सर्वं तेजंः सामरूप्यः हं शश्वत्। सर्वः हेदं ब्रह्मंणा हैव सृष्टम्। ऋग्भ्यो जातं वैश्यं वर्णमाहः। युजुर्वेदं क्षेत्रियस्यांऽऽहुर्योनिम्। साम्बेदो ब्राह्मणानां प्रस्तिः। पूर्वे पूर्वेभ्यो वर्च एतदूचुः। आद्र्शमृग्निं चिन्वानाः। पूर्वे विश्वसृजोऽमृताः। शृतं वर्षसह्स्राणि। दीक्षिताः सत्रमांसत॥५०॥

तपं आसीद्गृहपंतिः। ब्रह्मं ब्रह्माऽभंवथ्स्वयम्। स्त्य ह् होतैंषामासींत्। यद्विंश्वसृज् आसंत। अमृतंमेभ्य उदंगायत्। सहस्रं परिवथ्सरान्। भूत हं प्रस्तोतैषामासींत्। भविष्यत्प्रतिं चाहरत्। प्राणो अंध्वर्युरंभवत्। इद सर्व ध् सिषांसताम्॥५१॥

अपानो विद्वानावृतंः। प्रतिप्रातिष्ठदध्वरे। आर्तवा उपगातारंः। सदस्यां ऋतवोऽभवन्। अर्धमासाश्च मासाश्च। चमसाध्वर्यवोऽभवन्। अश्चरं सद्वह्मणस्तेजाः। अच्छावाकोऽभवद्यशंः। ऋतमेषां प्रशास्ताऽऽसीत्। यद्विश्वसृज् आसंत॥५२॥

ऊर्ग्राजांनमुदंवहत्। ध्रुवगोपः सहोऽभवत्। ओजोऽभ्यंष्टौ-द्वाव्यणंः। यद्विश्वसृज् आसंत। अपंचितिः पोत्रीयांमयजत्। नेष्ट्रीयांमयज्ञित्विषिः। आग्नींद्वाद्विदुषीं सृत्यम्। श्रद्धा हैवायंज्ञथ्स्वयम्। इरा पत्नीं विश्वसृजांम्। आकूंतिरिपन-हृविः॥५३॥

इध्म १ हु क्षुचैभ्य उग्रे। तृष्णा चाऽऽवंहतामुभे। वागेषा १

सुब्रह्मण्याऽऽसींत्। छुन्दोयोगान् विजान्ती। कुल्पृत्त्राणिं तन्वानाऽहंः। सुङ्स्थाश्चं सर्वशः। अहोरात्रे पंशुपाल्यौ। मुहूर्ताः प्रेष्यां अभवन्। मृत्युस्तदंभवद्धाता। शृमितोग्रो विशां पतिः॥५४॥

विश्वसृजंः प्रथमाः स्त्रमांसत। सहस्रंसम् प्रस्ंतेन् यन्तंः। ततो ह जज्ञे भुवंनस्य गोपाः। हिर्ण्मयः शकुनिर्ब्रह्म नामं। येन् सूर्यस्तपंति तेजंसेद्धः। पिता पुत्रेणं पितृमान् योनियोनौ। नावंदविन्मनुते तं बृहन्तम्। सूर्वानुभुमात्मान र् सम्पराये। एष नित्यो मंहिमा ब्राह्मणस्यं। न कर्मणा वर्धते नो कनीयान्॥५५॥

तस्यैवाऽऽत्मा पंद्वित्तं विदित्वा। न कर्मणा लिप्यते पापंकेन। पश्चंपश्चाशतिः संवथ्सराः। पश्चंपश्चाशतिः पृतिन् विश्वंस्तुः। विश्वंस्तुः। विश्वंसस्जन्त। यद्विश्वमस्ंजन्त। तस्मांद्विश्वस्तुः। विश्वंमेनाननु प्रजांयते। ब्रह्मणः सायुंज्यः सलोकतां यन्ति। पृतासांमेव देवतांनाः सायुंज्यम्। सार्थिताः समानलोकतां यन्ति। य पृतदंपयन्ति। ये चैन्त्प्राहुः। येभ्यंश्चेन्त्प्राहुः॥५६॥ ॐ॥

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके तृतीयः प्रश्नः

## समाप्तः॥३॥ ॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठकं समाप्तम्॥ हरिः ॐ॥